वक्तव्य ।

रसेन्द्रसार' यह ग्रन्थ श्रीमान् कविराज नरेन्द्रनाथ जी ...ापक मित्र औषधालय लाहौर की प्रेरणा से मुझे अनुवाद ...ड़ा है। उनको दिखाकर संशोधन भी करा दिया है। फिर ...ने कितनी त्रुटियां रह गई हों। विज्ञ पाठक आशा है उन्हें ...रके मुझे क्षमा करेंगे।

विशेषतायें ।

...ग्रन्थ में आजकल की शक्ति के अनुसार रसों की मात्रायें ...गई हैं। विशेष २ स्थानों पर लंबे नोट दिये हैं। कुछ गुप्त ...खोले गये हैं। भाषा सब के समझने योग्य बनाने का यत्न ...। अन्त में परिशिष्ट भी लगा दिया गया है। जिस में कई ...गों की चिकित्सा तथा अन्यान्य उपयोगी प्रयोग लिखे गये ...परिभाषा भी दी है। साथ ही दुर्लभ यंत्रों के चित्र और ...ाथ विवरण देकर इस ग्रन्थ की उपयोगिता को अधिक ...ा गया है। ला० मोतीलाल बनारसी दास जी संस्कृत ...यक्ष लाहौर की कृपा से ही यह सर्वांग सुन्दर संस्करण ...रहा है।

...शा है पाठक गण इसमें से गुणग्रहण करके लाभ उठायेंगे। ...गुणों से मुझे सूचित करने की कृपा करेंगे।

"सन्त हंस गुण गहहिं पय,
परिहरि वारि विकार।"

निवेदकः—

विद्याधर विद्यालंकार।

...ोलन

...—२—२७.

❀समर्पण❀

तुझे समर्पण करूं कहां ? बस वहां, जहां दुख का नहिं नाम।
पूरण सुख ही फैल रहा है, रहता जहां मधुर मुस्क्यान ॥ १ ॥
जहां हंसी के छुटें फवारे, भरा फलों से हो उद्यान।
जहां करे है मधुर मालती फूलों भरी मधुर आह्वान ॥ २ ॥
यज्ञधूम से हुआ सुगंधित जिसका हो सारा उद्यान।
सामगान हो नित्य सवेरे वेदमंत्र का उच्च ध्वान ॥ ३ ॥
मृगशावक रोमन्थ कर रहे जहां करें निर्भय विश्राम।
कोयल जिसके वन में छिपकर बैठी मधुर २ ले तान ॥ ४ ॥
झूम रही हों जहां लतायें खिलीं बसन्ती कलियां जान।
भौरों की मीठी रागनियां उठें प्रेम का करती गान ॥ ५ ॥
जहां रोग का नाम न हो और जहां न भय का होवे स्थान।
ओतप्रोत हो जहां सरलता, विषयवासना हो अवसान ॥ ६ ॥
जहां शोक का काम न हो कुछ और न धनका हो शुभ नाम।
ऊंच नीच का भेद जहां से भाग गया हो लेकर जान ॥ ७ ॥
जहां संग हो खाना पीना नित्य जहां हो मिलकर गान।
तप हो, व्रत हो, नियम धर्म हो, जहां सत्य का हो सन्मान ॥ ८ ॥
जहां वीरपूजा होतीहो, सच्चे ब्राह्मण का हो मान।
पैसा तक भी पास न हो और फिर भी हो आनन्द महान ॥ ९ ॥
पुण्य हिमालय ऊपर हो और नीचे हो गंगा का स्थान।
विस्तृत हों मैदान घास के गौएं चरती हों बलवान ॥ १० ॥
जिसे बसाकर गये स्वर्ग को स्वामी **श्रद्धानन्द** महान।
उसी पुण्य "कुलभूमि मातु" को अर्पण हो यह ग्रन्थ ललाम ॥ ११ ॥

गुरुकुलमाताका एक तुच्छ पुत्र

विद्याधर विद्यालङ्कार

भूमिका

सबसे पूर्व यह लिखना अनुचित न होगा कि यदि टीकाकर्ता महोदय इस पुस्तक की भूमिका लिखते तो बहुत लाभदायक होती क्योंकि अपनी टीका में उन्होंने जो विशेषता की है उसे वे ही अच्छी प्रकार बता सकते हैं। परन्तु ऐसा न करके टीकाकर्ता तथा प्रकाशक महोदयों ने मुझे ही भूमिका लिखने के लिये अनुरोध किया। उनके आदेश का पालन करते हुए मैंने कुछ संक्षिप्ततः लिखदिया है।

आयुर्वैदिक चिकित्सा के प्रधानतः तीन विभाग हैं। १-दैवी चिकित्सा। २-मानुषी चिकित्सा। ३-आसुरी चिकित्सा। जिनमें दैवी चिकित्सा को रसचिकित्सा भी कहते हैं। इसही चिकित्सा को आयुर्वेद में प्रधानता दी गई है। अत एव कहा भी हैः

आसुरी मानुषी दैवी चिकित्सा त्रिविधा मता।
शस्त्रैः कषायैर्लोहाद्यैः क्रमेणान्त्याः सुपूजिताः॥

इसकी उत्तमता में मुख्य कारण ये हैं किः—

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः॥

अर्थात् इस चिकित्सा में कही गई औषधों की थोड़ी मात्रा में ही उपयोगी होने से, बुरा स्वाद न होने के कारण अरुचि न होने से तथा शीघ्र ही आरोग्यदायिनी होने से यह चिकित्सा बनौषधि चिकित्सा से उत्तम है।

इसी रसचिकित्साका प्रतिपादक यह रसेन्द्रसारसंग्रह नामक ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में अन्य प्राचीन सिद्धाचार्य तथा रसशास्त्र वेत्ताओं के उत्तमोत्तम ग्रन्थों से चिकित्सा सम्बंधी योग तथा रस, महारस, उपरस, धातु एवं रत्नों आदि के शोधन तथा मारण विधि का संग्रह किया गया है। आजकल सम्पूर्ण आयुर्वैदिक शिक्षणालयों के पाठ्यक्रमोंमें इसका समावेश है।इसीसे इस संग्रह तथा संग्रहकर्त्ता की महत्ता का बोध होता है।

इस प्रामाणिक ग्रन्थ के संग्रहकर्त्ता श्री गोपालकृष्ण भट्ट हैं। ऐतिहासिक विद्वानों के मतानुसार यह ग्रंथ तेरहवीं शताब्दिमें बनाया गया प्रतीत होता है। इस ग्रन्थ में अध्याय अथवा अधिकारों के

अनुसार निम्नप्रकार से विषय को विभक्त किया गया है:—

प्रथम अध्याय में-पारद, महारस, उपरस, धातु, उपधातु, रत्न, विष, तथा उपविष आदि का शोधन एवं मारण का वर्णन है। द्वितीय अध्याय में:—विरेचक योगों का वर्णन है। इससे आगे क्रमशः एक २ अधिकार में ज्वर, ज्वरातीसार, अतीसार, ग्रहणी, अर्श अजीर्ण, कृमिरोग पाण्डु, रक्तपित्त, यक्ष्मा, कास, हिक्का,श्वास, स्वरभेद, अरोचक, छर्दि, तृष्णा, मूर्च्छा, मदात्यय, दाह, उन्माद, अपस्मार, वातरोग, कफरोग, पित्तरोग, वातरक्त, ऊरुस्तम्भ, आमवात, शूल, उदावर्त्त—आनाह, गुल्म, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रघात, अश्मरी, प्रमेह, सोमरोग, स्थौल्य, उदररोग, प्लीहा, शोथ, अर्बुद, श्लीपद, भगन्दर, उपदंश, कुष्ठ, शीतपित्त-उदर्द--कोठ, अम्लपित्त, विसर्प—विस्फोट, मसूरिका, क्षुद्ररोग, मुखरोग, कर्णरोग, नासारोग, नेत्ररोग, शिरोरोग, प्रदर, योनिव्यापत्, सूतिकारोग, बालरोग,तथा विषरोग की चिकित्सा एवं अन्त में रसायन तथा वाजीकरण योगों का विधान है।

संग्रह कर्त्ता ने इस में जिन योगों का संग्रह किया है प्रायः वे सब सहस्रशः अनुभूत ही हैं।

इस के अतिरिक्त केवल हिन्दी जानने वालों के लिये इस ग्रंथ को उपयोगी बनाने के लिये पञ्जाब संस्कृत पुस्तकालयाध्यक्ष श्रीयुत मोतीलाल-बनारसीदास जीने पं. विद्याधर जी विद्यालङ्कार को इस की टीका बनाने के लिये कहा। जिसे उन्हों ने स्वीकार किया और इसकी हिन्दी टीका रची।

आज तक जो हिन्दी टीकायें उपलब्ध होती हैं प्रायः उन में अशुद्धियों की बहुलता है। इस टीका में टीकाकार ने उन से यथा सम्भव बचने का प्रयत्न किया है। जो संस्कृत से अनभिज्ञ हैं, उन वैद्यों के लिये तथा विद्यार्थियों के लिये यह टीका अत्यन्त ही उपयुक्त हुई है। इस टीका के सहारे वे औषध निर्माण आदि कार्य सुचारु रूप से कर सकते हैं॥

नरेन्द्रनाथ मित्र

लाहौर
२६—२—१९२७

शुभम्

अथ रसेन्द्रसारसंग्रहस्य सूचीपत्रम् ।

दोलायन्त्र ।

एक हांडी में औषध का रसादि आधातक भरदे। उस हांडी के किनारों में दो आमने सामने छेद कर दे। उन छेदों में एक लकड़ी सीधी डाल दे। फिर पारा आदि द्रव्यों को एक कपडे में बांध कर उस लकडीके मध्यमें टांग देवे। वह पोटली नीचे पडे हांडीके द्रवभाग में लटकती रहे। अब इस हांडी के नीचे आग देवे। इस प्रकार से आग द्वारा पारे आदि का स्वेदन इस यंत्र से किया जाता है और इस में पारा आदि दोला अर्थात् झूले के समान लटकता रहता है इस लिये इसे दोला यन्त्र कहते हैं ॥

बालुकायन्त्रं लवणयन्त्रञ्च ॥
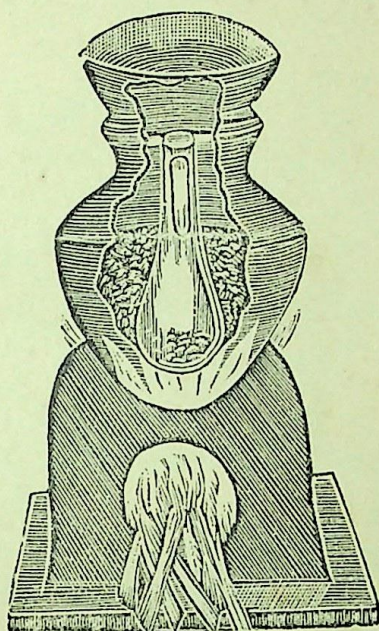
बालुकायंत्र—एक काच की कूपी पर एक अंगुल कपड मिट्टी करके सुखाले। उस में पारा आदि तीन चौथाई भाग में भर दे। इस कूपी को एक गहरी हांडी में रख दे। इस हांडी में काच कूपी को रख बालू से उस के मुख तक भर दे। (यह काचकूपी ऐसी लेनी चाहिये जो बहिःस्थ हांडी की ऊंचाई से तीन चौथाई ऊंची हो) हांडी के अवशिष्ट चतुर्थांश को पुनः बालू से भर दें। पश्चात् एक शराव से हांडी के मुख को बन्द कर दें। शराव पर जब तृण जलने लगे तब पाक शेष समझें। इसी कूपी के स्थान में कोई औषधों का गोला रेता में दबा कर इसी हांडी में पकावें तो इसे भी बालुकायन्त्र कहते हैं॥

लवणयंत्र—यदि बालु के स्थान में लवण भर के काचकूपी या गोला पकावें तो उसे लवणयन्त्र कहते हैं॥

भूधरयन्त्र ।
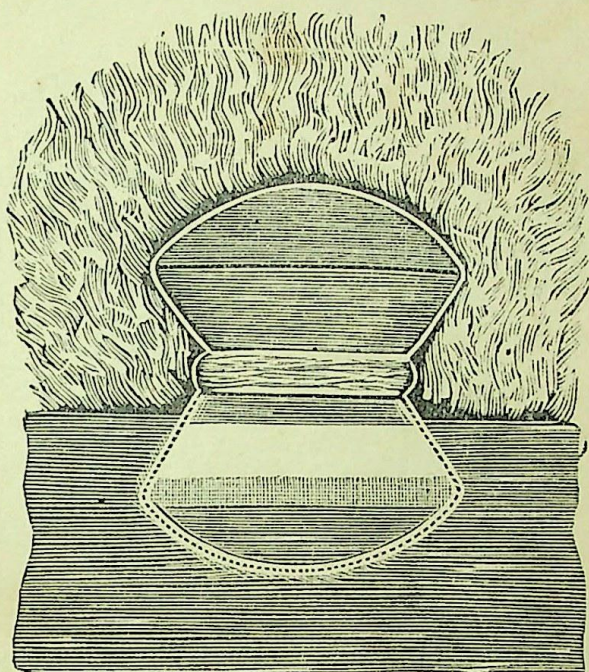
दो हांडियों के मुंहको जोड़कर डमरूके समान या अधः पातन यंत्र के समान बनाले। इन दोनों को डमरू के समान सीधा एक गढ़ा खोद कर रख दे। इन दोनों हांडियों में से जिसे ऊपर की ओर रखनाहो उसके अन्दर पारा पहले ही लगारखे। नीचे की हांडी में ठण्डा पानी रहे। अब ऊपरकी हांडी पर आग जला देवे। तो ऊपर से पारा नीचे की हांडी में आजावेगा। इस प्रकार पारेका अधः पातन इस पृथिवी के अन्दर रखे यन्त्र द्वारा किया जाता है। इसी कारण इसे भूधर यंत्र कहते हैं॥

तिर्य्यक् पातन यन्त्र ॥
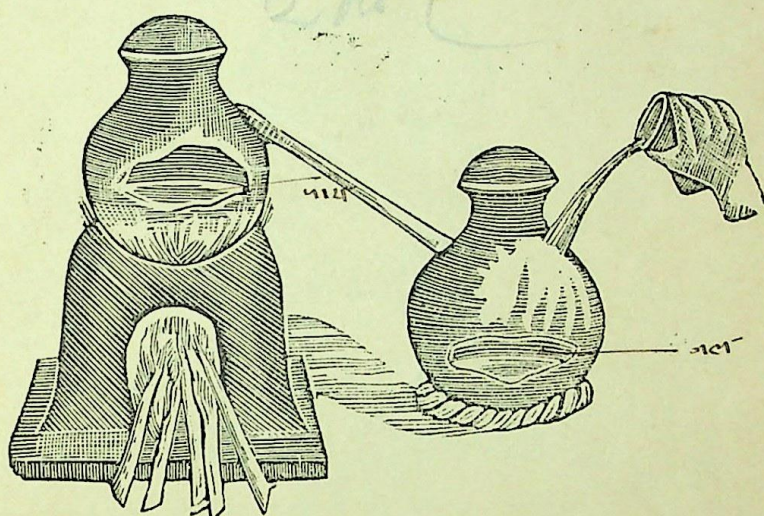
एक घड़े में पारा डाल चूल्हे पर रख दे उस के मुख के नीचे एक लम्बी बांस आदि की नलकी तिरछी नीचे को झुकी हुई लगावे। उस नलकी का दूसरा सिरा एक दूसरे पानी से भरे हुए घड़े के मध्यभाग में जोड़ दे। दोनों घड़ों के उस नालीके संधि स्थान को भली प्रकार कपड़ मिट्टी से बंद कर दे। अब दोनों घड़ों के मुंह को एक छोटे शराव से ढककर संधि बंद करदे। फिर पारे वाले घड़े के नीचे तीव्र ज्वाला देवे। तो पारा उड़कर पानीवाले घड़े में आजायेगा। इस यन्त्र द्वारा पारे को टेढ़ा गिराने से इसे तिर्य्यक्पातन यन्त्र कहा जाता है ॥

पातना यन्त्र ।
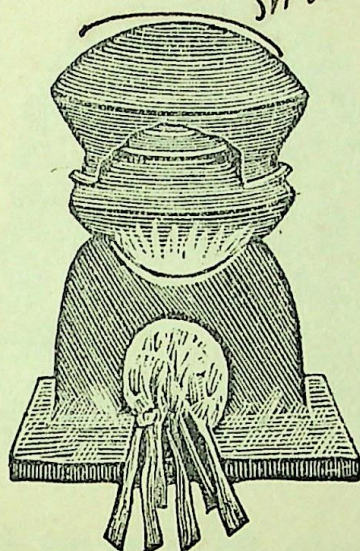
एक हांडी को उलटा कर उसके ऊपर जलाधार बनावे। जिस जलाधार की लम्बाई १० अंगुल, चौड़ाई ८ अंगुल और ऊंचाई ४ अंगुल हो। पश्चात् एक दूसरी हांडी लें जिसके निम्न भाग का व्यास १६ अंगुल हो और मुख पहली हांडी से कुछ चौडा हो। इस हांडी को नीचे रख कर उस में पारा रक्खें। तदनन्तर जलाधार युक्त हांडी के मुख को इस हांडी के मुख के अन्दर प्रविष्ट कर दें। इस के बाद भैंस का दूध, चूना, मण्डूर, फाणित (सीरा); इनसे सन्धि लेप करें और लेप को शुष्क कर लें। इसे चूल्हे पर चढ़ा दें। यह पातना यन्त्र कहलाता है॥
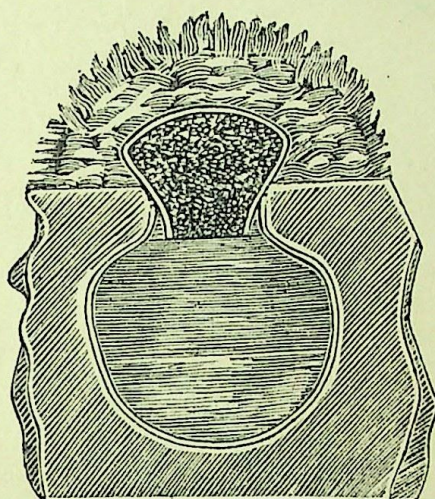
अधः पातनयन्त्र ।

एक हांडी में पारा लीप दें। उसे उलटा मुख करके एक बड़े मुखवाले मिट्टी के घड़े में फंसादेवे। परन्तु इस घड़े में ठण्डा पानी भरा हुआ हो। इन का संधि बंधन कर दे। ऊपर से जंगली उपलों की आग दे तो पारा ऊपर के पात्र से नीचे के घड़े में आजायेगा। इस यंत्र द्वारा पारे को नीचे गिराया जाता है इस कारण इस का नाम "अधः पातन यन्त्र है॥

Shiv Kumar

XIII

विद्याधर-(ऊर्द्ध्वपातन)-यन्त्र।

शिव कुमार
१३५
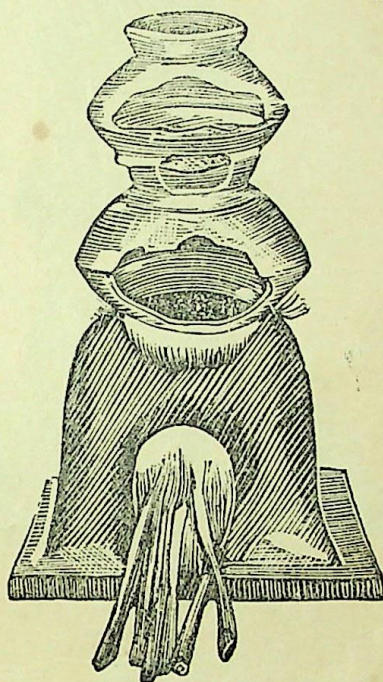
एक हांडी में पारा डाल कर नीचे रखे। उस के मुख पर एक दूसरी हांडी ऊपर को मुंह करके रख दे। नीचे की हांडी के मुंह पर ऊपर की हांडी का तला जहां लगा हुआ हो उस स्थान पर मिट्टी से सन्धि बन्द कर दे ऊपर की हांडी में जल भर दें। नीचे पांच पहर तक आग जलावे। इस प्रकार पारा उड़ कर ऊपर की हांडी के पैंदे में लग जावेगा। स्वाङ्गशीतल होने पर संभाल ले। ऊपर की हांडी का पानी गरम हो जाये तो उसे बदल कर ठण्डा जल उस में भर दे। इस से पारा ऊपर उड़ाया जाता है इस कारण इसे ऊर्ध्वपातन यंत्र अथवा विद्याधर का निकाला हुआ होने से विद्याधर यंत्र भी कहते हैं॥

स्वदेन-(कन्दुक)-यन्त्र ।
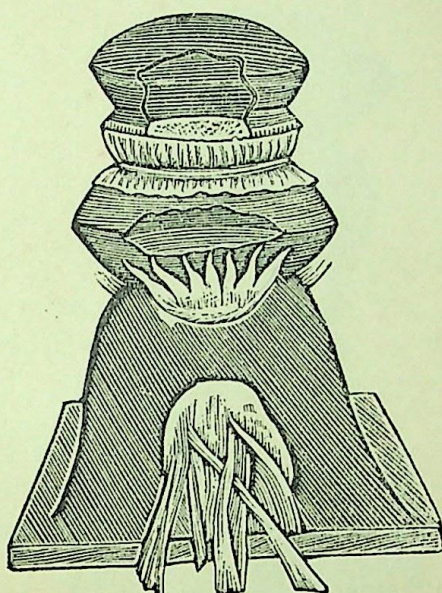
एक हांडी में जल भर ले। उस के मुंह पर एक स्वच्छवस्त्र बांध दे। उस कपड़े पर स्वेदन करने योग्य पदार्थ रख दे। उस हांडी के मुख पर एक दूसरी हांडी को उलटा मुंह रख कर संधि बंधन करदे। नीचे आग जलावे। इस प्रकार द्रव्यों का स्वेदन इस यंत्र से किया जाता है इसलिये इसे स्वेदन यंत्र अथवा कन्दुक यन्त्र कहा जाता है॥

धूपयन्त्र।
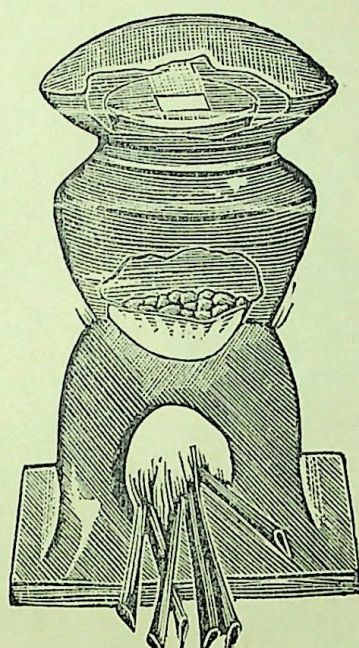
एक लोहे का पात्र आठ अंगुल ऊंचा आठ अंगुल चौड़ा बनावे गले के दो अंगुल नीचे उस पात्रमें पतली २ लोहे की शलाका वा लोहे की पतली जाली लगादे। उस जाली या शलाकाओं पर सोनेके पत्र रखदे। इसमें सोनेके पत्रोंको गंधक हडताल मनशिलकी कज्जली वा सीसाभस्म से धूआं देना होता है। इस लौह पात्र के ऊपर दूसरा पात्र उलटा मुख रख संधि बन्द कर दे। लौह पात्र के नीचे अग्नि जलावे। इस प्रकार सोने के पत्र भस्म हो जाते हैं॥ चांदी के पत्रों को इस में वङ्ग भस्म से धूआं देकर मारा जाता है॥ इसी प्रकार अन्य उपरसों को भी इस से धूप देकर जारण करते हैं। अतः इसे धूपयन्त्र कहते हैं॥
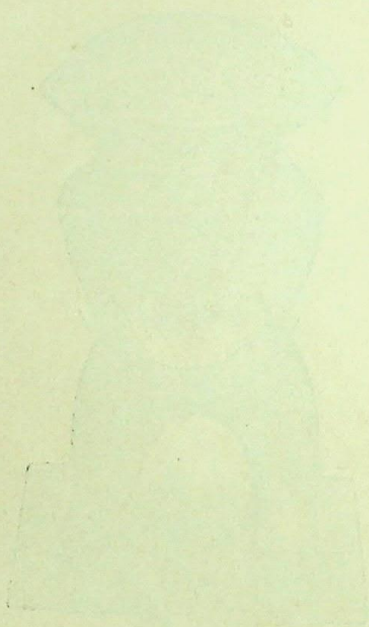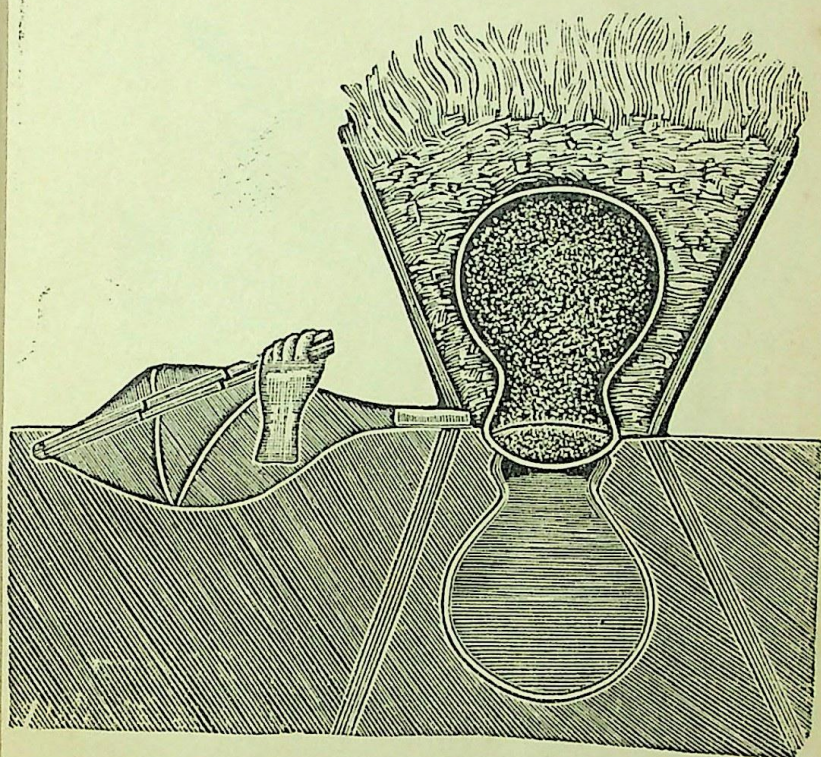
कोष्ठिक यन्त्र ॥

धातुओं के सत्त्व पातन के लिये जो १६ अंगुल चौड़ी और एक हाथ भर लम्बी जो भट्टी बनाई जाती है उसे कोष्ठिक यन्त्र कहते हैं। इसमें नीचे से धौंकनी द्वारा हवा देने के लिये एक छिद्र होता है। इस भट्टी में कोइले डाले जाते हैं। कोइलों के मध्य देश में मूषा रखी जाती है। पश्चात् धौंकनी से आग को तीव्र करे ॥

तप्तखल्लयन्त्र ।
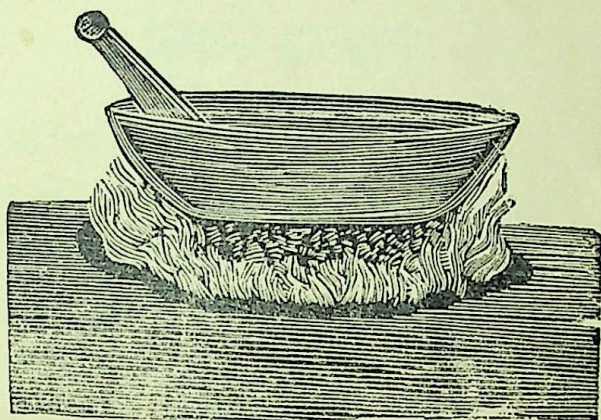
एक गर्त्त में बकरी की मींगनें, तुष, अग्नि इन तीनों को एकत्र जलाकर उस पर खरल को धर दें। खल्ल के गरम हो जाने के कारण इसे तप्त खल्ल कहते हैं॥

ॐ
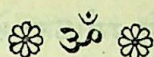
रसेन्द्रसार संग्रहः

प्रथमोऽध्यायः ।

रसेन्द्रमिव निःशेष-जराव्याधिविनाशनम् ।
प्रणमामि गुरुं भक्त्या शङ्करं योगसाधनम् ॥ १ ॥
नत्वा गुरुपदद्वन्द्वं दृष्ट्वा तन्त्राण्यनेकशः ।
श्रील-गोपालकृष्णेन क्रियते रससङ्ग्रहः ॥ २ ॥
सिद्धयोगाश्च ये केचित् कृतिसाध्या भवन्ति हि ।
एकीकृत्य तु ते सर्वे लिख्यन्ते यत्नतो मया ॥ ३ ॥

मैं कल्याणकारी गुरु शङ्कर भगवान् को भक्तिसहित नमस्कार करता हूं जो भगवान योगाभ्यास से सिद्ध होते हैं। और जिनकी प्राप्ति होने से अर्थात् जन्म मरण के बन्धन रहित होने से जो जरा व्याधि के भी नाशक हैं। जिस प्रकार पारा है। पारा भी गुरु अर्थात् भारी है और भिन्न २ योगों से भक्तिपूर्वक अर्थात् एकाग्रचित्त से सिद्ध होता है तथा सिद्ध हुआ २ सब रोगों और वृद्धावस्था को दूर करता है ॥ १ ॥ अपने गुरुदेव के दोनों चरणों को नमस्कार करके तथा अनेक शास्त्रों को देखकर मैं श्री गोपालकृष्ण इस रससंग्रह को करता हूं ॥ २ ॥ जो २ सिद्धफल देने वाले योग हैं और जो विद्वानों को बनाने चाहियें, वे सब इकट्ठे करके यहां लिख दिये हैं ॥ ३ ॥

तत्र रस-प्राधान्यमाह

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसङ्गतः ।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः ॥ ४ ॥

.ाध्येषु भेषजं सर्वमीरितं तत्त्ववेदिना ।
असाध्येष्वपि दातव्यो रसोऽतः श्रेष्ठ उच्यते ॥ ५ ॥
हतो हन्ति जराव्याधिंमूर्च्छितो व्याधिघातकः ।
बद्धः खेचरतां धत्ते कोऽन्यो सूतात्कृपाकरः ॥ ६ ॥

सब औषधों से पारा ही अधिक गुणदायक है । क्योंकि इसको थोड़ी मात्रा में दिया जाता है, इससे खाने वाले को अरुचि भी नहीं होती, और यह शीघ्र आरोग्य प्रदान भी करता है ॥ ४ ॥ विद्वानों ने साध्य रोगों में ही अन्य औषध आदि देने कहे हैं। परन्तु असाध्य रोगों में भी पारद दे सकते हैं इसीलिये पारा श्रेष्ठ कहा जाता है ॥ ५ ॥ भस्म किया हुआ पारा बुढापा और रोगों को दूर करता है, और मूर्च्छित किया हुआ पारा रोगों को दूर करता है । बांधा हुआ पारा आकाश में भ्रमण करा सकता है । ऐसे पारे से बढ़कर संसार में और कौन कृपालु है ॥ ६ ॥

अथ रस पर्य्यायमाह ।

रसेन्द्रः पारदः सूतः सूतराजश्च सूतकः ।
शिवतेजो रसः सप्त नामान्येवं रसस्य तु ॥ ७ ॥

पारे के संस्कृत में सात नाम हैं:—रसेन्द्र, पारद, सूत, सूतराज सूतक, शिवतेज और रस ॥ ७ ॥

मतान्तरम् ।

शिवबीजं रसः सूतः पारदश्च रसेन्द्रकः ।
एतानि रसनामानि तथाऽन्यानि यथा शिवे ॥ ८ ॥

शिवबीज, रस, सूत, पारद, रसेन्द्रक, ये नाम भी पारे के हैं तथा जितने नाम शिव के हैं वे सब नाम भी पारे के हैं ॥ ८ ॥

अथ रस लक्षणम् ।

अन्तः सुनीलो बहिरुज्वलो यो मध्यान्हसूर्यप्रतिमप्रकाशः ।
शस्तोऽथ धूम्रः परिपाण्डरश्च चित्रो न योज्यो रसकर्मसिद्धौ ॥ ९ ॥

अन्दर से खूब नीला हो, बाहर से खूब उज्वल हो, तथा जो

दोपहर के सूर्य के समान प्रकाशमान हो, ऐसे लक्षणों वाला पारा, रसकर्म की सिद्धि में लेना चाहिये । तथा जो पारा धुंआके से रंग वाला और श्वेत रंग वाला तथा चित्रविचित्र रंगवाला हो उसे रस कर्म में कभी न लेना चाहिये ॥ ९ ॥

अथ रस दोषानाह ।

नागो वङ्गो मलो वन्हिश्चाञ्चल्यश्च विषं गिरिः ।
असह्याग्निमहीदोषा निसर्गाः पारदे स्थिताः ॥ १० ॥
व्रणं कुष्ठं तथा जाड्यं दाहं वीर्यस्य नाशनम् ।
मरणं जड़तां स्फोटं कुर्वन्त्येते क्रमान्नृणाम् ॥ ११ ॥
तस्माद्रसस्य संशुद्धिं विदध्याद्भिषजां वरः ।
शुद्धोऽयममृतः साक्षाद्दोषयुक्तो रसो विषम् ॥ १२ ॥

नाग अर्थात् सीसा, बंग अर्थात् रांगा, मल, अग्निगुण, चञ्चलता, विष, गिरि, असह्याग्नि अर्थात् अग्नि न सह सकना, ये सातों दोष पारे में स्वाभाविक होते हैं ॥१०॥ इन दोषों से बड़े२ रोग होते हैं यदि अशुद्ध पारा खाया जाये तो पारे में जो सीसा मिला हुआ है इस दोष से शरीर में व्रण या फोड़े फुंसियां होजाती हैं, वंग दोष से कुष्ठ रोग, मल दोष से जड़ता, अग्निदोष से दाह, चञ्चलता दोष से वीर्यनाश, विष दोष से मृत्यु, गिरि दोष से जड़ता, असह्याग्नि दोष से स्फोट फोड़े आदि रोग क्रमशः मनुष्यों को होते हैं ॥ ११ ॥ इसी कारण पारे की अच्छी प्रकार शुद्धि करना सुवैद्य का कर्त्तव्य है । क्योंकि यह पारा शुद्ध हुआ २ हो तो साक्षात् अमृत के समान है और यदि अशुद्ध हो तो यही विष के समान है ॥ १२ ॥

मतान्तरम् ।

दोषहीनो यदा सूतस्तदा मृत्युज्वरापहः ।
शुद्धोऽयममृतः साक्षाद् दोषयुक्तो रसो विषम् ॥ १३ ॥

जो पारा दोषों से रहित होता है वह मृत्यु और ज्वरों को दूर

करने वाला होता है। जब यह शुद्ध होता है तब साक्षात् अमृत होता है और जब यह दोषयुक्त होता है तो विष होता है ॥ १३ ॥

अथ रस शोधनम् ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि पारदस्य विशोधनम् ।
रसो ग्राह्यः सुनक्षत्रे पलानां शतमात्रकम् ॥
पञ्चाशत् पञ्चविंशद्वा दशपञ्चैकमेव वा ।
पलार्द्धीनो न कर्त्तव्यो रस संस्कार उत्तमः ॥ १४ ॥

अब पारे का शोधन लिखते हैं। अच्छे नक्षत्र में सौ पल पारा लेवे। अथवा पचास पल लेवे। अथवा पच्चीस पल वा दश पल वा पांच पल लेवे। अथवा एक पल ही लेवे। पल से कम पारे का संस्कार या शोधन करना उत्तम नहीं होता ॥ १४ ॥

मतान्तरम् ।

शतं पञ्चाशतं वापि पञ्चविंशद्दशैव च ।
पञ्चैकं वा पलश्चैव पलार्द्धं कर्षमेव च ॥ १५ ॥
कर्षान्न्यूनो न कर्त्तव्यो रससंस्कार उत्तमः ।
प्रयोगेषु च सर्वेषु यथालाभं प्रकल्पयेत् ॥ १६ ॥
शुभेऽह्नि विष्णुं परिचिन्त्य कुर्यात् सम्यक् कुमारी वटुकार्चनञ्च
सुलौह पाषाणसमुद्भवेऽस्मिन् दृढे च वेदाङ्गुलिगर्भमात्रे ॥ १७
सुतप्तखल्ले निजमंत्रयुक्तां विधाय रक्षां स्थिरसारबुद्धिः ।
अनन्यचित्तः शिवभक्तियुक्तः समाचरेत् कर्म्म रसस्यतज्ज्ञः ॥१८॥

सौ पल, पचास पल, पच्चीस पल या दश पल, पांच पल, एक पल, आधा पल वा एक कर्ष पारा ले ॥ १५ ॥ एक कर्ष से कम पारे का संस्कार करना उत्तम नहीं होता। औषध प्रयोगों में जितना पारा लिखा हो उतना शुद्ध किया हुआ पारा डाले ॥ १६ ॥ मेघ उपद्रवों से रहित शुभ दिन में प्रातःकाल परमात्मा का स्मरण कर कुमारी और बालक की पूजा करके उत्तम लौह के या पत्थर के

हुए अन्दर से चार अंगुल गहरे, दृढ़ तपे हुए पात्र अर्थात् तप्त खरल में अघोर मन्त्र के सहित रक्षा करके स्थिर बुद्धि वाला, विद्वान, अनन्यचित्त और शिव की भक्ति से युक्त होकर, पारे के कर्म आरंभ करे ॥ १८ ॥

तप्तखल्ल लक्षणम्।

अजाशकृत् तुषाग्निश्च भूगर्त्ते त्रितयं क्षिपेत्।
तस्योपरिस्थितं खल्लं तप्तखल्लमिति स्मृतम् ॥ १९ ॥

बकरी की मींगनें, तुष और अग्नि इन तीनों को पृथ्वी में छोटा गढ़ा खोद कर डालदे। आग लगजाने पर उसपर खरल रख दे। इसे ही तप्तखल्ल कहते हैं ॥ १९ ॥

अथ (अघोर) रक्षामन्त्रः।

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोराघोरतरेभ्यश्च।
सर्वतः सर्वसर्वेभ्योनमस्ते रुद्ररूपिभ्यः ॥ २० ॥

"अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यः घोराघोरतरेभ्यश्च सर्वतः सर्वसर्वेभ्यः नमस्ते रुद्ररूपिभ्यः" इस मंत्र का जप तथा चिन्तन कर पारा शोधे ॥२०॥

अथ रसनिगडः।

स्नुह्यर्कसम्भवं क्षीरं ब्रह्मबीजश्च गुग्गुलुः।
सैन्धवं द्विगुणं मर्द्यं निगड़ोऽयं महोत्तमः ॥ २१ ॥

थोहर का दूध, आक का दूध, ढाकके बीज, गूगल, सेंधानमक सब दो २ तोला हो तो पारा ५ तोला हो। इनसे मिलाकर घोटनेसे उत्तमरूपसे पारे का निगड़ होजाता है ॥ २१ ॥

अथ साधारणशुद्धिः।

षोडशांशैर्भिषक् चूर्णैरेकत्रमर्दयेद्रसम्।
प्रत्येकं प्रत्यहं दत्त्वा सप्तवारं विमर्दयेत् ॥ २२ ॥

पारा१भाग पारे के मारकद्रव्यों का चूर्ण सोलहवां भाग, दोनों को एकत्र मर्दन करे। प्रति दिन एक२ द्रव्य का चूर्ण डालकर सात२वार सबको खूब मर्दन करे। इस से पारा शुद्ध हो जाता है ॥ २२ ॥

विशेष शुद्धिमाह ।

सोर्णानिशेष्टका धूम—जम्बीराम्बुभिरादिनम् ।
मर्दितः काञ्जिकैर्धौतो नागदोषं रसस्त्यजेत् ॥ २३ ॥

ऊन, हल्दी, ईंट का चूर्ण, रसोई घरका धुंआ, जम्बीरी नीबूका रस, इन से पारे को मिला कर सात दिन मर्दन करके काञ्जीसे धोवें इस प्रकार से पारे का नागदोष छूट जाता है ॥ २३ ॥

विशालाङ्कोठचूर्णेन वङ्गदोषं विमुञ्चति ।
राजवृत्तो मलं हन्ति चित्रको वन्हिदूषणम् ॥ २४ ॥

इन्द्रायन और अङ्कोठ के चूर्ण से पारा घोटें तो वंगदोष छूट जाता है । अम्लतास के फल के गूदे से पारा मर्दन करें तो मलदोष नाश होता है । चीते के रस से घोटे तो वन्हिदोष दूर होता है ॥ २४ ॥

चाञ्चल्यं कृष्णधुस्तूरं त्रिफला विषनाशिनी ।
कटुत्रयं गिरिं हन्ति असह्याग्निं त्रिकण्टकः ॥ २५ ॥

काले धतूरे के रस से घोटें तो पारे का चाञ्चल्य दोष दूर होता है । त्रिफला अर्थात् हरड़, बहेड़ा, आंवला, इनके चूर्ण से घोटें तो पारे का विष दोष दूर होता है । त्रिकुटा अर्थात् सोंठ, मिर्च और पीपल के चूर्णसे घोटें तो पारे का गिरि दोष दूर होता है । गोखरू से पारा घोटें तो पारे का असह्याग्नि दोष दूर होता है ॥ २५ ॥

प्रतिदोषं कलांशेन तत्तच्चूर्णं सकन्यकम् ।
उद्धृत्योष्णारनालेन मृत्पात्रे क्षालयेत् सुधीः ।
एवं संशोधितः सूतः सप्तकञ्चुकवर्जितः ॥ २६ ॥

प्रत्येक दोषको दूर करने के लिये पारा एक भाग हो तो औषधों का चूर्ण सोलहवां भाग डाले और उसमें घीकुमार का रस डालकर घोटता रहे सात दिन इस प्रकार मर्दन करके गरम कांजीसे मिट्टी के पात्र में डालकर धोता जावे इस प्रकार से शुद्ध किया हुआ पारा सातों दोषों से रहित होजाता है ॥ २६ ॥

मतान्तरम्।

श्रीखण्डं देवकाष्ठञ्च काकजङ्घाजयाद्रवैः।
कर्कटीमूषली कन्या-द्रवं दत्त्वा विमर्दयेत्।
दिनैकं पातयेत् पश्चात् तं शुद्धं विनियोजयेत् ॥ २७॥

श्वेतचन्दन, देवदारु, काकजंघा, भांग का रस, ककड़ी, मूसली, घीकुमार इन सबके रस को लेकर एक२ दिन पारे में डालकर घोटे। फिर ऊर्ध्वपातनयंत्र से ऊर्ध्वपातन करे। इस प्रकार से शुद्धहुए पारे को प्रयुक्त करे ॥ २७॥

मतान्तरम्।

कुमार्य्या च निशाचूर्णैर्दिनं सूतं विमर्दयेत्।
पातयेत् पातनायंत्रे सम्यक् शुद्धो भवेद्रसः ॥ २८॥

घीकुमार, हल्दी का चूर्ण, इन दोनों से पारे को एक दिन मर्दन करे फिर ऊर्ध्वपातन यंत्र से पारे का ऊर्ध्वपातन करे तो पारा ठीक शुद्ध होजाता है ॥ २८॥

मतान्तरम्।

रसस्य द्वादशांशेन गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत्।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैर्यामं पाच्यं पातनयन्त्रके।
पुनर्मर्द्य पुनः पाच्यं सप्तवारं विशुद्धये ॥ २९॥

पारा एक भाग, शुद्धगंधक बारहवां भाग देकर मर्दन करे; फिर जम्बीरी नीबू के रस से घोटे। फिर ऊर्ध्वपातन यन्त्र से एक पहर की आंच देकर ऊर्ध्वपातन करे। फिर ऊपर से पारे को निकाल कर उतनाही गंधक मिला कर जम्बीरी नीबू के रससे घोट कर ऊर्ध्वपातनयंत्र से एक पहर तक आगपर पकावे। इस प्रकार सात वार मर्दन और सात वार ऊर्ध्वपातन करने से पारा शुद्ध हो जाता है२९

मतान्तरम्।

जयन्त्या वर्द्धमानस्य चार्द्रकस्य रसेन च।
वायस्याश्चानुपूर्व्यैकं मर्द्दनं रसशोधनम् ॥ ३०॥

एषां प्रत्येकशस्तावत् मर्दयेत् स्वरसेन च।
यावच्च शुष्कतां याति सप्तवारं विचक्षणः॥ ३१॥
उद्धृत्योष्णारनालेन मृद्भाण्डे क्षालयेत् सुधीः।
सर्वदोषविनिर्मुक्तः सप्तकञ्चुकवर्जितः।
जायते शुद्धसूतोऽयं युज्यते सर्वकर्मसु॥ ३२॥

पारा, पहले जयन्ती के पत्तों के रस से, फिर एरण्ड के पत्तों के रस से, फिर अदरक के रस से, फिर मकोय के स्वरससे क्रमशः मर्दन करने से शुद्ध हो जाता है॥ ३०॥

पूर्वोक्त द्रव्यों में से प्रत्येक के स्वरससे घोटे और सुखाले। इस प्रकार सातवार एक २ के रससे घोटकर सुखाले॥ ३१॥

फिर इस पारे को मिट्टी के पात्र में डाल कर गरम २ कांजी से धोवे इस प्रकार करने से पारा सब दोषों से रहित होकर और सप्तकञ्चुकी से छूटकर शुद्ध हो जाता है और इसे सब कर्मों में प्रयुक्त किया जाता है॥ ३२॥

मतान्तरम्।

निशेष्टकाधूमरजोऽम्लपिष्टो विकञ्चुकः स्याद्धि ततश्च सोर्णः।
वरारनालानलकन्यकाभिः सत्र्यूषणाभिर्मृदितस्तु सूतः॥ ३३॥

हल्दी का चूर्ण, ईंट का चूर्ण, रसोई घर का धुंआ, अम्लरस, भेड़ के रोम, त्रिफला का चूर्ण, कांजी, घीकुमार त्रिकुटा का चूर्ण इन सब द्रव्यों से पारे को मर्दन करे तो पारा शुद्ध तथा कञ्चुकी रहित हो जाता है॥ ३३॥

मतान्तरम्।

दिनैकं मर्दयेत् सूतं कुमारीसम्भवैर्द्रवैः।
तथा चित्रकजैः क्वाथैर्मर्दयेदेकवासरम्।
काकमाचीरसैः सार्द्धं दिनमेकन्तुमर्दयेत्॥ ३४॥

पारे को एक दिन घीकुमारी के रस से घोटे तथा एक दिन चीते के क्वाथ से घोटे, तथा एक दिन मकोय के रस से घोटे। इस से पारा शुद्ध हो जाता है॥ ३४॥

मतान्तरम्।

रसोन स्वरसैः सूतः नागवल्लीदलोत्थितैः।
त्रिफलायास्तथा क्वाथे रसोमर्द्यः प्रयत्नतः॥ ३५॥
ततस्तेभ्यः पृथक् कृत्वा सूतं प्रक्षाल्यकाञ्जिकैः।
सर्वदोषविनिर्मुक्तं योजयेत् रसकर्मसु॥ ३६॥

पारे को लहसन के रस से घोटे, फिर पान के स्वरस से घोटे, फिर त्रिफला के क्वाथ से यत्न पूर्वक घोटे॥ ३५॥

फिर कांजी से धोकर उस पारे को इनसे पृथक् करे। इस प्रकार से सब दोषों से छूटकर पारा विशुद्ध होजाता है। इसे रसादि बनाने में प्रयुक्त करे॥ ३६॥

अथोर्द्ध्वपातनम्।

भागास्त्रयो रसस्यार्क-भागमेकं विमर्दयेत्।
जम्बीरद्रवयोगेण यावदायाति पिण्डताम्॥ ३७॥
तत्पिण्डं तलभाण्डस्थमूर्द्ध्वं भाण्डे जलं क्षिपेत्।
कृत्वाऽऽलवालकं वाऽपि ततः सूतं समुद्धरेत्।
ऊर्द्ध्वपातनमित्युक्तं भिषग्भिः सूतशोधने॥ ३८॥

पारा तीन भाग, शुद्धताम्रचूर्ण एक भाग दोनों को मर्दन करे फिर जम्बीररस डालकर मर्दन करे जब पिण्ड बन जाये तब उसे नीचे के भाण्ड में रखे, ऊपर के भाण्डेकी पीठ पर चारों ओर मिट्टी की छोटी सी दीवार बना दे, उसके अन्दर जल भरदे नीचे आग दे, ऊपर के भाण्डके अन्दर लगे हुए पारे को निकाल ले। यही ऊर्ध्वपातनविधि पारद शुद्धकरने के लिये वैद्योंने निश्चितकी है॥ ३७॥ ३८।

अथाधः पातनम्।

नवनीताह्वयं गन्धं घृष्ट्वा जम्भाम्भसा दिनम्।
वानरीशिग्रुशिखिभिः सैन्धवासुरिसंयुतैः॥ ३९॥
नष्टपिष्टं रसं कृत्वा लेपयेदूर्द्ध्वभाण्डके।
ऊर्ध्वभाण्डोदरं लिप्त्वा ऽधोभाण्डं जलसंयुतम्॥ ४०॥

'सन्धिलेपं द्वयोः कृत्वा तद् यन्त्रं भुविपूरयेत् ।
उपरिष्टात् पुटेदत्ते जले पततिपारदः ।
'अधः पातनमित्युक्तं सिद्धाद्यैः सूत कर्म्मणि ॥ ४१ ॥

आमिलासारगन्धक जंबीरी नीबू के रस से एक दिन मर्दन कर तथा कौंच, सुहांजना, अपामार्ग, सेंधानमक, तथा राई इन सब समभाग लेकर और पीसकर, पारे के साथ मिलाकर मर्दन करे जब पारेकी पीठी सी हो जाये तब इसे ऊपर के पात्र के अन्दर लेप देवे, तथा नीचे के पात्र में जल भर देवे। दोनों पात्रों के मुख संधिलेप करके उस यंत्रको भूमि में गढ़ा खोदकर रखदे। ऊपर आग जलाकर पुट दे।तो पारा निकल कर जल में जागिरता है। विधि का नाम सिद्धवैद्यों ने पारेका अधःपातन कहा है ३९-४०।

अथ तिर्य्यक्पातनम् ।

'घटे रसं विनिक्षिप्य सजलं घटमन्यकम् ।
तिर्य्यङ्मुखं द्वयोः कृत्वा तन्मुखं रोधयेत् सुधीः ॥ ४२ ॥
'रसाधो ज्वालयेदग्निं यावत् सूतो जलं विशेत् ।
तिर्य्यक्पातनमित्युक्तं सिद्धैर्नागार्जुनादिभिः ॥ ४३ ॥

एक घड़े में पारा डालकर दूसरे घड़े में जल भरकर दोनों के मुखको तिरछा बांध देवे और पारे के नीचे आग्न जलावे। पारा उड़कर जल के पात्र में चला जावे। तो उसे निकाल लेवे नागार्जुन आदि सिद्धवैद्यों ने तिर्य्यक पातन कहा है ॥ ४२-४३ ॥

अथ बोधनम् ।

'एवं कदर्थितः सूतः षण्डत्वमाधिगच्छति ।
तन्मुक्तये ऽस्य क्रियते बोधनं कथ्यते हि तत् ॥ ४४ ॥
'विश्वामित्रकपाले वा काचकूप्यामथापि वा ।
सूते जलं विनिक्षिप्य तत्र तन्मज्जनावधि ॥ ४५ ॥
'पूरयेत् त्रिदिनं भूम्यां गजहस्त प्रमाणतः ।

अनेन सूतराजोऽयं षण्डभावं विमुञ्चति ॥ ४६ ॥

इन पातनों से पारा कुछ हीनवीर्य होजाता है इस लिये इस दोष को दूर करने के लिये पारे का बोधन संस्कार किया जाता है। नारियल के प्याले या काचकूपी में पारा रखकर उसमें इतना जल डाले कि पारा डूब जावे। इस पात्र को फिर भूमिमें तीस अंगुल नीचे गाड़ देवे, तीन दिन तक ऐसा ही रखे इससे पारा नपुंसकत्व को छोड़ देता है ॥ ४४-४६॥

अथ हिङ्गुलाकृष्टो रसः।

अथवा हिङ्गुलात् सूतं ग्राहयेत् तन्निगद्यते ।
जम्बीरनिम्बुनीरेण मर्दितो हिङ्गुलो दिनम् ॥ ४७ ॥
ऊर्द्ध्वपातनयन्त्रेण ग्राह्यः स्यान्निर्मलो रसः ।
कञ्चुकैर्नागवङ्गाद्यैर्निर्मुक्तो रसकर्म्मणि ।
विना कर्माष्टकेनैव सूतोऽयं सर्वकर्म्मकृत् ॥ ४८

अथवा हिंगुल अर्थात् शिंगरफ से पारा निकाले। उसकी विधि यों है कि,पारे को जम्बीरी या काग़ज़ी नीबू के रस से मर्दन करे। फिर एक पात्र में रख ऊर्ध्वपातन यन्त्र द्वारा निर्मल पारा ऊपर के पात्र में निकालले। इस प्रकार से शुद्ध हुआ पारा नाग वंग आदि दोषों तथा सात कञ्चुकियों से रहित होता है। अष्टकर्म करने के बिना भी यह पारा सब कर्म्मों के योग्य होता है ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

अष्टकर्म्म यथा।

स्वेदनं मर्दनञ्चैव मूर्च्छनोत्थापने तथा ।
पातनं बोधनं चैव नियामनमतः परम् ॥ ४९ ॥
दीपनञ्चेति संस्काराः सूतस्याष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ ५० ॥

स्वेदन, मर्दन, मूर्च्छन, उत्थापन, पातन, बोधन, नियामन दीपन ये आठ संस्कार पारे के होते हैं ॥ ४९ ॥ ५० ॥

मतान्तरम् ।

दरदं तण्डुलस्थूलं कृत्वा मृत्पात्रके त्रिदिनम् ।
भाव्यं जम्बीररसैश्चाङ्गर्य्या वा रसैर्बहुधा ॥ ५१ ॥
ततश्च जम्बीरवारिणा चाङ्गर्य्या रसेनपरिप्लुतम् ।
कृत्वा स्थालीमध्ये निधायतेदुपरि कठिनीघृष्टम् ॥ ५२ ॥
उत्तानं चारु शरावं तत्र त्रिंशद्वारं जलं देयम् ।
उष्णं हेयं तथैव तदूर्द्ध्वपातनेन निर्म्मलः शिवजः ॥५३॥

हिंगुल को चावलों के समान कण बना के अर्थात् जौकु करके उसको मिट्टी के पात्र में तीन दिन तक जम्बीरी नीबू के रस या चाङ्गेरी के रस से भली प्रकार घोटे । फिर जम्बीरी नीबू के रस और चाङ्गेरी के रस से उसे भरके एक चौड़े पात्र में रखे और उस पात्र के ऊपर खड़िया मिट्टी से लिपाहुआ ऊपर मुंह करके एक शराव रखे । दोनोंको सन्धिबन्धन कपड़मिट्टी से कर दे नीचे अग्नि दे पानी गर्म हो जाय तो उसे निकाल कर शीतल जल डालदे । इस प्रकार तीस बार ठण्डा पानी ऊपर के शराव में डाले इस प्रकार करने से ऊपर खड़िया से मिला हुआ शुद्ध पारा मिलेगा उसे वस्त्र में से छानकर काञ्जी से बार२धोकर पारा पृथक् करले॥५१।५२।५३॥

मतान्तरम् ।

पारिभद्ररसैः पेष्यं हिङ्गुलं याममात्रकम् ।
जम्बीराणां रसैर्वाऽथ पचेत् पातनयन्त्रके ॥ ५४ ॥
तं सूतं योजयेद् योगे सप्तकञ्चुकवर्जितम् ।
संशुद्धिमन्तरेणापि शुद्धोऽयं रसकर्म्मणि ॥ ५५ ॥

हिङ्गुल को नीम के पत्तोंके रससे अथवा जम्बीरी नीबू के रस से एक पहर पीसे । तथा ऊर्ध्वपातन यन्त्र से पकावे । ऊपर के पात्र में शुद्ध पारा मिलेगा । यह पारा सातों कञ्चुकियों से रहित है यह बिना अन्य शुद्धि के भी रसादि कार्यों में शुद्ध माना गया है ५४।५५

अथ मूर्च्छनम् ।

गन्धकेन रसं प्राज्ञः सुदृढं मर्दयेद् भिषक् ।
कज्जलाभो यदा सूतो विहाय घनचापलम् ॥ ५६ ॥
दृश्यतेऽसौ तदा ज्ञेयो मूर्च्छितो रसकोविदैः ।
असौ रोगचयं हन्यादनुपानस्य योगतः ॥ ५७ ॥

शुद्ध हुए पारद को शुद्ध गन्धक के साथ खूब मर्दन करे इससे पारा अपनी चपलता को छोड़कर कज्जल के समान काला चूर्ण होजायेगा। इसेही वैद्यलोग पारद का मूर्च्छन कहते हैं। कज्जली या मूर्च्छित पारा पृथक्२अनुपानों से रोगसमूहों को नाश करनेवाला होता है।५६।५७।

अथ मारणम् ।

द्विपलं शुद्धसूतस्य सूतार्द्धं गन्धकं तथा ।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य दिनमेकं निरन्तरम् ।
रुद्ध्वा तद्भूधरे यन्त्रे दिनैकं मारयेत् पुटे ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा दो पल, शुद्धगन्धक१पल, दोनों की कज्जली बनाकर घीकुमारके रससे एक दिन निरन्तर मर्दन करके भूधरयन्त्रमें रुद्ध करके एक दिन पुट देकर मारण करे। इससे पारा मर जाता है ॥ ५८ ॥

मतान्तरम् ।

भुजङ्गवल्लीनीरेण मर्दयेत् पारदं दृढम् ।
कर्कटीकन्दमूषायां सम्पुटस्थं पुटेद्गजे ।
भस्म तद्योगवाहि स्यात् सर्वकर्मसु योजयेत् ॥५९॥

शुद्ध पारे को पान के पत्तों के रस से भली प्रकार मर्दन करे फिर ककड़ी की जड़ के कंद की मूषा बना कर उस में इस पारे को भरे। फिर शराबसम्पुट में उस मूषा को रखकर गजपुट में भस्म करे। इस प्रकार से पारे की भस्म हो जाती है। यह भस्म योगवाही है और इसे सब कार्यों में प्रयुक्त कर सकते हैं ॥ ५९ ॥

मतान्तरम् ।

श्वेताङ्कोठजटानीरैर्मर्द्यः सूतो दिनत्रयम् ।
पुटेत्तु चान्धमूषायां सूतो भस्मत्वमाप्नुयात् ॥६०॥
देवदाली हंसपादी यमचिञ्चा पुनर्नवा-
एभिः सूतो विघृष्टव्यो पुटनात् म्रियते ध्रुवम् ॥६१

[इति भस्म]

श्वेत अङ्कोल की जड़ के रस से शुद्ध पारे को तीन दिन मर्दन करे। फिर अन्ध मूषा में भरकर पुट दें तो पारा भस्म हो जाता है ॥ ६० ॥ बंदालडोडा, हंसराज, इमली और पुनर्नवा इन सब के साथ पारे को मर्दन करके पुट दें तो पारा अवश्य मर जाता है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

(यह पारे की भस्म हुई)

अथ रस सिन्दूरम् ।

भागो रसस्य त्रय एव भागा गन्धस्य माषः पवनाशनस्य ।
सम्मर्द्य गाढं सकलं सुभाण्डे तां कज्जलीं काचघटे निदध्यात्॥६२
संरुध्य मृत्कर्पटकैर्घटीं तां मुद्रे सुचूर्णां खटिकांश्चदत्वा ।
क्रमाग्निना त्रीणि दिनानि पक्त्वा तां वालुकायन्त्रगतां ततः स्यात्
बन्धूकपुष्पारुणमीशजस्य भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपानैर्मरणं जराञ्च हन्त्यस्य वल्लः क्रमसेवनेन ॥ ६४ ॥

शुद्ध पारा १ पल अर्थात् ८ तोला, शुद्ध गंधक २४ तोला, शुद्ध सीसा १ मासा, सब को घोटे। कज्जल समान हो जाने पर उसको एक कांच की कुप्पी में भर दे ॥ ६२ ॥ उस काच कूपी पर भली प्रकार कपड़ मिट्टी करे और उस के मुंह को खड़िया मिट्टी से बंद कर दे। फिर एक बड़े पात्र के मध्य में उस कूपी को रख चारों ओर उस पात्र में बालु भर दे। फिर नीचे से क्रमशः मन्द, मध्यम और तीक्ष्ण आंच देकर उसको तीन दिन तक पकावे ॥ ६३ ॥

स्वांग शीतल होने पर शीशी को तोड़कर पारे की भस्म निकाले । यह भस्म दोपहरिया के फूल के समान लाल रंग की होगी । इस को सब रोगों में प्रयुक्त करे। इस भस्म की डेढ रत्ती मात्रा क्रमशः सेवन करने से और रोगानुसार अनुपान पीने से मृत्यु और बुढ़ापा नाश करती है ॥ ६४ ॥

मतान्तरम् ।

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।
विधिवत् कज्जलीं कृत्वा न्यग्रोधाङ्कुरवारिभिः ॥ ६५ ॥
भावनात्रितयं दत्त्वा स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरच्य कवचीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ६६ ॥
दद्यात् तदनु मन्दाग्निं भिषग् यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ।
अनुपान विशेषेण करोति विविधान् गुणान् ॥ ६७ ॥

शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गंधक १ पल दोनों की कज्जली बनाकर बड़ के अंकुरों के स्वरस से तीन भावना दे । फिर एक काचकूपी में भरे। इस काचकूपी को एक बड़े पात्र में रख चारों ओर से बालु से भर दे। काचकूपी के मुख को खड़िया से बन्द कर दे। इस प्रकार इस कवची यंत्र के नीचे १२ घण्टे तक मन्द २ अग्नि दे । इस से दोपहर के सूर्य के समान लालरंग का रससिन्दूर बनता है । इसे विशेष २ अनुपानों से दें तो विविध गुण करता है ॥ ६७ ॥

मतान्तरम् ।

पृथक् समं समं कृत्वा पारदं गन्धकं तथा ।
नरसारं धूमसारं स्फटिकं याममात्रकम् ॥ ६८ ॥
निम्बूरसेन सम्मर्द्य काचकूप्यां निवेशयेत् ।
मुखे पाषाणखटिकां दत्त्वा मुद्रां प्रलेपयेत् ॥ ६९ ॥

सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैः पृथक् संशोष्यवेष्टयेत् ।
सच्छिद्रायां मृदः स्थाल्यां कुपितां तां निवेशयेत् ॥ ७० ॥
पूरयेत् सिकतापूरैः आगलं मतिमान्भिषक् ।
निवेश्य चुल्ल्यां दहनं मन्दं मध्यं खरं क्रमात् ॥ ७१ ॥
प्रज्वाल्य द्वादशं यामं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
स्फोटयित्वा तु मुक्ताभमूर्द्ध्वलग्नं बलिंत्यजेत् ।
अधःस्थं रससिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ७२ ॥

शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगंधक १ भाग, नवसादर १ भाग, रसोई घर का धुंआ १ भाग, फिटकरी १ भाग। पहले पारे गंधक कज्जली करे। फिर शेष द्रव्य मिलाकर भली प्रकार मर्दन करे। फिर नीबू का रस डाल कर १ पहर मर्दन करे। फिर इसे १ काचकूपी में भर दे और कूपी के मुख पर खड़िया का डाट लगाकर सन्धि स्थान बन्द कर दे। इस कूपी पर सात कपड़ मिट्टी करके धूप में सुखा लेवे। फिर मध्य में छिद्रवाली मिट्टी की हांडी में इस कूपी को रख दे और इस हांडी में रेता इतना भरे कि काचकूपी के गले तक आ जाय अब इस हांडी को चूल्हे पर रख कर मन्द, मध्यम और तीव्र आंच क्रमशः देवे। इस प्रकार १२ पहर आंच देकर स्वाङ्ग शीतल होने पर कूपी को बाहर निकाले अब इस कूपी को तोड़ तो मोती के समान कूपी के मुख पर लगी हुई गंधक को फेंक देवें और गंधक से नीचे कूपी के गले में लगे हुए रस सिन्दूर को लेकर सब रोगों में प्रयुक्त करे ॥ ७२ ॥

अथ रसकर्पूरम् ।

टंगणं मधु लाक्षा च ऊर्णा गुञ्जायुतो रसः ।
मर्दितो भृङ्गजद्रावैः दिनैकं चालयेत् पुनः ।
ध्मातो भस्मत्वमाप्नोति शुद्धकर्पूरसाभिन्नभम् ॥ ७३ ॥

सुहागा, शहद, लाख ऊन, रत्तियां प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग

ले, पारा १ भाग ले। सब को पीस भांगरे के रस में मर्दन करे, फिर सम्पुट कर १ दिन आग देवे तो पारा भस्म हो जाता है और शुद्ध कर्पूर के समान पारदभस्म मिलता है। इस का नाम रसकर्पूर है ॥ ७३ ॥

मतान्तरम्।

पिष्टं पांशुपटुप्रगाढममलं वज्राम्बुणा नैकशः।
सूतं धातुगतं खटीकवलितं तं सम्पुटे रोधयेत् ॥
अन्तस्थं लवणस्य तस्य च तले प्रज्वाल्य वन्हि दृढं।
घस्रं ग्राह्यमथेन्दुकुन्दधवलं भस्मोपरिस्थं शनैः ॥ ७४ ॥
तद्वल्लद्वितयंलवङ्गसहितं प्रातः प्रभुक्तं नृणामूर्द्ध्वं-
रेचयति द्वियाममसकृत् पेयं जलं शीतलम् ॥
एतद्धन्ति च वत्सराधिकविषं षाण्मासिकं मासिकम्।
शैलोत्थं गरलं मृगेन्द्रकुटिलोद्भूतश्चतात्कालिकम् ॥ ७५ ॥

शुद्ध कासीस और सैन्धलवण को शुद्धपारे से मिलाकर पीसे फिर थोहर अर्थात् सीज के दूध से अनेक वार घोटे। फिर इसे एक लोहे के कटोरों के सम्पुट में बन्द करके खड़िया मिट्टी से सन्धि लेप कर दे। इस सम्पुट को एक हांडी में रख चारों ओर से नमक भर दे। अब इस के नीचे एक दिन तक तीव्र आग देवे। स्वांग शीतल होने पर खोल कर ऊपर के कटोरे में लगी हुई चन्द्रमा और कुन्द के फूल के समान श्वेतरंग की भस्म मिलेगी। इसे ही रसकर्पूर कहते हैं। इस भस्म को दो वल्ल भर अर्थात् तीन रत्ती लौंग के साथ प्रातःकाल खाने से ६ घंटे के पीछे दस्त आने आरम्भ होजाते हैं। इस के सेवन के पीछे कई वार शीतल जल पीना चाहिये। इस रस के खाने से एक वर्ष से पुराना विष, वर्ष भर का विष, ६ मास तक का विष, तथा एक मास तक के खाये हुए विष दूर होते हैं। तथा पत्थर लगने से जो विष उत्पन्न हो जाये अथवा खनिज विष तथा सिंह की दाढ़ के तथा बालों के खाने से जो

विष उत्पन्न हो गया हो उसे भी नष्ट करता है ॥ (इसका नाम रसमञ्जरीकार रसकर्पूर कहते हैं । चन्द्रिकाकार इसे पारे की श्वेत भस्म कहते हैं । डाक्टर इसे कैलोमल कहते हैं । विरेचनार्थ आधुनिक मात्रा दो अथवा ढ़ाई रत्ति की है ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

[रसकर्पूरमिति रसमञ्जरीकारः; श्वेतभस्मेति चन्द्रिकाकारः]

सर्वाङ्गसुन्दरो रसः ।

मर्दयेत् रसगन्धौ च हस्तिशुण्डीद्रवैदृढ़म् ।
भूधात्रिकारसैः वाऽपि पर्यन्तं दिनसप्ततः ॥ ७६ ॥
विघृष्य बालुकायन्त्रे मूषायां सन्निवेशयेत् ।
दिनमेकं दहेदग्नौ मन्दंमन्दं निशावधि ॥ ७७ ॥
एवं निष्पाद्यते पीतः शीतः सूतस्तु गृह्यते ।
पर्णखण्डेन तद्गुञ्जां भक्षयेत् सततं हिताम् ॥ ७८ ॥
क्षुद्बोधं कुरुते पूर्व्वमुदराणि विनाशयेत् ।
जराणां नाशनः श्रेष्ठस्तद्वत् श्रीसुखकारकः ॥ ७९ ॥
हृदयोत्साहजननः सुरूपतनयप्रदः ।
बलप्रदः सदा देहे जरानाशनतत्परः ॥ ८० ॥
अङ्गभङ्गादिकं दोषं सर्वं नाशयतिक्षणात् ।
एतस्मान्नापरःसूतोरसात् सर्व्वाङ्गसुन्दरात् ॥ ८१ ॥

[पीतभस्मेति चन्द्रिकाकारः]

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक सम भाग ले । इनकी कज्जली बनाकर हाथीसुंडी के रस से सात दिन तक मर्दन करे, फि भूम्यामलकी के रस से सात दिन तक मर्दन करे ॥ ७६ इसे मूषा में डालकर बालुकायंत्र में एक दिन भर अर्थात् चारपह तक मन्द २ आग्न से पाक करे ॥ ७७ ॥ स्वांगशीतल हो पर इसकी पील रंग की भस्म मिलेगी । इसको एक रत्ती भर पान के अन्दर रखकर खावे तो परम हितकारी है । भूख लगती

उदररोग नाश करती है। बुढ़ापा दूर करती है, तथा सुन्दर रूप और सुख देती है ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ हृदय में उत्साह देती है तथा सुन्दर रूप वाले पुत्र को देती है, बलप्रद है तथा बुढ़ापा शरीर से सदा दूर रखती है ॥ ८० ॥ अङ्गभङ्गादि सब दोषों को क्षण भर में नाश करती है। इस सर्वाङ्गसुन्दर रस से बढ़कर और कोई पारद भस्म नहीं। (इसका नाम चन्द्रिकाकार " पीतभस्म " कहते हैं) ॥ ८१ ॥

अथ कृष्णाभस्म।

धान्याभ्रकं रसं तुल्यं मारयेत् मारकद्रवैः।
दिनैकं तेन कल्केन वस्त्रं लिप्त्वा तु वर्त्तिकाम् ॥ ८२ ॥
विलिप्य तैलैर्वार्त्तिं तामेरण्डोत्थैः पुनः पुनः।
तदाज्यभाण्डे प्रज्वाल्य गृह्णीयात् पतितश्च यत् ॥ ८३ ॥
कृष्णभस्म भवेत् तच्च पुनर्मर्द्य नियामकैः।
दिनैकं पातयेत् यन्त्रे कन्दुकाख्ये न संशयः ॥
मृतः सूतो भवेत् तच्च तत्तद्रोगेषु योजयेत् ॥ ८४ ॥
श्वेतं पीतं तथा रक्तं कृष्णश्चेति चतुर्विधम्।
लक्षणं भस्मसूतानां श्रेष्ठं स्यादुत्तरोत्तरम् ॥ ८५ ॥

शुद्ध धान्याभ्रक और शुद्ध पारा समभाग लेकर मर्दन करे। और मारक द्रव्यों के रस से मारे। फिर इस कल्क से लीपकर एक कपड़े की बत्ती बनावे, उस बत्ती को एरण्ड के तेल से लीपकर एक घी के पात्र में रख जलावे। उस जलती हुई बत्ती से जो बूंदें नीचे गिरती जावें उन्हें इकट्ठा करता जावे। वह पारे की कृष्ण भस्म होगी। उसे फिर नियामकवर्ग की औषधों से मर्दन करके कन्दुक यन्त्र में पातन कर लेवे। इस प्रकार से पारे की भस्म हो जाती है इसमें कुछ संशय नहीं है। इसे भिन्न २ रोगों में प्रयुक्त करे ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ श्वेत, पीली, लाल तथा काली ये चार प्रकार की पारे की भस्में होती है। इन में पहली से पिछली २ अधिक श्रेष्ठ हैं ऐसा समझना चाहिये ॥ ८५ ॥

अथ वज्रमूषाकरणम् ।

द्वौ भागौ तुषदग्धस्य चैका वल्मीकमृत्तिका ।
लौहकिट्टस्य भागैकं श्वेतपाषाणभागिकम् ॥८६॥
नरकेशसमं किञ्चित् छागीक्षीरेण पेषयेत् ।
याममात्रं दृढं मर्द्यं तेन मूषां प्रकल्पयेत् ॥ ८७ ॥
शोषयित्वा रसं क्षिप्त्वा तत्कल्कैः सन्निरोधयेत् ।
वज्रमूषेयमाख्याता सम्यक् पारदसाधिका ॥ ८८ ॥

तुषों की राख दो भाग, बांबी की मिट्टी १ भाग, लोहे का मै
१ भाग, सफेद खाडिया मिट्टी १ भाग, पुरुष के बाल १ भाग
सब को बकरी के दूध में एक पहर तक दृढ़ता से पीसकर मू
बनाले ॥ ८७ ॥ इसको सुखाकर इस में पारा भर दे और इसी मू
कल्क से उस मूषा को बंद कर देवे । यह वज्रमूषा कहाती है । इ
में पारा भली प्रकार सिद्ध होजाता है ॥८८।

अथ नियामकगणः ।

सर्पाक्षी वन्यकर्कोटी कञ्चुकी यमचिञ्चिका ।
शतावरी शङ्खपुष्पी शरपुङ्खा पुनर्नवा ॥ ८९ ॥
मण्डूकपर्णी मत्स्याक्षी ब्रह्मदण्डी शिखण्डिनी ।
अनन्ता काकजङ्घा च काकमाची च पोतिका ॥ ९० ॥
विष्णुक्रान्ता सहचरा सहदेवी महाबला ।
बला नागबला मूर्वा चक्रमर्दकरञ्जकौ ।
पाठा तामलकी नीली जालिनी पद्मचारिणी ॥ ९१ ॥
घण्टा त्रिघण्टा गोजिह्वा कोकिलाक्षो घनध्वनिः ।
आखुपर्णी क्षीरिणी च त्रिपुटी मेषशृङ्गिका ॥ ९२ ॥
कृष्णवर्णा च तुलसी सिंही च गिरिकर्णिका ।
एता नियामकौषध्यः पुष्पमूलदलान्विताः ॥ ९३ ॥

गंध नाकुली, जंगली ककोडा, कञ्चुकशाक, खट्टी इमली, शतावरी शंखपुष्पी, शरपुंखा, पुनर्नवा, मण्डूकपर्णी, मछेछी, ब्रह्मदण्डी, रत्ती, अनन्तमूल, काकजंघा, मकोय, पोइशोक, विष्णुक्रान्ता, भिण्टी, सहदेवी, महाबला, बला, नागबला, मूर्वा, पनवाड, करञ्ज, पाठा, भूमी आमला, नील, कडवीतोरी, भारंगी, अतिबला, गुलच्छकन्द, गोजबां, तालमखाना, मोथा, मूषकपर्णी, खिरनी, एरण्ड, मेढा-सिंगी, काली तुलसी, कंटकारी, गिरीकर्णी, ये सब औषधियां फूल, मूल, पत्तों सहित लें। ये औषधि पारे की नियामक है ॥८९–९३॥

अथ मारकवर्गः ।

घन वचा चित्रकगोक्षुराः कटुतुम्बी दन्तिका जातिः ।
सर्पाक्षी शरपुङ्खा कन्या चाण्डालिनीकन्दम् ॥ ९४ ॥
विषमुष्टिवज्रवल्ल्यौ लज्जा लाक्षा च देवदाली च ।
सहदेवी नीप कणा निर्गुण्डी चक्रलाङ्गलिके ॥ ९५ ॥
माणार्कचन्द्ररेखा रविभक्ता काकमाचिका चार्कः ।
विष्णुक्रान्ता वायसतुण्डी वज्री च बला च शुण्ठी च ॥ ९६ ॥
कोषातकी जयन्ती वाराही हस्तिशुण्डिका रम्भा ।
मत्स्याक्षी यमचिश्चा हरिद्रे द्वे पुनर्नवा द्वितयम् ॥ ९७ ॥
धुस्तूरकाकजङ्घे शतावरी कञ्चुकी च वन्ध्या च ।
तिलभेकपर्णिदूर्वा मूर्वा च हरीतकी तुलसी ॥ ९८ ॥
गोकण्टकाखुपर्ण्यौ कर्कटीकन्दवर्गलता च ।
मुषली हिङ्गु-गुडूची शिग्रुर्गिरिकर्णिका महाराष्ट्री ॥ ९९ ॥
मार्कव–सैन्धव–सरणी–सोमलता श्वेतसर्षपोऽसनकः ।
हंसपदी व्याघ्रपदी किंशुकभल्लातकेन्द्रवारुणिकाः ॥१००॥
सर्वेश्चार्द्धांशं वा अष्टादशाधिकं वा ऽपि द्रव्यम् ।
रसमारण मूर्च्छादौ युक्तिज्ञैर्विधिवदुपयोज्यम् ॥ १०१ ॥

नागरमोथा, वच, चीता, गोखरु, कडवी तुम्बी, दन्ती, चमेली,

गंधनाकुली, सरफोंका, घी कुमार, चाण्डालिनीकंद, कुचला, थोह या सींज, लज्जावन्ती, लाख, बंदाल, सहदेवी, कदम्ब, पिघले संभालु, तगर, कलिहारी, मागकन्द, श्वेत आंक, सोम राजी, आदित्यभक्ता, मकोय, लालशाक, विष्णुक्रान्ता, कौआठोडी, हड़जोड़ वला, सोंठ, कड़वी तोरी, जयन्ती, वराहकिन्द, हाथीसुंडी, केल मेछुछी, कच्चीइमली, हल्दी, दारुहल्दी, श्वेत पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, धतूरा, काकजंघा, शतावरी, कञ्चुकशाक वन्ध्या ककोंटी, ति मण्डूकपर्णी, दूर्वा, मूर्वा हरड़, तुलसी, गोखरु, मूषकपर्णी, ककड़ीकाक ककड़ी वर्ग की लता, मूषली, हींग, गिलोय, सुहाजना गिरीकर्णी, ज पीपली, भांगरा, सेंधानमक, गंधप्रसारणी, सोमलता, श्वेतसरसे असन, हंसराज, व्याघ्रपदी, केसू, भिलांवा, इन्द्रायण, इन स द्रव्यों से या इन में से आधे या अठारह द्रव्यों से पारे का मार तथा मूर्छा आदि होती है ऐसा विज्ञानी वैद्यों को विधिवत् कर चाहिये ॥ ९४—१०१ ॥

अथ अम्लगणः ।

अम्लवेतस जम्बीर–लुङ्गाम्ल चणकाम्लकाः ।
नागरङ्गं तिन्तिड़ी च चिञ्चापत्रञ्च निम्बुकम् ॥ १०२ ॥
चाङ्गेरी दाड़िमश्चैव करमर्द तथैव च ।
एष चाम्लगणः प्रोक्तो वेतसाम्लसमायुतः ॥ १०३ ॥

अम्लवेद, जम्बीरी, मातुलुंग, चणकाम्ल, नारंगी, इमली व फल, इमली के पत्ते, नीबू, चाङ्गेरी, खट्टा अनार, कमरख, अम्लवे इन सब को अम्लवर्ग कहा है ॥१०२—१०३॥

अथ लवणवर्गः ।

लवणानि च कथ्यन्ते सामुद्रं सैन्धवं विडम् ।
सौवर्चलं रोमकञ्च चुल्लिकालवणं तथा ॥ १०४ ॥

समुद्रलवण, सेंधा, विड, सौंचल, रोमक, चुल्लिकालवण नौसादर इन सब को लवणवर्ग कहा है ॥ १०४ ॥

अथ मूत्रवर्गः ।

मूत्राणि हस्ति करभ-महिषी खरवाजिनाम् ।
गोऽजाऽवीनां स्त्रियाः पुंसां मूत्रवर्ग उदाहृतः ॥ १०५ ॥

हाथी, ऊंट, भैंसा, गधा, घोड़ा, इन सब के पुरुषजाति के मूत्र लें। तथा गौ, बकरी, भेड़ इन सब के स्त्री जाति के मूत्र लें। इन सब को मूत्र वर्ग कहा है ॥ १०५ ॥

अथ द्रावकवर्गः ।

गुञ्जा टङ्कणमध्वाज्य-गुडा द्रावकपञ्चकाः ॥ १०६ ॥

श्वेतरत्ती, सुहागा, शहद, घी, गुड़, ये पांच धातुओं के द्रव करने वाले पञ्चद्रावक कहाते हैं ॥ १०६ ॥

अथ पित्तवर्गः ।

पित्तं पञ्चविधं मत्स्य-गवाश्वरुरुबर्हिजम् ॥ १०७ ॥

पित्त पांच हैं, मछली, गौ, घोड़ा, रुरुनामक मृग, मोर। इनको पित्तवर्ग कहते हैं। (अन्य ग्रन्थों में सूअर, भैंस, बकरा, मछली, मोर इनको पंचपित्त माना है तथा इनका ही रसों में प्रयोग देखा जाता है) ॥ १०७ ॥

क्षारवर्गः ।

स्वर्जिका टङ्कणश्चैव यवक्षार उदाहृतः ॥ १०८ ॥

सज्जी, सुहागा, यवक्षार। इन्हें क्षारवर्ग कहते हैं ॥ १०८ ॥

अथ रससेवाक्रमफले ।

प्रातरेव पुरतोविरेचनं तद्दिनोपवसनं विधाय च ।
तत्परे ऽहनि च पथ्यसेवनं तत्परे ऽहनि रसेन्द्रसेवनम् १०९
बुद्धिस्मृति प्रभा कान्ति-बलश्चैव रसस्तथा ।
वर्द्धन्ते सर्व एवैते रससेवाविधौ नृणाम् ॥ ११० ॥

प्रातःकाल विरेचन लेवे, उस सारे दिन उपवास रखे। उससे अगले दिन पथ्य सेवन करे। उस से अगले दिन पाराभस्म का सेवन करे ॥ १०९ ॥ पारा सेवन विधिपूर्वक करने से बुद्धि, स्मृति,

प्रभा, कान्ति, बल, और रस अर्थात् भोजन में से रसभाग अधिक बढ़ते हैं ॥ ११० ॥

तत्र पथ्यकथनम्।

हितं मुद्गाम्बु दुग्धाज्यं शाल्यन्नश्च विशेषतः।
शाकं पौनर्नववास्तु मेघनादश्च यूथिकाम् ॥ १११ ॥
लवणं मागधी मुस्तं पद्ममूलानि भक्षयेत्।
अनुपानन्तु दातव्यं ज्ञात्वा रोगादिकं भिषक् ॥ ११२ ॥

मूंग का रस, दूध, घी, शालीचावल, पुनर्नवा, बथुआ चौलाई, जुही, इनका शाक, सेंधा नमक, पीपल, मोथा, कमल जड़, ये सब वस्तु खानी पथ्य हैं। रोग आदि का विचारकर अनुपान देना चाहिये। (जुही का पाठ अन्य ग्रन्थों में नहीं मिलता है) ॥ १११ ॥ ११२ ॥

तत्र अपथ्य कथनम्।

कूष्माण्डं कर्कटीश्चैव कलिङ्गं कारवेल्लकम्।
कुसुम्भिका च कर्कोटी कलम्बी काकमाचिका।
ककाराष्टकमेताद्धि वर्जयेत् रसभक्षकः ॥ ११३ ॥

सफेद पेठा, ककड़ी, इन्द्रजौ, करेला, कुसुम्भ, ककोड़ा, कलम्बी शाक, मकोय, इन आठ ककार पूर्व वाले द्रव्यों को पारा सेवन के दिनों में न खाना चाहिये। ये अपथ्य हैं ॥ ११३ ॥

(यहां तक रस शोधन का अधिकार समाप्त हुआ)

अथ उपरसभेदाः।

गन्धको वज्र-वैक्रान्तं वज्राभ्रं तालकं शिला।
खर्परं शिखितुण्डश्च विमलं हेममाक्षिकम् ॥ ११४ ॥
काशीशं कान्तपाषाणं वराटाञ्जनहिङ्गुलम्।
गैरिकं शङ्खभूनागं टङ्कणश्च शिलाजतु।
एते चोपरसाः प्रोक्ताः शोध्या मार्य्या विधानतः ॥ ११५ ॥

गन्धक, हीरा, वैक्रान्त, वज्राभ्रक, हड़ताल, मनसिल, खपरिया, नीलाथोथा, रौप्यमाक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, कसीस, कान्तपाषाण

ड़ी, अञ्जन, हिंगुल, गेरू, शङ्ख, केचुओं का सत्त्व, सुहागा, शिलाजीत, सब उपरस कहे हैं। इनको शुद्ध कर के विधि पूर्वक मारना चाहिये ॥ ११५ ॥

तत्रादौ गन्धकोत्पत्तिमाह।

श्वेत द्वीपे पुरा देव्याः क्रीडन्त्याः प्रसृतं रजः।
क्षीरार्णवे तु स्नातायां दुकूलं रजसाऽन्वितम्।
धौतं तत् सलिले तस्मिन् गन्धको गन्धवत् स्मृतः ॥११६॥

पूर्वकाल में श्वेतद्वीप में क्रीडा करती हुई देवी पार्वती का रजः स्राव हुआ। तब उस ने क्षीर समुद्र में स्नान किया। स्नान के बाद अपने रजयुक्त वस्त्र को उस जल में धोया। उस समय वह जल गन्धवाला हो गया। अतएव इसे गन्धक कहते हैं। अभिप्राय यह है कि गन्धक पर्वत से निकलती है ॥ ११६ ॥

अथ गन्धकभेदाः।

चतुर्धा गन्धकः प्रोक्तो रक्तः पीतः सितोऽसितः।
रक्तो हेमक्रियासूक्तः पीतश्वेतौ रसायने।
व्रणादि लेपने श्वेतः कृष्णः श्रेष्ठः सुदुर्लभः ॥ ११७ ॥

गन्धक चार प्रकार का होता है। लाल, पीला, सफेद और काला लाल गन्धक स्वर्ण बनाने में काम आता है, पीला और सफेद, गन्धक रसायन के काम आता है और श्वेत गन्धक व्रण आदि पर लेप करने के काम आता है। काला गन्धक श्रेष्ठ है और वह अति दुर्लभ है ॥ ११७ ॥

अशुद्ध गन्धदोषाः।

अशुद्धगन्धः कुरुते तु तापं कुष्ठं भ्रमं पित्तरुजां करोति।
रूपं बलं वीर्य्यसुखं निहन्ति तस्मात् सुशुद्धो विनियोजनीयः॥ ११८॥

अशुद्ध गंधक सेवन करने से ताप, कुष्ठ, भ्रम, पित्त के रोग करती है तथा रूप, बल और वीर्य का नाश करती है। इस लिये अच्छी प्रकार शुद्ध कर इसे प्रयोग करें ॥ ११८ ॥

गन्धकपर्य्यायाः ।

गन्धको गन्धपाषाणः शुकपुच्छः सुगन्धकः ।
सौगन्धिकः शुल्वरिपुः पामारिर्नवनीतकः ॥ ११६ ॥

गन्धक, गन्ध पाषाण, शुकपुच्छ, सुगन्धक, सौगन्धिक, शुल्वरिपु, पामारि, नवनीतक ये नाम गन्धक के हैं ॥ ११६ ॥

अथ गन्धकशुद्धिः ।

साज्यं भाण्डे पयः क्षिप्त्वा मुखं वस्त्रेण बन्धयेत् ।
तत्पृष्ठगन्धकं क्षिप्त्वा शरावेण पिधापयेत् ॥ १२० ॥
भाण्डं निक्षिप्य भूम्यन्तरूर्द्ध्वे देयं पुटं लघु ।
ततः क्षीरे द्रुतं गन्धं शुद्धं योगेषु योजयेत् ॥ १२१ ॥

एक पात्र में घी और दूध मिलाकर डाले उस पात्र के मुख एक पतला कपड़ा बांधे। उस कपड़े पर गन्धक का चूर्ण रख उसे एक शराव से ढक देवे ॥ १२० ॥ इस भाण्ड को भूमि के अ रखकर ऊपर से छोटा पुट देवे। तो पिघल कर गन्धक कपड़े स होकर दूध वाले पात्र में चला जायगा। इस गन्धक को समझ कर योगों में बरते ॥ १२१ ॥

मतान्तरम् ।

लौहपात्रे विनिक्षिप्य घृतमग्नौ प्रतापयेत् ।
तप्ते घृते तत्समानं क्षिपेत् गन्धकजं रजः ॥ १२२ ॥
विद्रुतं गन्धकं दृष्ट्वा दुग्धमध्ये विनिक्षिपेत् ।
एवं गन्धकशुद्धिः स्यात् सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ १२३ ॥

एक लोहे के पात्र में घी डाल कर आग पर तपावे। तपे पर उस के समान ही गंधक का चूर्ण डालें गन्धक को पिघला हु देखकर दूध के बीच में डाल दें। दूध में से फिर गंधक को निक कर गरम जल से धोकर धूप में सुखा कर रखे। यह शुद्ध गन है इसे सब रोगों पर प्रयोग करे ॥ १२२ ॥ १२३ ॥

अथ शुद्धगन्धक गुणाः ।

शुद्धगन्धो हरेद्रोगान् कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ।
अग्निकारी महानुष्णो वीर्य्यवृद्धिं करोति च ॥ १२४ ॥

शुद्ध गंधक, कुष्ठ, अकालमृत्यु तथा ज्वर आदि रोगों को हरती है । तथा अग्नि को बढ़ाती है, गर्म है, तथा वीर्य वृद्धि करती है ॥ १२४ ॥

अन्यच्च ।

गन्धश्चातिरसायनः सुमधुरः पाके कटूष्णान्वितः ।
कण्डूकुष्ठविसर्प दर्प दलनो दीप्तानलः पाचनः ।
आमोन्मन्थन शोधनो विषहरः सूताच्च वीर्य्यप्रदः ।
गौरीपुष्पभवस्तथा क्रिमिहरः स्वर्णाधिकं वीर्य्यकृत् ॥१२५॥

शुद्ध गन्धक अति रसायन है, मधुर है, पाक में कटु और उष्ण है । खाज, कुष्ठ और विसर्प को दूर करती है । अग्नि दीपक और पाचक है । आमरस को शुद्ध करने वाली है । विष को हरती है । पारे से अधिक वीर्य्य प्रद है, क्रिमिनाशक है, स्वर्ण मिलाने से वीर्य्य करने वाला है ॥ १२५ ॥

अथ अशुद्धवज्रदोषाः ।

पार्श्वपीड़ां पाण्डुरोगं हृल्लासं दाहसन्ततिम् ।
रोगानीकं गुरुत्वञ्च धत्ते वज्रमशोधितम् ॥ १२६ ॥

अशुद्ध वज्र अर्थात् हीरा सेवन करने से पसलियों में पीड़ा, पाण्डुरोग, वमनकीसी प्रवृत्ति, दाह, गुरुता आदि अनेक रोग करता है । (जो हीरा स्वच्छ, बिजली के समान चमकीला, स्निग्ध, सुन्दर लघु लेखन, छः पार्श्वीला, तीक्ष्णधारवाला, सुश्याम रंग की सी चमक धारी में दिखावे, वह उत्तम हीरा होता है) ॥ १२६ ॥

अथ वज्रशोधनम् ।

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचितम् ।
सप्ताहं कोद्रवक्काथे कौलत्थे विमलं भवेत् ॥ १२७ ॥

हीरे को कण्टकारी की जड़ के कन्द में रख के कोदों के क्वाथ तथा कुलथी के क्वाथ में पृथक् २ सात दिन तक दोलायंत्र में स्वे करे तो हीरा शुद्ध हो जाता है॥ १२७॥

मतान्तरम् ।

व्याघ्रीकन्दगतं वज्रं दोलायन्त्रे विपाचयेत् ।
अहोरात्रात् समुद्धृत्य हयमूत्रेण सेचयेत् ।
वज्रीक्षीरेण वा सिञ्चेत् कुलिशं विमलं भवेत् ॥ १२८॥

कण्टकारी के कन्द में हीरे को बंद करके दोलयन्त्र में पकावे एक दिन रात पाक कर के निकाल ले और फिर घोड़े के मूत्र सिञ्चन करे अथवा थोहर के दूध में सिञ्चन करे तो हीरा नि हो जाता है॥ १२८॥

अथ वज्रमारणम्।

त्रिवर्षारूढकार्पास-मूलमादाय पेषयेत् ।
त्रिवर्ष नागवल्ल्यास्तु निजद्रावैः प्रपेषयेत् ॥ १२९॥
तद्गोलके क्षिपेद्वज्रं रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
एवं सप्त पुटैनैव म्रियते कुलिशं ध्रुवम् ॥ १३०॥

तीन वर्ष की पुरानी उगी हुई कपास की जड़ को, तीन व पुराने उगे हुए पान के रस से पीसे, उस के पिण्ड के अन्दर हं को रखकर और चारों ओर से सन्धि बन्धन दृढ कर के गज में फूंक देवे। इस प्रकार से सात पुट देने से ही हीरे की भ हो जाती है॥ १३०॥

मतान्तरम् ।

कांस्यपात्रे तु भेकस्यमूत्रे वज्रन्तु निक्षिपेत् ।
त्रिःसप्तकृत्वः सन्तप्तं वज्रमेवं मृतं भवेत् ॥ १३१॥

एक कांसी के पात्र में मेंढक का मूत्र इकट्ठा करे। फिर हीरे आग पर तपा २ कर उस मूत्र में बुझावे। इस प्रकार इक्कीस गर्म करके बुझाने से हीरा मर जाता है॥ १३१॥

अथान्यः।

त्रिः सप्तकृत्वः सन्तप्तं खरमूत्रेण सेचयेत्।
मुद्गरैस्तालकं पिष्ट्वा तद्गोले कुलिशं क्षिपेत्॥ १३२॥
प्रध्मातं वाजिमूत्रेण सिक्तं पूर्वक्रमेण तु।
भस्मीभवति तद्वज्रं वज्रवत् कुरुते तनुम्॥ १३३॥

शुद्ध हीरे को आग में सन्तप्त करके इक्कीस वार गधे के मूत्र में सिंचन करे। फिर हड़ताल को पीस कर उस में उस हीरे को रख के, चारों ओर से हड़ताल का गोला सा बना के उसे खूब आंच देवे। और फिर उसी प्रकार से घोड़े के मूत्र में २१ वार सींचे। तो हीरा भस्म होजाता है। इसके सेवन से शरीर वज्र के समान होजाता है॥ १३२॥ १३३॥

अथ शोधित वज्रगुणाः

आयुष्यं सौख्यजननं बलरूपप्रदं तथा।
रोगघ्नं मृत्युहरणं वज्रभस्म भवत्यलम्॥ १३४॥

शुद्ध हीरे की भस्म, आयु बढ़ाने वाली, सुख दायक, बल और रूप को बढ़ाने वाली, रोग नाशक तथा अकाल मृत्यु को हरने वाली होती है॥ १३४॥

अथ वैक्रान्तशोधनम्।

वैक्रान्तं वज्रवच्छोध्यं ध्मातं तत् हयमूत्रके।
हिमं तद्भस्म संयोज्यं वज्रस्थाने विचक्षणैः॥ १३५॥

वैक्रान्त अर्थात् दग्ध हीरे को हीरे के समान ही शुद्ध करे। अर्थात् आग में तपा कर घोड़े के मूत्र में सिंचन करे। इस प्रकार से बनी वैक्रान्त की भस्म शीतल होती है। इसे हीरे की भस्म के स्थान में विद्वान लोग प्रयुक्त करें॥ १३५॥

मतान्तरम्।

वैक्रान्ते वज्रवच्छोध्यंमारणञ्चैव तस्य तत्।
हयमूत्रेण तत् सेच्यं तप्तं तप्तं त्रिसप्तधा॥ १३६॥

ततश्चोत्तरवारुण्याः पञ्चाङ्गं गोलके क्षिपेत्।
रुद्ध्वा मूषापुटे पाच्यं उद्धृत्य गोलके पुनः॥ १३७॥
क्षिप्त्वा रुद्ध्वा पचेदेवं यावत् तत् भस्मतां व्रजेत्।
भस्मीभूतश्च वैक्रान्तं वज्रस्थाने नियोजयेत्॥ १३८॥

वैक्रान्त को हीरे के समान ही शुद्ध करना तथा मारना चाहिये उसी प्रकार गर्म कर २ के २१ बार घोड़े के मूत्र में सींचना चाहिये फिर इन्द्रायण के पञ्चाङ्ग को पीस गोला बना उसमें उस शुद्ध हुए वैक्रान्त को डाल कर एक मूषा में बन्द करके पकावे। इस प्रकार बार २ नये इन्द्रायण के गोले में डाल सम्पुट कर पुट दे तो वैक्रान्त भस्म होजाती है। इस वैक्रान्त भस्म को हीरे के स्थान में प्रयुक्त करे॥ १३६—१३८॥

अथाभ्रपर्य्यायाः।

अभ्रकं गिरिजावीजममलं गगनाह्वयम्॥ १३९॥

अभ्रक, गिरिजावीज, अमल, गगन, ये सब अभ्रक के पर्य्याय हैं॥ १३९॥

अथाभ्रशोधनम्।

तत्र कृष्णाभ्रके वज्रं पीतात्मनि तु ग्राहिकम्।
सितात्मके तारकं स्याद्धीरुकं रक्तके वरम्॥ १४०॥
सुप्रशस्तं कठोराङ्गं गुरु कज्जलसन्निभम्।
यन्न शब्दायते वन्हौ नैवोच्छूनं भवेदपि।
सदाकरसमुद्भूतं वज्रेति प्रथितं घनम्॥ १४१॥
पिनाकं दर्दुरं नागं वज्रश्चेति चतुर्विधम्॥ १४२॥
ध्मातमभ्रं दलचयं पिनाकं विसृजत्यलम्।
फूत्कारं भुजगः कुर्य्यात् दर्दुरं भेकशब्दवत्।
चतुर्थश्च वरं ज्ञेयं न वन्हौ विकृतिं व्रजेत्॥ १४३॥
कुष्ठप्रदं पिनाकं स्यात् दर्दुरं मरणप्रदम्।

नागं देहगतं नित्यं व्याधिं कुर्य्याद् भगन्दरम् ॥ १४४ ॥
रसे रसायने चैव योज्यं वज्राभ्रकं प्रिये !
तस्माद्वज्राभ्रकं ग्राह्यं व्याधिवार्द्धक्यमृत्युजित् ॥ १४५ ॥
अशुद्धाभ्रं निहन्त्यायुः वर्द्धयेत् मारुतं कफम्।
अहतं छेदयेद् गात्रं मन्दाग्निक्रिमिवर्द्धनम् ॥ १४६ ॥

अभ्रक चार प्रकार के रंगों का होता है। काला, पीला, श्वेत और लाल। इनमें से काले अभ्रक की जाति में से "वज्र" अच्छा होता है। पीले अभ्रक की जाति में से "ग्राहिक" अच्छा होता है। श्वेत अभ्रक की जाति में से "तारक" अच्छा होता है। तथा लाल अभ्रक की जाति में से "भीरुक" अच्छा होता ह ॥ १४० ॥ जो अभ्रक उत्तम, कठोर अङ्ग वाला, भारी, कज्जल के समान काला हो तथा आग में रखने से न तो किसी प्रकार का शब्द करे और न फूल जाय और उत्तम खान से निकला हो तथा घन अर्थात् कठोर हो उसे "वज्र" अभ्रक कहते हैं ॥ १४१ ॥ यह कृष्ण अभ्रक भी चार प्रकार का है। पिनाक, दर्दुर नाग और वज्र ॥ १४२ ॥ पिनाक को आग में तपाने से पत्रे अलग २ होजाते हैं। आग में तपाने से नाग अभ्रक फुंकार छोड़ता है। आग में तपाने से दर्दुर अभ्रक मेंडक के समान शब्द करता है। चौथा वज्र अभ्रक श्रेष्ठ है यह आग में तपाने से किसी प्रकार के विकार को नहीं प्राप्त होता। वैसा ही पड़ा रहता है ॥ १४३ ॥ पिनाक अभ्रक की भस्म सेवन करने से कुष्ठ होजाता है और दर्दुर के सेवन से मृत्यु होजाता है। नाग के नित्य सेवन से भगन्दर रोग होजाता है ॥ १४४ ॥ इस कारण हे प्रिये पार्वती ! रसों में और रसायन कर्म में वज्राभ्रक को प्रयुक्त करना चाहिये। इसी प्रकार अन्यत्र भी वज्राभ्रक का सेवन करना चाहिये। इससे रोग बुढ़ापा और अकाल मृत्यु नहीं होती ॥ १४५ ॥ अशुद्ध अभ्रक की भस्म आयु को नाश करती है। वायु और कफ को बढ़ाती है। शुद्ध अभ्रक भी हो परन्तु ठीक भस्म न किया हो तो गात्रों को छेदन करता है तथा मन्दाग्नि और क्रिमि उत्पन्न करता है ॥ १४६ ॥

धान्याभ्रमाह ।

पादांशं शालिसंयुक्तमभ्रकं कम्बलोदरे ।
त्रिरात्रं स्थापयेत् नीरे तत् क्लिन्नं मर्दयेद्दृढम् ॥ १४७ ॥
कम्बलाद्गलितं श्लक्ष्णं बालुकारहितञ्च यत् ।
तद्धान्याभ्रमितिप्रोक्तमभ्रमारणसिद्धये ॥ १४८ ॥

वज्राभ्रक चार भाग, शालिधान्य अर्थात् धान १ भाग, दोनों को एक कम्बलमें लपेट कर पानी में तीन दिन रात पड़ा रहने दे। जब खूब भीग कर गला हुआ सा हो जाय तब खूब जोर से मर्दन करे। कम्बल में से होकर चिकने २ छोटे अभ्रक के कण बाहर चौड़े पात्र में आ जायेंगे। इसी को धान्याभ्र कहते हैं। यही मारने के काम आता है ॥ १४७ ॥ १४८ ॥

मतान्तरम् ।

त्रिफलाक्राथगोमूत्र-क्षीरकाञ्जिकसेचितम् ।
भस्त्राग्नौ सप्तधा व्योम तप्तं तप्तं विशुध्यति ॥ १४६ ॥

त्रिफला का काढा, गोमूत्र, दूध, कांजी इन में अभ्रक को आग पर तपा २ कर सिंचन करने से वह शुद्ध हो जाता है ॥१४६॥

मतान्तरम् ।

अथवा बदरीक्काथे ध्मातमभ्रं विनिक्षिपेत् ।
मर्द्दितं पाणिना शुष्कं धान्याभ्रादतिरिच्यते ॥ १५० ॥

अथवा अभ्रक को तपा कर बेरी के क्काथ में डाले। और हाथ से खूब मसले। सूखने पर यह भी धान्याभ्रक जैसा हो जाता है ॥ १५० ॥

मतान्तरम् ।

अगस्त्यपुष्पतोयेन पिष्टं शूरणकन्दगम् ।
गोष्ठभूमिगतं मासं जायते रससन्निभम् ॥ १५१ ॥
(इत्यभ्रशोधनम्)

अभ्रक को अगस्त के फूल के रस से घोटकर, उस पीठी को जंगली जिमींकन्द के अन्दर बंद करके गोशाला की भूमि के अ

एक मास तक गड़ा रहने दे। तो यह शुद्ध हो जाता है और पारे के समान हो जाता है ॥ १५१ ॥

अथाभ्रमारणम्।

वज्राभ्रकं समादाय निक्षिप्य स्थालिकोदरे।
रम्भादिक्षारतोयेन पचेद् गोमयवन्हिना ॥ १५२ ॥
यावत् सिन्दूरसङ्काशं नभवेत् स्थालिकावहिः।
सेचनीयं ततः क्षीरैस्ततः सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ॥ १५३ ॥

शुद्ध वज्र भ्रक को एक हांडी में डालकर "रम्भादिगण" के खार जल से उपलों की आग देकर पकावें। जब तक हांडी के बाहर का भाग सिन्दूर के समान लाल रंग का न दिखाई दे तब तक आंच देता जाय। उस के पीछे उसे उतार कर उस में दूध डाल और फिर सुखाकर सूक्ष्म चूर्ण बना ले। इस से अभ्रक की भस्म हो जाती है ॥ १५२ ॥ १५३ ॥

मतान्तरम्।

धान्याभ्रकं समादाय मुस्ताक्राथैः पुटत्रयम्।
तद्वत् पुनर्नवानीरैः कासमर्दरसैस्तथा ॥ १५४ ॥
नागवल्लीरसैः सूर्य्य-क्षीरैर्देयं पृथक् पृथक्।
दिनं दिनं मर्दयित्वा क्राथैर्वटजटोद्भवैः ॥ १५५ ॥
दत्त्वा पुटत्रयं पश्चात् त्रिः पुटेत् मुषलीजलैः।
त्रिर्गोक्षुरकषायेण त्रिः पुटेत् वानरी रसैः ॥ १५६ ॥
मोचकन्दरसैः पाच्यं त्रिरात्रं कोकिलाक्षकैः।
रसैः पुटेल्लोध्रकैस्तु क्षीरादेकं पुटेत्पुनः ॥१५७॥
दध्ना घृतेन मधुना स्वच्छया सितया तथा।
एकमेकं पुटं दद्यादभ्रस्यैवं मृतिर्भवेत् ॥ १५८ ॥
सर्वरोगहरं व्योम जायते योगवाहिकम्।
कामिनीमददर्पघ्नं शस्तं पुंस्त्वोपघातिनाम्।

वृष्यमायुष्करं शुक्र-वृद्धिसन्तानकारकम् ॥ १५९ ॥

धान्याभ्रक को लेकर नागर मोथेके क्काथ से घोट तीन वार पुटके पी
फिर पुनर्नवाके रस से, फिर कसौंदी के रससे फिर पानके रससे दे तो
आक के दूधसे एक २ दिन पृथक् २ घोटकर तथा बड़ की दाढीके
से घोटकर तीन पुट देवे। फिर मूषलीके रससे तीन पुट देवे।
गोखरुके काढेसे तीन पुट दे। फिर कौंचके काढेसे तीनपुट दे। फिर
के कन्द के रस में तीन वार पुट देवे फिर तालमखाने के रस से
वार पुट देवे, फिर लोध के काढे से तीन पुट दे, फिर गौ के
में घोटकर एक पुट देवें, फिर दही से एक पुट, घी से एक
शहद से एक पुट तथा स्वच्छ मिश्री के साथ घोटकर एक
देवे। इस प्रकार से अभ्रक मर जाता है॥ यह अभ्रक भस्म सब
को हरने वाला, योगवाही, स्त्रियों के मद को नाश करने वा
नपुंसकों को पुरुषत्त्व देने वाला, वृष्य, आयु वर्द्धक, वीर्य व
वाला तथा सन्तान देने वाला है ॥ १५४-१५९ ॥

अथ मारकगणः ।

तण्डुलीयकवृहती-नागवल्लीतगरपुनर्नवाश्च ।
हिलमोचिका मण्डूकपर्णी तिक्ताखुपर्णिका ।
मदनार्कावपि लवसुतमातृकाभिः सुधीभिरुदितम् ॥१६०

चौलाई, बडी कटेली, पान, तगर, पुनर्नवा, हिलमोचि
मण्डूकपर्णी, कुटकी, मूषा पर्णी, मदन, आक, शतावर, इन में
पृथक् २ वा सब से मिलाकर पुटादि देने से अभ्रक मारण हो
है ॥ १६० ॥

मतान्तरम् ।

रम्भादिनाभ्रं लवणेन पिष्ट्वा चक्रीकृतं तद्दलमध्यवर्त्ति ।
दग्धेन्धनेषु व्यजनानिलेन स्नुह्यर्कमूलाम्बुपुटेन सिद्धम् ॥१६

"रम्भादिगण" के द्रव्यों से अभ्रक को पीसकर और
नमक से मिलाकर टिकियां बनाकर रम्भादिगण के पत्तों के
में रखकर कोयलों की आंच पर रखकर पंखे से वायु देता जाव

के पीछे थोहर के दूध और आक की जड के रस से घोट पुट दे तो अभ्रभस्म सिद्ध होता है ॥ १६१ ॥

मतान्तरम् ।

धान्याभ्रकस्य भागैकं भागौ द्वौ टङ्कणस्य च ।
पिष्ट्वा तदन्धमूषायां रुद्ध्वा तीव्राग्निना पचेत् ।
स्वमात्रं शीतलं चूर्णं सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६२ ॥

धान्याभ्रक एक भाग, सुहागा दो भाग दोनों को पीस कर अन्धमूषा में बन्द कर तीव्र अग्नि से पकावे। स्वाङ्गशीतल होने पर सब योगों में प्रयुक्त करे ॥ १६२ ॥ (यह पाठ ठीक नहीं प्रतीत होता क्योंकि इस प्रकार से बनाने पर अभ्रक कांच सदृश होजाता है)।

मतान्तरम् ।

धान्याभ्रकं दृढं मर्द्यमर्क क्षीरैर्दिनावधि ।
वेष्टयेदर्कपत्रेण चक्राकारन्तु कारयेत् ॥ १६३ ॥
कुञ्जराख्ये पुटे दग्ध्वा सप्तवारान् पुनः पुनः ।
ततो वटजटाक्काथैस्तद्वद्देयं पुटत्रयम् ।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ १६४ ॥

धान्याभ्रक को आक के दूध से एक दिन तक दृढता से मर्दन करे और टिकिया बनाकर आक के पत्तों में लपेट दे ॥ १६३ ॥ फिर गजपुट में फूंक दे। इसी प्रकार आक के दूध में घोट २ कर सात पुट देवे। अन्त में बड़ की जटा अर्थात् मूल के काढे में घोट २ कर तीन पुट देवे। इससे अभ्रक की भस्म होजाती है इस में सन्देह नहीं। इस भस्म को सब योगों में डाले ॥ १६३ ॥ १६४ ॥

मतान्तरम् ।

दुग्धत्रयं कुमार्यम्बु शङ्खापत्रं नृमूत्रकम् ।
वटशुङ्गमजारक्तमोभिरभ्रं विमर्दयेत् ॥ १६५ ॥
शतधा पुटितं भस्म जायते पद्मरागवत् ।
निश्चन्द्रकं भवेत् व्योम शुद्धदेहे रसायनम् ॥ १६६ ॥

गौ, बकरी और भेड़ इन तीनों का दूध, घी कुमार का रस, गङ्गापत्री का शाक या भद्रमोथा, पुरुष का मूत्र, बड़ के अंकुर, बकरी का खून, इन सब से अभ्रक को घोटे । सौ वार घोट २ कर पुट दे तो पद्मराग के समान लाल रंग की निश्चन्द्र भस्म होती है। वमनविरेचन आदि से देह शुद्ध कर के अभ्रक भस्म खावे तो श्रेष्ठ रसायन है ॥ १६५ ॥ १६६ ॥

निश्चन्द्रमारितं व्योम रूपं वीर्य्यं दृढं तनुम् ।
कुरुते नाशयेत् मृत्युं जरारोगकदम्बकम् ॥ १६७ ॥

[इत्यभ्रमारणम्]

निश्चन्द्र अभ्रकभस्म सेवन करने से रूप, वीर्य्य, शरीर की दृढता अधिक होती है । तथा अकालमृत्यु और बुढ़ापा तथा अनेक रोगों के समुदाय को नष्ट करती है ॥ १६७ ॥

अथ हरिताल पर्य्यायास्तद्भेदाश्च ।

हरितालं तालमालं मालं शैलूषभूषणम् ।
पिञ्जकं रोमहरणं तालकं पीतमित्यपि ।
तालकं पटलं पिण्डं द्विधा तत्राद्यमुत्तमम् ॥ १६८ ॥
अशुद्धताल मायुर्घ्नं कफमारुत मेहकृत् ।
तापस्फोटाङ्गसङ्कोचान् कुरुते तेन शोधयेत् ॥ १६९ ॥
शुद्धं स्यात् तालकं स्विन्नं कूष्माण्डसलिले ततः ।
चूर्णोदके पृथक् तैले तस्मिन् पूते न दोषकृत् ॥ १७० ॥

हरिताल, ताल, आल, माल, शैलूषभूषण, पिञ्जक, रोमहरण, तालक, पीत ये नाम हड़ताल के हैं । हड़ताल दो प्रकार का होता है एक "पिण्ड" दूसरा "पटल"। इन में से पटल अर्थात् वंशपत्र अच्छा माना है ॥ १६८ ॥ अशुद्ध हड़ताल सेवन करने से आयु कम करती है, कफ, वायु, तथा प्रमेह करती है, ताप, फोड़े करती तथा अंगों का संकोच करती है । इस कारण इसे शुद्ध अवश्य करे ॥ १६९ ॥ श्वेत पेठे के रस में हड़ताल को स्वेदन करे

फिर चूने के पानी में स्वेदन करे। फिर तेल में स्वेदन करे। इस प्रकार से हड़ताल शुद्ध तथा दोष रहित हो जाती है ॥ १७० ॥

अन्यच्च।

तालकं कणशः कृत्वा दशांशेन च टङ्कणम्।
जम्बीरोत्थैर्द्रवैः क्षाल्य काञ्जिकैः क्षालयेत् पुनः ॥१७१॥
वस्त्रे चतुर्गुणे बद्ध्वा दोलायन्त्रे दिनं पचेत्।
सञ्चूर्ण्य आरनालेन दिनं कूष्माण्डजै रसैः।
स्वेद्यं वा शाल्मलीतोयैस्तालकं शुद्धिमाप्नुयात् ॥ १७२ ॥

हड़ताल को चूर्ण कर दस भाग ले, सुहागा एक भाग ले, दोनों को मिलाकर जम्बीरी नींबू के रस से धोवे, फिर कांजी से धोवे ॥१७१॥ फिर चार तह किये हुए वस्त्र में उस हड़ताल को बांध कर एक दिन दोलायंत्र में पकावे। फिर चूर्ण कर एक दिन कांजी से पीसे और फिर पेठे के रस से स्वेदन करे। अथवा सीमल की जड़ के रससे स्वेदन करे। इस प्रकार हड़ताल शुद्ध होजाती है॥१७२॥

अन्यच्च।

तालकं पोट्टलीं बद्ध्वा सचूर्णे काञ्जिके पचेत्।
दोलायन्त्रेण यामैकं ततः कूष्माण्डजे रसे ॥ १७३ ॥
तिलतैले पचेत् यामं यामं तत् त्रैफले जले।
दोलायन्त्रे चतुर्यामं पाच्यं शुध्यति तालकम् ॥ १७४ ॥

[इति शोधनम्]

हड़ताल को पोटली में बांध चूना मिली कांजी में दोलायंत्र से एक पहर तक पकावे। फिर पेठे के रस में एक पहर तक पकावे फिर एक पहर तक तिल तेल में पकावे। फिर एक पहर तक त्रिफला के काढे में पकावे। इस प्रकार से दोलायंत्र में चार पहर तक पका चुकने के पीछे हड़ताल शुद्ध हो जाती है ॥ १७३ ॥ १७४ ॥

अथ हरितालमारणम्।

तालकं कणशः कृत्वा सुशुद्धं हण्डिकान्तरे।
चूर्णोदकेन संपिष्टमपामार्गजटोद्भवैः ॥ १७५ ॥

क्षारोदकैश्च संपिष्ट मूर्द्धवाधो यावशूकजम् ।
चूर्णं दत्त्वा निरुध्याथ कूष्माण्डैश्च प्रपूरयेत् ॥ १७६ ॥
पुनर्मुखं निरुध्याथ चतुर्यामं क्रमाग्निना ।
पचेदेवं हि तच्चूर्णं कुष्ठादौ परियोजयेत् ॥ १७७ ॥
हरितालं कटुस्निग्धं कषायश्च विसर्पनुत् ।
तालकं हरते रोगान् कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ।
संशुद्धं कान्तिवीर्य्यौजः कुरुते मृत्युनाशनम् ॥१७८॥

हड़ताल को कण २ कर के एक हांडी में चूने के पानी भर उस में स्वेदन करे। फिर उसे अपामार्ग की जड़ से बने क्षार पानी से पीसकर टिकिया बना ले। फिर एक शराव में ऊपर नी यवक्षार का चूर्ण डालकर बीच में हड़ताल की टिकिया रख के शरा का मुख बन्द कर दे। इस शराब को एक हांडी में रख ऊपर पेठे का रस भर कर हांडी का मुख बन्द कर दे। नीचे क्रमः मन्द मध्यम और तीव्र आग जलावे। स्वांग शीतल होने पर ऊ के शराब में लगी हुई श्वेत रंग की हड़ताल भस्म निकाल लेवे इसको कुष्ठ आदि रोगों में प्रयुक्त करे ॥ १७५॥ १७६ ॥ १७७ इस प्रकार से भस्म हुई हड़ताल कटु, स्निग्ध, कसैली होती है त विसर्प रोग को दूर करती है। हड़ताल भस्म कुष्ठ, अकालमृ तथा ज्वरादि को दूर करती है। तथा कान्ति, वीर्य्य, तथा ओ को बढाती है ॥ १७८ ॥

मतान्तरम् ।

अम्लरोलीजलैर्भाव्यं तालं द्वादशयामकम् ।
तथैव निम्बुनीरेण ततश्चूर्णोदकेन च ॥ १७९ ॥
प्रक्षाल्य शाल्मलीक्षारैर्द्विगुणैः खातमध्यगम् ।
विधाय कच्चीयन्त्रं वालुकाभिः प्रपूरयेत ॥ १८० ॥
द्वादशप्रहरं पक्त्वा स्वाङ्गशीतश्च चूर्णयेत् ।
खादयेत् रक्तिकामेकां कुष्ठश्लीपदशान्तये ॥ १८१ ॥

फिर
१२
से दु
को
का
शीत
मात्रा
वार भ
करे
दो श

हड़ताल को चाङ्गेरी के रस में बारह पहर भावना देवे । फिर नीबू के रस से १२ पहर भावना देवे । फिर चूने के पानी में १२ पहर भावना देवे । फिर हड़तालको धोले । और एक शरावमें उस से दुगुने सीमलके क्षारको रख उसके मध्यमें हडताल रखे उसे शराव को एक बडी हांडी में रख चारों ओर से वालु भर दे । इस प्रकार का कवची यंत्र बना उस के नीचे बारह पहर आग जलावे । स्वाङ्ग शीतल होने पर उसे चूर्ण करके रखे । इसकी एक रत्ति भर की मात्रा खावे तो कुष्ठ रोग तथा श्लीपद रोग शान्त होता है ॥१८१॥

अथ रसमाणिक्यम ।

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दध्ना चाम्लेन वा पुनः ॥१८२॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत् तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत् कुशलो भिषक् ॥ १८३ ॥
बदरीपल्लवोत्थेन कल्केन लेपयेद्भिषक् ।
अरुणाभमधः पात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ १८४ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं भवेद् ध्रुवम् ।
तत् रक्तिद्वितयं खादेद्घृतभ्रामरमार्दितम् ॥ १८५ ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते ।
स्फुटितं गलितं यच्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १८६ ॥
नाड़ीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचर्चिकाम् ।
नासाऽऽस्यसम्भवान् रोगान् क्षतान् हन्ति सुदारुणान् ।
पुण्डरीकश्च चर्माख्यं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ १८७ ॥

शुद्ध वंसपत्र हड़ताल को पेठ के रसमें सात वार अथवा तीन वार भावित करे फिर खट्टे दही से सातवार या तीन वार भावित करे फि शुद्धकरके सुखाकर चावलों के समान कण २ बनाले। फिर दो शरावों में इसे कुशलवैद्य रखे ॥ १८२ ॥ १८३ ॥ इसशरावकी

सन्धियों को बेर के पत्तों के पिसे हुए कल्कसे बंद करदे। फिर अ
पर रख तबतक आगदे जबतक *शरावके नीचे का भाग लालरंग
नहीं होजाता ॥१८४॥ स्वाङ्ग शीतल होने पर माणिक्यके समान रं
दार चमकती हुई हड़तालको निकाल ले। इसे रसमाणिक्य कहते
इसे दोरत्ती लेकर घी और शहद मिला कर खावें ॥ १८५ ॥शिव भ
वान की पूजा करके इसे खावे तो कुष्ठरोगसेछूट जाता है। फूटे
गलेहुए वातरक्त तथा भगन्दर को, नासूर को, दुष्ट व्रणको, उप
को, विचर्चिका को, नाक तथा मुंह के रोगों को, दारुण क्षतरोगों
पुण्डरीककुष्ठ तथा चर्मदल अर्थात् चम्बल, विस्फोट तथा मण्
कुष्ठ को यह रस दूर करता है ॥ १८७ ॥

अथ सपर्य्यायमनः शिलायाः शोधनादिकम् ।

मनःशिला च नैपाली शिलाह्वा नागजिह्विका।
मनोह्वा कुनटी गोणी करञ्जी करवीरिका।
मनोह्वा त्वोड्रपुष्पाभा शस्यते सर्वकर्मसु ॥ १८८ ॥
मनः शिला मन्दबलञ्च नूनं करोति जन्तोः शुभपाकहीन
मलन्तु बद्धं कुरुते च नूनं सशर्करं कृच्छ्रगदं करोति ॥१८

मनः शिला, नैपाली, शिलाह्वा, नागजिह्विका, मनोह्वा, कुन
गोणी, करञ्जी, करवीरिका, ये सब नाम मनसिल के हैं। मनशि
जपापुष्पके समान लाल हो तो उसे उत्तम समझ सब कामों
बरतना चाहिये ॥ १८८ ॥ठीकशुद्ध न हुई२मनसिल मनुष्यके बल
मन्द करती है। कोष्ठबद्धता करती है तथा शर्करासहित मूत्रकृ
करती है ॥ १८९ ॥

*नोट—शराव में रखने से पूर्व हड़ताल के चूर्णको दो
अभ्रक के पत्रोंकी तह में रखें। चारों ओरसे अभ्रकपत्तों को पि
टांककर हड़ताल को अन्दर संभालकर रखदें। फिर शरावसम्पु
पूर्वलिखित विधि अनुसार अग्निदें तो माणिक्यके समान लालरं
भस्म होती है। "स्थापयेत् कुशलो भिषक्" के स्थानमें "स्थापयेद
त्रयोः' पाठ करदेना स्पष्ट होगा ॥

मतान्तरम्।

अश्मरीमूत्रहृद्रोगमशुद्धा कुरुते शिला।
मन्दाग्निं मलदुष्टिञ्च शुद्धा सर्वरुजापहा॥ १९०॥
जयन्ती भृङ्गराजोत्थैः रक्तागस्त्यरसैः शिला।
दोलायन्त्रे दिनं पाच्या यामं छागस्य मूत्रके।
क्षालयेदारनालेन सर्वरोगेषु योजयेत्॥ १९१॥

अशुद्धमनासिल से पथरी, मूत्ररोग, हृद्रोग, मन्दाग्नि तथा मल-दुष्टि रोग होते हैं। और शुद्धकी हुई मनासिलसे सब रोग दूर होते हैं॥ १९०॥ मनासिल को जयन्ती, भांगरा और लाल अगस्त के रस में दोलायंत्र द्वारा एक २ दिन पकावे। फिर बकरी के मूत्र में एक पहर पकावे। फिर कांजी से धोकर सब रोगों में प्रयुक्त करे॥१९१॥

मतान्तरम्।

मातुलुङ्गरसैः पिष्टा जयानीरैर्मनः शिला।
शृङ्गवेररसैर्वापि विशुध्यति मनः शिला॥ १९२॥
कटुः स्निग्धा शिला तिक्ता कफघ्नी लेखनी सरा।
भूतावेशभयं हन्ति कासश्वासहरा शुभा॥ १९३॥

[इति मनःशिलाशुद्धिः]

मनासिल को मातुलुङ्ग नींबू के रससे पीसकर फिर जयन्ती के रससे पीसे। अथवा अदरक के रससे पीसे तो शुद्ध होती है॥१९२॥ मनशिल कटुहै, स्निग्धहै, तिक्त अर्थात् कड़वी, कफनाशक है, लेखनी है तथा सारक है। भूतावेशके भय को नाश करती है तथा कास श्वास को हरने वाली प्रसिद्ध है॥ १९३॥

अथ खर्परशोधनम्।

पुष्पानां रक्तपीतानां रसैः पिष्ट्वा च भावयेत्।
नरमूत्रैश्च गोमूत्रैर्यवाम्लैश्च ससैन्धवैः।
सप्ताहं त्रिदिनं वाऽपि पश्चात् शुध्यति खर्परः॥ १९४॥

खपरिया को रसग्रन्थों में कहेहुए किंशुकादि लाल और पीले

फूलों के रससे पीसकर पुरुष के मूत्रसे, गौमूत्र से तथा जौ की कांजी में सेंधानमक मिलाकर सातदिन या तीनदिन भावना देवे शुद्ध होता है ॥ १६४ ॥

मतान्तरम्।

खर्परः परिसन्तप्तः सप्त वारान् निमज्जितः।
निम्बुवीजरसे चान्तर्निर्मलत्वमवाप्नुयात् ॥१६५॥

खपरिया को तपाकर नीबू के रसमें बुझायें। इस प्रकार सात बुझाने से खपरिया अन्दर से निर्मल होजाता है॥ १९५॥

अथ मारणम्।

खर्परं पारदेनैव बालुकायन्त्रगं पचेत्।
चूर्णयित्वा दिनं यावत् शोभनं भस्म जायते।
नेत्ररोगहरः क्लेदी क्षयहा खर्परो गुरुः ॥ १६६ ॥

[इति खर्परशोधनमारणम्]

शुद्धखर्पर को शुद्ध पारेसे मिलाकर एकदिन बालुकायन्त्र पकावे। फिर निकालकर चूर्ण करले। इस प्रकार से इसकी सु भस्म होजाती है। खर्परभस्म नेत्ररोगनाशक, क्लेदकरनेवाला क्षय शक तथा भारी है॥ १६६॥

अथ सपर्य्यायतुत्थशोधनमारणम्।

तुत्थके तु शिखिग्रीवं हेमसारं मयूरकम्।
विष्ठयामर्दयेत्तुत्थं मार्जारककपोतयोः ॥ १६७ ॥
दशांशं टङ्कणं दत्त्वा पाच्यं मृदुपुटे ततः।
पुटं दद्यात् पट्वक्षौद्रैः किल तुत्थविशुद्धये ॥ १६८ ॥

तुत्थक, शिखिग्रीव, हेमसार, और मयूरक ये नाम नीलेथो के हैं। नीले थोथे को बिल्ली की विष्ठा तथा कबूतर की बीठसे मर्द करे॥ १९७॥ फिर इसका दसवां भाग सुहागा डालकर इसे मृदुपु में पकावे। इसके पश्चात् फिर सेंधानमक और शहदसे मिलाकर दे तो नीला थोथा शुद्ध तथा मृत होजाता है॥ १६८॥

अन्यच्च।

स्रोतोविंष्ठासमं तुत्थं सक्षौद्रं टङ्कणाङ्घ्रियुक्।
त्रिधा सुपुटितं शुद्धं वान्तिभ्रान्तिविवर्जितम् ॥ १९९ ॥

बिल्ली की विष्ठा, नीलाथोथा तथा शहद समभाग लें, सुहागा चौथाईभाग ले। सबको मिलाकर तीनवार पुटदेने से तुत्थ शुद्ध होजाता है तथा वान्ति भ्रान्ति से रहित होजाता है ॥ १९९ ॥

अन्यच्च।

गन्धकेन समं तुत्थं तुत्थार्द्धेनार्द्धयामकम्।
वान्तिभ्रान्ती यदा नस्तस्तदा सिद्धिं विनिर्दिशेत् ॥२००॥

गन्धक एकभाग, नीलाथोथा दोभाग मिलाकर आधा पहर पुट दे। इसीप्रकार पुटदेने से जब वान्ति भ्रान्ति नष्ट होजायें तब तुत्थकी शुद्धि समझ काम में लावें ॥ २०० ॥

गुणाः।

तुत्थं सकटुकक्षारं कषायं विशदं लघु।
लेखनं भेदि चक्षुष्यं कण्डूक्रिमिविषापहम् ॥२०१॥

[इति तुत्थकशुद्धिः।]

नीला थोथा कटु, क्षार, कषाय, विशद, हलका, लेखन, भेदी, चक्षुओं के लिये हितकारी, खाज, कृमि तथा विष को नाश करता है ॥ २०१ ॥

अथ विमलशुद्धिः।

मूत्रारनालतैलेषु गोदुग्धे कदलीरसे।
कौलत्थे कोद्रवक्काथे माक्षिकं विमलं तथा ॥ २०२ ॥
मुहुः शूरण कन्दस्थं स्वेदयेद्दृढवन्हिना।
क्षाराम्ललवणैश्चैव तैलसर्पिः समन्वितम्।
पुटत्रयं प्रदातव्यं ततस्तु शोधितं भवेत् ॥२०३॥

विमल अर्थात् रौप्यमाक्षिक तथा स्वर्णमाक्षिक को शूरण कन्द में रख कर गोमूत्र, कांजी, तिलतैल, गोदुग्ध, केले के रस, कुलथी के काथ, कोदों के काथ इनमें क्रमशः दोलायन्त्र से स्वेदन करे। फिर

यवक्षार, अम्ल, सेंधानमक इनसे मिला कर तथा तेल, घी से मि कर तीन पुट देवें तो इन दोनों माक्षिकों की शुद्धि होती है॥२०२॥२

मतान्तरम् ।

जम्बीरस्य रसैः स्विन्नो मेषशृङ्गीरसैस्तथा ।
रम्भातोयेन वा पाच्यं घस्रं विमलशुद्धये ॥ २०४ ॥

[इति विमलशुद्धिः]

रूपामाखी को जम्बीरी के रस में दोलायन्त्र से एक दि स्वेदन करे। फिर मेढ़ासिंगी के रससे एक दिन स्वेदन करे, फि केले के रस से एक दिन स्वेदन करे तो शुद्ध होजाता है ॥ २०४ ॥

अथ माक्षिकनामानि ।

माक्षिकं धातुमाक्षिकं तप्तं तापीसमुद्भवम् ।
गरुड़ो माक्षिकःपक्षी बृहद्वर्णा इति स्मृतः ॥ २०५ ॥

माक्षिक, धातुमाक्षिक, तप्त, तापीसमुद्भव, गरुड़, माक्षि पक्षी, बृहद्वर्ण, ये सब सोनामाखी के नाम हैं ॥ २०५ ॥

अस्यलक्षणम् ।

भङ्गे सुवर्णसङ्काशो मनाक् कृष्णच्छविर्बहिः ।
बृहद्वर्णा इति ख्यातो माक्षिकः श्रेष्ठ उच्यते ॥ २०६ ॥

जो सोनामाखी तोडने में सोने जैसा हो, बाहर से थो कालारंग लिये हो। उसे बृहद्वर्ण माक्षिक कहते हैं । यही उत्त होता है ॥ २०६ ॥

अशुद्ध माक्षिकदोषाः ।

मन्दाग्निं बलहानिञ्च व्रणं विष्टम्भगात्ररुक् ।
कुरुते माक्षिको मृत्युमशुद्धो नात्र संशयः ॥ २०७ ॥

अशुद्ध सोनामाखी बलहानि, मन्दाग्नि, व्रण; विष्टम्भ, शरीर पीड़ा और मृत्यु करता है ॥ २०७ ॥

अथ माक्षिकशोधनम् ।

स्वर्णमाक्षिकचूर्णन्तु वस्त्रे बद्ध्वा विपाचयेत् ।

कालमारिष-शालिञ्च-काथे दोलाविधानतः।
तदधः पतितं शस्तमेवं शुध्यति माक्षिकम् ॥ २०८ ॥

स्वर्णमाक्षिक का चूर्ण वस्त्र में बांध कर, बड़ी चौलाई, तथा शालिञ्च शाक के काथ में दोलायन्त्र से पकावे। जो चूर्ण वस्त्र में से नीचे गिर जावे वह उत्तम होता है तथा शुद्ध सोनामाखी होता है ॥ २०८ ॥

मतान्तरम्।

माक्षिकस्य त्रयोभागा भागैकं सैन्धवस्य च।
मातुलुङ्गद्रवैर्वा ऽथजम्बीरोत्थद्रवैः पचेत् ॥ २०९ ॥
लौहपात्रे पचेत् तावत् लौहदर्व्या च चालयेत्।
भासवर्णामयो यावत् तावच्छुध्यति माक्षिकम् ॥ २१० ॥

सोनामाखी तीन भाग, सेंधानमक एक भाग दोनों को मातुलुङ्ग अर्थात् खट्टे नीबू के रस में या जम्बीरी नीबू के रसमें मिला कर एक लोहे की कड़ाही में पकावें। लोहे की कड़छी से ही हिलायें। जब लाल रंग का हो जाये तब सोनामाखी शुद्ध हुआ समझो ॥ २०९ ॥ २१० ॥

मतान्तरम्।

माक्षिकस्य चतुर्थांशं गन्धं दत्त्वा विमर्दयेत्।
उरुवूकस्य तैलेन ततः कुर्य्याच्च चक्रिकाम् ॥ २११ ॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पुटेद्गजपुटेन तु।
सिन्दूराभं भवेद्भस्म माक्षिकस्य न संशयः ॥ २१२ ॥
माक्षिकं तिक्तमधुरं मेहार्शः क्रिमिकुष्ठनुत्।
कफपित्तहरं बल्यं योगवाहि रसायनम् ॥ २१३ ॥

[इति माक्षिकशोधनम्]

सोनामाखी चार भाग, शुद्ध गंधक एक भाग, दोनों को मिला कर घोटे फिर एरण्ड तैल से मर्दन कर टिकियां बनालें और शराव सम्पुट में रख गजपुट में फूक दे। जब तक सिन्दूर के समान लाल

रंग की भस्म न हो जाये तब तक इसी प्रकार पुट देता जाय ॥ २११ ॥ २१२ ॥ यह स्वर्णमाक्षिक की भस्म तिक्त, मधुर, प्रमेह नाशक, बवासीर नाशक, क्रिमिनाशक, कुष्ठनाशक, तथा कफपित्त नाशक है। बलदायक, योगवाही तथा रसायन है ॥ २१३ ॥

अथ काशीशशोधनम् ।

काशीशे धातुकाशीशं खेचरं दन्तरञ्जनम् ।
सकृद्भृङ्गाम्बुना स्विन्नं काशीशं निर्मलं भवेत् ॥ २१४ ॥
काशीशं निर्म्मलं स्निग्धं श्वित्रनेत्ररुजापहम्
पित्तापस्मारशमनं रसवद्गुणकारकम् ॥ २१५ ॥

[इति काशीशशोधनम्]

काशीश, धातुकाशीश, खेचर, दन्तरञ्जन ये नाम कसीस के हैं। एक बार भांगरे के रस में इसे स्वेदन करें तो कासीस शुद्ध होजाता है ॥ २१४ ॥ शुद्ध हुआ २ कासीस स्निग्ध है श्वेत कोढ़ को दूर करता है, नेत्र रोग दूर करता है तथा पित्तापस्मार को नाश करता है और पारे के समान गुण करता है ॥ २१५ ॥

अथ कान्तपाषाणनामानि ।

राजपट्टं महापट्टं शिखिग्रीवं विराटकम् ॥ २१६ ॥

राजपट्ट, महापट्ट, शिखिग्रीव, विराटक, कान्तपाषाण, ये सब चुम्बक पत्थर के नाम हैं ॥ २१६ ॥

अथ कान्तपाषाणशुद्धिः ।

चूर्णितं कान्तपाषाणं महिषीक्षीरसंयुतम् ।
विपचेदायसे पात्रे गोघृतेन समाहितम् ॥ २१७ ॥
लवणे च तथा क्षारे शोभाञ्जनरसे क्षिपेत् ।
अम्लवर्गस्य तोयेन दिनं घर्मे विभावयेत् ॥ २१८ ॥
तथैव दोलिकायंत्रे द्विवारं पाचयेत् सुधीः ।
कान्तपाषाणशुद्धौ तु रसकर्म्म समाचरेत् ॥ २१९ ॥

[इति कान्तपाषाणशोधनम् । अस्यैव नामान्तरं राजपट्ट इति]

कान्तपाषाण के चूर्ण को, लोहे की कड़ाही में भैंस का दूध तथा गौ का घी डाल कर दोलायंत्र से पकावे। फिर लवण तथा क्षार में मिला कर सुहांजने के रस में डाल कर दूध में सुखावे। फिर अम्लवर्ग के रस से भावित कर दिन भर धूप में सुखावे॥ इसी प्रकार दो वार दोलायंत्र में पकाने से कान्तपाषाण शुद्ध होता है। शुद्ध होने पर इसे लोहे के समान पुट दे देकर भस्म करले। तब इसे रस कर्म में प्रयुक्त करे॥ २१७—२१६॥

अथ वराटिका लक्षणानि।

पीताभा ग्रन्थिला पृष्ठे दीर्घवृन्ता वराटिका।
सार्द्धनिष्कभरा श्रेष्ठा निष्कभारा च मध्यमा॥ २२०॥
पादोन निष्कभारा च कनिष्ठा परिकीर्त्तिता।
रसवैद्यैर्विनिर्दिष्टा सा वराटकसंज्ञका॥ २२१॥

वराटक अर्थात् कौड़ी वह अच्छी होती है जो पीले से रंग की हो, पीठ पर गांठदार हो, उस के वृन्त बड़े हों। डेढ़ निष्क भर भार में हो तो श्रेष्ठ, निष्क भर की हो तो मध्यम, पौने निष्क की हो तो कनिष्ठा कौडी कहाती है॥ २२०॥ २२१॥

अथ वराटिकाशुद्धिः।

वराटी काञ्जिके स्विन्ना यावच्छुद्धिमवाप्नुयात्।

कौड़ी को कांजी में दोलायंत्र से स्वेदन करें तो शुद्ध हो जाती है॥

गुणाः।

परिणामादिशूलघ्नी क्षयहा ग्रहणीहरा।
कटूष्णा दीपनी वृष्या तिक्ता वातकफापहा॥ २२२॥

कौड़ी की भस्म परिणामादि शूल नाशक, क्षयनाशक, ग्रहणी रोग दूर करती, कटु, उष्ण, दीपन, वृष्य, तिक्त तथा वात कफ को नाश करती है॥ २२२॥

मतान्तरम्।

भूगर्त्ते च समे शुद्धे पत्तने स्थापयेत् सुधीः।

तुषेण पूरयेत् तस्याः किञ्चिन्मध्यं भिषग्वरः ॥ २२३ ॥
वराटपूरितां मूषां तन्मध्ये विनिवेशयेत् ।
करीषाग्निं ततो दद्यात् पालिकायन्त्रमुत्तमम् ।
अनेन म्रियते नूनं वराटं सर्वरोगजित् ॥ २२४ ॥

[इति वराटिकाशुद्धिः]

एक सम भाग गढ़ा खोद कर उसमें कुछ तुष भर कर उ ऊपर कौड़ियों से भरी मूषारखकर ऊपरसे फिर उपले भर आग लगा दे। इसे पालिका यंत्र कहते हैं। इससे कौड़ी की भ होजाती है। यह भस्म सर्व रोग नाश करती है ॥ २२३ ॥ २२४ ॥

अथाञ्जनशुद्धिः।

नीलाञ्जनं चूर्णयित्वा जम्बीरद्रवभावितम् ।
दिनैकमातपे शुद्धं ततः कार्येषु योजयेत् ॥ २२५ ॥

नीले अञ्जन को चूर्ण करके जम्बीर के रस से भावना फिर एक दिन धूप में रखे तो शुद्ध होजाता है। इसे सब कार्य प्रयुक्त करे ॥ २२५ ॥

अथ हिङ्गुलपर्य्यायाः।

हिङ्गुले हिङ्गुलुर्याति दरदः शुकतुण्डकः ।
रसगन्धकसम्भूतो हिङ्गुलो दैत्यरक्तकः ॥ २२६ ॥

हिङ्गुल, हिङ्गुलु, दरद, शुकतुण्ड, रसगन्धक सम्भूत, दैत्यरक्त ये सब शिंगरफ के नाम हैं ॥ २६ ॥

अथ हिङ्गुलशोधनम्।

अम्लवर्गद्रवैः पिष्ट्वा दरदो माहिषेण च ।
दुग्धेन सप्तधा पिष्टः शुष्कीभूतोविशुध्यति ॥ २२७ ॥

हिंगुल को अम्ल वर्ग के रस से पीस कर, फिर भैंस के से सात वार पीस कर भावना दें तो सूख कर शुद्ध होता है ॥२

अन्यच्च।

मेषी दुग्धेन दरदमम्लवर्गैर्विभावितम् ।
सप्तवारं प्रयत्नेन शुद्धिमायाति निश्चितम् ॥ २२८ ॥

हिंगुल को भेड़ के दूध से भावित करे फिर अम्लवर्ग से सात वार भावित करे तो निश्चित शुद्ध होजाता है ॥ २२८ ॥

अन्यमतम्।

दरदं दोलिकायन्त्रे पक्वं जम्बीरजैर्द्रवैः ।
सप्तवारमजामूत्रैर्भावितं शुद्धिमेति हि ॥ २२९ ॥

हिंगुल को दोलायन्त्र से जम्बीर के रस में पकावे। फिर सात वार बकरी के मूत्र में भावित करे। तो शुद्ध होजाता है ॥ २२९ ॥

अथान्यत्।

आर्द्रकैर्लकुचद्रावैः सप्तधा भावितो यदि ।
हिङ्गुलः शुद्धतां याति निर्दोषो जायते खलु ॥ २३० ॥

हिंगुल को अदरक के रस से, तथा बड़हल के रस से सात वार भावना दें तो शुद्ध तथा निर्दोष होजाता है ॥ २३० ॥

अथ शुद्धहिङ्गुललक्षणगुणाश्च।

बिम्बयाभं हिङ्गुलं दिव्यं रसगन्धकसम्भवम् ।
मेह कुष्ठहरं रुच्यं बल्यं मेधाग्निवर्द्धनम् ॥ २३१ ॥

बिम्बाफल के समान लाल रंग का, दिव्य अर्थात् चमकदार पारे और गंधक से वना हुआ, हिंगुल ले। यह प्रमेह और कुष्ठ को दूर करता है। रुचिवर्धक बलवर्धक, मेधावर्धक तथा अग्निवर्धक है ॥ २३१ ॥

अथ शिलाजतुनामानि।

शिलाजतुनि शैलेयमद्रयं गिरिजमश्मजम् ।
धातुजमश्मजतुकं शैलजंचाश्मसंभवम् ॥ २३२ ॥

शिलाजतु, शैलय, अद्र्य गिरिज, अश्मज, धातुज, अश्मजतुक, शैलज, अश्मसंभव ये शिलाजीत के नाम हैं ॥ २३२ ॥

तच्छुद्धिः।

गोदुग्धत्रिफलाभृङ्ग-द्रवैः पिष्टं शिलाजतु ।
दिनैकं लौहजे पात्रे शुद्धिमायात्यसंशयम् ॥ २३३ ॥

शिलाजीत को गो दूध, त्रिफला के क्वाथ, तथा भांगरे के रस

से लोहे के पात्र में पीस कर रखें तो निश्चय से शुद्ध होजाती है ॥ (पहले मल को शुद्ध कर लेना चाहिये फिर पूर्वोक्त विधि से विशेष शुद्धि करें) ॥ २३३ ॥

अथ शुद्धशिलाजतुगुणाः ।

शिलाजतु भवेत् तिक्तं कटुकञ्च रसायनम्
क्षयशोथोदरार्शांसि हन्ति वस्तिरुजांजयेत् ॥ २३४ ॥

शिलाजीत तिक्त, कटु तथा रसायन है । क्षय, शोथ, उदर, बवासीर तथा वस्ति की पीड़ा को दूर करती है ॥ २३४ ॥

अथ सौवीरादिशोधनम् ।

सौवीरं टङ्कणं शङ्खं कङ्कुष्ठं गैरिकं तथा ।
एते वराटवच्छोध्या भवेयुर्दोषवर्जिताः ॥ २३५ ॥

सौवीराञ्जन अर्थात् सफेद सुरमा, सुहागा, शंख, कङ्कुष्ठ, गेरु । इन सब को कौड़ी के समान शुद्ध करने से ये दोष वर्जित होते हैं ॥ २३५ ॥

कङ्कुष्ठादीनां शोधनम् ।

कङ्कुष्ठं गैरिकं शङ्खं काशीशं टङ्कणंतथा ।
नीलाञ्जनं शुक्तिभेदाः खुल्वकाः सवराटकाः ॥ २३६ ॥
जम्बीरवारिणा स्विन्नाः क्षालिताः कोष्णवारिणा ।
शुद्धिमायान्त्यमी योज्याः भिषग्भिर्योगसिद्धये ॥ २३७ ॥

कङ्कुष्ठ, गेरू शंख, कसीस, सुहागा, नील, अञ्जन, सीप के भेद, शम्बूक या घोंघ, कौड़ी । इन सब का जम्बीर के रस से स्वेदन कर के गरम पानी से धोदें तो शुद्ध होते हैं । इन्हें शुद्ध करके ही योगों में डालें ॥ २३६ ॥ २३७ ॥

अथ टङ्कणपर्य्यायाः ॥

टङ्कणं क्रामणष्टङ्कः सम्यक्क्षारश्च पाचनः ।
शुभगो मालतीजातो द्रवी लौहविशुद्धिदः ॥ २३८ ॥

टङ्कण, क्रामण, टङ्क, सम्यक् क्षार, पाचन, शुभग, मालतीजात, द्रवी, लौहविशुद्धिद ये सुहागे के नाम हैं ॥ २३८ ॥

अथ टङ्कणशुद्धिः।

आदौ टङ्कणमादाय काञ्जिकाम्ले विनिक्षिपेत्।
एकरात्रात्समुद्धृत्य रौद्रयन्त्रे विभावयेत्॥ २३९॥
नरमूत्रगतं टङ्कं गवां मूत्रगतं तथा।
दिनान्ते तत् समुद्धृत्य जम्बीराम्बुगतं ततः॥ २४०॥
जम्बीराम्लात् समुद्धृत्य नारिकेलस्य पात्रके।
मरीचचूर्णसंयुक्तं क्षालयेच्छीतलाम्बुना।
एवं टङ्कं समादाय सर्वरोगेषु योजयेत्॥ २४१॥

सुहागा लकर कांजी में डाले। एक रात्रि के पीछे निकाल कर धूप में सुखावे। फिर पुरुष के मूत्र और गौ के मूत्र में क्रमशः रात २ भर भावना दे धूप में सुखावें। फिर जम्बीरी के रस में डालें, फिर निकाल कर नारियल के पात्र में मरिचों का चूर्ण और इसे डालें तथा शीतल जल से धोवें। इस प्रकार शुद्ध हुए सुहागे को सब योगों में वर्त्ते॥ २३९—२४१॥

गुणाः।

टङ्कणोऽग्निकरो रूक्षः कफघ्नो रेचनो लघुः॥ २४२॥

सुहागा अग्निवर्धक, रूखा, कफनाशक, रेचन और लघु है २४२॥

अथ शङ्खमारणम्।

अन्धमूषागतं शङ्खं पलमेकं विचक्षणः।
माषार्द्धटङ्कणैर्मिश्रं दण्डयन्त्रेण मारयेत्॥ २४३॥

अन्ध मूषा में एक पल शुद्ध शंख को तथा आधा माषा सुहागे को मिला कर पुट दे। फिर पीस ले। तो शंख भस्म होजाता है॥२४३॥

अथ शुद्धशङ्खगुणाः।

शङ्खः सर्वरुजां हन्ति विशेषादुदरामयम्।
शूलाम्लपित्तविष्टम्भ-मेहहृत् वन्हिदीपनः॥ २४४॥

[इति उपरसशोधनाद्यधिकारः]

शखं सब दर्दों को दूर करता है। विशेष कर दस्तों को दूर करता है। तथा शूल, अम्लपित्त, विष्टम्भ और प्रमेह को नाश करता है तथा अग्निदीपक है॥ २४४॥

अथ स्वर्णादि शोधनम् ।

हेमादिलौहकिट्टान्तं शोधनं मारणं शृणु ।
तैले तक्रे गवांमूत्रे काञ्जिकेऽथकुलत्थजे ॥ २४५ ॥
तप्ततप्तानि सिञ्चेत तत्तद्द्रावे च सप्तधा ।
एवं स्वर्णादिलौहानि शुद्धिमायान्त्यसंशयम् ॥ २४६॥
सौख्यं वीर्य्यं बलं हन्ति नानारोगं करोति च ।
अशुद्धममृतं स्वर्णं तस्मात् शुद्धन्तु मारयेत् ॥ २४७ ॥
मृत्तिका मातुलुङ्गाम्लैर्भावितं पञ्चवासरम् ।
मृद्भस्मलवणाद्धेम शोधयेत् पुटयेत् ततः ॥ २४८ ॥

स्वर्ण, चांदी, ताम्बा आदि से लेकर लोहे के मल तक धातुओं का शोधन और मारण इस अधिकार में लिखते हैं। स्वर्णादि धातुओं को आग में तपा २ कर तिलतैल, गोमूत्र, तथा कुलथी के क्वाथ में सात २ वार बुझावे तो इनकी शुद्धि है ॥ २४५ ॥ २४६ ॥ अशुद्ध तथा बिना मारा हुआ स्वर्ण सुख और वीर्य्य का नाश करता है । इसलिये शुद्ध करके स्वर्ण को करे ॥ २४७ ॥ पञ्च मृत्तिका, नीबू का रस, मिट्टी, राख तथा इन्हें पीस कर पांच दिन तक स्वर्ण को इस में भावना देकर इसे स्वर्ण पर लेप करके फिर लघुपुट में पाक करे तो स्वर्ण होजाता है ॥ २४८ ॥

मतान्तरम् ।

वल्मीकमृत्तिका धूमं गैरिकं चेष्टका पटु ।
इत्येताः मृत्तिकाः पञ्च जम्बीरैरारनालकैः ॥ २४९ ॥
पिष्ट्वालेप्यं स्वर्णपत्रं पुटेनतु विशुध्यति ।
धारयेत् स्वर्णपत्रीभिस्त्रिदिनं पञ्च मृत्तिकाः ॥ २५० ॥

[इति स्वर्णशोधनम्]

बांबी की मिट्टी, धुंआ, गेरु, ईंट का चूर्ण, लवण या नौशादर इन पांच मिट्टियों को जम्बीर के रस और कांजी से पीस कर स्वर्ण पत्र को लीप और फिर पुट देवे तो शुद्ध होजाता है। तीन दिन तक पञ्च मृत्तिका स्वर्ण पत्रों पर लगी रहने दे ॥ २४९ ॥ २५० ॥

अथ स्वर्णमारणम्।

माक्षिकं नागचूर्णञ्च पिष्टमर्करसेन च।
हेमपत्रं पुटेनैव म्रियते क्षणमात्रतः ॥ २५१ ॥

शोधित स्वर्ण माक्षिक चूर्ण तथा शुद्ध सीसे का चूर्ण आक के दूध से पीस कर शुद्ध सोने के कंटकवेध्य पत्रों पर लेप करदे। फिर एक पुट देने से ही स्वर्ण की भस्म होजाती है ॥ २५१ ॥

मतान्तरम्।

सुशुद्धं पारदं दत्त्वा कुर्य्यात् यत्नेन पीठिकाम्।
दत्त्वोद्र्ध्वाधो नागचूर्णं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥ २५२ ॥

अच्छी प्रकार से शुद्ध किये हुए पारे को लेकर और पारे से आधे शुद्ध स्वर्णपत्र डाल कर मर्दन कर पीठी बनावे। फिर एक शराव में ऊपर और नीचे स्वर्ण का १६हवां भाग शुद्ध सीसे का चूर्ण रख और बीच में उसी स्वर्ण की पीठी को रख सम्पुट कर एक पुट दें तो स्वर्ण की भस्म होजाती है ॥ २५२ ॥

मतान्तरम्।

गलितस्य सुवर्णस्य षोडशांशेन सीसकम्।
योजयित्वा समुद्धृत्य निम्बुनीरेण मर्दयेत् ॥ २५३ ॥
गोलं कृत्वा गन्धचूर्णं समं दद्यात् तदोपरि।
शरावसम्पुटे कृत्वा पुटेत् त्रिंशद्वनोपलैः।
एवं मुनिपुटैर्हेम नोत्थानं लभते पुनः ॥ २५४ ॥

शुद्ध स्वर्ण को पिघला कर उसमें सोलहवां भाग शुद्ध सीसे का चूर्ण मिला कर घोट नींबू के रस से भली प्रकार मर्दन करे। और गोला बनावे। इसी के समान शुद्ध गन्धक का चूर्ण करले।

फिर उस गंधक को आधा नीचे और आधा ऊपर देकर उसी गो को बीच में रख दे । इस शराव सम्पुट को तीस जंगली उपलों आग देवे । इस प्रकार सात पुट देने से भस्म हुआ २ स्वर्ण उत्थान को प्राप्त नहीं होता ॥ २५३ ॥ २५४ ॥

मतान्तरम् ।

शुद्धसूतसमं स्वर्णं खल्ले कृत्वा तु गोलकम् ।
ऊर्द्ध्वाधो गन्धकं दत्त्वा सर्वतुल्यं निरुध्य च ॥ २५५ ॥
त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात् पुटान्येवं चतुर्दश ।
निरुत्थं जायते भस्म गन्धो देयःपुनः पुनः ॥ २५६ ॥

शुद्ध पारे के समान शुद्ध स्वर्ण लेकर खरल में घोट कर गो बनावे । फिर दोनों के समान शुद्ध गंधक ले एक शराव में ऊ नीचे आधी २ गन्धक देकर और बीच में इस गोले को रख सम्पुट कर दे ॥ २५५ ॥ फिर इसे तीस जंगली उपलों की आग इस प्रकार चौदह पुट देने से स्वर्णभस्म निरुत्थ होजाती है । प्र वार गन्धक और पारद नया २ डालना चाहिये ॥ २५६ ॥

अथ शुद्धस्वर्णगुणाः ।

कषायतिक्तमधुरं सुवर्णं गुरु लेखनम् ।
हृद्यं रसायनम् बल्यं चक्षुष्यं कान्तिदं शुचि ॥ २५७ ॥
आयुर्मेधावयः स्थैर्य--वाग्विशुद्धिस्मृतिप्रदम् ।
क्षयोन्मादगराणाञ्च कुष्ठानां नाशनं परम् ॥ २५८ ॥

[इति स्वर्णमारणम्]

स्वर्णभस्म कसैला, तिक्त, मधुर, भारी, लेखन, हृदय के हितकारी, रसायन, बलदायक, चक्षुओं के लिये हितकारी, कां दायक, पवित्र होता है ॥ २५७ ॥ तथा आयु मेधा आयु की स्थिर बाणी की शुद्धि और स्मृति का देने वाला है । क्षयरोग, उन्म विष तथा कुष्ठ रोग को नाश करने वाला है ॥ २५८ ॥

अथ शुद्धरजतलक्षणम् ।

दग्धोत्तीर्णं सुशीतं यन्निर्मलं कुन्दसन्निभम् ।

गुरु स्निग्धं कुमारश्च तारमुत्तममिष्यते ॥ २५९ ॥

जो रजत अर्थात् चांदी अग्नि में दग्ध करने के पश्चात् सुशीत होने पर कुन्द के समान श्वेत तथा निर्मल हो। तथा भारी, चिकनी और मुलायम हो। वह चांदी उत्तम होती है ॥ २५९ ॥

अथ अशुद्धरजतदोषाः।

आयुः शुक्रं बलं हन्ति रोगसङ्घं करोति च।
अशुद्धश्चामृतं तारं शुद्धं मार्यमतो बुधैः ॥ २६० ॥

अशुद्ध और ठीक भस्म न हुई २ चांदी वीर्य तथा बल का नाश करती है तथा अनेक रोगों को करती है। इसलिये चांदी को शुद्ध करके मारना चाहिये ॥ २६० ॥

अथ रजतशोधनम्।

नागेन क्षारराजेन द्रावितं शुद्धिमृच्छति।
रजतं दोषनिर्मुक्तं किंवा क्षाराम्लपाचितम् ॥ २६१ ॥

[इति रजतशोधनम्]

चांदी को सुहागा तथा सीसे से मिला कर द्रावित करें तो शुद्ध होजाती है। तथा क्षार और अम्ल में पकाने से भी शुद्ध हो जाती है ॥ २६१ ॥

अथ रजतमारणम्।

माक्षिकं गन्धकञ्चैवमर्कक्षीरेण मर्दयेत्
तेन लिप्तं रूप्यपत्रं पुटेन म्रियते ध्रुवम् ॥ २६२ ॥

शुद्धस्वर्णमाक्षिक चूर्ण तथा शुद्धगन्धकचूर्ण दोनों को आक के दूधसे मर्दन करके शुद्धचांदी के पत्तों पर लेपकरे। फिर शराव में रख पुटदे इस प्रकारसे पुटदेनेसे चांदी की भस्म होजाती है ॥२६२॥

मतान्तरम्।

कण्टवेध्ये तारपत्रे दत्त्वा द्विगुणहिङ्गुलम्।
पातयन्त्रे रसो ग्राह्यो रजतं मृतमुच्यते ॥ २६३ ॥

कांटेसे बींधने योग्य पतले२चांदी के पत्र बनाकर उसमें दुगुना हिंगुल मिलाकर ऊर्ध्वपातनयंत्रसे पकावे। ऐसा चार पांच वार करने

से नीचे चांदीकी भस्म मिलेगी ॥ (ऊपरशुद्धपारामिलेगा) ॥

मतान्तरम् ।

तालं गन्धं रौप्यपत्रं मर्दयेत् निम्बुकद्रवैः ।
त्रिपुटैश्च भवेद्भस्म योज्यमेतद्रसादिषु ॥ २६४ ॥
तारपत्रं चतुर्भागं भागैकं शुद्धतालकम् ।
मर्द्यं जम्बीरजैर्द्रावैस्तारपत्राणि लेपयेत् ॥ २६५ ॥
रुद्ध्वा त्रिभिः पुटैः पाच्यं पञ्चविंशद्वनोपलैः ।
म्रियते नात्र सन्देहो गन्धो देयः पुनः पुनः ॥ २६६ ॥

शुद्धहड़ताल, शुद्धगन्धक, शुद्धचांदीके पत्र तीनों समभाग नीबूकेरससे मर्दन करके तीनपुटदे । इससे चांदीकी भस्महोजाती इसे सब रसादिकों में वर्त्तें ॥ २६४ ॥

शुद्ध चांदीकेपत्र चारभाग,शुद्धहड़ताल एकभाग दोनों को जम्बीरी के रससे घोटकर चांदीके पत्रोंमें लेपकरदेवे ॥ २६५ ॥ इन पत्रोंको शरावसम्पुट में रख २५ जंगली उपलों की आगदे। प्रकार तीन पुटदेनेसे चांदीकी भस्म होजाती है । गन्धक प्रत्येकवार चाहिये ॥ २६६ ॥

अथ शुद्धरजतगुणाः ।

शीतं कषायं मधुरमम्लं वातप्रकोपजित् ।
दीपनं बलकृत् स्निग्धं गुल्माजीर्णविनाशनम् ।
आयुष्यं दीर्घरोगघ्नं रजतं लेखनं स्मृतम् ॥ २६७ ॥

[इति रजतमारणम्]

चांदीकीभस्म शीतल, कसैली, मधुर, खट्टी तथा वायु केप्र को जीतनेवाली है । दीपन और बलदायक है । स्निग्ध है गुल्मना तथा अजीर्णविनाशक है । आयुवर्धक है तथा दीर्घकालसे उत्पन्न रोगों को नाश करती है तथा लेखन है ॥ २६७ ॥

अथ अशुद्धताम्रदोषाः ।

न विषं विषमित्याहुस्ताम्रञ्च विषमुच्यते ।

एको दोषो विषे त्वष्टौ दोषास्ताम्रे प्रकीर्त्तिताः ॥ २६८ ॥

भ्रमोमूर्च्छा विदाहश्च उत्क्लेदशोषवान्तयः ।

अरुचिश्चित्तसन्ताप एते दोषा विषोपमाः ।

तस्माद्विशुद्धं ताम्रं हि ग्राह्यं रोगोपशान्तये ॥ २६९ ॥

विषको विष नहीं कहते परन्तु तांबे को विष कहते हैं । क्योंकि विषमें तो एकहीदोष है और तांबे में आठदोषहैं ॥ २६८ ॥ भ्रम, मूर्छा, विदाह, उत्क्लेद, शोष, वान्ति, अरुचि, चित्तसन्ताप । ये सबदोष विष के समान हैं । इसलिये रोगों की शान्तिकेलिये तांबा विशुद्धकरके भस्म करना चाहिये ॥ २६९ ॥

अथ ताम्रशुद्धिः ।

पटुना रविदुग्धेन ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।

अग्नौ सन्ताप्य निर्गुण्डी-रसे सिञ्चेत् पुनःपुनः ॥ २७० ॥

सेंधानमक और आकका दूध दोनों को मिलाकर तांबेके पत्तोंपर लेपकरे । फिर उनपत्रोंको अग्निपर सन्तप्तकरके बारबारनिर्गुण्डीके रस में बुझावे । इसप्रकारसे तांबा शुद्धहोजाता है ॥ २७० ॥

मतान्तरम् ।

गोमूत्रेण पचेद्यामं ताम्रपत्रं दृढाग्निना ।

शुध्यते नात्र सन्देहो मारणञ्चात्र कथ्यते ॥ २७१ ॥

(इति ताम्रशोधनम्)

ताम्रपत्रों को गोमूत्र में कुछ लवण मिलाकर एकपहर तक तीव्र आंच से पकावे । इससे निःसन्देह ताम्बा शुद्ध हो जाता है । आगे मारने की विधि लिखते हैं ॥ २७१ ॥

अथ ताम्रमारणम् ।

सूतमेकं द्विधा गन्धं यामं मर्द्यन्तु कन्यया ।

द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं लिप्त्वा स्थाल्यां निधापयेत् ॥ २७२ ॥

सम्यक् शूरणजैःसार्द्धं पार्श्वे भस्म निधापयेत् ।

चतुर्यामं पचेच्चुल्यां पात्रपृष्ठे सगोमये ॥ २७३ ॥

जलं पुनः पुनर्देयं स्वाङ्गशीतं विमर्दयेत् ।
म्रियते नात्र सन्देहः सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २७४ ॥

एक भाग शुद्ध पारा, दो भाग शुद्ध गन्धक लेकर दोनों को मार के रससे एक पहर तक मर्दन करे । फिर दोनों के तुल्य तां पत्र लेकर इनसे लीप दे । फिर इन पत्रों को शरावसम्पुट में रख एक हांडी में रखे और ऊपरसे जिमीकन्द की भस्म डालदे और पहर तक चूल्हे पर रखकर पकाये । नीचे आग देता जाये और पर पानी डालता रहे (पात्र पर नहीं) स्वांग शीतल होने पर नि ल कर पीसले । इससे एक वार मेंही ताम्र भस्म होजाती है इसमें भी सन्देह नहीं है । यह सब रोगों में प्रयुक्त करे ॥२७२॥२७३॥

मतान्तरम् ।

जम्भाम्भसा सैन्धवसंयुतेन सगन्धकं स्थापय शुल्वपत्रम् ।
पक्वायमानं पुटयेत् सुयुक्त्या वान्त्यादिकं यावदुपैति शान्तिम्

तांबेके समान सेंधानमक और शुद्ध गन्धक समान२भाग ले नीबू के रस से घोट कर ताम्र पत्रों पर लेप कर दे । फिर इन त पत्रों को एक हांडी में रखकर ऊपर से एक छोटा सा शराव रख उन्हे ढक दे और सन्धि बंद करके इनके ऊपर रेता भर देवे । नीचे आग देकर पकावे । इससे ताम्र भस्म होजाती है । फिर वान्ति भ्रा आदि दोषों की शान्ति के लिये पञ्चगव्य से वार२पुट देवे । इ ताम्र भस्म विशुद्ध होजाती है ॥ २७५ ॥

अन्यमतम् ।

शुद्धं ताम्रदलं विमर्द्य पटुना क्षारेण जम्बीरजैः ।
नीरैर्घस्त्रमिदं स्नुगर्कपयसा लिप्तं धमेत् सप्तधा ॥
निर्गुण्ड्यम्बु हिमं रसेन्द्रकालितं दुग्धाऽ्यगन्धेन तत् ।
तुल्येनाथ मृतं भवेत् सुपुटितं पञ्चामृतेन त्रिधा ॥ २७६

शुद्ध तांबे के पत्रों को नमक, क्षार तथा जम्बीरी के रस एक दिन घोट फिर थोहर और आक के दूध से घोट कर वार आग में तपा २ कर संभालु के रस में बुझावें । जो बुझा

चूर्ण नीचे गिरे उसे निकाल कर उसके समान शुद्ध गंधक और इतना ही शुद्ध पारा लेकर तीनों को मर्दन करे। फिर उसी के समान दूध और घी मिला कर अच्छी प्रकार पुट दे। उसके अनन्तर तीन पुट पञ्चामृत से दे। इस प्रकार ताम्र की शुद्ध भस्म होती है ॥ २७६ ॥

अथ शुद्धताम्रगुणाः।

वान्तिभ्रान्तिविवर्जितं क्षयरुजाकुष्ठानि पाण्ड्वामयम्।
शूलं मेहगुदाङ्कुरानिलगदाननुक्तानुपानैर्जयेत्।
गुञ्जामात्रमिदं ततो द्विगुणितं तच्छुद्धकायेन चेत्।
भुक्तः स्थौल्यजराऽपमृत्युशमनं पथ्याशिना वत्सरात् ॥२७७॥
ताम्रमुष्णं गरहरं यकृत्प्लीहोदरापहम्।
क्रिमिशूलामवातघ्नं ग्रहण्यर्शोऽम्लपित्तजित् ॥ २७८ ॥

[इति ताम्रमारणम्]

वान्ति भ्रान्ति से रहित ताम्रभस्म को अनुपानों से सेवन करने से क्षयरोग, कुष्ठ, पाण्डु शूल, प्रमेह, बवासीर के मस्से, वायु के रोग, दूर होते हैं। यह ताम्र भस्म शुद्ध शरीर करके एक रत्ति से क्रमशः दो रत्ति तक बढ़ाके एक वर्ष तक पथ्य सहित खावे तो स्थूलता, बुढ़ापा और अकाल मृत्यु को दूर करता है ॥ २७७ ॥ ताम्रभस्म गरम है, विष को हरता है, यकृत् तथा तिल्ली और उदर के रोगों को हरता है। क्रिमि, शूल तथा आमवात को दूर करता है। तथा ग्रहणी, बवासीर और अम्लपित्त रोगों को दूर करता हैं।॥२७८॥

अथ पित्तल—कांस्ययोः शोधनादिकम्।

पित्तलञ्च तथा कांस्यं ताम्रवत् मारयेत् पृथक्।
ताम्रवच्छोधनं तेषां ताम्रवत् गुणकारकम् ॥ २७९ ॥

[इति पित्तलकांस्यशोधनमारणम्]

पित्तल तथा कांसी को तांबे के समान ही भस्म करे तथा तांबे के समान ही शोधन करे। इनके गुण भी तांबे के समान ही होते हैं ॥ २७९ ॥

अथ नागवङ्गयोः शोधनम् ।

नागवङ्गं च गालिते रविदुग्धेन सेचिते ।
त्रिवारान् शुद्धिमायातः सच्छिद्रे हण्डिकान्तरे ॥ २८० ॥

नाग अर्थात् सीसा और बंग अर्थात् रांगा दोनों को आ
पिघला कर आक के दूध में सींचें। इस प्रकार तीन वार सीं
से ये शुद्ध होजाते हैं ॥ पिघला कर जब दूध में इन्हें डालें तो
पर एक छेद वाली उलटी हांडी रखें। उस छिद्र में से इन्हें दू
डालें यदि दूध में सीधा ही डाल देंगे हांडी न रखेंगे तो प
उछलेगा। सावधान रहें ॥ २८० ॥

मतान्तरम् ।

वङ्गं चूर्णोदके स्विन्नं यामार्द्धेन विशुध्यति ॥ २८१ ॥

(इति नागवङ्गशुद्धिः)

रांगे को चूने के जल में दोलायन्त्र से आधा पहर तक स्वे
करें तो शुद्ध होजाता है ॥ (पहले बंग को गला कर चूने के
में सात वार बुझा कर फिर चूने के जल में आधा पहर स्वेदन
तो ठीक शुद्ध होता है) ॥ २८१ ॥

अथ सीसकमारणम् ।

भुजङ्गममगस्त्यश्च पिष्ट्वा पत्रं प्रलेपयेत् ।
तत्र संविद्रुते नागे वासापामार्गसम्भवम् ॥ २८२ ॥
क्षारं विमिश्रयेत् तत्र चतुर्थांशं गुरूक्तितः ।
प्रहरं पाचयेच्चुल्ल्यां वासादर्व्या च चालयेत् ॥ २८३ ॥
तत उद्धृत्य तच्चूर्णं वासानीरेण मर्दयेत् ।
एवं सप्तपुटैर्नागं सिन्दूरं जायते ध्रुवम् ॥ २८४ ॥

शुद्ध सीसा और अगस्त दोनों को समभाग लेकर पीसें।
एक हांडी में फिर डाल कर आग पर तपावें। जब सीसा पि
जावे तो बांसे का क्षार तथा अपामार्ग के क्षार दोनों को सम
ले। सीसे से इन क्षारों को चौथाई ले। उस पिघले हुए सीसे

इन क्षारों को चुटकी २ भर छोड़ता जावे। नीचेसे आगदेता जावे और साथही बांसेकी शाखासे सीसे को चलाता जावे॥ दो पहर आगदे चुकने के पीछे जब सीसे की भस्म हो जावे तब नीचे उतार कर उस चूर्ण को बांसे के रस से मर्दन करके सात पुट दे तो इस प्रकार से सीसे की भस्म सिन्दूर के समान लाल रंग की होगी॥ २८२॥ २८३॥ २८४॥

अन्य मतम्।

त्रिभिः कुम्भीपुटैर्नागो वासारसविमर्दितः।
सशिलो भस्मतामेति तद्रजः सर्वमेहाजित्॥ २८५॥
दशनागबलं धत्ते वीर्य्यायुः कान्तिवर्द्धनम्।
मेहान् हन्ति हतं नागं सेव्यं वङ्गश्च तद्गुणम्॥ २८६॥

शुद्ध सीसा और शुद्ध मनसिल समभाग लेकर बांसे के रस से मर्दन करके तीन वार गज पुट में फूक देने से भस्म होजाता है। यह भस्म सब प्रकार के प्रमेहों को दूर करती है॥ २८५॥ इस सीसे की भस्म सेवन करे तो दश हाथियों का बल होजाता है, वीर्य, आयु तथा कान्ति की वृद्धि होती है, तथा प्रमेह नाश होते हैं॥ बंग भस्म के भी ये ही गुण हैं॥ २८६॥

अथ शुद्धनागगुणाः।

तारस्य रञ्जनो नागो वातपित्तकफापहः।
ग्रहणीकुष्ठगुल्मार्शः-शोषव्रणविषापहः॥ २८७॥

[इति नागमारणम्]

सीसा चांदी को रंग देता है तथा वात, पित्त और कफ को दूर करता है। ग्रहणी, कुष्ठ, गुल्म, बवासीर, शोष व्रण तथा विषों को नाश करता है॥ २८७॥

अथ वङ्गमारणम्।

वङ्गं सतालमर्कस्य पिष्ट्वा दुग्धेन सम्पुटेत्।
शुष्काश्वत्थभवैर्वल्कैःसप्तधा भस्मतांनयेत्॥ २८८॥

शुद्ध बंग अर्थात् रांगा और शुद्ध हड़ताल को समभाग लेकर

आक के दूध से पीस कर उस पर पीपल वृक्ष की सूखी हुई को सात वार लपेट कर पुट दे तो एक पुट में ही भस्म जाती है ॥ २८८ ॥

मतान्तरम् ।

विशुद्धवङ्गपत्राणि द्रावयेद्दृहण्डिकान्तरे ।
अपामार्गोद्भवं चूर्णं तत्तुल्यं तत्र मेलयेत् ॥ २८९ ॥
स्थूलाग्रया लौहदर्व्या शनैस्तदभिमर्दयेत् ।
यावद्भस्मत्वमाप्नोति तावन्मर्द्यन्तु पूर्ववत् ॥ २९० ॥
ततस्त्वेकीकृतं चूर्णं कृत्वा चाङ्गारवर्जितम् ।
नूतनेनशरावेण रोधयेच्च भिषग्वरः ।
पश्चात् तीव्राग्निना पक्कं वङ्गभस्म भवेद् ध्रुवम् ॥ २९१ ॥

विशुद्ध बंग के पत्रों को हांडी में रख कर आग पर पिघ उस पर अपामार्ग का चूर्ण थोड़ा २ डालता जावे । और लोहे कड़छी से जिसका अगला भाग मोटा हो धीरे २ उस बंग को करे । बंग के समान भाग ही अपामार्ग का चूर्ण पास रखले। देखे कि बंग की सम्पूर्ण भस्म होगई तब इस चूर्ण को एकत्र आंच देता जाये जब इसमें कोयले न रह कर भस्म मात्र रह तब एक नये शराव से इसे ढक कर और संधिबंद करके तीव्र से पुट देवे तो बंग भस्म होजाती है ॥ २८९—२९१ ॥

मतान्तरम् ।

वङ्गं खर्परके कृत्वा चुल्ल्यां संस्थापयेत् सुधीः ।
द्रवीभूते पुनस्तस्मिन् चूर्णान्येतानि दापयेत् ॥ २९२ ॥
प्रथमे रजनीचूर्णं द्वितीये च यमानिकाम् ।
तृतीये जीरकश्चैव ततश्चिश्चात्वगुद्भवम् ॥ २९३ ॥
अश्वत्थवल्कलोत्थश्च चूर्णं तत्र विनिक्षिपेत् ।
एवं विधानतो वङ्गं म्रियते नात्र संशयः ॥ ३९४ ॥

शुद्ध बंग को एक चौड़े मुंह की मिट्टी की हांडी में रख

आग पर पिघलावे। जब पिघल जावे तब उसमें आगे कहे हुए चूर्ण ऊपर से छोड़ता जावे। पहले हल्दी का चूर्ण, फिर अजवायन का चूर्ण, फिर सफेद ज़ीरे का चूर्ण, फिर इमली की छाल का चूर्ण, फिर पीपल वृक्ष की छाल का चूर्ण उसमें डाल कर किसी लकड़ी से हिलाता जाये। इनमें से प्रत्येक चूर्ण वंग के समान होना चाहिये। इस विधि से बंग भस्म होजाती है इसमें कोई सन्देह नहीं ॥ २६२—२६४ ॥

गुणाः।

वङ्गं तिक्ताम्लकं रूक्षं किञ्चिद्वातप्रकोपणम्।
मेदःश्लेष्मामयघ्नञ्च क्रिमिघ्नं मेहनाशनम् ॥ २६५ ॥

[इति वङ्गमारणम्]

वंग भस्म तिक्त, अम्ल, रूक्ष, कुछ कोष्ठ में वात का प्रकोप करती है। मेद और श्लेष्मा के रोगों का नाश करती है। तथा क्रिमिघ्न और प्रमेह नाशक है ॥ २५६ ॥

अथ लौहशोधनादिकम्।

तप्तानि सर्वलौहानि कदलीमूलवारिणि।
सप्तधा त्वभिषिक्तानि शुद्धिमायान्त्यनुत्तमाम् ॥ २६६ ॥
त्रिफलाऽष्टगुणे तोये त्रिफला षोडशं पलम्।
तत्क्वाथे पादशेषे तु लौहस्य पलपञ्चकम् ॥ २६७ ॥
कृत्वा च तप्तपत्राणि सप्तवारं निषेचयेत्।
एवं प्रलीयते दोषो गिरिजे लौहसम्भवः ॥ २६८ ॥

[इति लौहशोधनम्]

सब लोहों को तपा २ कर केले की जड़ के रस में सात २ वार बुझायें तो उत्तम शुद्ध होजाते हैं ॥ २६६ ॥ सोलह पल त्रिफला लेकर उसमें १२८ पल पानी डाले और इसे मिट्टी के पात्र में पका कर शेष ३२ पल रहने पर छान ले। यह त्रिफला क्वाथ है। इसमें लोह के पत्र पांच पल लेकर गर्म कर २ के सात वार बुझावें। ऐसा करने से हे पार्वति! लोहे का सब दोष दूर होकर लोहा शुद्ध होजाता है ॥ २६६—२६८ ॥

भानुपाकात् तथा स्थाली-पाकाच्च पुटपाकतः ।
निरुत्थो जायते लौहो यथोक्तफलदो भवेत् ॥ २९९ ॥

भानु पाक से, स्थालीपाक से तथा पुट पाक से लौह निरुत्थ होजाती है और फिर यथोक्त फल देने वाली होती है २९

अथ भानुपाकविधिः ।

लौहे दृषदि लौहश्च मुद्गरेण हतं मुहुः ।
कृत्वाम्बुगलितं शुद्धं जलेन त्रैफलेन वा ॥ ३०० ॥
चालयेद्बहुशः पश्चात् कृत्वा द्रव्यान्तरं पृथक् ।
शोषितं भानुभिर्भानोर्भानुपाके प्रयोजयेत् ॥ ३०१ ॥
चालने भानुपाके तु लौहतुल्यं फलत्रिकम् ।
जलंद्विगुणितं दत्त्वा चतुर्भागावशेषितम् ॥ ३०२ ॥
एवमुक्तं फलक्काथ-जलं दत्त्वा पुनःपुनः ।
शोषयेत् सूर्यतेजोभिर्निरन्तरमहस्त्रयम् ॥ ३०३ ॥
अथवा तत्र तत्क्काथं दत्त्वा दत्त्वा भिषग्वरः ।
सप्तसप्तविधैरेव सप्तवारान् विशोधयेत् ॥ ३०४ ॥

[इति भानुपाकविधिः]

लोहे के पूर्वोक्त प्रकार बने हुए चूर्ण को लोहे के मूसल लोहे के ऊखल में कूट कर जल में या त्रिफला के क्काथ में डाल कर धोवे तथा अन्य कोयले आदि द्रव्यों को पृथक् कर फिर सूर्य की किरणों से सुखाकर भानुपाक करे ॥ ३०० ॥ ३० लोहे के धोने में तथा भानुपाक करने में लोहे के सम भाग त्रिफला लेकर उसमें दुगना जल डाल कर क्काथ बनावे । चौथाई जल बच जावे तो उतार ले यह त्रिफला का क्काथ ब ३०२ ॥ इस प्रकार के त्रिफला के क्काथ को लोहे में डाल कर दिन तक निरन्तर सूर्य की किरणों से सुखावें ॥ ३०३ ॥ अ इस प्रकार के बने हुए त्रिफला के क्काथ को लोहे में सात, सात डाल कर धूप में सात वार सुखावे ॥ ३०४ ॥

अथ स्थालीपाकविधिः।

इत्थमादित्यपाकान्ते स्थाल्यां पाकमुपाचरेत्।
स्थालीपाके फलं ग्राह्यमयसस्त्रिगुणीकृतम् ॥ ३०५ ॥
तस्य षोडशिकं तोयमष्टभागावशेषितम्।
मृदुमध्यकठोराणामन्येषामयसा समम् ॥ ३०६ ॥
क्वथनीयं समादाय चतुरष्टौ च षोडश।
गुणानां स्थाप्यते तोयं शेषयेदयसा समम् ॥ ३०७ ॥
स्वरसस्यापि लौहेन स्थालीपाके समानता।
स्थाल्यां क्राथादिकं दत्त्वा यथाविधि विनिर्मितम्।
पाकेन चीयते यस्मात् स्थालीपाक इति स्मृतः ॥ ३०८ ॥
हस्तिकर्णपलाशस्य मूलञ्च शतमूलिका।
भृङ्गराजाख्यराजानामेषां निजरसैः सह ॥ ३०९ ॥
मिलित्वा वा विधातव्यं स्थालीपाके फलादनु।
यथादोषौषधेनापि स्थालीपाको विधीयते ॥ ३१० ॥

[इति स्थालीपाकविधिः]

इस प्रकार से भानुपाक कर चुकने पर स्थालीपाक करे। स्थालीपाक में लोहे से तिगुणा त्रिफला लेवे ॥ ३०५ ॥ उससे सोलह गुणा पानी डाल कर पकावे शेष आठवां भाग बचने पर उतार लें। तथा अन्य आगे कहीं औषधियों को जो मृदु, मध्यम तथा कठोर हों उन सब को लोहे के समान लेकर उनमें से मृदु द्रव्यों में चार गुणा, मध्यम द्रव्यों में आठ गुणा तथा कठोर द्रव्यों में सोलह गुणा पानी डाल कर पकावें और शेष क्राथ लोहे के बराबर रखलें। यदि किसी औषध का स्वरस लेना हो तो वह भी लोहे के समान लेवे ॥ फिर लोहे के समान त्रिफला आदि औषधियों का क्राथ वा स्वरस स्थाली अर्थात हांडी में डाल कर आग पर पकाया जाता है इसी लिये इसका नाम स्थाली पाक है ॥ ३०६ ॥ ३०७ ॥ ३०८ ॥ सबले

सबसे प्रथम त्रिफला के क्वाथसे लोहे को पाककरे, फिर हा
कर्णपलाश की जड़के रससे, फिर शतावरी के रससे, तथा भां
रससे पाककरे। सब रसों को लोहेके सम भाग पृथक् २ लो।
इनसे पृथक् २ वा एकत्र सब रसों को लोहे में डाल पाक
इसी प्रकार जिस२दोषको नाश करना चाहो उस२दोषको नाश
वाले द्रव्यों के रससे भी स्थालीपाक करें ॥ ३०९ ॥ ३१० ॥

अथ पुटपाकविधिः ।

स्थालीपाके सुसंपक्वं प्रक्षाल्य स्वच्छवारिणा ।
शुष्कं सञ्चूर्ण्य यत्नेनपुटपाके प्रयोजयेत् ॥ ३११ ॥
पुटाद्दोषविनाशः स्यात् पुटादेव गुणोदयः ।
म्रियते च पुटाल्लौहस्तस्मात् पुटंसमाचरेत् ॥ ३१२ ॥
यथा यथा प्रदीयन्ते पुटाः सुबहुशो यदि ।
तथा तथा प्रकुर्वन्ति गुणानेव सहस्रशः ॥ ३१३ ॥
पुटपाकेन पक्वन्तु शस्यते रसकर्म्मसु ।
दशादिशतपर्य्यन्तो गदे पुटविधिर्मतः ॥ ३१४ ॥
शतादिस्तु सहस्रान्तः पुटो देयो रसायने ।
वाजीकर्मणि विज्ञेयो दशादिशतपञ्चकः ॥ ३१५ ॥
तावदेव पुटेल्लौहं यावच्चूर्णीकृतं जले ।
निस्तरङ्ग लघुत्वेन समुत्तराति हंसवत् ॥ ३१६ ॥
पुटपाकौषधस्यापि क्वाथो वा स्वरसोऽपिवा ।
वक्ष्यमाणप्रमाणेन कर्त्तव्यो भिषजां वरैः ॥ ३१७ ॥
रसाभावे तु सर्वेषां क्वाथो ग्राह्यो मनीषिभिः ।
अभावे स्वरसस्यापि क्वाथ एव फलत्रिकात् ॥ ३१८ ॥

स्थालीपाक से अच्छी प्रकार पके हुए लोहे को स्वच्छ ज
धोकर सुखाले और यत्न पूर्वक चूर्ण करके पुटपाक के लिये
करे ॥ ३११ ॥ पुटदेने से ही दोषों का नाश होता है तथा पुट

गुणों का उदय होता है। पुट देने से ही लोह मरता है। इसलिये पुट देवे ॥३१२॥ जितने२ही अधिक पुट देंगे उतने ही सहस्रों गुण उदय होंगे ॥३१३॥ पुटपाक से पक हुआ२लोहा ही रसकर्म में श्रेष्ठ माना है रोग दूर करने के लिये दस पुट से सौ पुट तक देना चाहिये॥ ३१४। रसायन कर्म में सौ पुट से हज़ार पुट तक देने चाहियें और बाजी-कर्म में दस पुट से पांचसौ पुटतक देने चाहिये ॥ ३१५ ॥ तबतक लोहे को पुट देता जाये जबतक उसका चूर्ण निस्तरङ्गजलपर हलका होने के कारण हंस की समान तैरने लग जाये ॥ ३१६ ॥ पुटपाक की औषधों का क्वाथ वा स्वरसभी आगे कहे हुए प्रमाण के अनुसार लेना चाहिये ॥ ३१७ ॥ यदि स्वरस न हो तो उन२द्रव्यों का क्वाथ लेले स्वरस के अभाव में त्रिफला का भी क्वाथ ही लेना चाहिये ॥ ३१८ ॥

अथ त्रिफलादिगणः।

त्रिफला त्रिवृता दन्ती कटुकी तालमूलिका।
वृद्धदारश्च वृश्चीर–वृषपत्रक–चित्रकाः ॥ ३१९ ॥
शृङ्गवेरविडङ्गौ च भृङ्गभल्लातकौषधम्।
दाडिमस्य च पत्राणि शतपुत्री पुनर्नवा ॥ ३२० ॥
कुठार–क्रामकौ कन्दःतन्त्री भेकस्यपर्णिका।
हस्तिकर्णपलाशश्च कुलिशः केशराजकः ॥ ३२१ ॥
माणः खण्डितकर्णश्च गोजिह्वा लोहमारकः।
गिरिशान्तनकः प्रोक्तस्त्रिफलादिरयंगणः
सामान्यपुटपाकार्थमेतामिच्छन्ति सूरयः ॥३२२॥

त्रिफला अर्थात् हरड़, बहेड़ा आंवला त्रिवी, दन्तीमूल, कुटकी, मूसली, विधारा, पुनर्नवा श्वेत बांसे के पत्ते, चीता, अदरक, वायवि-डंग, भांगरा, भिलांवा, सोंठ, अनार के पत्ते, शतावर, लाल पुनर्नवा, कुडालिया, सुपारीमूल, शूरणकन्द, गिलोय, मण्डूकपर्णी, हस्तिकर्ण-पलाश, हड़जोड़ी केशराज, माणकन्द शकरकन्दी, गोजिया शालिञ्च शाक, यह त्रिफलादि गण कहाता है। यह लौह मारक है सामान्य

पुटपाक के लिये विद्वानों ने इसे ग्रहण किया है ॥ ३१६-३२२॥

अथ एरण्डादिगणः ।

विशेषपुटपाकाय गणानन्यान् शृणूदितान् ।
एरण्डः शारिवा द्राक्षा शिरीषश्च प्रसारिणी ॥ ३२३॥
माष मुद्गाख्यपर्णिन्यौ विदारीकन्द-केतकी ।
एरण्डादिगणो ह्येष सर्ववातविकारनुत् ॥ ३२४ ॥

विशेष २ पुटपाक करने के लिये अन्य गण कहते हैं। ए[रण्ड] शारिवा, द्राक्षा, शिरीष की छाल, गन्ध प्रसारणी, माषपर्णी, मुद्ग[पर्णी] विदारीकन्द, केतकी। यह एरण्डादि गण वात के सब विकारों [का] नाश करता है। इससे पुट देंगे तो लोहा भी वात विकारनाशक [हो] जायेगा ॥ ३२३ ॥ ३२४ ॥

अथ किराताादिगणः ।

किराततममृतानिम्ब-कुस्तुम्बुरुशतावरी ।
पटोलं चन्दनं पद्मं शाल्मल्युडुम्बरी जटा ।
पैत्तिकामयहन्ताऽयं किरातिगणो मतः ॥ ३२५ ॥

चिरायता, गिलोय, नीम, धनियां, शतावर, पटोलपत्र, च[न्दन] पद्म, सींबल, गूलर, जटामांसी । यह किराताादिगण पित्तरोग नाशक है। इससे पुटदेने से लोहा पित्तघ्न हो जायेगा ॥ ३२५॥

अथ शृङ्गवेरादिगणः ।

शृङ्गवेरस्य मूलानि निर्गुण्डी कौटजं फलम् ।
करञ्जद्वितयं मूर्वा शोभाञ्जन-शिरीषकौ ॥ ३२६ ॥
वरुणश्चार्कपर्णश्च पटोलं कण्टकारिका ।
शृङ्गवेरादिको ह्येष गणः श्लेष्मगदापहः ॥ ३२७ ॥

अदरक, संभालु इन्द्रजौं, दोनों करञ्ज मूर्वा, सुहांजना, शि[रीष] वरुण, आक के पत्ते, पटोल पत्र, कण्टकारी । यह शृङ्गवे[रादि] गण कफ रोग नाशक है। इससे पुट दें तो लोहा श्लेष्मघ्न [हो] जायेगा ॥ ३२६ ॥ ३२७ ॥

अथ गोक्षुरादिगणः।

गोक्षुर-क्षुरकौ व्याघ्री सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा।
गोक्षुरादिरिति प्रोक्तो वातश्लेष्महरो गणः॥ ३२८॥

गोखरु, कोकिलाक्ष वृक्ष, छोटी कटली, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, गिलोय, मुद्गपर्णी, माषपर्णी। यह गोक्षुरादिगण वातश्लेष्महर है। इनसे लोहे को पुट दें तो वातश्लेष्मज रोगों को नाश करेगा॥ ३२८॥

अथ पटोलादिगणः।

पटोलपत्रकोशीर-कासमर्दापराजिताः।
लोध्रेन्दीवर—कल्हार-वाराही कान्तया सह।
पटोलादिरिति ज्ञेयः पित्तश्लेष्मगदापहः॥ ३२९॥

पटोलपत्र खस, कसौंदी, विष्णुकान्ता, लोध्र, नीलोत्पल, श्वेत कमल, वाराहीकंद, प्रियङ्गु। यह पटोलादिगण पित्तश्लेष्महर है। इनसे लोहे को पुट दें तो पित्तश्लेष्मज रोग दूर करेगा॥ ३२९॥

अथ किंशुकादिगणः।

किंशुकः काश्मरी विश्वमग्निमन्थस्त्रिकण्टकः।
श्योणाकः शालपर्णी च सिंहपुच्छीद्वयं स्थिरा॥ ३३०॥
पाटला कण्टकारी च बृहती विल्व एव च।
किंशुकादिगणो ह्येष दोषत्रयहरो मतः॥ ३३१॥

पलाश, गंभारी, सोंठ, अरणी, गोखरु, श्योणाक, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, पाटला, कटेली, बड़ी कटेली, बिल। यह किंशुकादिगण त्रिदोषनाशक है॥ इनसे लोहे को पुट दें तो त्रिदोषज व्याधियों को नाश करता है॥ ३३०॥ ३३१॥

अथ शतावर्यादिगणः।

शतावरी बलाधात्री—गुडूची वृद्धदारक—
वानरी भृङ्गराजाख्य—विदारी गोक्षुरक्षुरैः।
वाजिगन्धाक्रमायुक्तै र्वाजीकर्मसु शस्यते॥ ३३२॥

विदारीकन्द पिण्डाह्व-भृङ्गराजशतावरी।
क्षीरकञ्चुक भल्लातामृतकाचित्रकैस्तथा ॥
करिकर्णपलाशैश्च मुषलीमधुकैरपि।
मुण्डरी केशराजैश्च पुटो देयो रसायने ॥ ३३३ ॥
सामान्ये च विशेषे च पुटे यद् यत् प्रकीर्त्तितम्।
मिलितैरेकशो वा तैर्यथेष्टं पुटयेत् ततः ॥
पुटपाके फलादीनामयसा ग्रहणं समम् ॥ ३३४ ॥

शतावर, बला, आंवला, गिलोय, विधारा, कौंच, भां विदारीकंद, गोखरु, तालमखाना, असगन्ध, पीपली। ये शता दि गण वाजीकरण में अच्छा है। इससे लोह को पुट दें तो वह भस्म वाजीकरण करेगा ॥ ३३२ ॥ विदारीकंद, पिण्डालु, भां शतावर, खिरनी, भिलांवा, गिलोय, चीतामूल, हस्तिकर्ण मूसली, मुलहठी, मुण्डी, केशराज। इनसे लोहे को पुट दें तो रस करता है ॥ ३३३ ॥ सामान्य और विशेष गणों में जो २ द्रव्य लिख उन सबको मिलाकर या अकेले २ से यथेष्ट पुट दें। पुटपाक में लादियों को लोह के समभाग लेना चाहिये ॥ ३३४ ॥

अथ पुटपाकप्रकरणमाह।

हस्तमात्रमिते गर्त्ते करीषेणार्द्धपूरिते।
अथवा तुषकाष्ठाभ्यां पूरितेऽर्द्धे निधापयेत्।
लौहमग्निं ततो दत्त्वा तथैवोर्द्ध्वं प्रपूरयेत् ॥ ३३५ ॥
दिवा वा यदि वा रात्रौ विधिनानेन पाचयेत्।
चतुर्भिः प्रहरैरेव पुटपाकेन मारयेत् ॥ ३३६ ॥
पुटपाके क्षणादूर्ध्वं स्थितो भवति भस्मसात्।
अधस्तादपकृष्टस्तु मन्दो भवति वीर्य्यतः ॥ ३३७ ॥
कुण्डस्थो भस्मनाच्छन्न आकृष्टव्यः सुशीतलः।
समाकृष्टस्य तप्तस्य गुणहानिः प्रजायते ॥ ३३८ ॥

एकहाथ लंबा, एकहाथ चौड़ा तथा एक हाथ नीचा गढ़ा खोद कर उसके आधे भाग में जंगली उपले भर दे । अथवा तुष और लकड़ियां भर दे । उस पर लोहे का शराव सम्पुट रख दे । इसमें आग लगा कर ऊपर से उपले भर दे ॥ ३३५ ॥ दिन में या रात में इसी विधि से पकावे । इस सम्पुट को इसमें चार पहरों तक पड़ा रहने दे ॥ ३३६ ॥ पुटपाक करने में यदि सम्पुट को गढ़े के आधे से अर्थात् मध्य भाग से ऊपर रखें तो उपले शीघ्र भस्म हो जायेंगे । यदि मध्य भाग से नीचे रखें तो लोहा मन्दवीर्य हो जाता है । इस कारण ठीक कुण्डके मध्य में, उपलों के मध्य भाग में सम्पुट को रखना चाहिये ॥३३७॥ जब कुण्ड में पड़ा हुआ सम्पुट राख से ढकजावे अर्थात् सब जल जाने के पश्चात् राख भी ठण्डी हो जाये और सम्पुट शीतल हो होजाये तब सम्पुट को निकालना चाहिये । क्योंकि गर्म २ निकाल कर सम्पुटको खोल डालें तो लोहेके गुणोंमें कमी पड़ जाती है॥३३८॥

मतान्तरम् ।

शुद्धस्य सूतराजस्य भागो भागद्वयं बलेः ।
द्वयोः समं लौहचूर्णं मर्दयेत् कन्यकाद्रवैः ॥ ३३९ ॥
यामद्वयं ततो गोलं स्थापयेत् ताम्रभाजने ।
आच्छाद्यैरण्डजैः पत्रैरुष्णो यामद्वयाद्भवेत् ॥ ३४० ॥
त्रिरात्रं धान्यराशिस्थं तत् ततो मर्दयेद्दृढम् ।
रजस्तद्वस्त्रगलितं नीरे तरति हंसवत् ॥
तीक्ष्णं मुण्डं कान्तलौहं निरुत्थं जायते मृतम् ॥ ३४१ ॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गन्धक दो भाग, शुद्ध लोह चूर्ण दोनों के बराबर तीन भाग लेकर । सबको मिला घी कुमारी के रसमें दो पहर तक घोटकर तांबे के पात्र में रखें । फिर एरण्ड पत्रों से ढक कर रख दें । यह दो पहर के पीछे स्वयं गरम हो जायगा ३३९-३४०। फिर इसे तीन दिन रात धान्योंके ढेरमें रखे और फिर निकाल कर दृढ़ता से मर्दन करे । उसके पीछे कपड़े में से छान लेवे । वह कपड़े में से छनी हुई लोहे की भस्म जल पर हंस की तरह तैरेगी । इस प्रकार

से तीक्ष्ण लौह, मुण्ड लौह, तथा कान्त लौह सबकी निरुत्थ हो जाती है ॥ ३४१ ॥

मतान्तरम् ।

क्षिपेद्वा द्वादशांशेन दरदं तीक्ष्णचूर्णतः ।
कन्यानीरेण सम्मर्द्य यामयुग्मञ्च सम्पुटेत् ।
एवं सप्तपुटे मृत्युं लौहचूर्णमवाप्नुयात् ॥ ३४२ ॥

[इति पुटपाक विधिः

तीक्ष्णलौहचूर्ण बारह भाग, शुद्ध शिंगरफ एक भाग को घीकुमारी के रस से दोपहर तक घोटकर सम्पुट में रख में फूंक देवे। इस प्रकार से सात बार शिंगरफ और घीकुमारी पुट देने से सात पुट में लौह भस्म हो जाता है ॥ ३४२ ॥

अथ लौहस्य निरुत्थीकरणम् ।

सर्वमेतत् मृतं लौहं पक्तव्यं मित्रपञ्चकैः ।
यद्येवं स्यात् निरुत्थञ्च सेव्यं रक्तिचतुष्टयम् ॥ ३४३ ॥

सब लोहे की भस्मों को मित्रपञ्चक से मिलाकर पकाना च यदि इस प्रकार से लोहा न जिये तो निरुत्थभस्म समझे लौह भस्म को चार रत्ति तक खा सकते हैं ॥ ३४३ ॥

अथ मित्रपञ्चकम् ।

मधु सर्पिस्तथा गुञ्जा टङ्कणं गुग्गुलुस्तथा ।
मित्रपञ्चकमेतत्तु गणितं धातुमेलने ॥ ३४४ ॥

शहद, घी, रत्तियां, सुहागा, गूगल, यह पांचों मित्रपञ्चक हैं। इन्हें धातुओं को मिलाने के काम में लाते हैं ॥ ३४४ ॥

मतान्तरम्

गोघृतं गन्धकं लौहं तप्तखल्ले विमर्दयेत् ।
दिनैकं कन्यकाद्रावै रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
इत्येवं सर्वलौहानां कर्त्तव्यं स्यात् निरुत्थितम् ॥ ३४५

गौ का घी, शुद्ध गन्धक, लौह भस्म, सबको तप्त खरल में डा मर्दन करे फिर एक दिन घीकुमार के रस से घोट कर सम्पुट

जपुट में फूंक दे। इस प्रकार से सब लोहों का निरुत्थीकरण हो
ाता है॥ ३४५॥

रसायने विशेषोयथा।

मर्दयेच्च लोहभस्म गुञ्जामध्वाज्यटङ्कणैः।
धमेद्वन्हौ पुनर्लौहं तदा योज्यं रसायने॥ ३४६॥

लोह भस्म को रत्तियां, मधु, घी और सुहागे से मिला कर आग तपावे। यदि यह लौह भस्म तपाने से फिर लौह न बन जावे तो से रसायन कर्म में प्रयुक्त करे॥ ३४६॥

गुणाः।

कृष्णायः शोथशूलार्शः-क्रिमिपाण्डुत्वशोषनुत्।
वयस्यं गुरुचक्षुष्यं सर्वमेदोऽनिलापहम्॥ ३४७॥
आयुः प्रदाता बलवीर्यकर्त्ता रोगापहर्त्ता मदनस्यकर्त्ता।
अयः समानं नहिकिञ्चिदस्ति रसायनं श्रेष्ठतमं नराणाम् ३४८

लोह भस्म शोथ, शूल, बवासीर, क्रिमिरोग, पाण्डुरोग और शोषरोग ा नाश करता है। तथा आयुबर्धक है, भारी है आंखों के लिये हितका- ी, सब प्रकार के मेद और वायु को नष्ट करता है॥ ३४७॥ आयु बढ़ाने ाला, बल तथा वीर्य को बढ़ाने वाला, रोग नाश करने वाला और ामोत्तेजक, है। लोह के भस्म के समान मनुष्यों के लिये अन्य कोई ासायन उत्तम नहीं है॥

लोहसेवने वर्जनीयानि।

कूष्माण्डं तिलतैलञ्च रसोनं राजिकां तथा।
मद्यमम्लरसञ्चैव त्यजेत् लौहस्य सेवकः॥ ३४९॥

पेठा, तिल का तेल, लशुन, राई, मद्य, खटाई। इन सब को ोह भस्म का सेवन करने वाला छोड़ देवे॥ ३४८॥

अथ वज्रपण्डयादिगुणाः।

सामान्याद्द्विगुणं क्रौञ्चं कालिङ्गोऽष्टगुणस्ततः।
कलेः शतगुणं भद्रं भद्राद्वज्रं सहस्रधा॥ ३५०॥

वज्रात् शतगुणं पाण्डि -निरङ्गं दशभिर्गुणैः ।
ततः कोटिसहस्रैर्वा कान्तलौहं महागुणम् ॥ ३५१ ॥
[इति लौहमारणम्]

सामान्य लोहे से दुगुना क्रौञ्च लोह, क्रौञ्च से आठगुना ङ्ग लौह, कालिङ्ग से सौ गुणा भद्रलोह, भद्रलोह से हजार गुण लौह होता है ॥ ३५० ॥ वज्रलौह से सौ गुणा पाण्डि लौह, से दस गुणा निरङ्ग लौह । तथा निरङ्ग लोह से भी हजारों गुणा कान्तलौह उत्तम है ॥ ३५१ ॥

अथ मण्डूरशोधनादि ।

ये गुणा मारिते मुण्डे ते गुणा मुण्डकिट्टके ।
तस्मात्सर्वत्र मण्डूरं रोगशान्त्यै प्रयोजयेत् ॥ ३५२ ॥
शतोर्द्ध्वमुत्तमं किट्टं मध्यञ्चाशीतिवार्षिकम् ।
अधमं षष्टिवर्षीयं ततो हीनं विषोपमम् ॥ ३५३ ॥
दग्ध्वाक्षकाष्ठैर्मलमायसन्तु गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण कुम्भाह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति॥
किट्टाद्दशगुणं मुण्डं मुण्डात्तीक्ष्णं शताधिकम् ।
तीक्ष्णात् लक्षगुणं कान्तं भक्षणात् कुरुते गुणम् ॥ ३५५
(इति किट्टशोधनमारणम्)

जो गुण मरे हुए मुण्ड लौह में हैं वेही गुण मुण्ड के किट्ट मल में है । इस लिये सर्वत्र रोग शान्ति के लिये मण्डूर का करे ॥ ३५२ ॥ सौ वर्ष से पुराना मण्डूर उत्तम होता है, अस्सी का मण्डूर मध्यम, तथा साठ वर्ष का मण्डूर नीच होता है । इससे वर्षका मण्डूर विष के समान होता है॥३५३॥मण्डूर को बहेड़े की की आग पर गर्म करके गौमूत्र में आठ वार बुझावे । उसे चूर्ण मधु के साथ मिला कर चाटे तो कुम्भकामला पाण्डु रोग होता है ॥३५४॥ मण्डूर से खानेमें दश गुणा अधिक मुण्डलौह मुण्ड से सौ गुणा तीक्ष्ण, तथा तीक्ष्णलौह अर्थात् फ़ौलाद से

गुणा अधिक गुणवान कान्तलौह भस्म होती है ॥ ३५५ ॥

अथ सर्वधातुमारणविधिः।

नागैः सुवर्णं रजतञ्च ताप्यैर्गन्धेन ताम्रं शिलया च नागम्।
तालेन वङ्गं त्रिविधञ्च लौहं नारीपयो हन्ति च हिङ्गुलेन॥३५६॥

[इति स्वर्णादिशोधनमारणविधिः] ॥

स्वर्ण की भस्म सीसे से करे। चांदी की भस्म स्वर्ण माक्षिक से करे। ताम्र भस्म गन्धक से करे। नागभस्म मनासिल से करे। बंग भस्म हड़तालसे करे। त्रिविध लौह को हिङ्गुल और दूध से मारे ("नारी के स्थान में "कुमारी" समझ कर घीकुमार का रस लें तोभी उत्तमहै)॥ इस प्रकार से बने हुये धातुओं के भस्म उत्कृष्ट माने जाते हैं तथा विकार कर ही नहीं सकते ॥ ३५६ ॥

अथ मणिमुक्तादि शोधन मारणम्।

स्वेदये दोलिकायन्त्रे जयन्त्याः स्वरसेन च।
मणिमुक्ताप्रवालानि यामैकेन च शोधयेत् ॥ ३५७ ॥
मुक्ताफलानि शुद्धानि खल्ले पिष्ट्वा पुटेल्लघु।
एवं भस्मत्वमाप्नोति वज्रकं काञ्जियोगतः ॥ ३५८ ॥

मणि, मोती, मूंगा आदि रत्नों को जयन्ती के पत्तों के रस में दोला यन्त्र द्वारा एक पहर तक स्वेदन करे। इससे सब रत्न शुद्धहो जाते हैं ॥ ३५७ ॥ शुद्ध मोती खरल में पीसकर लघुपुट में फूंके तो उससे मोतीभस्म हो जाती है ॥ तथा हीरा, मणि आदि काञ्जी से पीस कर भस्म करे ॥ ३५८ ॥

मतान्तरम्।

कुमार्य्या तण्डुलीयेन तुल्येन च निषेचयेत्।
प्रत्येकं सप्तवारांश्चतप्ततप्तानि कृत्स्नशः ॥ ३५९ ॥
मौक्तिकानि प्रवालानि तथा रत्नान्यशेषतः।
क्षणाद्विविधवर्णानि म्रियन्ते नात्र संशयः ॥ ३६० ॥

मणि, रत्नादियों को आग में तपाकर घीकुमार और चौलाई

दोनों के सम भाग रस में सातवार बुझावें । इससे मोती, मूंगा आदि रत्न क्षणमें शुद्ध होते तथा मर जाते हैं ॥ ३५९ ॥ ३६०॥

प्रवालमारणम् ।

स्त्रीदुग्धेन प्रवालश्च भावयित्वा तु हण्डिके ।
मध्येऽपि तक्रसहितं स्थापयेत् तां निरोधयेत् ।
चुल्ल्यामग्निप्रतापेन म्रियते प्रहरद्वये ॥ ३६१ ॥
कुलत्थस्य पलशतं वारिद्रोणेन पाचयेत् ।
तस्मिन् पादावशेषे च क्वाथेऽष्टौमणयः शिलाः ॥ ३
आतपे त्रिदिनं शोध्याः क्वाथसिक्ताः पुनः पुनः ।
शुध्यन्ते सर्वरत्नानि मणयश्च न संशयः ॥ ३६३ ॥

[इतिमुक्तादिशोधनमारणम्]।

प्रवाल अर्थात् मूंगे को स्त्रीके दूध में दोला यन्त्र से ए में स्वेदन करे । फिर उस मूंगे को और छाछ को हांडी में र सम्पुट कर आग पर रखकर पकावे । तो दोपहर में मूंगा भ जाता है ॥ ३६१ ॥ कुलथी सौपल लेकर एक द्रोण जल में प चौथाई बचने पर क्वाथ को उतार ले । इस क्वाथ में आठों डाल कर धूप में तीन दिन तक रखे । और क्वाथ को बार दिन सींचता जाये । इस प्रकार करने से सब रत्न शुद्ध हो इसमें संशय नहीं ॥ ३६२ ॥ ३६३ ॥

अथ विषशुद्धिः ।

कृत्वा चणकसंस्थानं गोमूत्रैर्भावयेत् त्र्यहम् ।
समटङ्कणसम्पिष्टं मृतमित्युच्यते विषम् ॥ ३६४ ॥
अथवा त्रैफले क्वाथे विषं शुध्यति पाचितम् ।
दोलायां त्रिफलाक्वाथे छागीक्षीरे च पाचितम् ॥ ३६
गोमूत्रपूर्णपात्रे च दोलायन्त्रे विषं पचेत् ।
दशतोलकमानेन चादौ वैद्यो दिवानिशम् ॥ ३६६

स्थावर कन्दविष जो उपयोग में आते हैं उन (दार्विक, सैकत, वत्सनाभ, शक्तुक, मुस्तक, सार्षप, कौर्म, शृङ्गी) आठों विषों की शुद्ध करने की विधि लिखते हैं ॥ इन विषों को चने के समान खण्ड २ करके गौमूत्र में भावित कर तीन दिन धूप में रखे। फिर उस विष के समान भाग सुहागा डालकर पीसले तो विष मर जाता है॥३६५॥ अथवा त्रिफला के क्वाथ में दोलायन्त्र से विष को पकावे फिर बकरी के दूध में पकावे तो विष शुद्ध हो जाता है ॥ ३६५ ॥ गौमूत्र एक हांडी में भर कर उसमें दस तोला विष दोलायन्त्र से दिन रात पकावे तो विष शुद्ध हो जाता है ॥ ३६६ ॥

मतान्तरम् ।

विषभागांश्चणकवत् स्थूलान् कृत्वा तु भाजने ।
तत्र गोमूत्रकं दत्त्वा प्रत्यहं नित्यनूतनम् ॥ ३६७ ॥
शोषयेत्त्रिदिनादूर्ध्वं धृत्वा तीव्रातपे ततः ।
प्रयोगेषु प्रयुञ्जीत भागमानेन तद्विधम् ॥ ३६८ ॥

[इति विषशुद्धिः] ।

चने के समान विषके खण्ड करके गौमूत्र में डाल देवे। प्रति दिन गौमूत्र पुराना फेंक कर नया डालता जाये। तीन दिन के पश्चात् तीव्र धूप में रखकर विषको सुखा लेवे। इस प्रकार से शुद्ध हुये २ विष को औषधों में उचित मात्रा से प्रयुक्त करे ॥ ३६७ ॥ ३६८ ॥

अथोपविषमाह ॥

अर्कसेहुण्ड धुस्तूर–लाङ्गलीकरवीरकाः ।
गुञ्जा ऽहिफेनावित्यताः सप्तोपविषजातयः ॥ ३६९ ॥

आक, थोहर, धतूरा, लांगली अर्थात् कलिहारी, कनेर, रत्ति तथा अफीम ये सात उपविष की जातियां हैं ॥ अर्थात् सब प्रकार के आक, सब जाति के थोहर, सब जाति के धतूरे सब जाति की कलिहारी, सब जाति के कनेर, सब जाति की रत्ति, सब जाति की अफ़ीमें इन्हें उपविष कहते हैं। ये भी स्थावर विष के अन्तर्गत ही हैं ॥ ३६९ ॥

तच्छुद्धिः ।

धुस्तूरस्य च यद्बीजमन्यच्चोपविषं च यत् ।
तच्छोध्यं दोलिकायन्त्रे क्षीरपूर्णेऽथ पात्रके ॥ ३७० ॥
[इत्युपविष शुद्धिः] ।

धतूरे के बीज और अन्य उपविष शुद्ध करने हों तो दूध से हुए पात्र में दोला यंत्र द्वारा पाक करके शुद्ध करे ॥ ३७० ॥

अथ जैपालशुद्धिः ।

निस्तुषं जयपालश्च द्विधा कृत्वा विचक्षणः ।
एतद्बीजस्य मध्यन्तु पत्रवत् परिवर्जयेत् ॥ ॥ ३७१ ॥
अष्टमांशेन चूर्णेन टङ्कणस्य च मेलयेत् ।
केशयन्त्रे च तद्भाव्यं पाच्यं दुग्धेन सम्प्लुतम् ।
त्रिरात्रं शुद्धिमायाति जैपालममृतोपमम् ॥ ३७२ ॥

जयपाल अर्थात् जमालगोटे के बीजों का छिलका उतार एक २ बीज के दो २ भाग करके उसके बीच की पतली पत्ती जीभी निकाल फेंके ॥ ३७१ ॥ फिर बीजों का आठवां भाग सुहागे चूर्ण मिला कर केश यन्त्र में रख दूध से भरे पात्र में पकावें [यंत्र उसे कहते हैं कि केश अर्थात् बालों का एक छिक्का सा बना उसमें बीज रख दूधादि में दोला यंत्र के समान पकाना] इस प्र तीन रात करने से जमालगोटा शुद्ध हो जाता है तथा अमृत के स गुणदायक हो जाता है ॥ ३७२ ॥

अथ स्नुहीक्षीरशुद्धिः ।

चिञ्चापत्ररसे कर्षे वस्त्रपूते पलद्वयम् ।
स्नुहीक्षीरं रौद्रयन्त्रे भावयेद् यत्नतः सुधीः ।
द्रवे शुष्के समुत्तार्य सर्वयोगेषु योजयेत् ॥ ३७३ ॥

स्नुही अर्थात् थोहर या सीज का दूध दो पल ले। उ इमली के पत्तों के रस को वस्त्र से छानकर एक कर्ष भर मिला फिर धूप में सुखावे । तो थोहर के दूध की शुद्धि होती है । इसे योगों में डाले ॥ ३७३ ॥

अथ जलौकाशोधनम्।

चिरन्तनं जलौकान्तु ताम्रपात्रेषु रक्षयेत्।
चतुर्माषं निशाचूर्णं जलाष्टकपले क्षिपेत् ॥ ३७४ ॥
तस्मिन् क्षिपेत् जलौकां तां स्वयं लालां परित्यजेत्।
त्यक्तलाला जलौका च सा योज्या रक्तमोक्षणे॥ ३७५ ॥
रोमपृष्ठा च कपिला रक्तरेखा च दुर्बला।
वर्जनीया विशेषेण भिषजा कीर्त्तिमिच्छता ॥ ३७६ ॥

पुरानी जलौका अर्थात् जौंक को ले। फिर एक तांबे के पात्र में चार माषे हल्दी का चूर्ण और आठ पल जल डाले। उसमें पुरानी जोंक डाल दें। जब जोंक स्वयं अपनी लार उस जल में छोड़ देवे। तब उस जोंक को शुद्ध समझकर उसे खून निकलवाने के काम में प्रयुक्त करे॥ ३७४॥ ३७५॥ जिस जोंक की पीठ पर रोम हों, कपिल रंग की हो, लाल रेखा वाली हो, दुर्बल हो उसे वैद्य प्रयोग न करे॥ ३७६॥

अथ वृद्धदारकवीजशोधनम्।

वीजमादौ समादाय रौद्रयन्त्रे विशोषयेत्।
ईषत्सैन्धवयुक्तेन द्रवेण यत्नतः सुधीः।
अपामार्गस्य वा तोयैर्वार्द्धक्यवीजशोधनम् ॥ ३७७ ॥

विधारे के बीजों को लेकर धूप में सुखावें। फिर थोड़ा सेंधा-नमक और जल अथवा अपामार्ग का रस लेकर उसमें विधारे के बीज डालें तो शुद्ध होते हैं॥ ३७७॥

मतान्तरम्।

वृद्धदारकवीजन्तु पक्कं दोलाकृतं पचेत्।
दुग्धपूर्णेषु पात्रेषुततः शुध्यति निश्चितम् ॥ ३७८ ॥

[इति वृद्धदारकवीजशोधनम्]।

दूधभरे पात्र में विधारे के बीजों को दोलायंत्र से पकावें तो निश्चित शुद्ध होते हैं॥ ३७८॥

अथ नानाबीजशोधनम्।

अपामार्गकषायेण निम्बुबीजं विशोधयेत्।
मूलक्वाथैः कुमार्य्याश्च जैपालबीजशोधनम् ॥ ३७९ ॥
इन्द्रवारुणिका क्वाथैः राजवृक्षस्य बीजकम्।
समूलोत्तरवारुण्या धुस्तूरबीजशोधनम् ॥ ३८० ॥
शिग्रुकार्पासबीजानि अपामार्गस्य बीजकम्।
घर्मेण शोधनं तेषां न दद्यात् सैन्धवं ततः ॥ ३८१ ॥
तिक्ता कोषातकी दन्ती पटोली चेन्द्रवारुणी।
कटुतुम्बी देवदाली काकतुण्डी च शुध्यति।
धात्रीफलरसेनैव महाकालस्य शोधनम् ॥ ३८२ ॥
करञ्जयुग्मयोर्बीजं भृङ्गराजेन शोधयेत्।
गुञ्जादिसर्वबीजानां नरमूत्रैः पटुं विना।
नरिकेलाम्बुना शोध्यं फलं भल्लातकोद्भवम् ॥३८३॥
गुडूची त्रिफलाक्काथे क्षीरे चैव विशेषतः।
पक्त्वा च खण्डशः शुद्धं गृह्णीयात् मृदु गुग्गुलुम् ॥ ३८

इति विषोपविषशोधनम्।

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अपामार्ग के क्काथ से नींबू के बीजों को भावित कर शुद्ध
घीकुमार की जड़ के क्काथ से जमालगोटे के बीजों का शोधन
३७९ ॥ इन्द्रायण के क्काथ से अम्लतास के बीजों को भावित
शुद्ध करे। इन्द्रायण की जड़ के क्काथ से धतूरे के बीजों को
करे ॥ ३८० ॥ सुहांजना, कपास और अपामार्ग के बीज धू
सुखाने से ही शुद्ध होजाते हैं, इनमें सेंधानमक न डाले ॥ ३
कड़वी तोरी के बीज, दन्ती के बीज, पटोल के बीज, इन्द्रा
बीज, कड़वी तुम्बी के बीज, देवदाली के बीज, कौआ ठोडी के
लाल इन्द्रायण के बीज इन सबको आंवले के रस में भावित

शुद्ध करे ॥ ३८२ ॥ दोनों करञ्जों के बीजों को भांगरे के रससे शुद्ध करे। रत्ति आदि सब बीजों को मनुष्य के मूत्र में बिना नमक मिलाये ही भावित कर शुद्ध करे। भिलांवे के फल को नारियल के जल से शुद्ध करे ॥ ३८३ ॥ गुग्गुलु को खण्ड २ करके गिलोय और त्रिफला के क्वाथ में तथा दूध में पका २ कर शुद्ध करे ॥ ३८४ ॥ [बीजों को शुद्ध करने में जहां २ नमक का निषेध किया है उसके अतिरिक्त अन्य बीजों को भिन्न २ द्रव्यों के रसों में शुद्ध करने के समय कुछ नमक भी डाल लेना चाहिये]।

द्वितीयोऽध्यायः।

अथ विरेकाधिकारः।

क्षीराब्धेरुत्थितं देवं पीतवस्त्रं चतुर्भुजम्।
वन्दे धन्वन्तरिं भक्त्या नानागेदनिसूदनम् ॥ १ ॥
प्रायशो वपुषः शुद्धिं कृत्वा देयं तदौषधम्।
अतः पूर्वं चिकित्सायां रेचकौषधमुच्यते ॥ २ ॥

क्षीर समुद्र से निकले हुए, चतुर्भुजरूप, पीले वस्त्र धारी, महाराज धन्वन्तरि जी को मैं भक्तिपूर्वक प्रणाम करता हूं जो नाना रोगों को नाश करने वाले हैं ॥ १ ॥ प्रायः शरीर की शुद्धि करके फिर रोग नाशक औषध दी जाती है इसलिये चिकित्सा प्रकरण में सब से प्रथम विरेचन अर्थात् दस्त लाने वाली औषध लिखते हैं॥२॥

अथ इच्छाभेदी रसः।

तुल्यं टङ्कणपारदं समरिचं तुल्यांशकं गन्धकम्।
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत्।
गुञ्जैकप्रमितो रसो हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्।
यावन्नोष्णजलं पिबेदपि वरं पथ्यश्च दध्योदनम् ॥ ३ ॥

शुद्ध सुहागा, शुद्ध पारा, मरिच का चूर्ण, शुद्ध आंवला(सार) गन्धक प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग ले। सौंठ का (कपड़े में से छ)ला चूर्ण दो भाग लें। तथा शुद्ध जमालगोटे के बीजों का चूर्ण नौ(तीन) लें। इनमें से सब से प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावे(फिर) सब द्रव्य एकत्र घोट कर जल से एक २ रत्ति की गोली बनाले शीशी में रखे। इसे इच्छाभेदी रस कहते हैं। इस रस (अर्थात् इन) रत्ति भर की गोली शीतल जल के अनुपान से सेवन करे तो घण्टों के पीछे दस्त आयेंगे। ये दस्त तब तक आते रहेंगे ज(ब तक) शीतल जल दस्त आने के पीछे पीता रहेगा। जब गरम जल (पीयेगा) तब दस्त बन्द होजायेंगे। (फिर एक पहर तक शीतल जल न (पीना) चाहिये, पीना ही हो तो गरम जल पीवे। शीतल पानी पीले(गा तो) फिर दस्त होने आरंभ हो जायेंगे)। दस्त बंद हो चुकने के बाद में दही और चावल खाना चाहिये ॥ ३ ॥*

मतान्तरम् ।

जैपालाष्टौ द्विको गन्धस्त्रिशुण्ठी मरिचं द्विकम् ।
एकः सूतः टङ्कणैको गुञ्जामात्रा वटी कृता ॥ ४ ॥
शूलव्याधि प्रभृतयः कुष्टकादश पित्तजाः ।
भगन्दरादिहृद्रोगाः सर्वे नश्यन्ति भक्षणात् ॥ ५ ॥

शुद्ध जमालगोटा ८ भाग, शुद्ध गंधक दो भाग, सौंठ चूर्ण (तीन) भाग, मरिचचूर्ण दो भाग, शुद्ध पारा एक भाग तथा शुद्ध सु(हागा)...

*(नोट)—दस्त लेने की विधि यह है कि जब दवाई सेव(न करे और) दस्त आने आरम्भ हों तो एक दस्त आने के बाद दो तीन घूंट (ठंडा) पानी पीलें। इसी प्रकार दस्त आने के बाद ठण्डा जल पीता र(हे)। जब दस्त बंद करने हों तो थोड़ा सा गर्म जल पीलें। बंद होज(ाने के) बाद पथ्य सेवन करे। दस्त लेने से एक दिन पूर्व घी मिली खि(चड़ी) खाकर कोष्ठ स्निग्ध कर लेना चाहिये। बिना स्निग्ध कोष्ठ (के) भी अत्यावश्यक हो तो दवा दे देनी चाहिये। इस इच्छाभेदी (रस) की गोली को चूर्ण कर खांड में मिला कर देना अच्छा है॥

भाग। प्रथम पारा गन्धक की कज्जली करे फिर सब द्रव्यों को
ला जलसे पीस कर एक रत्ति प्रमाण गोली बनावे। इसको भी
प्रकार शीतल जल से खाने से विरेचन होता है। जब दस्त बंद
न हों तो गरम जल पीवे। इससे शूल आदि पेट के रोग, कुष्ठरोग,
रह पित्तके रोग, भगन्दरादि तथा हृदय के रोग सब नाश होते हैं।
र्थात् इन रोगों में इससे विरेचन देना श्रेष्ठ होता है॥ ४॥ ५॥

अथ गदमुरारिः इच्छाभेदी।

रसबलिगगनार्कं शुद्धतालं विषञ्च,
त्रिकटुत्रिफलमेतत् टङ्कणं भृङ्गमेभिः।
सममिह जयपालोद्भूतचूर्णं विमर्द्य,
द्विनिशमनिशमेतद् भृङ्गराजोत्थवारा॥ ६॥
भवति गदमुरारिः स्वेच्छया भेदकोऽयं,
हरति सकल रोगान् सन्निपातानशेषान्।
इह हि भवति पथ्यं मत्स्यमांसादि सर्वं,
घृतविलुलितमस्मिन् भोजनं भूरि देयम्॥ ७॥

द्ध पारा, शुद्ध गन्धक अभ्रकभस्म ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध वत्स-
भविष, सोंठ का चूर्ण, मिरच का चूर्ण, पीपली का चूर्ण, हरड़ का
, बहेड़े का चूर्ण, आंवले का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, दारचीनी का
, इन सब द्रव्यों को एक २ तोला लें। शुद्ध जमालगोटे का चूर्ण
दह तोला लें। पहले पारा गन्धक की कज्जली करें। फिर सब
यों को मिला कर भांगरे के स्वरस में दो दिन तक लगातार खरल
। इसकी फिर एक २ रत्ति भरकी गोली बनाकर सुखाकर शीशी
रख लें। पूर्वोक्त विधिसे यह गदमुरारि रस एक रत्ति भरले शीतल
से देने से दस्त लाता है। इससे सभी रोग, सब सान्निपात दूर
हैं। इससे विरेचन होनेके पीछे सब प्रकार का पथ्य दे सकते हैं।
स्य, मांसादि पथ्य भी दे सकते हैं। घी से मिला हुआ भोजन
में अधिक देना चाहिये॥ ६॥ ७॥

अथ रुक्मिशो रसः ।

अभयाचूर्णमादाय नूतनै र्जयपालकैः ।
पञ्चमांशेन मिलितैः स्नुहीदुग्धेन मर्दिताः ॥ ८ ॥
गुड़िकास्तस्य कर्त्तव्या वर्त्तुलाश्चणकप्रभाः ॥ ९ ॥
रुक्मिशो न च दाहः स्यान्न च मूर्च्छा भ्रमः क्लमः ।
वेगतः सारयेदेषा विशेषादामनाशिनी ॥ १० ॥
निरूहेण तथा नैव तथा बिन्दुघृतेन च ।
त्रिवृता न तथा रेच्या यथा स्याद् गुड़िकोत्तमा ॥ ११ ॥
अतिशुद्धं भवेद् देहमतिप्रबलमुत्तमम् ।
अतिरूपमतिप्रौढमत्यायुष्करमुत्तमम् ॥ १२ ॥
विष्टम्भे गुड़िका देया चोदरे दारुणामये ।
अधोदेशेषु सर्वेषु गुदेषु च महौषधिः ।
दीयते चीयते सामः कामकायविवर्द्धनः ॥ १३ ॥

बड़ी हरड़ के छिलके का कपड़छान किया हुआ चूर्ण भाग, नया शुद्ध जमालगोटा एक भाग दोनों को मिलाकर थोहर दूध में घोटकर चने के समान गोली बना ले ॥ ८ ॥ ९ ॥ इस शरस के सेवन से न तो दाह होता है, न मूर्च्छा, न भ्रम, होता है। इससे दस्त वेग से होता है तथा आम नष्ट होता है। निरूहवस्ति, विन्दुघृत, त्रिवी इन सबके प्रयोग से ऐसा नहीं होता जैसा इससे होता है ॥ ११ ॥ इससे अति शुद्ध, अति और उत्तमदेह हो जाता है। तथा अतिरूप, अति समर्थ, और बढ़ाता है ॥ १२ ॥ इस गोली को कब्ज़, उदर रोग, अफ़रा दारुण रोगों में तथा नीचे के भाग के सब रोगों में देने से भगन्दर बवासीर आदि गुदा के रोगों में देने से ये रोग दूर आमदोष क्षयको प्राप्त होता है। यह कामदेवको बढ़ाती तथा वृद्धि करती है ॥ १३ ॥

अथइच्छाभेदी गुडिका ।

पारदं गन्धकं कुर्य्यात् सौभाग्यं पिप्पली समम् ।
समानि जयपालानि क्रियन्ते रेचनाय च ।
शीतेन रेचयेत् सम्यगुष्णेनैव प्रशाम्यति ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, शुद्धसुहागा, पिप्पली का चूर्ण सब सम भाग लें। पहले कज्जली करें। फिर सब द्रव्यों को घोट कर सबके समान शुद्ध जमालगोटे का चूर्ण डाल घोट लें। इस रसको एक रत्ति भर लेकर कुछ खांड मिलाकर शीतल जल से दें तो अच्छा रेचन होता है। जब दस्त बंद करने हों तो गरम जल पी लें ॥ १४ ॥

अन्यश्चेच्छाभेदी रसः।

शुण्ठी मरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम् ।
जैपालास्त्रिगुणाः प्रोक्ताः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १५ ॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत् ।
यावन्तश्चुल्लुकाः पीतास्तावद्वारान् विरेचयेत् ।
तक्रौदनं खादितव्यमिच्छाभेदी यथेच्छया ॥ १६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सोंठ चूर्ण, मिरच चूर्ण, शुद्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें। और शुद्ध जमालगोटे का चूर्ण तीन भाग लें। पहले कज्जली करें फिर सबको पीसकर दो रत्ति भर की गोली बना लें। इस इच्छाभेदी रस को दो रत्ति भर ले कुछ मिश्री में मिलाकर देवे। ऊपर से जितने घूंट जल पियेगा उतनी वार विरेचन होगा पथ्य में छाछ और चावल खाना चाहिये ॥ इसका इच्छाभेदी नाम इसी लिये है कि इच्छानुकूल दस्त लाता है ॥ कोमल प्रकृति वालों को इसकी मात्रा डेढ़ रत्ति भर दें और कठोर कोष्ठ वालों को दो रत्ति भर दें। जब दस्त बंद करने हों तो गरम जल पीलें। फिर एक पहर तक ठण्डा जल न पियें। पीछे पथ्य खालें ॥ १६ ॥

अथ पुष्परेचनीगुड़िका ।

देवदाली स्वर्णपुष्पं गुडेन गुडिका कृता ।

गुदमध्ये प्रदेयैषा पातयेच्च महागदम् ॥ १७ ॥
अधश्च साममायाति पुनः सा दीयते गुदे ।
प्रक्षाल्य वारिणा चैषा वारं वारं प्रयच्छति ॥ १८ ॥
अनेन क्रमयोगेण मलमामविरेचनम् ।
जायते सकलं देहं शुद्धवर्णं निरामयम् ॥ १९ ॥

बंदाल डोला, अम्लतास का गूदा दोनों एक २ भाग लें, दो भाग लें सबको पीसकर कूटकर गोली बनावें । यह गोली में रखने से विरेचन कराके सब रोगों को दूर करती है । दस्त के साथही आम के समेत गोली भी बाहर निकल जाती है । तो जलसे धोकर फिर गुदामें रखें । इस प्रकार वार२ रखनेसे मल दस्त द्वारा आम बाहर निकल जाता है और देह शुद्धवर्ण होजाता इसे लंबी बत्ती के समान बना लें जिसके दोनों प्रान्त गोल हों से गुदा में प्रवेश हो सकें ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथ सर्वाङ्गसुन्दरो रसः ।

शुद्धसूतश्च गन्धश्च विषश्च जयपालकम् ।
कटुत्रयश्च त्रिफला टङ्कणश्च समांशकम् ॥ २० ॥
अस्य मात्रा प्रयोक्तव्या गुञ्जात्रयसमा ततः ।
सर्वेषु ज्वररोगेषु सामवाते विशेषतः ॥ २१ ॥
नाशयेत् श्वासकासञ्च अग्निमान्द्यं विशेषतः ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं रसः सर्व्वाङ्गसुन्दरः ॥ २२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, शुद्ध जमालगोटा, चूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपली चूर्ण, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आं चूर्ण, शुद्ध सुहागा; सबको सम भाग ले । प्रथम कज्जली करे । सबको मिला कर चूर्ण करे और तीन रत्ति प्रमाण गोली बना प्रयोग करने से सर्व ज्वर, विशेष कर आमवात नाश होते श्वास,कास, विशेष कर अग्नि मांद्य को भी यह नाश करती यह रस ब्रह्मा ने पूर्व बनाया था । इसका नाम सर्वाङ्गसुन्दर रस

आज कल के अनुसार इसकी दो रत्ति की मात्रा देनी चाहिये ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

निषिद्धविरेचकानाह ।

बालवृद्धकृशक्षीण–पीनसार्त्तभयार्दिताः ।
रूक्षशोषतृषायुक्ताः गर्भिणी च नवज्वरी ॥ २३ ॥
अधो गच्छति यस्यासृक् सूतिकाऽऽतङ्कपीड़िता ।
नैते विरेकयोग्याः स्युरन्येषाञ्च बलाबलम् ॥ २४ ॥
नवज्वरे च ये योगाः भेदकाः परिकीर्त्तिताः ।
ते तथैव प्रयोक्तव्याःवीक्ष्य देहमलादिकम् ॥ २५ ॥

[इति विरेकाधिकारः]

बालक, बूढ़, पतले, क्षीण, पीनस रोगी, डरपोक, रूखे, यक्ष्मा रोगी, प्यासे, गर्भिणी स्त्री, नये ज्वर वाले, जिसे गुदा योनि आदि निचेके भागसे खून निकले। सूतिका रोगवाली स्त्री,इनको विरेचन न दे। अन्यों को बलाबल देख कर देवे। परन्तु, नवज्वर में जो योग विरेचक कहे हैं वे भी उपर्युक्त रीति से ही शरीर के बलाबल को देख कर यथा योग्य मात्रा से प्रयोग करने चाहियें ॥ २३–२५ ॥

अथ ज्वरचिकित्सा ।

नवज्वराङ्कुशः ।

क्रमेण वृद्धान् रसगन्धहिङ्गुलान्,
नैकुम्भवीजान्यथ दन्तिवारिणा ।
पिष्ट्वाऽस्य गुञ्जाऽभिनवज्वरापहा,
जलेन चार्द्रा सितया प्रयोजिता ॥ १ ॥

शुद्ध पारा एक भाग, गन्धक दो भाग, शुद्ध सिंगरफ तीन भाग, शुद्ध बड़ी दन्ती के बीज चार भाग सबसे पहले पारा गन्धक की कज्जली बनावे। फिर अन्य द्रव्य मिला कर दन्ती मूल के स्वरस या काथ से पीसकर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसे मिश्री

और अदरक के रस से देना चाहिये। इस गोली को दिन… एक वार ही दें। इससे नया ज्वर दूर हो जाता है ॥ १ ॥ [आ… ज्वर में विरेचन देना एक दम निषेध कर चुके हैं इस लिये दो… तथा ज्वर को समझ कर सात आठ दिन बाद विरेचन देना… है। परन्तु यदि कई दिनसे कोष्ठबद्धता हो और उससे ज्वर होय… तबतो तुरन्त इस रस को दे देना चाहिये। यह नियम सर्वत्र… रखकर नवज्वर में विरेचन देना चाहिये। "पिष्ट्वा "का अर्थ पी… गोली बना देना ही है। संस्कृत टीकाकार ने जो "पिष्ट्वा "का… सात भावना देना लिखा है यह अर्थ ठीक नहीं है नाही… सम्मत है] ॥

हिङ्गुलेश्वरो रसः।

तुल्यांशं मर्दयेत् खल्ले पिप्पली हिङ्गुलं विषम्।
द्विगुञ्जा मधुना देया वातज्वरनिवृत्तये ॥ २ ॥

पीपली का चूर्ण, शुद्ध शिंगरफ, शुद्धविष। तीनों को सम… लेकर पीसकर जल से दो रत्ति भर की गोली बना कर रखे… वात ज्वर में शहद से देने से ज्वर निवृत्त होता है दिनों… गोली तक दें ॥ २ ॥*

ज्वरधूमकेतुः रसः।

भवेत् समं सूतसमुद्रफेन–हिङ्गूलगन्धं परिमर्द्य यत्नात्
नवज्वरे वल्लमितं त्रिघस्रमार्द्राम्बुणा ऽयं ज्वरधूमकेतुः

---

*[नोट—इस रसका अन्य पुस्तकमें पाठ भेद है "द्विगुञ्… स्थान में "गुञ्जार्द्धा" पाठ है। अर्थात् आधी रत्ति भर की… बनावें। यही ठीक भी है। यह आधी रत्ति की गोली चार २ घ… अन्तर से दिन में चार वार तक भी दे सकते हैं। नया ज्वर… आमवात भी इससे अराम होता है। वातज्वर, मलेरिया, तथा… से आने वाले ज्वरों में ज्वरवेग को कम करने में यह अच्छा… देती है ॥]

शुद्ध पारा, शुद्ध समुद्रफेन, शुद्ध शिंगरफ, शुद्धगन्धक प्रत्येक द्रव्य सम भाग ले। पहले कज्जली करे फिर सब द्रव्यों को मिला अदरक के रस में तीन दिन तक घोटकर डेढ़ रत्ति प्रमाण गोली बनावे। यह ज्वर धूमकेतु रस कहाता है॥ ३॥*

मृत्युञ्जयो रसः।

अव्यक्तः सिद्धिदः शुद्धो रोगघ्नः कीर्त्तिवर्द्धनः।
यशः प्रदः शिवः साक्षात् मृत्युञ्जयरसः स्मृतः॥ ४॥
विषस्यैकस्तथा भागो मरिचं पिप्पलीकणाः।
गन्धकस्य तथा भागो भागः स्यात् टङ्कणस्य च॥ ५॥
सर्वत्र समभागः स्यात् हिङ्गुलन्तु द्विभागिकम्।
चूर्णयेत् खल्लमध्ये तु मुद्गमानां वटीं चरेत्॥ ६॥
जम्बीरस्य रसेनात्र कार्य्यं हिङ्गुलशोधनम्।
रसश्चेत् समभागः स्यात् हिङ्गुलं नेष्यते तदा॥ ७॥
गोमूत्रशोधितश्चात्र विषं सौरविशोधितम्।
मृत्युरूपं ज्वरं हन्ति मृत्युञ्जयरसः स्मृतः॥ ८॥
मृत्युर्विनिर्जितो यस्मात्तेन मृत्युञ्जयोरसः।
मधुना लेहनं प्रोक्तं सर्वज्वर निवृत्तये॥ ९॥
दध्युदकानुपानेन वातज्वरनिवर्हणः।
आर्द्रकस्य रसैः पानं दारुणे सान्निपातिके॥ १०॥

---

*[नोट—वल्ल के-अर्थ तीन रत्ति, दो रत्ति और डढ़रत्ति ये तीनों ही हैं। परन्तु हमने आज कल के बलाबल को ध्यान में रख के अपनी इस रसेन्द्रसार संग्रह की टीका में सर्वत्र वल्लका अर्थ डेढ़ रत्ति ही मानकर किया है। इस ज्वर धूमकेतु रसकी डेढ़ रत्ति की गोली दिन भर में तीन गोली तक दे सकते हैं। अनुपान, अदरक का रस और मधु आदि। यह ज्वर वेग कम करती है। इससे थोड़ा २ पसीना आता है तथा ज्वर क्रमशः कम हो जाता है॥]

जम्बीरद्रवयोगेण अजीर्णज्वरनाशनः ।
अजाजी गुडसंयुक्तो विषमज्वरनाशनः ॥ ११ ॥
तीव्रज्वरे महाघोरे पुरुषे यौवनान्विते ।
पूर्णमात्रा प्रदातव्या पूर्णं वटीचतुष्टयम् ॥ १२ ॥
स्त्री बालवृद्धक्षीणेषु चार्द्धमात्रा प्रकीर्त्तिता ।
अतिवृद्धे च क्षीणे च शिशौ चाल्पवयस्यपि ॥ १३ ॥
तुर्य्यमात्रा प्रदातव्या व्यवस्था सारनिश्चिता ।
नवज्वरे महाघोरे यामैकात् नाशयेद् ध्रुवम् ॥ १४ ॥
मध्यज्वरे तथा जीर्णे त्रिरात्रात् नाशयेद् ध्रुवम् ।
सप्ताहात् सन्निपातोत्थं ज्वराजीर्णकसंज्ञकम् ॥ १५ ॥

यह मृत्युञ्जय रस अव्यक्त, सिद्धिदाता, शुद्ध, रोगनाशक, वर्धक, यशः प्रद तथा साक्षात् शिव अर्थात् कल्याण दाता है शुद्ध विष, मिरच चूर्ण, पिप्पलीचूर्ण, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सु प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें, शुद्ध हिंगुल दो भाग लें। सबको में अत्यन्त घोट कर जलसे पीस मूंग के दाने के समान गोली लें ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ इस मृत्युञ्जय रस में जम्बीरी नींबू के रस हिंगुल को शुद्ध करके डाले, यदि हिंगुल के स्थान में शुद्ध डालना चाहें तो गन्धक के सम भाग ही अर्थात् एक भाग पारा डालें और पहले पारा गन्धक की कज्जली करके फिर द्रव्य मिलायें ॥ ७ ॥ गौमूत्र में शुद्धकर और धूप में सुखा कर नाभ विष को डालें। यह रस मृत्युरूप ज्वर को हरता है इस इसे मृत्युञ्जय रस कहते हैं ॥ ८ ॥ अथवा इससे मृत्यु अर्थात् दि रोगों से अकाल मृत्यु जीती गई है इस लिये इसे मृत्युञ्जय कहते हैं ॥ इसे शहद से चाटने से सब प्रकार के ज्वर निवृत्त हैं ॥ ९ ॥ इसे दही के जल के अनुपान से दें तो वात ज्वर होता है आर्द्रक के रस के साथ पीने से दारुण सन्निपात दूर है ॥ १० ॥ जम्बीरी नींबू के रस से अजीर्ण नाश होता है। जीर

गुड़ के साथ देने से विषम ज्वर नाश होता है ॥ ११ ॥ ज्वर का वेग तेज़ हो, ज्वर महा घोर हो, पुरुष भी जवान हो तो पूर्ण मात्रा इस रसकी दे सकते हैं,पूर्णमात्रा चार गोली तक है ॥ १२ ॥ स्त्री, बालक, वृद्ध, क्षीण इसको दिन भर में आधी मात्रा अर्थात् दो गोली तक दे सकते हैं ॥ अति वृद्ध,अति क्षीण, तथा छोटे बालकों को भी चौथाई मात्रा दिनभर में दे सकते हैं। परन्तु एक वार में एक मूंग की चौथाई मात्रा देनी चाहिये। महाघोर नवीन ज्वर का वेग इसके सेवन से एक पहर भर में निश्चित कम हो जाता है॥ १३ ॥ १४ ॥ मध्यम ज्वर अर्थात् बहुत तेज़ न हो ऐसे ज्वर में और जीर्ण ज्वर में इसे दें तो तीन दिन में ज्वर नाश हो जाता है, सन्निपात और अजीर्ण ज्वर को एक सप्ताह में नाश करता है ॥ १५ ॥*

जयावटी।

विषं त्रिकटुकं मुस्तं हरिद्रा निम्बपत्रकम् ।
विडङ्गमष्टमं चूर्णं छागमूत्रैः समं समम् ।
चणकाभा वटी कार्य्या स्यात् जया योगवाहिका ॥ १६ ॥

शुद्धविष, सोंठ चूर्ण, मरिचचूर्ण, पीपल चूर्ण, मोथाचूर्ण,हल्दी चूर्ण, नीमके पत्तों का चूर्ण, वायविडंग का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग ले और जयन्ती की जड़का चूर्ण सबके समान अर्थात् आठ भाग डाले। सबको पीसकर बकरी के मूत्र में घोटकर चने के समान गोली बनावें। यह जयावटी योगवाही है। अर्थात् जिस अनुपान से दें वैसा ही गुण करती है ॥ १६ ॥

जयन्तीवटिका।

विषं पाठाऽश्वगन्धा च वचा तालीशपत्रकम्।

*[नोट—"रस रत्नाकर" में इस रसकी पूर्णमात्रा एक रत्ति लिखी है। और इसके अनुसार बच्चों को एक रत्तिके आठवें भागसे चौथे भाग तक एक मात्रा देना चाहिये। हमारी सम्मति में पूर्णमात्रा एक रत्ति की एक वार में युवा को देना ठीक है। इससे अधिक मात्रा एक वार में न दे ॥

मरिचं पिप्पली निम्बमजामूत्रेण तुल्यकम्।
वटिका पूर्ववत् कार्य्या जयन्ती योगवाहिका॥ १७॥

शुद्धविष, पाठाचूर्ण असगंध चूर्ण, बचका चूर्ण, ताली का चूर्ण, मिरचचूर्ण, पीपल चूर्ण, नीम के पत्तों का चूर्ण, प्रत्येक एक २ भाग लें, और सबके समान आठ भाग जयन्ती की जड़ चूर्ण डाल सबको मिला, बकरी के मूत्र में पीसकर चने के स गोली बनालें। यह जयन्ती वटी भी योगवाही है। अर्थात् सब को भिन्न २ अनुपानों से दूर करती है॥ १७॥

जया-जयन्ती-वटीप्रयोगविधिः।

जयन्ती वा जया वाऽथ क्षीरैः पित्तज्वरापहा।
मुद्गामलकयूषेण पथ्यं देयं घृतं विना॥ १८॥
जयन्ती वा जया वाऽथ सक्षौद्रमरिचान्विता।
सन्निपातज्वरं हन्ति रसश्चानन्दभैरवः॥ १९॥
जयन्ती वा जया वाऽथ विषमज्वरनुद्घृतैः।
सर्वज्वरं मधुव्योषैः गवां मूत्रेण शीतकम्।
चन्दनस्य कषायेण रक्तपित्तज्वरापहा॥ २०॥
जयन्ती वा जया वाऽथ माक्षिकेण च कासजित्॥ २१
जयन्ती वा जया क्षीरैः पाण्डुशोथविनाशिनी॥ २२
जयन्ती वा जया वाऽथ तण्डुलोदकपानतः।
अश्मरीं हन्ति नो चित्रं मूत्रकृच्छ्रन्तु दारुणम्॥ २३
जयन्तीं वा जयां वाऽथ गोमूत्रेणयुतां पिबेत्।
हन्त्याशु काकणं कुष्ठं सुलेपेन च तद् द्रुतम्।
द्विनिष्कं केतकीमूलं पिष्ट्वा तोयेन पाययेत्॥ २४॥
जयन्ती वा जया वाऽथ मेहं हन्ति सुराह्वयम्।
जयन्ती वा जया वाऽथ मधुना मेहजिद्भवेत्॥ २५॥

लोध्रमुस्ता ऽभयातुल्यं कट्फलश्चजलैः सहः ।
क्काथयित्वा पिबेच्चानु मधुना सर्वमेहाजित् ॥ २६ ॥
जयन्तीं वा जयां वाऽथ गुडैः कोष्णजलैः पिबेत् ।
त्रिदोषोत्थं हरेद् गुल्मं रसश्चानन्दभैरवः ॥ २७ ॥
जयन्ती वा जया हन्ति शुण्ठया सर्वं भगन्दरम्
जयन्ती वा जया वाऽथ तक्रेण ग्रहणीप्रणुत् ॥ २८ ॥
जयन्ती वा जया वाऽथ रसश्चानन्दभैरवः ।
रक्तपित्ते त्रिदोषोत्थे शीततोयेन पाययेत् ॥ २९ ॥
जयन्ती वा जया वाऽथ भृङ्गद्रावैर्निशान्ध्यनुत् ।
जयन्ती वा जयां वाऽथ घृष्ट्वा स्तन्येन चाञ्जयेत् ।
स्रावणं सर्वदोषोत्थं मांसवृद्धिश्च नाशयेत् ॥ ३० ॥

याावटी या जयन्ती वटी दोनों में से किसी एक को भी दूधके साथ तो पित्तज्वर नाश होता है । इसके साथही मूंग और आंवले का स बनाकर बिना घी डाले पथ्य देना चाहिये ॥ १८ ॥ जया वा जयन्ती को शहद और मिरचों के चूर्ण के साथ मिला करदें तो सन्निपात वर दूर होता है । (इसी प्रकार आनन्द भैरव रसभी सन्निपात को र करता है) ॥ १९ ॥ जया वा जयन्ती को घी के साथ दें तो विषम वर दूर होता है इसे ही सोंठ,मिरच,पीपल के चूर्ण तथा शहद से मला कर दें तो सर्व ज्वर दूर होते हैं । गौ के मूत्र के साथ इसे दें तो ति ज्वर दूर होता है । इसे लाल चन्दन के क्काथ से दें तो रक्त पित्त वर दूर होता है ॥ २० ॥ इसे शहद से दें तो खांसी नाश होती है॥२१॥ से दूधके साथ दें तो पाण्डु तथा शोथ रोग नाश होते हैं ॥ २२ ॥इस ा यदि तण्डुलोदक अर्थात् चावलों के भिगोये हुये जल से दें तो थरी तथा भयंकर मूत्रकृच्छ्र नाश होते हैं ॥ २३ ॥ इसे गौमूत्र से पीवें । काकण कुष्ठ दूर होता है । इसी जया वा जयन्ती को यदि गौमूत्र घिस कर लेप भी करें तो कुष्ठ और भी शीघ्र अच्छा होता है । तको की जड़ दो निष्क भर जलसे पीस कर इस गोली को खिलावें

तो सुरामेह को दूर करती है। इस गोली को मधु के साथ खा
प्रमेह को दूर करती है ॥ २४ ॥ २५ ॥ इसी जया वा जयन्ती को
साथ में लोध, नगरमोथा, कायफल, और हरड़ इन चारों के
भाग ले क्वाथ बना के शीतल होने पर शहद मिला कर पीवें तो
प्रमेह नाश होते हैं ॥ २६ ॥ इसी जया वा जयन्ती को गुड़ तथा
जल से पीवे तो त्रिदोष जनित गुल्म को नाश करती है। (इस
रोग में आनन्द भैरव रस भी लाभ करता है) ॥ २७ ॥ इसी
को सोंठ से खावें तो सब प्रकार का भगन्दर दूर होता है। इसे
साथ पियें तो ग्रहणी रोग नाश होता है ॥ २८ ॥ इसी जया वा
को शीतल जल से दें तो त्रिदोषज रक्तपित्तमें लाभ होता है। [
भैरव रस से भी लाभ होता है] ॥ २९ ॥ जया वा जयन्ती को
के रस से दें तो अंधराता रोग दूर होता है। इसी गोली को
दूध से घिसकर आंखों में डाले या अंजन करें तो सर्व दोषज
से पानी जाने का रोग तथा मांस वृद्धि आराम होता है ॥ ३०

भस्मेश्वरयोगः ।

भस्म षोडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम् ।
निष्कत्रयञ्च मरिचं विषनिष्कञ्च चूर्णयेत् ॥ ३१ ॥
अयं भस्मेश्वरो नाम सन्निपातनिकृन्तनः ।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदार्द्रकस्य रसेन तु ॥ ३२ ॥

जंगली उपलों की राख सोलह निष्क, मिरच्च चूर्ण तीन
शुद्ध विष एक निष्क तीनों को घोटकर जलसे पांचरत्ति की
बनाले। इसको अदरक के रस से देने से सन्निपात ज्वर के वे
कम करता है। इसका नाम भस्मेश्वर योग है ॥ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

स्वच्छन्दभैरव रसः ।

ताम्रभस्म विषं हेम्नः शतधा भावितं रसैः ।
गुञ्जार्द्धं सन्निपातादि-नवज्वरहरं परम् ॥ ३३ ॥

---

*[नोट—आज कल जयावटी को प्रायः पित्तज्वर तथा
ज्वर मे प्रयोग करते हैं ॥] ॥

आर्द्राम्बुशर्करा सिन्धु-युतः स्वच्छन्दभैरवः।
इक्षुद्राक्षासिताश्चापि दधि पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ ३४ ॥

विशुद्ध ताम्रभस्म शुद्धविष दोनों को समभाग ले पीसें। र धतूरे के रस में सौ बार भावित कर आधी रत्ति की गोली बना र रखें। आधी रत्ति खावें तो सन्निपात आदि ज्वर तथा नये ज्वर ादि के वेग को कम करती है ॥ ३३ ॥ अदरक के रस, शक्कर और धा नमक से मिलाकर स्वच्छन्द भैरव रस देना चाहिये। रुचि हो तो गी को गन्ने का रस, किशमिश मिश्री तथा दही आदि पथ्य देवें॥३४॥

ज्वरमुराररसः।

हिङ्गुलञ्च विषं व्योषं टङ्कणं नागराभये।
जयपालसमायुक्तं सद्यो ज्वरविनाशनम् ॥ ३५ ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्धविष, सोंठ चूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपल चूर्ण, द्ध सुहागा, सोंठ चूर्ण, हरड़ चूर्ण, शुद्ध जमाल गोटा इन सबको र्दन करके जलसे १ रत्ति प्रमाण की गोली बनावे ॥ इसके यथाविधि योग से विरेचन होकर ज्वर शीघ्र उतर जाता है ॥ ३५ ॥*

नवज्वरेभाङ्कुशः।

सगन्धटङ्कं रसतालकञ्च विमर्दितं भावय मीनपित्तैः।
दिनत्रयं वल्लमितं प्रदद्यात् वृन्ताकतक्रौदनमेव पथ्यम्।
नवज्वरेभाङ्कुश नामधेयः क्षणेन घर्मोद्गममातनोति ॥ ३६ ॥

शुद्ध गन्धक, शुद्धपारा, शुद्ध सुहागा, शुद्धहड़ताल प्रत्येक द्रव्य म भाग लें पहले पारे गन्धक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला र पीसें। फिर तीन दिन तक रोहू आदि मछली के पित्त से इसको ावित करें। फिर इसकी डेढ़ रत्ति भर की गोली बना लें। इसे डेढ़ त्त भर दें तो नवज्वर नाश होता है तथा शीघ्र ही पसीना आ जाता । इसमें पथ्य बैंगन और तक्र तथा चावल देने चाहियें। इसका नाम वज्वरेभाङ्कुश है॥ [इसकी आज कल की मात्रा एक रत्ति है। ह प्रायः श्लैष्मिक ज्वर तथा पित्तश्लैष्मिक ज्वरमें प्रयुक्त होता है]॥३६॥

*[नोट—सोंठ दो बार लिखी है अतः दुगुनी लनी चाहिये।]

त्रैलोक्यडुम्बररसः।

सूतार्कगन्धचपलाजयपालतिक्ता,
पथ्या त्रिवृच्च विषतिन्दुकजं समांशम्।
सम्मर्द्य वाज्रिपयसा मधुना द्विगुञ्जः।
त्रैलोक्यडुम्बररसोऽभिनवज्वरघ्नः ॥ ३७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, पिप्पली चूर्ण, शुद्ध गोटा, कुटकी चूर्ण, हरड़ चूर्ण, त्रिवी चूर्ण तथा शुद्ध कुचले प्रत्येक द्रव्य सम भाग ले। पहले पारे गन्धक की कज्जली फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिला कर थोहर के दूध में घोट रत्ति प्रमाण गोली बनावे। इसे शहद से मिला कर देवें तो के वेग को कम करता है। इसका नाम त्रैलोक्यडुम्बर रस है।

प्रतापमार्त्तण्डरसः।

विषहिङ्गुलजैपाल-टङ्कणं क्रमवर्द्धितम्।
रसः प्रतापमार्त्तण्डः सद्यो ज्वरविनाशनः ॥ ३८ ॥

शुद्धविष एक भाग, शुद्ध हिंगुल दो भाग, शुद्ध जमाल तीन भाग, शुद्ध सुहागा चार भाग। सबको मिलाकर पीस इसकी एक रत्ति की मात्रा देने से विरेचन होकर ज्वर तुरन्त जाता है। इसका नाम प्रताप मार्त्तण्ड है ॥ ३८ ॥

---

*[नोट—इसे कोष्ठ वद्धता तथा अजीर्ण संयुक्त ज्वरमें प्रा करते हैं॥ प्रसंग से यहां कुचला शोधन लिखते हैं। कुचले में भूनें जब लाल हो जाये तो निकाल काम में लायें यह कुचला कहाता है॥ दूसरी रीति यह है कि कुचले को पंद्रह मूत्र में पड़ा रहने दे। गौमूत्र हो सके तो नित्य नया डालता जा पुराना निकाल दे। जब १५ दिन बाद कुचले फूल जायं तो ऊपर का छिलका और कुचले की बीच की जीभी निकाल शेष भाग को धोकर सुखाकर कूटले। इस शुद्ध कुचले को प्रयोग कर सकते हैं॥]

तरुणज्वरारिरसः।

पालगन्धं विषपारदश्च तुल्यं कुमारी स्वरसेन पिष्टम्।
रस्य द्विगुञ्जा हि सितोदकेन ख्यातो रसोऽयं तरुणज्वरारिः॥३९॥
तव्य एषो ऽहनि पञ्चमे वा षष्ठे ऽथवा सप्तम एव वाऽपि।
ाते विरेके विजितो ज्वरः स्यात् पटोलमुद्गाम्बु निषेवणेन॥ ४०॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, तथा शुद्ध जमालगोटा त्येक द्रव्य सम भाग ले। पहले पारा गन्धक की कज्जली बनावे फिर वको मिला घीकुमार के रस में पीसकर दो रत्ति की गोली बनाके श्री के शर्बत के साथ देने से ज्वर नाश होता है॥इसका नाम तरुण वरारि रस है॥ ३९॥ यह रस ज्वर चढ़ने के दिनसे पांचवें, छटे थवा सातवें दिन देना चाहिये। इससे विरेचन होकर ज्वर उतर ाता है। तथा पथ्यमें पटोलपत्र तथा मूंगका रस देना चाहिये॥४०॥

गदमुरारिः।

रसबलि शिललौहव्योषताम्राणि तुल्या—
न्यथ स दरदनागाभ्याश्च भागः प्रदिष्टः।
भवति गदमुरारिश्चास्य गुञ्जाद्वयं वै,
क्षपयति दिवसेन प्रौढ़मामज्वराख्यम्॥ ४१॥

शुद्ध पारा शुद्ध गंधक, शुद्ध मनसिल, लौहभस्म, सौंठचूर्ण, रच चूर्ण, पीपल चूर्ण ताम्रभस्म, शुद्ध हिंगुल शुद्ध सीसक भस्म। त्येक द्रव्य सम भाग ले पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य व्य मिला कर पीस कर जलसे दो रत्ति समान गोली बनाले। इसकी रत्ति मात्रा देनेसे दिनभर में तीव्र आम ज्वर कम होता है। इसका ाम गदमुरारि रस है॥ ४१॥

विद्याधररसः।

रसो गन्धस्ताम्रत्रिकटुकटुकी टङ्कणवरा—
त्रिवृद्दन्ती हेम द्रुमाणि विषमेतत्समभिदम्।
समस्तैस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः।

ततः स्नुक्क्षीरेण प्रचुरमृदितं दन्तिसलिलैः ॥ ४२ ॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं ।
ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ग्रहणिगदकीलोद्भवरुजः ।
मरुच्छूलाजीर्णं प्रबलमथ सामं क्रिमिगदं ।
विबद्धं प्लीहानं प्रबलमपि विद्याधररसः ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, सोंठचूर्ण, मिर्च पीपली चूर्ण, कुटकी चूर्ण, शुद्ध सुहागा, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा आंवला चूर्ण, त्रिवीचूर्ण, दन्तीमूल चूर्ण शुद्ध धतूरे के बीज चूर्ण, आक की जड़ का चूर्ण, शुद्ध विष प्रत्येक द्रव्य सम भाग पहले पारा गन्धक की कज्जली करें। फिर सब द्रव्यों को मिला फिर सब द्रव्यों के सम भाग शुद्ध जमालगोटे का चूर्ण डा थोहर के दूध में दृढ़ता से मर्दन करें ["तीन दिन तक घोटे" भी पाठ है ॥]। फिर दन्ती के रस या क्वाथ से घोटकर दो प्रमाण की गोली बनावें। इसकी एक गोली देने से तेज़ सा का वेग कम होजाता है तथा पाण्डु, गुल्म और ग्रहणी तथा सीर के मस्सों की दर्द शान्त होती है तथा वायु को, शूल को, को तथा आमको, क्रिमिरोग कब्ज़ा तथा बढ़ी हुई तिल्ली को विद्याधर रस ठीक करता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

Vidya Bhushan अमृत मञ्जरी। आनन्द भैरव रस या भैरव रस

हिङ्गुलं मरिचं टङ्कं पिप्पली विषमेव च ।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीराद्भिर्विमर्दितम् ॥ ४४ ॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वापि देयञ्च सान्निपातिके ।
कासश्वासौ जयत्याशु सर्वज्वरविनाशनः ॥ ४५ ॥

शुद्ध हिंगुल, मरिच चूर्ण, शुद्ध सुहागा, पिप्पली चूर्ण, शु जावित्री चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर जम्बीरी नींबू के र पीस कर दो या तीन रत्ति की गोली बनावें। इसकी एक गोली ज्वर में देने से लाभ होता है। खांसी और श्वास को शीघ्र ला है तथा सर्व ज्वरों को नाश करती है ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

महाज्वराङ्कुशः।

सूतं गन्धं विषं तुल्यं धूर्त्तबीजं त्रिभिः समम्।
चतुर्णां द्विगुणं व्योषचूर्णं गुञ्जाद्वयं हितम् ॥ ४६ ॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम्।
महाज्वराङ्कुशो नाम ज्वराष्टकनिसूदनः ॥ ४७ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकञ्च चतुर्थकम्।
विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सर्वं न संशयः ॥ ४८ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गन्धक एक तोला, शुद्ध विष एक तोला, शुद्ध धतूरे के बीज तीन तोले, सोंठ चूर्ण चार तोला, मिरच चूर्ण चार तोला, पिप्पली चूर्ण चार तोला ले। प्रथम पारे और गन्धक की कज्जली बनावे फिर सब द्रव्य मिलाकर पीसकर रख ले। इस महा ज्वराङ्कुश रस की दो रत्ति की मात्रा जम्बीरी नीबू के रस से अथवा अदरक के रस से दें तो आठों प्रकार के ज्वर नाश करता है। इससे ऐकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थक, विषम ज्वर तथा त्रिदोषज ज्वर को नाश करता है इसमें संशय नहीं ॥४६—४८॥*

ज्वरकेशरिका।

शुद्धसूतं विषं व्योषं गन्धं त्रैफलमेव च।
जयपालं समं कुर्य्याद् भृङ्गतोयेन मर्दयेत ॥ ४९ ॥
वटिकां गुञ्जमात्रान्तु कृत्वा वैद्यः प्रयत्नतः।
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रशस्यते ॥ ५० ॥
नारिकेलाम्बुना वाऽपि सर्वज्वरविनाशिनी।
नारिकेलजलं शस्तं कर्षत्रयं पिबेदनु ॥ ५१ ॥
सितया च समं पीत्वा पित्तज्वरविनाशिनी।
मरिचेन च पीता सा सन्निपातज्वरं जयेत् ॥ ५२ ॥
पिप्पलीजीरकाभ्यान्तु दाहज्वरविनाशिनी।

---

*[नोट—यह रस नवज्वर में तथा विषम ज्वर में जब प्रलाप हो प्रलाप को कम करता है तथा ज्वर के वेग को कम करता है। ज्वर पूर्व देने से इससे ज्वर रुक भी जाता है ॥]

विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥ ५३ ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च श्वयथुञ्च सुदारुणम् ।
शूलाजीर्णं तथा गुल्मं कुष्ठाष्टादश पित्तजान् ।
ज्वरकेशरिका ख्याता तरुणज्वरनाशिनी ॥ ५४ ॥

शुद्धपारा शुद्धगन्धक,शुद्धविष,सोंठचूर्ण, पीपलचूर्ण, मिरच हरड़चूर्ण,बहेड़ाचूर्ण,आंवलाचूर्ण शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण प्रत्ये सम भाग लें। प्रथम पारे और गंधक की कज्जली करें। फिर सब मिला कर भांगरे के रस में घोटकर एक रत्ति प्रमाण गोली बालकों के लिये सरसों के समान गोली बनावें ॥ ४९ ॥ ५०। अर्थात् हरे नारियल के पानी से इस गोली को दें तो सर्व विनाश करती है। नारियल का जल इसमें अच्छा है। इस पा तीन कर्ष तक गोली के बाद पीना चाहिये ॥ ५१ ॥ इसे मिश्री जल से पीवें तो पित्त ज्वर नाश होता है। इसे मिरचके साथ सन्निपात ज्वर दूर होता है ॥ ५२ ॥ पीपल चूर्ण और जीरे के खावें तो दाह ज्वर नाश करती है। विषमज्वर, भूतज्वर, अग्निमांद्य, अजीर्ण, भयंकर शोथ, शूल, अजीर्ण,गुल्म, अठारह के कुष्ठ, पित्तज रोग इन सबको नाश करती है ॥ ५३ ॥ ५४॥

नवज्वरेभसिंहः

शुद्धसूतं तथा गन्धं लौहं ताम्रञ्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पली विश्वं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ५५ ॥
अर्द्धभागं विषं दद्यात् मर्दयेत् वासरद्वयम् ।
शृङ्गवेरानुपानेन दद्यात् गुञ्जाद्वयं भिषक् ॥ ५६ ॥
नवज्वरे महाघोरे वातसङ्ग्रहणीगदे ।
नवज्वरेभसिंहोऽयं सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ ५७ ॥

* [नोट—यह रस उत्तम है। इससे अधिक विरेचन होता और शनैः२ ज्वर वेग भी कम हो जाता है। यह सुकुमार वालों के लिये अच्छा है]

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसाभस्म, रिच चूर्ण, पीपल चूर्ण, सोंठचूर्ण, प्रत्येक चूर्ण एक २ तोला ले। द्धविष आधा तोला लें। सबसे प्रथम पारे गन्धक की कज्जली करें। कर सब द्रव्य मिलाकर दो दिन तक पीसकर रखें। इसे दो रत्ति भर कर अदरक के रस से दें तो महाघोर नया ज्वर, वात रोग, संग्र-णी, मिरगी, तथा अन्य २ रोगों में इस नवज्वरेभसिंह रसको प्रयुक्त करे ॥ पैत्तिक सन्निपात में अर्थात् अतिसार युक्त संन्निपात ज्वर में यह अच्छा लाभ करता है। अतिसार को नष्ट करके ज्वर को भी कम करता है ॥] ॥५५—५७॥

अथ निरामज्वरे।

उदकमञ्जरीरसः।

सूतो गन्धष्टङ्कणः सोषणः स्यादेतैस्तुल्या शर्करा मत्स्यपित्तैः।
भूयो भूयो भावयेत्तु त्रिरात्रं वल्लो देयः शृङ्गवेरस्य वारा ॥ ५८ ॥
सम्यक् तापे वारिभक्तं सतक्रं वृन्ताकाख्यं पथ्यमेतत् प्रदिष्टम्।
आङ्गं रोगं हन्ति सामं प्रभावात् पित्ताधिक्ये मूर्ध्नि वारिप्रयोगः॥५६॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, शुद्धसुहागा, मरिचचूर्ण प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला लें। सब द्रव्यों के समान खांड मिला कर, मछली के पित्त से तीन बार इसे भावना दे। इस रसकी डेढ़ रत्ति की मात्रा अदरक के रस से देने से ताप कम हो जाता है। ताप कम हो जाने पर चावल और छाछ तथा बेंगन की भाजी का पथ्य देवे। यह आम सहित ज्वर को प्रभाव से दूर करता है। यदि इसके खाने से पित्ताधिक्य हो अर्थात सिर गर्म हो तथा शरीर में गरमी अधिक प्रतीत हो तो सिर पर जल डालना चाहिये ॥ ५८ ॥ ५६ ॥ *

* [नोट—इससे पसीना आकर ज्वरभी उतर जाता है और रोगी निर्बल भी नहीं होता। अर्थात् हृदय की शक्ति को कम नहीं करता है। इस स्थानमें "वल्ल" का अर्थ दो रत्ति की गोली भी ले लें

चन्द्रशेखरो रसः

विहाय शर्करां यदा प्रदीयते मनः शिला ।
तदा निरामकज्वरारिरेष चन्द्रशेखरः ॥ ६० ॥

उपक्रोक्त उदकमञ्जरी रसमें यदि "शर्करा" न डाल
के स्थान में "शुद्ध मनासिल" उतनी ही डाल दें तो निराम
दूर कर देने वाला यह रस, चन्द्रशेखर कहाता है ॥ [इसक
मनशिल होने से कम होनी चाहिये । अर्थात् चौथाई रत्ति से
रत्ति तक देना चाहिये] ॥ ६० ॥

पञ्चवक्त्ररसः ।

रसो गन्धकटङ्कणः सोषणोऽयं फणी पिप्पलीत्यप धुस्तूरी
जयेत् सन्निपातं द्विगुञ्जाऽनुपानं भवेदर्कमूलाम्बु सव्योषचू

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, मिरचचूर्ण, ना
पिप्पली चूर्ण । इन सब को सम भाग ले । पहले पारा और
की कज्जली करले फिर सब द्रव्य उसमें मिला कर धतूरे के
पीस कर दो रत्ति के समान गोली बनालें । इसकी गोलीक
की जड़ के क्वाथ में त्रिकुटा का चू[illegible]ल कर पिलावें तो स
ज्वर दूर होता है ॥ ६१ ॥

पर्पटरसः ।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं मर्द्यं भृङ्गरसेन च ।
मृतं ताम्रं लौहभस्म पादांशेन तयोः क्षिपेत् ॥ ६२ ॥
लौह पात्रे च विपचेत् चालयेत् लौहचाटुना ।
तत् क्षिपेत् कदलीपत्रे गोमयोपरिसंस्थिते ॥ ६३ ॥

और प्रयोग करें तो मात्रा कुछ अधिक नहीं । वस्तुतः इसे दो र
मात्रा में ही प्रयोग किया जाता है । यहां "शर्करा" शब्द का
संस्कृत टीकाकार ने "विष" कर दिया है । परन्तु निघण्टु के
है । खांड डालकर रस सिद्ध वैद्यों ने अनुभव भी किया हुआ
गुण देता है ।]

पश्चात् संचूर्णयेत् खल्ले निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम् ।
जयन्ती त्रिफलाकन्या–वासाभार्गी कटुत्रिकैः ॥ ६४ ॥
भृङ्गाग्निमूल मुण्डीभिर्भावयेत् दिनसप्तकम् ।
अङ्गारैः स्वेदयेत् किञ्चित् पर्पटाख्यो महारसः ॥ ६५ ॥
चतुर्गुञ्जामितो भक्ष्यः सम्यक् श्लेष्मज्वरं हरेत् ।
पथ्याशुण्ठ्यमृताक्काथमनुपानं प्रयोजयेत् ॥ ६६ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, तथा शुद्ध गन्धक दो तोला । दोनों की कज्जली करे, फिर इसे भांगरे के रस से मर्दन करे । फिर ताम्रभस्म तीन माशे, लौहभस्म तीन माशा इन दोनों को उसी कज्जली में मिला घोट ले । फिर एक लोहे के पात्र में सब द्रव्यों को डाल कर आग पर रख और उसे लोहे की शलाका से चलावे । जब गर्म होने से कुछ कीचड़ के समान द्रव्य होजावे (ध्यान रहे अधिक आग न दें) तो फिर गोबर को लीप कर उस पर नया कोमल केले का पत्ता बिछा दें । अब इस पत्ते पर उस कीचड़ से हुए द्रव्य को उलटा दें और ऊपर से केले का पत्ता रख के चपटे पात्र से दबा दें । बस यह पर्पटी तय्यार होगई । अब इस पपड़ी को खरल में डाल कर चूर्ण करे । और संभालु के रस से १ दिन भर भावना देवे । फिर जयन्ती, त्रिफला, घीकुमारी, बांसा, भारंगी, त्रिकुटा, भांगरा, चीते की जड़, मुण्डी इनके काढ़े से पृथक् २ सात दिन तक भावना देवें । फिर इसे अङ्गारों पर रख कर कुछ स्वेदन करे । यह पर्पट नामक महारस कहाता है। इसकी चार रत्ती भर मात्रा खाकर ऊपर से हरड़, सोंठ, गिलोय का काढ़ा अनुपान में पिये तो श्लेष्मज्वर अच्छा होजाता है ॥ ६२—६६ ॥

वातपित्तान्तक रसः ।

मृतसूताभ्रमुस्तार्क–तीक्ष्णमाक्षिक तालकम् ।
गन्धकं मर्दयेत् तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृतारसैः ॥ ६७ ॥
धात्रीशतावरीद्रावैः द्रवैः क्षीरविदारिजैः ।

दिनं दिनं विभाव्याथ सिताक्षौद्रयुता वटी ॥ ६८ ॥
माषमात्रं निहन्त्याशु वातपित्तज्वरं क्षयम् ।
दाहं तृषां भ्रमं शोषं वातपित्तान्तकोरसः ॥
सिताक्षीरं पिवेच्चानु यष्टिक्वाथं सितायुतम् ॥ ६९ ॥

रस सिन्दूर, अभ्रकभस्म, नागर मोथे का चूर्ण, ताम्रभस्म, भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गन्धक, प्रत्येक समभाग लेकर मर्दन करै। फिर मुलट्ठी,किशमिश और गिलोय काढ़ वा स्वरस से पृथक् २ भावना दे। फिर आंवले के स्वरस शतावरी के स्वरस से पृथक् २ भावना दे फिर विदारीकंद के भावना दे। एक औषधी की भावना एक दिन भर दे। इसकी एक माषा भरकी बनाके रखे। इस गोली को शहद और घी से तो शीघ्रही वातपित्त ज्वर के वेग को कम करती है। क्षयरोग तृष्णा भ्रम,शोष इन रोगों को दूर करता है। इस रसका नाम वा त्तान्तक रस है। इस गोली को खाकर ऊपर से दूधमें मिश्री कर पीवें अथवा मुलट्ठीका काथ मिश्री मिलाकर पीवें॥६७ ६८

विश्वेश्वररसः।

मृतसूतार्क तीक्ष्णञ्च तालं गन्धञ्च कट्फलम् ।
मेषशृङ्गी वचा शुण्ठी भार्गी पथ्या च बालकम् ॥ ७०॥
धन्याकं मर्दयेत् तुल्यं पर्पटोत्थद्रवैर्दिनम् ।
मद्यं माषं लिहेत् क्षौद्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ ७१ ॥
रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च ।
काकमाचीरसं चानु सैन्धवेनयुतं पिवेत् ॥ ७२ ॥

रस सिन्दूर, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध

* [नोट—यहां "माषा" सुश्रुत का मान कर पांचरत्ति समझें न कि आठ रत्ति का। परन्तु पांचरत्ति भी मात्रा अधिक इसलिये आजकल इसकी दो दो रत्ति की गोली बना रखें॥

ायफल चूर्ण, मेढ़ासिंगी चूर्ण, बच का चूर्ण, सोंठ का चूर्ण, भार्गी का र्ण, हरड़ का चूर्ण, सुगन्ध बाला का चूर्ण, धनियां का चूर्ण इन ाब द्रव्यों को सम भाग लेकर पित्त पापड़ा के स्वरस से एक दिन ोटकर एक माषा भर की गोली बनायें। और उसे शहद से खावें ा कफपित्त के ज्वर तथा मदात्यय रोग को नाश कर देता है॥ ७०॥ ७१ ॥ इसका नाम विश्वेश्वर रस है इसे नागार्जुन ने कहा था। इस सके खाने के बाद मकोयका रस सेंधानमक डालकर पी लें ॥ ७२॥ मात्रा दो रत्ती की हैं]

शीतारिरसः ।

पारदं गन्धकं शुद्धं टङ्कणञ्च समं समम् ।
पारदात् द्विगुणं देयं जैपालं तुषवर्जितम् ॥ ७३ ॥
सैन्धवं मरिचं चिञ्चा–त्वग्भस्म शर्करा ऽपि च ।
प्रत्येकं सूतकं तुल्यं जम्बीरैर्मर्दयेद् दिनम् ॥ ७४ ॥
द्विगुञ्जस्तप्ततोयेन वातश्लेष्मज्वरापहः ।
रसः शीतारिनामायं शीतज्वरहरः परः ॥ ७५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। द्ध जमालगोटा दो तोला लें। सेंधा नमक, मरिच चूर्ण, इमली की ालकी भस्म, खांड, ये सब द्रव्य भी एक २ तोला पृथक् २ ले। पारा ौर गंधक की कज्जली पहले करें। फिर अन्य द्रव्य मिला लें। इस जम्बीरी का रस डाल कर दिन भर मर्दन करें। इसे दो रत्ति भर रम जल से खायें तो वातश्लेष्म ज्वर को नाश करता है। यह रस ीतारि नाम से प्रसिद्ध है और शीतज्वर नाश करने में त्कृष्ट है ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ *

---

* [नोट—"शर्करा" का अर्थ संस्कृत टीकाकार ने "विष" र दिया है। पर निघण्टु ने शर्करा का अर्थ विष नहीं माना । वल "वैद्यकशब्द सिन्धु" कोषमें "शर्करा" का अर्थ "विष" इसी का कार के प्रमाण पर केवल रसेन्द्रसार पुस्तक का प्रमाण देकर खाहै। परन्तु यह कोई प्रमाण नहीं। इस लिये निघण्टुमें "शर्करा"

चिन्तामणिरसः।

रसविषगन्धकटङ्कणताम्रयवक्षारकञ्च सव्योषम्।
तालकफलत्रयञ्च क्षौद्रं दत्त्वा शतं वारान् ॥ ७६ ॥
संमर्द्य रक्तिविमिता वटिका कार्या भिषग्वरैः प्राज्ञैः।
शुण्ठीपिष्टेन समं चैकां द्वे वाऽथवा तिस्रः ॥ ७७ ॥
सम्प्राश्य नारिकेलज-जलमनुपेयञ्च विमलमतिमाद्भि
सैन्धवजीरकसहितं तक्रं पथ्यं प्रयोक्तव्यम् ॥ ७८ ॥
प्रशमयति सन्निपातज्वरं तथा जीर्णक-ज्वरं विविध
प्लीहानं चाध्मानं कासं श्वासं वन्हिमान्द्यम्।
चिन्तामणी रसोऽयं किल स्वयं भैरवेण निर्दिष्टः ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष, शुद्ध सुहागा, ता यवक्षार, सोंठचूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपली चूर्ण, शुद्ध हड़ताल चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आंवला चूर्ण प्रत्येक द्रव्य सम भाग ले। पहले गन्धक की कज्जली करले फिर सब द्रव्य मिला कर भली प्रका लें। फिर कुछ शहद डालकर सौबार अर्थात् खूबही घोट क रत्ति भर की गोली बना कर रखे। इसकी एक दो वा तीन बलाबल देख कर खावें और ऊपर से हरे नारियल का पानी खाने की इच्छा होने पर सेंधा नमक और जीरा चूर्ण मिलाकर पीना इसमें पथ्य है ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ इससे सन्निपात ज्व जीर्ण ज्वर, तिल्ली, आध्मान, खांसी, श्वास और अग्निमाद्य रो

का अर्थ "विष" नहीं किया गया है। नांहीं विष के नामोंमें "श का पाठ है। "शर्करा" का वास्तविक अर्थ ,'खांड" करके इसे कर श्रीमान् नरेन्द्रनाथ मित्र आदि मान्य वैद्यों ने इसे व्यवहार देखा पूरा लाभ देता है। "शर्करा" का अर्थ "विष" मानं अनेक वैद्य इस रस को बनाते हैं। तब विष डालने से इस र मात्रा कम करदेनी चाहिये ॥]

ता है। यह चिन्तामणि रस स्वयं भैरव जी ने निकाला है ॥७६॥*

चिन्ता मणि रसः (प्रकारभेदेन)।

रसं गन्धं विषं लौहं धूर्त्तबीजन्तु तत्समम्।
द्वौभागौ ताम्रवन्हिश्च व्योषचूर्णश्च तत्समम् ॥ ८० ॥
जम्बीरस्य च मज्जाभिरार्द्रकस्य रसैर्युतम्।
अस्यानुपानेन वटी ज्वरे देया प्रयत्नतः ॥ ८१ ॥
गुञ्जाद्वयां वटीं खादेत् सद्यो ज्वरविनाशिनीम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ ८२ ॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च चातुर्थकविपर्य्ययम्।
असाध्यञ्चापि साध्यञ्च ज्वरञ्चवातिदुस्तरम् ॥ ८३ ॥
अग्निमान्द्ये ऽप्यजीर्णे च आध्मानेऽनिलसम्भवे।
अतिसारे च्छर्दिते च अरोचकनिपीड़िते ॥ ८४ ॥
ज्वरान् सर्वान् निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा।
चिन्तामणिरसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकः ॥ ८५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, लौहभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक२ ला लें। शुद्ध धतूरे के बीज चार तोला ले ताम्रभस्म दो तोला, ितामूल चूर्ण दो तोला, सोंठचूर्ण एक तोला चार माशे मिरचचूर्ण क तोला चार माशे, पीपल चूर्ण एक तोला चार माशे लें। पहले रे और गन्धक की कज्जली बनायें फिर सब द्रव्यों को मिला मर्दन र जल से दो रत्ति भर की गाली बना लें। इस गोली को जम्बीरी रस से और अदरक के रस के अनुपान से दें तो शीघ्र ही र का वेग कम होजाता है॥ वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपा-

*[नोट—जहां २ "शहद" मिला कर गोली बनानी लिखी हैं हां पर थोड़ा शहद और थोड़ा सा पानी मिला कर गोली बनायें ठीक बन जाती है और कठोर भी हो जाती है। केवल शहद डाल र बनाने से चपटी हो जाती है।]॥

तिक, ऐकाहिक, द्व्याहिक, चातुर्थक, चातुर्थकविपर्यय, अस
ध्या साध्य, अतिदुस्तर ज्वरको भी यह रस नाश कर
तथा अग्निमान्द्य, अजीर्ण, आध्मान, वायुरोग, अतिसार,
अरुचि, इन सब रोगों को दूर करता है। सब ज्वरों को इत
दूर करता है जिस प्रकार सूर्य भगवान् अन्धकार को दूर क
यह चिन्तामणि रस सर्व ज्वरों को नाश करने वाला है ॥८

अथ सन्निपातज्वरे ।

कुलबधूरसः ।

शुद्धसूतं मृतं ताम्रं मृतं नागं मनः शिला ।
तुत्थकं तस्य तुल्यांशं दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ८६ ॥
द्रवैश्चोत्तरवारुण्याश्चणमात्रा वटी कृता ।
सन्निपातं निहन्त्याशु नस्यमात्रेण दारुणम् ।
एषा कुलबधूर्नाम जले घृष्ट्वा प्रयोजयेत् ॥ ८७ ॥

शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, नागभस्म, शुद्धमनसिल, शुद्ध थोथा। प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर मर्दन करे। फिर इन्द्रायण के रसमें दृढ़ता से मर्दन करके चने के समान गो लें। इस गोली को जलमें घिस कर नाक में नस्य दें तो सन्निपात की मूर्च्छा दूर होती है ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ *

जयमङ्गलरसः । (अञ्जनम्)

भस्मसूताभ्रकं तारं मुण्डतीक्ष्णालमाक्षिकम् ।
वन्हिटङ्कणकव्योषं समं संमर्दयेत् दिनम् ॥ ८८ ॥
पाठा निर्गुण्डिकायष्टि-विल्वमूलकषायकैः ।
ततो मूषागतं रुद्ध्वा विपचेद् भूधरे पुटे ॥ ८९ ॥

---

*[नोट—इसको पानी में घिसकर आंख में अञ्जन लगा वृद्ध वैद्य व्यवहार करते हैं] ॥

माषैकं दशमूलस्य कषायेण प्रयोजयेत्।
अञ्जनेनाथवा नस्यात् सन्निपातं जयेद् ध्रुवम् ॥ ९० ॥

रसासिन्दूर, अभ्रकभस्म, चांदीभस्म, मुण्डलौहभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, शुद्धहड़ताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, चीताचूर्ण, शुद्धसुहागा, सोंठचूर्ण, मिरचचूर्ण, पीपलचूर्ण। इन में से प्रत्येकद्रव्य को समभाग लेकर, पाठा अर्थात् आकनादि, संभालु मुलट्ठी और बिलकी जड़के काढ़ों से पृथक् २ एक २ दिन मर्दनकरके मूषामें सम्पुटकर भूधरपुटमें पकावे। इसको एकमाषाभर लेकर दशमूलके क्वाथ से मिलाकर प्रयुक्त करे। इसको दशमूलके क्वाथ से मिलाकर अञ्जन में वा नस्यमें प्रयुक्त करे तो सन्निपातकी मूर्च्छा हटजाती है॥ [इसीको जयमङ्गल अञ्जन भी कहते हैं॥ ८८—९०॥

नस्यभैरवरसः।

मृतसूतार्कतीक्ष्णाग्निं टङ्कणं खर्परं समम्।
सव्योषमर्कदुग्धेन दिनश्च मर्दयेद दृढम्।
अर्कक्षीरयुतं नस्यं सन्निपातहरं परम् ॥ ९१ ॥

रसासिन्दूर, ताम्रभस्म, लौहभस्म, चीतामूल चूर्ण, शुद्ध सुहागा शुद्ध खपरिया, सोंठचूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपली चूर्ण। प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर मिला लें। इसमें आक का दूध डालकर दिन भर अच्छी प्रकार मर्दन करें। फिर इसे निकाल शीशी में सुरक्षित करे। इस नस्य भैरव रस को ले आक के दूध में मिला कर नस्य दें तो भयंकर सन्निपात की मूर्च्छा भी दूर होती है॥ ९१॥

अञ्जनभैरवरसः॥

सूततीक्ष्णकणागन्धमेकांशं जयपालकम्।
सर्वैस्त्रिगुणितं जम्बु—वारिणा च सुपेषितम्।
नेत्राञ्जनेन हन्त्याशु सर्वोपद्रवमुद्धतम् ॥ ९२ ॥

शुद्ध पारद, लौह भस्म, पिप्पली का चूर्ण, शुद्ध गन्धक। इनमें प्रत्येक द्रव्य एक २ तोलाले फिर शुद्ध [illegible] बारह तोले ले।

पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर के रस में दृढ़ता से मर्दन करे। इसका अञ्जन लगायें तो सब से युक्त सन्निपात भी दूर होता है ॥ ९२ ॥

अञ्जनोरसः ।

गन्धेशं लशुनाम्भोभिर्मर्दयेद् याममात्रकम् ।
तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत् प्रतिबोधकृत् ।
मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्द्राप्रलापकान् ॥ ९३ ॥

शुद्ध पारा तथा शुद्ध गन्धक को सम भाग लेकर कज्जली करें। इसको लशुन के स्वरस में घोटें। एक पहर घोटकर रखें। लसुन के ताज़ा स्वरस से मिलाकर नस्य दें तो सन्निपात की से रोगी जाग जाता है। इसी रस में काली मिरचों का चूर्ण कर नस्य दें तो तन्द्रा और प्रलाप को दूर करता है ॥ ९३ ताज़ा भी तुरन्त बनाके दे सकते हैं। कज्जली बनी रखी हो तो लसुन के रस से देने सेभी संज्ञा लाभ होता है तन्द्रा तथा प्र जिसे डाक्टर डिलीरियम Dilirium कहते हैं—में यह अ अच्छा काम करता है] ॥ ९३ ॥

अञ्जनो रसः (प्रकारभेदेन) ।

वाह्लीकं रसकं तुत्थं कर्पूरं मृतशुल्वकम् ।
कासमर्दरसैर्मर्द्यं दिनार्द्धं वटकीकृतम् ।
अञ्जनं ज्वरदाहघ्नं सर्वदोषनिसूदनम् ॥ ९४ ॥

हींग, रसक अर्थात शुद्ध खपरया, शुद्ध, नीलाथोथा ताम्रभस्म, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। कसौंदी के रससे आधा मर्दन करके गोली एक रत्ति भरकी बना लें। इसको अञ्जन ज्वर दाह को कम करता तथा सर्व दोषों को दूर करता है [" का अर्थ संस्कृत टीकाकार ने "फिटकरी" किया है। दोनों ही में डाले जाते हैं। परन्तु निघण्टुमें फिटकरी अर्थ नहीं लिखा है

त्रैलोक्यसुन्दरः रसः ।

रसगन्धकयोर्माषौ प्रत्येकं कज्जलीकृतौ ।

शक्रश्च मुषली चैव धुस्तूरं केशराजकम् ॥ ९५ ॥
देवदाली जयन्ती च तथा मण्डूकपर्णिका ।
एषां पत्ररसैः शाणैः शिलायां खल्लयेत् पुनः ॥ ९६ ॥
शोषयित्वा वटी कार्य्या त्वनेका राजिकोपमा ।
त्रिदोषजं ज्वरं हन्ति तथा च प्रचलकोष्ठकम् ॥ ९७ ॥
तप्ते तु नारिकेलस्य जलं देयं प्रयत्नतः ।
यदा वटी न कार्य्या तु तदा खाद्या तु रक्तिका ।
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम सन्निपातहरो रसः ॥ ९८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, दोनों को एक २ माषालेकर कज्जलीकरे। फिर कुटज, मूसली, धतूरा, केशराज, बन्दालडोडा, जयन्ती, मण्डूकपर्णी इनके पत्तों के रस पृथक् २ आधा २ तोलालेकर क्रमशः खरल करे। इसकी राई के समान गोलियां बना रखे। ये गोलियां देने से त्रिदोषज ज्वरको तथा दस्तों को बन्दकरतीहैं। ताप अधिकहो तो नारियल का पानी देना चाहिये। यदि गोली न बनाई हों तो एक २ रत्तिभर मात्रादेने से सन्निपात दूर होताहै। यह त्रैलोक्यसुन्दररस है॥ (इसकी मात्रा एकरत्तिकीही देवे। किसीपुस्तकमें "प्रबलकोष्ठकम्" पाठभीछपा है। परन्तुअन्यरसग्रन्थों में "प्रचलकोष्ठकम्" यह पाठहै और यही ठीकभी है॥) ९५—९८॥

स्वच्छन्दभैरव रसः।

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धश्चैकत्र कारयेत् ॥ ९९ ॥
रुद्रजटा निसिन्धुश्च नागदाऽऽमलकी तथा ।
विषकण्टालिका चैषां स्वरसं शाणमात्रकम् ॥ १०० ॥
दत्त्वा संशोध्य सम्मर्द्य कार्य्या मुद्गसमा वटी ।
आर्द्रकस्य रसैः पेया जीरकश्चानु भक्षयेत् ॥ १०१ ॥

स्वच्छन्दभैरवाख्योऽयं सन्निपातोग्रचहृत् मतः ।
ग्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेदविचारतः ॥ १०२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक एक २ शाण लेकर कज्जलीकरे, माक्षिकभस्म एकशाण उसी में डालकर घोटे। फिर रुद्रजटा, ईश्वरीलता, संभालु, हरड़, आमला, विषकांटलीवृत्त इनका एक २ शाण पृथक् २ डालकर खरलकरें। मूंगके समान गोली, एक गोलीको अदरकके रससे खाकर ऊपरसे जीरा चबावें। स्वच्छन्दभैरवरस सन्निपातकी उग्रताको कमकरता है और ग्रहणी सूतिकारोगको दूर करता है ॥ ९९---१०२ ॥

अथ शीताङ्गसन्निपातलक्षणम् ।

शीतं शरीरं शीताङ्गे छर्द्यतीसारकम्पनम् ।
क्षुद्विघातोऽङ्गमर्दश्च हिक्का श्वासः क्लमो वमिः ।
सर्वाङ्गशिथिलत्वञ्च सन्निपाते प्रजायते ॥ १०३ ॥

शरीर ठण्डाहो जाये, वमन, अतिसार, और कंपकंपीहो, नाश होजाये, अङ्ग टूटें, हिचकीआवें, श्वास, क्लम वमन, शिथिल होजायें। ऐसे लक्षण हों तो समझें शीताङ्गसन्निपात ["क्लमो वमिः" के स्थानमें "श्रमोऽरतिः" थकान और यह भी पाठहै ॥ १०३ ॥

आनन्दभैरवो रसः ।

हिङ्गुलश्च विषं व्योषं मरिचं टङ्कणं कणा ।
जातीकोषसमं चूर्णं जम्बीरद्रवमर्दितम् ।
रक्तिमानां वटीं कुर्यात् खादेदार्द्रकसंयुताम् ॥ १०४ ॥
वटीद्वयं त्रयं वापि सन्निपाते सुदारुणे ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति तथाऽतीसारनाशनः ॥ १०५ ॥
जीर्णज्वरहरश्चैव तथा सर्वाङ्गभेदकः ।
आमवातादिरोगञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥ १०६ ॥

शुद्ध शिंगरफ़, शुद्धविष, सोंठचूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपलचूर्ण, शुद्धसुहागा, मरिचचूर्ण, पीपल चूर्ण, जावित्री चूर्ण प्रत्येकद्रव्य सम-भाग पीसकर जम्बीरी नींबू के रसमें पीसकर एकरात्तिप्रमाण की गोली बनाके अदरकके रससे खावें। भयंकर सन्निपातमें इसकी दो या तीन गोलीतक भी देसकते हैं। इससे आठोंप्रकारका ज्वर तथा अतीसार नाशहोताहै तथा जीर्ण ज्वरदूरहोता है। तथा सब जोड़ों को ढीलाकरता है। और आमवातादि रोगों को भी निश्चित नाश करताहै ॥ १०४—१०६ ॥

आनन्दभैरवी रसः।

विषं त्रिकटुकं गन्धं टङ्कणं मृतशुल्वकम् ।
धुस्तूरस्य च वीजानि हिङ्गुलं नवमं स्मृतम् ॥ १०७ ॥
एतानि समभागानि दिनैकं विजयाद्रवैः ।
मर्दयेत् चणकाभान्तु वटीञ्चानन्दभैरवीम् ॥ १०८ ॥
भक्षयेच्च पिवेच्चानु रविमूलकषायकम् ।
सव्योषं हन्ति नो चित्रं सन्निपातं सुदारुणम् ॥
शीताङ्ग सन्निपाते वा सामान्ये वा त्रिदोषजे ॥ १०९ ॥
धन्याकपिप्पली शुण्ठी–कटुकी–कण्टकारिका,
पिप्पलीसंयुतं क्वाथं चतुर्गुञ्जा च पर्पटी ।
सन्निपातज्वरं हन्ति वटिकाऽऽनन्दभैरवी ॥ ११० ॥
मूलञ्च कटुरोहिण्याः समं विल्वं सजीरकम् ।
दध्ना पिष्टं पिवेच्चानु वटीं चानन्दभैरवीम् ॥ १११ ॥
सन्निपातातिसारघ्नीं पथ्यं शाकविवर्जितम् ।
आनन्दभैरवीं पीत्वा क्वाथं वरुणसम्भवम् ।
पाययेदश्मरीं हन्ति सप्तरात्रात् न संशयः ॥ ११२ ॥
वागुजीसम्भवैस्तैलैर्वटीश्चानन्दभैरवीम् ।
लेहयेत् निष्कमात्रान्तु गलत्कुष्ठञ्च नाशयेत् ॥ ११३ ॥

दधिमस्तुसिताक्षौद्रैः वटीश्चानन्दभैरवीम् ।
भक्षयेत् मूत्रकृच्छ्रार्त्तो यवक्षारं सिताऽन्वितम् ॥ ११४॥
गोदुग्धं क्वथितश्चानु शीतलं मधुना पिबेत् ।
गुञ्जामूलं पिबेत् क्षीरैरनुपानं प्रशस्यते ॥ ११५ ॥
अनेन चानुपानेन वटिकाऽऽनन्दभैरवी ।
देया रुद्रजटाक्षौद्रैः सर्वमेहप्रशान्तये ॥ ११६ ॥

शुद्धविष, सोंठचूर्ण, मिरचचूर्ण, पीपलचूर्ण, शुद्धगन्धक, सुहागा, ताम्रभस्म, शुद्धधतूरे के बीज, शुद्धहिंगुल ये नौ द्रव्य भागलेकर एक दिन भांगके रस में खरलकरके चने के समान बनावें । इसका नाम आनन्दभैरवी बटी है । इसगोली को ख ऊपरसे आककी जड़का क्वाथ त्रिकुटेका चूर्ण मिलाकर पीः भयानक सन्निपात दूर होता है । शीताङ्ग सन्निपात में, सामान्य में वा त्रिदोषजसन्निपात में भी यह लाभ करती है ॥ १०७—॥ धनियां, पीपल, सोंठ, कुटकी, कण्टकारी, पिप्पली इनके को पीवे और साथमें रसपर्पटी चाररत्ति खावे अथवा आनन्द वीकी गोलीखावे तो सन्निपात दूर होता है ॥ ११० ॥ कुटकी की जड़ के साथ बिल और जीरा दहीमें पीस कर अ भैरवी के पीछे खावें तो सन्निपात और अतिसार को नाश करत इस में शाक छोड़दे । अन्य पथ्य खावे ॥ आनन्दभैरवीको ख ऊपर से वरुण का क्वाथ पिलावें तो सात दिन में पथरी दूर हो है इसमें संशय नहीं ॥ १११ ॥ ११२ ॥ बाबची के तेल से आ भैरवी वटी को एक निष्कभर चाटे तो गलत्कुष्ठ दूर हो जाता है ॥ दही के पानी में मिश्री और शहद मिलाकर आनन्दभैरवी के पीयें तो मूत्रकृच्छ्र रोगदूर हो जाता है ॥ अनन्दभैरवी के पीछे पान में गौ के दूध को उबाल कर उसे ठण्डा कर उसमें यवक्षार और मिश्री मिला कर पीवें तो भी मूत्रकृच्छ्र दूर होता तथा आनन्दभैरवी के साथ रत्ति की जड़ दूध से पीवे और लता शयद में मिलाकर चाटे तो सब प्रमेहनाश होते हैं ॥११४-

प्राणेश्वरो रसः।

शुद्धसूतं तथा गन्धं सूतार्द्धं विषसंयुतम्।
समं तत् मर्दयेत् ताल-मूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥११७॥
पूरयेत् कूपिकाऽन्ते च सन्निरुध्य विशोषयेत्।
सप्तभिर्मृत्तिकावस्त्रैर्वेष्टयित्वा तु शोषयेत् ॥११८॥
पुटेत् कुम्भीप्रमाणेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
गृहीत्वा कूपिकायाश्च मर्दयेच्च दिनं ततः ॥ ११९ ॥
अजाजी जीरकं हिङ्गु-सर्जिकाटङ्गणैर्युतम्।
गुग्गुलुः पञ्चलवणं यवक्षारोयमानिका ॥ १२० ॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समांशतः।
एषां कषायेण पुनर्भावयेत् सप्तधाऽऽतपे ॥ १२१ ॥
नागवल्लीदलयुतं पञ्चगुञ्जं रसेश्वरम्।
दद्यात् नवज्वरे तीव्रे कोष्णं वारि पिबेदनु ॥ १२२ ॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित्।
शीतज्वरे दाहपूर्वे गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥ १२३ ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात् कुर्याच्चन्दनलेपनम्।
तापोद्रेकप्रशमनो नानाऽतीसारनाशनः।
भवेच्च नात्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥ १२४ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगन्धक एक तोला, शुद्धविष आधा तोला लें। पहले पारे गन्धककी कज्जली बनालें, फिर अन्यद्रव्य मिलाके मूसलीकेरससे तीन दिन खरल करें॥ ११७॥ फिर उसे निकालके एक काचकूपी में डाल दें और उसकूपी का मुंह बंद कर तथा कूपी पर सात कपड़ामिट्टी करके सुखालें (शोधयेत् "पाठ संगत नहीं यहां "शोषयेत,, संगत है) ॥ ११८॥ फिर बालुकायन्त्र में रख चारों और गजपुटकी आंच देकर स्वांगशीतल होने पर निकालले और एक दिन पीसे ॥ ११९ ॥ फिर कालाजीरा, श्वेतजीरा,

हींग, सज्जी, सुहागा, गूगल, पांचो नमक, यवक्षार, अजवा
मिरच, पीपल इन में से प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। कुल मिला
उतना लें जितनी काचकूपी में से दवाई निकली है। फिर जीर
लेकर पीपल तक इन पंद्रह द्रव्यों को ले, इनसे दशगुणा जल
कर पकावें शेष आठवां भाग बचने पर उतारें। फिर उस कू
निकली दवाई में इस क्वाथ की भावना देवें। सात वार भावना
धूप में सुखावें ॥ १२० ॥ १२१ ॥ इस रसको पांच रत्ति लेकर
रस से नये तेज ज्वर में दें और अनुपान में गर्म पानी पियें।
ज्वर वेग कम होगा ॥ ११२ ॥ यह प्राणेश्वर रस सन्निपात की
को कम करता है। शीतज्वरमें, दाहपूर्वज्वरमें, गुल्म, त्रिदोष
में लाभ करता है ॥ १२३ ॥ इसके सेवन के समय पथ्य में
भोजन कर सकताहै। और यदि ताप अधिक हो तो शरीर या
पर चन्दन का लेप करे। इस से ताप की अधिकता कम हो
है और नानाप्रकारके अतीसार नाश होते हैं। स्वास्थ्य ठी
जाता है ॥ १२४ ॥

सन्निपातभैरवरसः।

ताम्रं गन्धं रसं श्वेत–गुञ्जामरिचपूतनाः।
समीनपित्तजैपालान् तुल्यानेकत्र मर्दयेत् ॥ १२५ ॥
गुञ्जाचतुष्टयश्चास्य नवज्वरहरं परम्।
ज्वराङ्कुशः सन्निपात–भैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ १२६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म, सफेद रत्ति, मिरच चूर्ण,
चूर्ण, शुद्ध मछली का पित्त, शुद्ध जमालगोटा प्रत्येक द्रव्य सम
लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करें। फिर सबको एकत्र कर
कर चार रत्ति भर की मात्रा दें तो नये ज्वर को दूर करता है
सन्निपातभैरवरस ज्वर नाशक है। [मात्रा एक रत्ति
पर्याप्त है] ॥ १२५ ॥ १२६ ॥

शीतभञ्जीरसः।

रसो हिङ्गुलगन्धश्च जैपालं सम्मितं त्रिभिः।

दन्तीक्वाथेन संमर्द्य रसो ज्वरहरः परः ॥ १२७ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम्।
नवज्वरं महाघोरं नाशयेद् याममात्रतः ॥ १२८ ॥
शर्करादधिभक्तञ्च पथ्यं देयं प्रयत्नतः।
शीततोयं पिबेच्चानु इक्षुमुद्गरसो हितः।
शीतभञ्जी रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकः ॥ १२९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध हिंगुल, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला तीनों के समान शुद्ध जमालगोटा तीन तोला लें। पहले पारे गन्धक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिला कर घोटें। दन्ती मूल के क्वाथ से मर्दन कर दो रत्ति भरकी गोली बनालें। को दो रत्ति भर लेकर अदरक के रस के साथ देने से महाघोर ज्वर के ताप को एक पहर भर में कम कर देता है ॥ पथ्य में ड, दही और चावल देना चाहियें ॥ गरमी प्रतीत हो तो ठण्डा , गन्ने का रस, मूंग का रस ये सब हितकारी है। यह शीतभञ्जी ज्वरोंको नाश करता हैं। (मात्रा एकरत्ति की दें) ॥१२७-१२९॥

उन्मत्तरसः।

रसं गन्धञ्च तुल्यांशं धुस्तूरफलजैर्द्रवैः।
मर्दयेत् दिनमेकन्तु तुल्यं त्रिकटुकं क्षिपेत् ॥ १३० ॥
उन्मत्ताख्यो रसो नाम नस्ये स्यात् सन्निपातजित्।
सन्निपातार्णवे मग्नं योऽभ्युद्धरति रोगिणम्।
कस्तेन न कृतो धर्म्मः काञ्च पूजां न सोऽर्हति ? ॥१३१॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक एक २ तोला लेकर कज्जली करे रेके फल के रस में एक दिन घोटे। फिर सोंठ चूर्ण दो तोला, ल चूर्ण दो तोला, तथा मिरच चूर्ण दो तोला डालकर मर्दन । इसको उन्मत्त रस कहते हैं। इसकी नस्य दें तो सन्निपात की र्छा हटती है ॥ सन्निपात रूपी समुद्र में डूबे हुए रोगी को जो ाकर बाहर निकाल देता है उसने किस धर्म का पालन नहीं

किया ? अर्थात् उसने सब धर्मों का पालन किया है और
की सबसे अधिक पूजा करनी चाहिये ॥ १३० ॥ १३१ ॥

मृतसञ्जीवनो रसः ।

म्लेच्छस्य भागाश्चत्वारो जैपालस्य त्रयो मताः ।
द्वौ भागौ टङ्कणस्यैव भागैकमभृतस्य च ॥ १३२ ॥
तत्सर्वं मर्दयेत् श्लक्ष्णं शुष्कं यामं भिषग्वरः ।
शृङ्गवेराम्बुणा देयो व्योषचित्रक सैन्धवैः ॥ १३३ ॥
माषद्वयमितस्तापं हरत्येष विनिश्चयः ॥ १३४ ॥
घनसारेण सारेण चन्दनेन विलेपनम् ।
विदध्यात् कांस्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं भिषक् ।
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजयेदिक्षुसंयुतम् ॥ १३५ ॥
सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विषमज्वरे ।
आमवाते वातशूले गुल्मे प्लीह्नि जलोदरे ॥ १३६ ॥
शीतपूर्वे दाहपूर्वे विषमे सततज्वरे ।
अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः ।
मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातोऽयं रसायने ॥ १३७ ॥

ताम्रभस्म चार तोला, शुद्ध जमालगोटा तीन तोला, शुद्ध
दो तोला, शुद्ध विष एक तोला, इन सबको खरल में आ
करके पीस ले। इसको अदरक के रस और सोंठ, मिरच, पीपल
नमक इनके चूर्ण से मिला कर कुल मिलित मात्रा दो माषा भ
ता निश्चय से ज्वर के ताप को कम करता है ॥ १३२ ॥ १३३
यदि दाह अधिक हो तो कपूर और चन्दन को घिसकर शरीर
मस्तकादि पर लेप करें। और कांसी के पात्र में रोगी को
कर स्नान करावे। शाली, चावल छाछ सहित खिलावे, गन्ने
पिलावे। महा घोर सन्निपात, त्रिदोषज ज्वर, विषमज्वर आ
वातशूल, गुल्म, तिल्ली, जलोदर, शीत पूर्वज्वर, दाहपूर्वज्वर

र, अग्निमांद्य, वातरोग, इन्हें नाश करता है। यह रस रसायन
र्म में मृतसञ्जीवन नाम से प्रसिद्ध है इस रसकी मात्रा एक रत्ति
पर्याप्त है ॥ १३५ ॥ १३६ ॥ १३७ ॥

स्वल्पबडवानलरस।

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च।
विषं तत्तुल्यकं दद्यात् तत्सर्वं श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ १३८ ॥
लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत्।
रक्तिकाद्वितयं वाऽपि त्रितयं वा प्रकल्पयेत् ॥ १३९ ॥
दोषे त्र्योषसमायुक्तो त्रिदोषशमनो भवेत्।
भक्षयेत् पवने चोग्रे वडवानलसंज्ञितम् ॥ १४० ॥

ताम्रभस्म एकभाग, मरिचचूर्ण एकभाग, शुद्धविष एकभाग
ों को मर्दन करके लाङ्गली अर्थात् कलिहारी के रस के साथ
ल करके गजपुटमें पाक करे। इसकी दो रत्तिया तीन रत्ति की
ा त्रिकुटा के साथ देने से त्रिदोषनाश होते हैं। यदि वात वहुत
ं हो तो इसे देवें इसका नाम स्वल्प वड़वानल रस है॥ (इस
मात्रा आधी रत्ति दें)॥ १३८—१४० ॥

बृहद्वडवानलो रसः।

सूतकं गन्धकञ्चैव हारितालं मनःशिला।
अभ्रकं वत्सनाभश्च दारु जङ्गमजं विषम् ॥ १४१ ॥
जैपालात् सार्द्धशतकं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत्।
मत्स्यमाहिषमायूर-च्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥ १४२ ॥
वटिकां शीततोयेन कुर्य्यात् गुञ्जाप्रमाणतः।
वड़वानलनामायं नारिकेलजलेन वै।
भक्षयेत् सान्निपातार्त्तो मुक्तस्तस्मात् सुखी भवेत् ॥१४३॥

ुद्ध पारा,शुद्धगन्धक,शुद्धहड़ताल,शुद्धमनासिल,अभ्रकभस्म, शुद्ध
नाभ,शुद्धदारुमुजविष,शुद्ध सर्पविष,प्रत्येक एकरतोला लें,डेढ़सौ
शुद्ध जमालगोटे के लें। पहले कज्जली करें। फिर अन्यद्रव्य

मिला सब का चूर्ण बनाकर मछली, भैंस, मोर, बकरी इ
में इस को भावना दें और फिर एक २ रत्ती की गोली
शीतल जल से खिलावें। इस रस का नाम बड़वानल
इसको नारियल के रस से खाने से सन्निपात की मूर्च्छा
दि छूट जाते हैं॥ [इसकी मात्रा सरसों के समान होगी]

सूचिकाभरणो रसः।

रसगन्धकनागश्च विषं स्थावरजङ्गमम्।
मात्स्यवाराह मायूर–च्छागपित्तैर्विभावयेत् ॥१४४॥
सूचिकाभरणो नाम भैरवेण प्रकीर्त्तितः।
सूचिकाग्रेण दातव्यः सन्निपातनिवर्हणः ॥१४५॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मीठातेलिया, शुद्ध सांपका विष
द्रव्य समभाग लें। पहले पारे और गन्धक की कज्जली क
अन्यद्रव्यों को मिला कर खरल करें। और मछली, सूअर, मो
बकरी के पित्तों से भावना देकर रखें। इस रस का नाम
भरण रस है। (अर्थात सूई की नोक से शरीर में दिया जा
है)। इसे भैरव ने कहा है। सूई की अगली नोक पर जित
उतना रस खाने को देने से या सिर के बाल मुंडवाकर थो
देकर खून में देने से सन्निपात की मूर्च्छा दूर होती है। इसे
अदरक के रस के साथ देते हैं गर्मी लगे तो गन्ने का रस दें॥ १४

पञ्चानन रसः।

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिचं दैत्येन्द्र रक्ते रविः।
पक्षौ सागर लोचनं शशियुगं भागो ऽर्कसङ्ख्यान्वि
खल्वे तत् परिमर्दितं रविजलैर्गुञ्जैकमात्रं ददेत्।
सिंहोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलनः पञ्चाननाख्यो रसः॥

शुद्ध वत्सनामविष (पक्षौ) दो भाग, मिरचका चूर्ण (
चारभाग, शुद्ध गन्धक (लोचनं) तीन भाग, (रक्त) शुद्ध
(शशि) एक भाग, ताम्रभस्म (युगं) दो भाग लें। सब द्र

र (अर्कसंख्या) बारह भाग लेकर सबको पीसें फिर आक के दूध घोटकर एक रत्ति मात्रा दें तो यह पञ्चानन रस ज्वर रूपी हाथी अभिमान को दूर करने के लिये सिंह के समान है ॥ [ज्वर जब थर्मामीटर के १०५° अंश पर या इससे ऊपर तापांश पर हो तो इस रस को खांड आदि से मिला करदें तो ताप कमहो जायगा ॥ १४६ ॥

त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यो रसः ।

रसेन गन्धं द्विगुणं कृशानो रसैर्विमर्द्याष्टदिनानि घर्मे ।
रसाष्टभागन्त्वमृतञ्च दद्यात् विमर्दयेद्वन्हिरसेन किञ्चित् ॥१४७॥
पित्तैस्तु संभावित एष देयःत्रिदोषनीहारविनाशसूर्य्यः ॥१४८॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगन्धक दो तोला लें.दोनों की कज्जली करके चीते के रस से आठ दिन तक धूप में घोटे। फिर शुद्ध वत्सनाभ विष डेढ़ माषा डालकर चीते के रस से मर्दन करे। फिर पांचों पित्तों से भावना देकर इस रसको एक रत्ति भर दे तो यह त्रिदोषनीहारविनाशसूर्यरस सन्निपात को दूर करता है ॥ १४७ ॥ १४८ ॥

रस राजेन्द्रः रसः ।

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा ।
अभ्रं नागं पलं वङ्गं पलं गन्धकतालकम् ॥१४९॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मर्दयेत् काकमाच्याश्च आर्द्रकस्य रसेन च ॥१५०॥
मात्स्यवाराहमायूर—च्छागमाहिषपित्तकैः ।
मर्दयेद् भिन्नभिन्नश्च त्रिकुटोरम्बुभिस्तथा ।
सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंकृतः ॥१५१॥
गुञ्जामात्रं रसं दद्यात् सुरसारससंयुतम् ।
मेघवारिप्रवाहेण धारितं वारि मस्तके ॥ १५२ ॥
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ।
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेकन्तु दापयेत् ॥१५३॥

ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ।
पावकेन यथाशीतमनेन च तथा ज्वरः ॥१५४॥

शुद्धपारा एकपल, ताम्रभस्म एकपल, लौहभस्म एकपल अ
एकपलनागभस्म एकपल, वंगभस्म एकपल, शुद्धगंधक एक
हड़ताल एकपल, शुद्धविष एकपल लें । प्रथम पारे और
की कज्जली करें. फिर अन्य द्रव्य मिलाकर चूर्ण करें । फिर
मकोय के रस से. अदरक के रस से, मछली के पित्त से, सू
पित्तसे, मोर के पित्तसे, बकरे के पित्तसे तथा भैंसके पित्तसे
खरल करे । तथा त्रिकुटा के क्वाथ से मर्दन करके इस की ए
भर की गोली बनाले । इस का नाम रसराजेन्द्र है । यह श
महाराज का बनाया हुआ है । इस रसको एकरत्तिभर लेकर
के रस से दें । और सिरपर धार बांधकर जल गिरावें । जब
खाने से दाह बहुत ही हो तो खांड दें तथा दही वाला भोजन
दें । जिस प्रकार महादेवजी ने कामदेव को भस्म कर दि
जिस प्रकार से कृष्णभगवान ने दानवों का नाश किया था
अग्नि से शीत नाश हो जाता है । इसी प्रकार इस रस के
ज्वर नाश हो जाता है । (इस से ज्वर की तीव्रता कम हो
है) ॥ १४९—१५४ ॥

मृतसञ्जीवनो रसः ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं खल्वे तत् कज्जलीकृतम् ।
अभ्रलौहकयोर्भस्म ताम्रभस्म समं समम् ॥ १५५ ॥
विषं ताल वराटश्च शिलाहिङ्गुलचित्रकान् ।
हस्तिशुण्डी चातिविषा त्र्यूषणं हेममाक्षिकम् ॥ १५६ ॥
चूर्णं विमर्दयेद्द्रावैरार्द्रकस्य दिनत्रयम् ।
निर्गुण्डीविजयाद्रावैस्त्रिदिनं मर्दयेत् पुनः ॥ १५७ ॥
काचकूप्यां निवेश्याथ वालुकायन्त्रके पचेत् ।
द्वियामान्ते समुद्धृत्य मर्दयेदार्द्रकद्रवै: ॥१५८॥
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽयं शङ्करोदितः ।
मृतोऽपि सन्निपातार्त्तो जीवत्येव न संशयः ॥ १५९ ॥

शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगन्धक दो तोला, दोनों की कज्जली रे । फिर अभ्रकभस्म दो तोला, लोहभस्म दो तोला, ताम्रभस्म दो ोला, शुद्धविष दो तोला, शुद्धहड़ताल दो तोला, कौड़ीभस्म दो ाला, शुद्धमनशिल दो तोला, शुद्ध हिंगुल दो तोला, चीताचूर्ण दो ोले, हाथीसुंडीकाचूर्ण दो तोले, अतीस दो तोले, सोंठचूर्ण दो तोले, मिरचचूर्ण दो तोले, पीपलचूर्ण दो तोले, स्वर्णमाक्षिकभस्म दो तोले। न सब के चूर्ण को मिलाकर तीन दिन तक अदरक के रस में ोटें । फिर तीन दिन संभालु के रस में घोटें, फिर भांग के रस में ीन दिन घोटें । फिर इस को एक काच की कूपी में भर कर बालुका-न्त्र में पकावें । दोपहर तक पकाने के पीछे स्वांगशीतल होने पर से निकाल अदरक के रस से घोट कर एक रत्ति प्रमाण की गोली नालें । यह मृतसञ्जीवन नामका रस शङ्कर महाराज ने कहा है । स से मृत्यु मुख में पड़ा हुआ मूर्छित सान्निपात का रोगी भी जी उठता है । इस में कोई संशय नहीं । [संज्ञा प्रबोधन के लिये यह स उत्तम है] ॥ १५५—१५६ ॥

गन्धक कज्जलीविधि ।

कण्टकारी सिन्धुवारस्तथा नाटकरञ्जकम् ।
अमीषां रसमादाय कृत्वा खर्परखण्डके ॥१६०॥
प्रक्षिप्य गन्धकं तत्र ज्वालां मृद्वाग्निना ददेत् ।
गन्धके स्नेहतापन्ने पारदं तत्समं क्षिपेत् ॥१६१॥
मिश्रीकृत्य ततो द्वाभ्यां द्रवं तमवतारयेत् ।
आमर्दयेत् तथा तन्तु यथा स्यात् कज्जलप्रभम् ॥१६२॥
ततस्तु रक्तिकामस्य जीरकस्य च माषकम् ।
माषैकं लवणस्यापि पर्णे कृत्वा प्रदापयेत् ।
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे जलमुष्णं पिवेदनु ॥१६३॥
छर्द्यां शर्करया दद्यात् सामे दद्यात् तथा गुडम् ।
क्षये च च्छागदुग्धं स्यादनुपानं प्रयोजितम् ॥१६४॥

रक्तातिसारे कुटज-मूलवल्कलजं रसम् ।
रक्तक्षये तथा दद्यादुडुम्बरभवं रसम् ॥१६५॥
सर्वव्याधिहरश्चायं गन्धकःकज्जलीकृतः ।
आयुर्वृद्धिकरश्चायं मृतश्चापि प्रबोधयेत् ॥१६६॥
ये रसाः पित्तसंयुक्ताः प्रोक्ताः सर्वत्र शम्भुना ।
जलसेकावगाहैश्च बलिनस्ते तु नान्यथा ।
यथालाभेन पित्तेन रसाः सर्वे भवन्ति हि ॥१६७॥

छोटी कटेली, संभालु, नाटाकरञ्ज, इन सब के समभा
को लेकर एक मिट्टी के छोटे पात्र में डाले और इस में शुद्ध आ
सार गंधक डालकर आग पर पात्र को रख दे नीचे से
ज्वाला दे। जब गन्धक पिघल जाये तभी गंधक के बराबर
पारा उस पात्र में डाल दे। फिर दोनों को मिलाकर उस पा
नीचे उतार लेवे। अब इस रस के सहित पारा गन्धक को त
घोटता रहे जब तक कज्जल के समान न हो जाये। यह पारे
की कज्जली हुई ॥ १६०—१६२ ॥ इस कज्जली को एक र
लेकर एक माषा जीरा चूर्ण और एक माषा नमकके चूर्ण
कर पान में रख कर खावें और ऊपर से गर्म जल पियें तो
जनित सन्निपात ज्वर अच्छा होता है ॥ १६३ ॥ यदि ज्वर में
भी होता हो तो इस को खांड के साथ देवे। सामज्वर में इ
के साथ देवे। क्षयरोगमें बकरी के दूध के अनुपान से दें॥
रक्तातीसार में कुड़े की जड़ और छाल के रस से दें। य
निकलताहो (रक्तार्श याछाती से खून आदि निकले) तो गू
रस से देवें ॥ १६५ ॥ यह गन्धक की कज्जली सबरोगों को दू
वाली है। इस से आयु वृद्धि होती है। तथा मृतक के समान
सन्निपात रोगी को दें तो उसे भी होश में ले आती हैं॥ १६६

महादेवजीने जो २ रस पित्तों से भावना देने को कहे है
सब को देने के बाद रोगी पर जल छिड़कना, पानी से स्नान
पानी में बिठाना आदि कर्म अवश्य कराने चाहियें। ऐसा

से वे रस बली होकर अपना पूरा प्रभाव दिखाते हैं। इस के
ना उनका पूराप्रभाव नहीं होता। सर्वत्र ही ऐसे पित्तवाले रसों
ये कर्म करने चाहियें नहीं तो मत्स्यपित्तादिभावित महाउष्ण
षध के सेवन से रोगी की अनिष्ट सम्भावना होती है ॥ १६७ ॥

वेतालो रसः ।

रसं गन्धं विषश्चैव मरिचाऽऽलं समांशिकम् ।
शिलायां मर्दयेत् तावद् यावज्जायेत कज्जलम् ॥ १६८ ॥
गुञ्जामात्रं प्रयोक्तव्यं हरेद्द्वादशसंज्ञकम् ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु सन्निपातं सुदारुणम् ॥१६९॥
दन्तपङ्क्तिर्दृढा यस्य लोचने भ्रान्ततारके ।
चलिते चेन्द्रियग्रामे वेतालं विनियोजयेत् ॥१७०॥
म्लानेषु लिप्तदेहेषु मोहग्रस्तेषु देहिषु ।
दातुमर्हति वेतालं यमदूतनिवारकम् ॥१७१॥

शुद्धपारा एकभाग, शुद्ध गन्धक एकभाग, दोनों की कज्जली
। फिर शुद्धविष, शुद्धहड़ताल तथा मरिच चूर्ण प्रत्येक एक २
डाल कर मर्दन करके कज्जल के समान करलें ॥ १६८ ॥ इस को
ल रस कहते हैं। इस रस को एक रत्ति प्रमाण देने से साध्य
साध्य सन्निपात दूर होता है। बारह प्रकार के सन्निपात इस से
होते हैं ॥ १६९ ॥ जिस सन्निपात रोगी की दन्तपंक्ति जकड़ कर
गई हो और नेत्रों की पुतलियां स्थान से भ्रष्ट होकर ऊपर
गई हों तथा सब इन्द्रियां अपनी शक्ति छोड़ चुकी हों। वहां पर
ल रस का प्रयोग करे ॥ १७० ॥ जब रोगी श्रीहीन, लिपालिपे
रवाला, मोह मूर्च्छाग्रस्त हो चुका हो तब इस वैतालरस को
। यह मृत्यु मुख से रक्षा करता है ॥ (तथा ज्वर की तीव्रता को
करता है) ॥ १७१ ॥

चन्द्रशेखरः ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा ।
चतुस्तुल्या शिला योज्या मत्स्यपित्तेन भावयेत् ॥१७२॥

त्रिदिनं मर्दयेत् तेन रसोऽयं चन्द्रशेखरः ।
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैर्देयं शीतोदकं पुनः ॥१७३॥
तक्रभक्तञ्च वृन्ताकं भिषक् तत्र प्रयोजयेत् ।
त्रिदिनात् श्लेष्मपित्तोत्थमत्युष्णं नाशयेत् ज्वरम् ॥

शुद्धपारा; शुद्धगन्धक, मरिचचूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक २
शुद्धमनशिल चार तोला ले। पहले कज्जली करे। फिर अ
मिला कर मत्स्य पित्त से भावना दे ॥ १७२ ॥ तीन दिन तक
इस प्रकार घोट कर दो रत्ति प्रमाण गोली बनावे। इसे अ
रस से खावे। दाह हो तो ठण्डा जल पीले ॥१७३॥ वैद्य रोगी
में छाछ, चावल और बैंगन की भाजी दे। तीन दिन में श्ले
अतिउष्ण ज्वर के वेग को यह रस कम करता है ॥ (इस
आधी रत्ति दें) ॥ १७४ ॥

कस्तूरीभैरवो रसः ।

हिङ्गुलश्च विषं टङ्कः जातीकोषफलं तथा ।
मरिचं पिप्पली चैव कस्तूरी च समांशिका ।
रक्तिद्वयं ततः खादेत् सन्निपाते सुदारुणे ॥ १७५ ॥

शुद्ध हिङ्गुल, शुद्ध विष, शुद्ध सुहागा, जावित्री चूर्ण,
चूर्ण, मरिच चूर्ण, पीपल चूर्ण, कस्तूरी प्रत्येक द्रव्य समभा
जल में खरल कर दो रत्ति प्रमाण गोली बनावें। इसे दा
पात में दें। तो इससे ज्वर की तीव्रता कम होती है ॥ [
में खून के संचार को कम करता है तथा नाड़ी भी
होती है ॥] ॥ १७५ ॥

वृहत् कस्तूरीभैरवो रसः ।

मृतं वङ्गं खर्परश्च कस्तूरी स्वर्णतारके ।
एतेषां समभागेन कर्षमेकं पृथक् पृथक् ।
मृतं कान्तं पलं देयं हेमसारं द्विकार्षिकम् ॥१७६॥
रसभस्म लवङ्गश्च जातिकाफलमेव च ।

वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम् ॥१७७॥
द्रोणपुष्परसैर्वाऽपि नागवल्ल्या रसेन च।
दत्त्वा द्विचन्द्रत्रिकटू यत्नतो वटिकां चरेत् ॥१७८॥
वातात्मके सन्निपाते महाश्लेष्मगदेषु च।
त्रिदोषजनिते घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥१७९॥
नष्टगर्भे नष्टशुक्रे प्रमेहे विषमज्वरे।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे महाशोथे महागदे ॥१८०॥
स्त्रीणां शतं गच्छतश्च न च शुक्रक्षयो भवेत्।
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥१८१॥

बङ्गभस्म एक कर्ष, शुद्ध खपरिया एक कर्ष, कस्तूरी एक कर्ष, र्णभस्म एककर्ष, चांदीभस्म एककर्ष, कान्तभस्म एकपल, र्णमाक्षिकभस्म दो कर्ष, रससिन्दूर दोकर्ष, लवंगचूर्ण दोकर्ष, यफल दोकर्ष। इन सबको चूर्ण कर क्रमशः द्रोणपुष्पी के रस था पान के रस से सात २ दिन की भावना दें। और फिर कर्पूर कर्ष, सोंठ चूर्ण दो कर्ष, मरिच चूर्ण दो कर्ष, पीपल चूर्ण दो कर्ष ल कर यत्नपूर्वक एक रत्ति की गोली बनालें। इसे वातिक सन्नि· त में, महाश्लेष्मजरोगों में, त्रिदोषजनितघोर सन्निपातमें, नष्टगर्भ में क्रहीनता में, प्रमेह में, विषम ज्वर में, कास, श्वास, क्षय, गुल्म, हाशोथ, तथा महारोगों में देना चाहिये। इस के सेवन से सौ स्त्री ग सकता है, और तब भी वीर्य क्षय नहीं होता है। उपर्युक्त सब गों को ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य अन्धकार को दूर करता है॥ ब सर्वांग ठण्डा होजाता है, नाड़ी बंद होती तथा गला कफसे भर ता है, उस समय इसे देने से रोगी की अवस्था परिवर्त्तित हो ती है॥)॥ १७६—१८१॥

अन्यबृहत्कस्तूरी भैरवो रसः।

मृगमदशशिसूर्या धातकी शूकशिम्बी।
कनकरजतमुक्ता विद्रुमो लौहपाठाः।

क्रिमिरिपुघनविश्वातोयतालाभ्रधात्री-
रविदलरसपिष्टः कस्तुरी भैरवोऽयम्॥१८२॥
कस्तूरीभैरवः ख्यातः सर्वज्वरविनाशनः ।
आर्द्रकस्य रसैः पेयो विषमज्वरनाशनः ॥ १८३ ॥
द्वंद्वजान् भौतिकान् वा ऽपि ज्वरान् कामादिसम्भवान्।
अभिचारकृतांश्चैव तथा शुक्रकृतान् पुनः ।
निहन्याद्भक्षणादेव डाकिन्यादिकृतांस्तथा ॥१८४॥

कस्तूरी, कर्पूर, ताम्रभस्म, धायके फूल, कौंच के बीजों, स्वर्णभस्म, चांदीभस्म, मोतीभस्म, मूंगाभस्म, लौहभस्म, विडङ्गचूर्ण, मोथाचूर्ण, सोंठचूर्ण, सुगन्धबालाचूर्ण, शुद्ध अभ्रकभस्म, आंवलाचूर्ण प्रत्येक द्रव्य समभागलें। सब को कर आक के पत्तों के रस से घोट कर एक रत्ति भर की बनावे। यह कस्तूरी भैरव रस सब ज्वरों को नाश करता है। अदरक के रस से देने से विषमज्वर नाश होते हैं। द्वन्द्वज, कामक्रोधादिसंभव ज्वर, अभिचारकृतज्वर, शुक्रकृत ज्वर, डाकिन्यादि के भय से उत्पन्नज्वर, तथा अन्य रोगों को यह नाश करता है। (नाड़ी क्षीणता में लाभ करता है ॥) ॥ १८२-१८४ ॥

सौभाग्यवटी ।

सौभाग्यामृतजीरपञ्चलवण व्योषाऽभयाधामला-
निश्चन्द्राभ्रकशुद्धगन्धकरसानेकीकृतान् भावयेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गराजक वृषाऽपामार्गपत्रोल्लसत्-
प्रत्येकस्वरसेन सिद्धगुड़िका हान्ति त्रिदोषोदयम् ॥१८५॥
येषां शीतमतीव दाहमखिलं स्वेदद्रवार्द्रीकृतम् ।
निद्राघोरतरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः ।
शूलश्वासबलासकाससहितं मूर्च्छाऽरुचिस्तृड्ज्वरम्
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनात् प्रत्यानयेत् जीवनम् ॥

शुद्ध सुहागा, शुद्ध विष, जीरा चूर्ण, पांचों नमक, सोंठ चूर्ण, मरच चूर्ण, पीपल चूर्ण, हरड़ चूर्ण बहेड़ा चूर्ण, आंवला चूर्ण, नेश्चन्द्रक अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा। प्रत्येक द्रव्य सम-ाग ले। पहले पारे और गन्धक की कज्जली करे। फिर सब द्रव्यों ो मिला मर्दन करे फिर निर्गुण्डी, भांगरा, केशराज बांसा, अपामार्ग पत्ते, इन सबका रस लेकर प्रत्येक की भावना देवे। इसकी एक त्ति प्रमाण गोली बनाके खिलाने से सन्निपातकी मूर्च्छादि दूर होती ॥ १८५ ॥ जिनको ज्वर में अति शीत लगे या जिनको ज्वर से दाह त्यन्त हो रहा हो और पसीने से शरीर भीग रहा हो। उनको सौ-ाग्यवटी देवे। तथा ज्वर में जिनको घोर निद्रा आई हुई हो और मस्त इन्द्रियां तथा मन व्यामोह से मुग्ध हो गया हो उनको यह सौ-ाग्यवटी दें तो चेतना हो जाती है। उपरोक्त उपद्रवों के साथ २ दि शूल, श्वास, कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, प्यास ज्वर भी हो तो न सब रोगियों को मृत्यु के मुख से खींचकर यह सौभाग्यवटी नया ीवन प्रदान करती है ॥ १८६ ॥

सन्निपातहरो रसः।

पारदं गन्धकं टङ्कः सोषणं गजपिप्पली।
व्योषं च धुस्तूरजलैः पिष्टं गुञ्जाद्वयं द्रुतम्।
सन्निपातं निहन्त्यर्क-कषायैर्व्योषचूर्णितैः ॥१८७॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, मिरचचूर्ण, गजपिप्पली ूर्ण, सोंठचूर्ण, मिरचचूर्ण, पीपल चूर्ण सब सम भाग पीसकर धतूरे रस के साथ इसे घोटकर दो रत्ति प्रमाण गोली बनावे। इस ोली को खाकर ऊपर से आककी जड़का क्वाथ त्रिकुटाचूर्ण डाल र पीवे तो शीघ्र सन्निपातको दूर करती है। इस रस का नाम सन्नि-ातहर रस है ॥ १८७ ॥

सन्निपात बडवानलो रसः।

रसाष्टको ऽमृतं सप्त स्यात् षष्ठो गन्धतालयोः।
दन्तीबीजानि षड्भागाःपञ्चभागन्तु टङ्कणम् ॥१८८॥

चत्वारि धूर्त्तवीजस्य व्योषस्य त्रितयो भवेत् ।
एतानि वन्हिमूलस्य क्वाथेन परिमर्दयेत् ॥१८९॥
आर्द्रकस्य रसेनाथ देयं गुञ्जाद्वयं हितम् ।
बडवानलसंज्ञो ऽयं सन्निपातहरःपरः ॥१९०॥

शुद्ध पारा ८तोले,शुद्धविष७तोले,शुद्धगन्धक ६तोले और ताल ९ तोला, दन्ती के शुद्ध बीज६तोला, शुद्धसुहागा५तोला शुद्धबीज ४ तोला,सोंठचूर्ण३तोला,मिरचचूर्ण३तोला, पीपल पहले पारे और गन्धक की कज्जली बनाले । फिर शेष द्रव्य मर्दन कर आक की जड़का क्वाथ डालकर मर्दन करे और भरकी गोली बनावे। इसे अदरक के रस से खावे तो यह रस सन्निपात को नाश करने में श्रेष्ठ है ॥ १८८ ॥ १८९ ॥ १९०

सिंहनादरसः

लौहपात्रगते गन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
शुद्धसूतं समं चाभ्रं भार्गीद्रावं तयोःसमम् ॥ १९१
निर्गुण्ड्याः पल्लवोत्थश्च तुल्यं तुल्यं प्रदापयेत् ।
पचेन्मृद्वग्निना तावत् यावत् शुष्कं द्रवद्वयम् ॥ १९२
विषपादयुतःसोऽयं सिंहनादरसोत्तमः ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यःसन्निपातज्वरान्तकः ।
अनुपानं पिबेद् व्याघ्री–क्वाथं पुष्करचूर्णितम् ॥१९३

लोहे की कड़ाही में शुद्ध आंवलासार गन्धक एक तोला जब वह पिघल जावे तो उसमें शुद्ध पारा एक तोला डाले तोला अभ्रक भस्म डाले, साथही भारंगी का रस दो तोला संभालु के पत्तों का रस भी दो तोला डाले । अब इसको मन्द से पकावे । जब पकते २ जलका भाग सूख जावे तब उसमें तो शुद्धविष डालके खूब मर्दन करे । अत्यन्त महीन चूर्ण करें रत्ति भरकी गोली जलसे बनाले इसे सिंहनाद रस कहते हैं

गोली खाकर अनुपान में छोटी कटेली के क्वाथ में पोहकर का चूर्ण डालकर पीयें तो सन्निपातज्वर दूर होताहै॥१६१-१६३॥

सन्निपातसूर्य्यः।

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य तत्पादभागं रवितारहेम।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्तु दिनत्रयं वन्हिरसेन घर्मे॥१६४॥
विषञ्च दत्त्वाऽत्र कलाप्रमाणं मत्स्यादिपित्तैः परिभावयेच्च।
वल्लद्वयं चास्य ददीत वन्हि-कटुत्रयार्द्रद्रवसंप्रयुक्तम् ॥१६५॥
तैलेन चास्यञ्जनमेव कुर्य्यात् स्नानं जलेनापि च शीतलेन।
यावद्भवेद् दुःसहशीतमस्य मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥१६६॥
पथ्ये यदीहा पारिजायतेऽस्य मरीचखण्डं दधिभक्तकञ्च।
स्वल्पंददीतार्द्रकमत्स्यशाकंदिनान्तरं स्नानविधिञ्च कुर्य्यात्१६७॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्धगन्धक दो तोला दोनों की कज्जली बनाले। इस कज्जली से चौथाई भाग अर्थात् ताम्रभस्म नौ माशा, चांदीभस्म नौमाशा, स्वर्णभस्म नौमाशा, लेकर उस कज्जली में मिला कर अच्छी प्रकार मर्दन करे। फिर इसमें चीते का रस डालकर धूप में रख तीन दिन मर्दन करे। फिर सारे मिलित चूर्ण से सोलहवां भाग अर्थात् चार माशे शुद्ध विष डालकर मिला दे। फिर इसको मछली आदिके पित्तों से भावना देवे। इस रसकी तीनरत्ति मात्रा लेकर, चीता, त्रिकुटा, और अदरक के रस या क्वाथ से दे और ऊपर से शरीर पर तेल की मालिश कराके शीतल जलसे स्नान करावे। जब रोगी को इतना शीत लगे कि सहा न जा सके और मूत्र और मल निकलने की प्रवृत्ति हो तथा शरीर कांपने लगे तब स्नान बंद करादे यदि खाने की इच्छा रोगी को होतो दही, चावल, मिरच चूर्ण और खांड मिलाकर दे। तथा अदरक और मछली की भाजी भी खाने को थोड़ी देवे। एक२दिन के बाद (कहीं आठ दिन भी लिखा है) स्नान करने दे॥ [इसकी मात्रा एक रत्ति की ठीक है]॥१६४-१६७॥

अभिन्यासे ।

स्वच्छन्दनायकः ।

सूतगन्धकलौहानि रौप्यं संमर्दयेत् त्र्यहम् ।
सूर्य्यावर्त्तश्च निर्गुण्डी तुलसी गिरिकर्णिका ॥१९
अग्निवल्ल्यार्द्रकं वन्हिः विजयाऽथ जया सह ।
काकमाचीरसैरेषां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ १९९॥
अन्धमूषागतं पश्चात् बालुकायन्त्रगं दिनम् ।
विपचेत् चूर्णितं खादेत् माषैकं चार्द्रकद्रवैः॥२००॥
निर्गुण्डीदशमूलानां कषायं सोषणं पिवेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्याशु रसःस्वच्छन्दनायकः ।
छागीदुग्धेन मुद्गं वा पथ्यमत्र प्रयोजयेत् ॥ २०१॥
मायूरमात्स्यवाराह–च्छागमाहिषमेव च ।
पञ्चपित्तमिदं देयं भावनासु च सर्वदा ॥ २०२॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, लौहभस्म, चांदीभस्म, प्र
समभाग लेवे । पहले पारे और गन्धक की कज्जली बना
अन्यद्रव्य मिला मर्दन करलें । फिर सूरजमुखी, संभालु
अपराजिता, अग्निवल्ली, अदरक, चीता, भांग, जयन्ती, मको
रससे तथा पांचों पित्तों (मछली, बकरी, मोर आदि) से
द्रव्यों से तीन दिन भावना देकर अन्धमूषा में सम्पु
बालुकायंत्र में रख एक दिन पकावे । स्वांग शीतल होने
निकाल कर चूर्ण करे । एक माषा इस चूर्ण को अदरक
खावे और ऊपरसे संभालु और दशमूल का काढ़ा काली मि
चूर्ण डालकर पीले । तो यह स्वच्छन्दनायकरस अभिन्या
को शीघ्र दूर करता है । पथ्य में बकरी का दूध वा मूंग
देवे ॥ १९८—२०१ ॥

भावना देने में सदा "मोर, मछली, शूकर, बकरी औ

नके पित्त लेने चाहियें ॥ [व्यवहार में केवल दो रत्ति की मात्रा 'स्वच्छन्दनायक रस' की दी जाती है] ॥ २०२ ॥

सन्निपातान्तको रसः ।

शुद्धसूतः समो गन्धः दरदः शुद्धखर्परम् ।
रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राम्लवेतसौ ॥२०३॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं प्रत्यहं भावना पृथक् ।
दातव्यं तच्चतुर्गुञ्जमार्द्रकस्य रसैः सह ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातान्तको रसः ॥ २०४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध खर्पर । प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें । ताम्रभस्म एक तोला, अम्लवेत एक तोला लें । पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला कर भांगरे के रस से प्रतिदिन पृथक् २ भावना दें ॥ इस रस की चार रत्ति की मात्रा अदरक के रस से खावें तो सन्निपात की मूर्च्छा तथा ज्वरादि शीघ्र दूर होते हैं । यह सन्निपातान्तकरस है ॥ [इसकी मात्रा एक रत्ति की या दो रत्ति की होनी चाहिये] ॥ २०३ ॥ २०४ ॥

विषमजीर्णज्वरे ॥

विषम ज्वर लक्षणम् ।

यः स्यादनियतात् कालात् शीतोष्णाभ्यां तथैव च ।
वेगतश्चापि विषमःस ज्वरो विषमः स्मृतः ॥ २०५ ॥

जो ज्वर नियत समय पर न चढ़े, कभी पहले और कभी पीछे चढे, तथा शीत लगकर या गरमी लगकर चढे । तथा जिसका ताप भी ऊंचा नीचा रहता हो, कभी अधिक ताप हो कभी कम हो उसको विषम ज्वर कहते हैं ॥ २०५ ॥

अथ जीर्णज्वर लक्षणम् ।

त्रिसप्ताहव्यतीतस्तु ज्वरो यस्तनुतां गतः ।

प्लीहाग्निसादं कुरुते स जीर्णज्वर उच्यते ॥ २०६॥

जो ज्वर इक्कीस दिन के बाद कम होजाये और थो परिमाण में शरीर के अन्दर रहे । और जिसमें प्लीहा अर्था बढ गई हो तथा अग्नि मन्द होचुकी हो ऐसे सब लक्षण वा को जीर्णज्वर कहते हैं ॥ २०६ ॥

अथ ज्वराङ्कुशो रसः ।

रसस्य द्विगुणं गन्धं गन्धतुल्यञ्च टङ्कणम् ।
रसतुल्यं विषं योज्यं मरिचं पञ्चधा विषात् ॥ २०७
दन्तीवीजकट्फलञ्च प्रत्येकं मरिचोन्मितम् ।
ज्वराङ्कुशो रसो नाम मर्दयेद् याममात्रकम् ।
माषैकेण निहन्त्याशु ज्वरं जीर्णं त्रिदोषजम् ॥ २०८

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गन्धक दो तोला लेकर कज फिर सुहागा शुद्ध दो तोला, शुद्ध विष एक तोला, मिरच चू तोला, शुद्ध दन्ती बीज पांच तोला, कायफल की छाल का चू तोला डालकर, एक पहर तक पीसकर रखें । इस ज्वराङ्कु को एक माषा खाने से जीर्ण ज्वर तथा त्रिदोषजनित ज्वर है ॥ (मात्रा दो रत्ति की दें) ॥ २०७ ॥ २०८ ॥

अथ ज्वरारि-अभ्रम् ।

अभ्रं ताम्रं रसं गन्धं विषञ्चैव समं समम् ।
द्विगुणं धूर्त्तवीजञ्च व्योषं पञ्चगुणं मतम् ॥ २०९ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव वटी कार्य्या द्विगुञ्जिका ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः ।
अभ्रं ज्वरारिनामेदं सर्वज्वरविनाशनम् ॥ २१० ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
बिषमाख्यान् ज्वरान् सर्वान् धातुस्थान् विषमज्वरान् ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममग्निमांसं सशोथकम् ।

हिक्कां श्वासञ्च कासञ्च मन्दानलमरोचकम्।
नाशयेन्नात्र सन्देहो वृत्तमिन्द्राशनिर्यथा ॥ २१२ ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, शुद्धविष, क द्रव्य एक २ तोला लें। शुद्ध धतूरे के बीज दो तोला, सोंठचूर्ण तोला, मिरच चूर्ण पांच तोला, पीपली का चूर्ण पांच तोला लें। ले पारे गन्धक की कज्जली बनालें। फिर अन्य द्रव्य उसमें मिला मर्दन कर अदरक के रस से घोट दो रत्ति भरकी गोली बना । इसे दोषानुसार भिन्न २ अनुपानों से देंतो सर्व ज्वरों को छा करता है ॥ २०९ ॥ २१० ॥ वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्नि-तेक, विषमज्वर, धातुगत विषम ज्वर, तिल्ली, यकृत, गुल्म, अग्र-न, शोथ, हिचकी, श्वास, कास, मन्दाग्नि, अरुचि इन सब रोगों इस प्रकार दूर करता है जैसे बिजली वृत्तों पर गिर कर उनका मूल नाश कर देती है ॥ [जो विषमज्वर लगातार रहता हो और शुण्डी अर्थात् तालुमूलकी ग्रन्थियें सूज गई हों जिसे डाक्टर सिल होजाना कहते हैं, तथा गले का कौआ सूज गया हो, वहां इस ज्वरारि अभ्रक को देने से ज्वर और ये रोग अच्छे हो ते हैं ॥] ॥ २११ ॥ २१२ ॥

अथ ज्वराशनि रसः।

रसं गन्धं सैन्धवञ्च विषं ताम्रं समांशिकम्।
सर्वचूर्णसमं लौहं तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ २१३ ॥
लौहे च लौहदण्डे च निर्गुण्डी-स्वरसेन च।
मर्दयेत् यत्नतः पश्चात् मरिचं सूततुल्यकम् ॥ २१४ ॥
नागवल्ल्या दलेनैव दातव्यो रक्तिसम्मितः।
सर्वज्वरहरः श्रेष्ठो ज्वरान् हन्ति सुदारुणान् ॥ २१५ ॥
कासं श्वासं महाघोरं विषमाख्यं ज्वरं वमिम्।
धातुस्थं परमं दाहं ज्वरं दोषत्रयोद्भवम् ॥ २१६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सेंधानमक शुद्ध विष, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें । लौह भस्म पांच तोला, शु० भस्म पांच तोला लें । पहले पारे गन्धक की कज्जली करें, द्रव्य मिला कर लोहे के खरल में लोहे की मूसली से रस डाल कर खरल करें जब सूख जाये तो मिरच का तोला मिला कर खरल करें और जल से एक रत्ति भर बना रखें । इसे एक रत्ति भर लें पान के पत्ते में रख कर सर्वज्वरों को दूर करता है । तथा भयंकर ज्वरों को भी है । खांसी, श्वास, घोर विषमज्वर, वमन, धातुगतज्वर, गत परम दाह, तथा त्रिदोष जनित ज्वरों को दूर करता है ।

अथ अर्द्धनारीश्वरो रसः ।

रसगन्धौ समौ शुद्धौ विषं ग्राह्यञ्च तत्समम् ।
जैपालं तत्समं ग्राह्यं मरिचञ्च चतुर्गुणम् ॥ २१७ ॥
त्रिफलाया रसैर्मर्द्यं भावना पञ्चधा तथा ।
जम्बीराणां द्रवैर्नस्यमेकस्मिन् नासिकापुटे ॥ २१८ ॥
शरीरार्द्धगतं घोरं ज्वरं हन्ति न संशयः ।
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसः शम्भुप्रकीर्त्तितः ॥ २१९ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगन्धक प्रत्येक एक तोला, शुद्धविष शुद्धजमालगोटा दो तोला, मरिचचूर्ण आठ तोला ले । पारे गंधक की कज्जली करे फिर सबको मिलाकर त्रिफला के पांचवार भावना देकर रखे । इस रसको जम्बीरी नीबू के मिलाकर एक ओर नाक के छिद्र में नस्य दें तो शरीर के का ज्वर दूर होजाता है । इसमें संशय नहीं है । यह अर्द्ध रस महादेवजीने कहा है ॥ [आधा उतर जाने पर दूसरे ना छिद्र में नस्य दें तो शेष आधाभी उतर जाता है । स्मरण रहे विषम ज्वरों को ही दूर करता है] ॥ २१७ ॥ २१८ ॥ २१९ ॥

अथ चन्दनादि लौहम् ।

रक्तचन्दनहीवेर-पाठोशीरकणा शिवा-

नागरोत्पलधात्रीभिस्त्रिमदेन समन्वितम् ।
लौहं निहन्ति विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥ २२० ॥

लाल चन्दन का चूर्ण, सुगन्ध बाला का चूर्ण, पाठा का चूर्ण,
का चूर्ण, पीपल चूर्ण, हरड़ चूर्ण, सोंठ चूर्ण, नीलोफर का चूर्ण
ला चूर्ण, वायविडङ्ग का चूर्ण, नागरमोथे का चूर्ण, चीते का चूर्ण,
त एक २ तोला ले, लौहभस्म बारह तोले मिलाकर खरल करके
त्ति भरकी गोली बनावे। इसे चन्दनादि लौह कहते हैं। इसे
नुसार अनुपान से अथवा शहद से दें तो विविध प्रकार के
म ज्वर तथा जीर्णज्वर दूर होते हैं ॥ [यह विषम ज्वर तथा
ज्वर पर अव्यर्थ योग है। सन्ध्या काल में जो ज्वर अल्पवेग से
है और जिसमें कि हाथ पैर और नेत्रों में दाह हो इस प्रकार के
ज्वर में लाभ करता है।] ॥ २२० ॥

अथ ज्वरारि रसः ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं विषश्चैव कटुत्रयम् ।
नागभस्म शिला चैव प्रत्येकं कर्षमानकम् ॥ २२१ ॥
शुद्धतालार्द्धकर्षश्च शुल्वमेकत्र कारयेत् ।
धुस्तूरस्य च बीजानि कार्षिकाणि प्रकल्पयेत् ॥ २२२ ॥
रोहितमत्स्यपित्तेन अर्कक्षीरार्द्रकाम्बुणा ।
मर्दयेदुदयास्तश्च चणकाभा वटी कृता ॥ २२३ ॥
आर्द्रकस्य रसैः कर्षैर्मधुमाषसमायुतम् ।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय ज्वरारिरससंज्ञितम् ॥ २२४ ॥
वातिकं पैत्तिकश्चैव कफजं नाशयेद् ध्रुवम् ।
वातपित्तसमुद्भूतं वातश्लैष्मिकमेव च ॥ २२५ ॥
भयादुत्पत्तिकं वाऽपि शोकोत्पन्नमथापि वा ।
अभिचाराभिशापोत्थं भूतोत्थश्च ज्वरं जयेत् ॥ २२६ ॥
मेदः प्राप्तं सन्ततश्च रसस्थे तु ज्वरे तथा ।

सन्निपात ज्वरे देयो मधुव्योषसमायुतः ।
घर्मं पित्तं तथा कम्पं दाहं हन्ति न संशयः ॥ २२
इन्द्रवज्रो यथा वृक्षं तथा ज्वर विनाशनः ।
वर्जयेत् क्षीरमांसञ्च दधितक्रसुराघृतम् ॥ २२८ ॥
ज्वरे मांसास्थिगे चैव रक्तस्थे तु ज्वरे नृणाम् ।
शैत्ये दाहे तथा घर्मे प्रलापे चातुराहिके ।
महावेगे ज्वरे चैव जीर्णे चापि प्रदापयेत् ॥ २२९ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गन्धक दो तोला, शुद्ध
कर्ष, सोंठ चूर्ण एक कर्ष, मिरचचूर्ण एक कर्ष, पिपल चू
कर्ष, नाग भस्म एक कर्ष, शुद्ध मनासिल एक कर्ष, शुद्ध
आधा कर्ष, ताम्रभस्म आधा कर्ष, शुद्ध धतूरे के बीज एक
पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिला
और फिर रोहित मछली के ताज़े पित्त से, फिर आक के
फिर अदरक के रस से क्रमशः सूर्योदय से सूर्यास्ततक प्र
भावना देवे और चने समान गोली बनाले। इसे प्रातः काल
के एक कर्ष रस और एक माषा शहद से खावें। इसका ना
रारि रस है ॥ २२१ ॥ २२२ ॥ २२३ ॥ २२४ ॥ इससे वातिक,
कफज, वातपित्तज, वातश्लेष्मज, भयज्वर, शोकज्वर, अभि
अभिशापज, भूतज्वर, मेदधातुतक पहुंचा हुआ ज्वर, सन्त
रस धातुगत ज्वर, सान्निपात ज्वर, इन सब ज्वरों में त्रिकुटा
शहद मिलाकर देने से इनको नाश करता है ॥ विशेष क
ज्वरों में जो पसीना आता है उसको कम करता है। पित्त
करता है। तथा कम्प और दाह को नाश करता है ॥ जैसे व
बिजली गिरकर वृक्षों का नाश करती है वैसेही यह ज्वर
करता है ॥ इसके सेवन के समय दूध, मांस, दही, तक्र, मद्य,
छोड़ देवे। ये सब अपथ्य हैं ॥ इस रसको मांस और अस्थि
में, रक्त गत ज्वर में, शीत पूर्व ज्वर में, दाह पूर्वज्वर में,
आने में, प्रलाप में, चातुर्थक ज्वर में बहुत तेज़ ज्वर में दे

प को कम कर देता है। तथा अन्य रोगों को नाश करता है तथा र्ण ज्वर को भी दूर करता है ॥ २२५ ॥ २२६ ॥ २२७ ॥ २२८ ॥ २२९ ॥

अथ सर्वज्वरहर लौहम्।

चित्रकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा।
श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥ २३० ॥
किराततिक्तकं पाठा कटुकी कण्टकारिका।
शोभाञ्जनस्य वीजानि मधुकं वत्सकं समम् ॥ २३१ ॥
लौह तुल्यं गृहीत्वा तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
सर्वज्वरहरं लौहं सर्वरोगहरं तथा ॥ २३२ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्चज्वरं जयेत् ॥ २३३ ॥
शीतं कम्पं तृषां दाहं घर्मस्रुतिवमिभ्रमीन्।
रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥ २३४ ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्मं सामवातं सुदारुणम्।
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छां पाण्डुं हलीमकम् ॥ २३५ ॥
अजीर्णं ग्रहणीञ्चैव यक्ष्माणं शोथमेव च।
बल्यं वृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिसूदनम्।
सर्वज्वरहरं लौहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥ २३६ ॥

चीते का चूर्ण, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आंवलाचूर्ण, सोंठ र्ण, मिरचचूर्ण, पीपल चूर्ण, वायविडंग का चूर्ण, नागरमोथाचूर्ण, जपीपल चूर्ण, पिप्पली मूल चूर्ण, खसचूर्ण, देवदारु चूर्ण, चिरायता र्ण, पाठा चूर्ण, कुटकी चूर्ण, कण्टकारी चूर्ण, सुहांजने के बीजों का र्ण, मुलहठी का चूर्ण कुटज की छालका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ ला लें। लौह भस्म सबके समान अर्थात् बीस तोला लें। सबको ला जल से खरल कर दो रत्ति भरकी गोली बना लें। यह सर्व रहरलौह सब रोगों में लाभ करता है ॥ २३०-२३२ ॥ यह

वातिक, पैत्तिक श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम तथा धातुगत ज्वरों को दूर करता है॥ शीत, कम्प, प्यास, दाह, आने, वमन, सिरमें चक्कर आने, रक्तपित्त, अतीसार, भ्र खांसी, तिल्ली, जिगर, गुल्म, घोरआमवात, बवासीर, घोरअ मूर्च्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, ग्रहणी, राजयक्ष्मा, शोथ दूर करता है। तथा बल देता है वृष्य अर्थात् वीर्यवर्द्धक पुष्टि अर्थात् शरीर मोटा करता है तथा सब रोगों को नाश क यह सर्वज्वरहरलौह चन्द्रनाथ ने कहा है॥ [इसकी दो र गोली दिनमें तीन वार तक दे सकते हैं]॥ २३३-२३६॥

अथ बृहत्सर्वज्वरहरलौहम्।

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम्।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्षमेकं पृथक् पृथक्॥ २३७॥
कान्तलौहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम्।
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं दिनसप्तकम्॥ २३८॥
कारवेल्लरसैश्चापि दशमूलरसेन च।
पर्पट्याश्च कषायेण त्रिफलाक्काथकेन वा।
गुडूच्याः स्वरसेनैव नागवल्लीरसेन च॥ २३९॥
काकमाचीरसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसैस्तथा।
पुनर्नवार्द्रकाम्भोभिर्भावना परिकीर्त्तिता॥ २४०॥
रक्तिकादि क्रमेणैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
पिप्पलीगुडसंयुक्ता वटिका ज्वरनाशिनी॥ २४१॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरहरं तथा।
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवं तथा॥ २४२॥
सततादि ज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवं तथा॥ २४३॥
भूतावेशभवञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा।

अभिघातज्वरश्चैव तथा ऽभिचारसम्भवम् ॥ २४४ ॥
अभिन्यासं महाघोरं विषमं त्र्याहिकं तथा ।
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम् ॥ २४५ ॥
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ।
प्लीहज्वरं तथा कासं चातुर्थकविपर्ययम् ॥ २४६ ॥
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्द्यं महागदम् ।
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु पक्षार्द्धेन न संशयः ॥ २४७ ॥
शाल्यन्नं तक्रसहितं भोजये द्विड़संयुतम् ।
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ॥ २४८ ॥
मैथुनं वर्जयेत् तावद् यावन्न बलवान् भवेत् ।
सर्वज्वरहरं लौहं दुर्लभं परिकीर्त्तितम् ॥ २४९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, शुद्ध हड़ताल प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लें। कान्त लौह भस्म एक पल लें। पहले पारा गन्धक की कज्जली करें। फिर सब द्रव्य मिलाकर आगे लिखी औषधों से सात २ दिन तक भावना देवे। करेले का रस, दश मूल का क्वाथ, पित्त पापड़े का क्वाथ, त्रिफला का क्वाथ, गिलोय का स्वरस, पान का रस, मकोय का रस, संभालु का रस, पुनर्नवा का रस, अदरक का रस, इन सब में से प्रत्येक की क्रमशः सात २ भावना देकर एक २ रत्ति भरकी गोली बनाले। इस गोली में पिप्पली और गुड़ मिला कर खावें तो ज्वर नाश करती है। आठों प्रकार का ज्वर, जीर्णज्वर, जल दोष से हुआ ज्वर, नाना दोषों से हुआ ज्वर, सतत, सन्ततादि विषमज्वर, साध्य, अथवा असाध्य ज्वर, क्षयज्वर, धातुगत ज्वर, काम, शोक, भूतावेश और त्रिदोषज ज्वर, अभिघातज, तथा अभिचारज ज्वर, महाघोरअभिन्यास ज्वर, विषम ज्वर, तृतीयक, शीतपूर्वज्वर, दाहपूर्वज्वर, त्रिदोषज विषम ज्वर, प्रलेपक ज्वर, अर्धनारीश्वर ज्वर जो शरीर के आधे भाग में हो आधे में न हो, प्लीह ज्वर, खांसी,

चातुर्थक विपर्यय ज्वर, पाण्डुरोग, कामला, अग्निमान्द्य आ रोगों को एक सप्ताह में निश्चित नाश करता है॥ खाने को पु चावल और छाछ, विडनमक मिलाकर देने चाहियें। कर वाले ककड़ी करेला आदि आठ द्रव्य न खावें। मैथुन तब तक जब तक रोगी निरोग होकर बलवान न हो जाये। यह सर्वे लौह परम दुर्लभ योग है। [यक्ष्मा के ज्वर में यह उत्त करता है] ॥ २३७—२४६ ॥

अथ महाराजवटी।

रसगन्धकमभ्रञ्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्षार्द्धकं क्षिपेत् ॥ २५० ॥
स्वर्णं ताम्रञ्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्षपादिकम्।
शक्राशनं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥ २५१ ॥
कोकिलाक्षं विदारी च मुषली शूकशिम्बिकम्।
जातीफलं तथा कोषं बला नागबला तथा ॥ २५२
माषद्वयमितं भागं तालमूल्या रसेन च।
पिष्ट्वा च वटिका कार्य्या चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥ २५
मधुना भक्षयेत्प्रातर्विषमज्वरशान्तये।
धातुस्थांश्च ज्वरान् सर्वान् हन्यादेव न संशयः ॥ २
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम्।
ज्वरं नानाविधं हन्ति कासं श्वासं क्षयं तथा ॥ २५
बलपुष्टिकरं नित्यं कामिनीं रमयेत् सदा।
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत् ॥ २५
ऊर्द्ध्वगं श्लेष्मजं हन्ति सन्निपातं सुदारुणम्।
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं रक्तपित्तकम्।
महाराजवटी ख्याता राजयोग्या च सर्वदा ॥ २५७ २

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, प्रत्येक एक

पारे के शुद्ध बीज आधा कर्ष, बङ्ग भस्म आधा कर्ष, लौह भस्म आधा कर्ष ले, स्वर्ण भस्म, ताम्रभस्म, कर्पूर प्रत्येक चौथाई कर्ष ले। भांग के बीज, शतावर का चूर्ण, सफेदराल, लौंग का चूर्ण, ...किलात्त के बीज, विदारीकंद का चूर्ण मूसली का चूर्ण, कौंच के बीज, जायफल चूर्ण, जावित्री का चूर्ण, बलाचूर्ण, नाग बला चूर्ण, इनमें से प्रत्येक द्रव्य दो २ माशे लें। पहले पारे गन्धक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर मूसली के रस से घोटकर चार रत्ति भरकी गोली बनावे ॥ २५०—२५३ ॥ इसे शहद से मिलाकर प्रातःकाल खावे तो विषम ज्वर नाश होता है। यह धातुस्थ ज्वरों को वातपित्त और कफ के ज्वर तथा सान्निपात ज्वर, नाना प्रकार के ज्वर, खांसी, श्वास, क्षय को नाश करती है, । बल पुष्टिकारक है तथा ...त्य स्त्री को भोगने की सामर्थ्य देता है न तो शुक्रक्षय होता है न बल कम होता है। ऊर्ध्वग श्लेष्मज सन्निपात को दूर करता है तथा कामला, पाण्डु, प्रमेह, रक्तपित्त इन सब रोगों को दूर करती है। यह राजाओं के योग्य है इसका नाम महाराजवटी है। [पुराने विषम ज्वर और जीर्ण ज्वर में जब मांस तथा बल भी क्षीण हो गया हो तो इससे बहुत लाभ होता है ॥] ॥ २५४–२५७ ॥

अथ अपराचिन्तामणिरसः।

हाटकं रजतं तालं मुक्ता गन्धकपारदौ।
त्रिकटु कुनटी चैव कस्तूरी च पृथक् समम् ॥ २५८ ॥
जलेन वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
चिन्तामणिरसो ह्येष ज्वराष्टानां निकृन्तनः ॥ २५९ ॥

स्वर्णभस्म, चांदीभस्म, शुद्ध हड़ताल, मोतीभस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, सोंठचूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपलचूर्ण, शुद्ध मनःशिला, कस्तूरी प्रत्येक द्रव्य सम भाग ले। पहले पारे गन्धक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर जलसे खरल करदो रत्ति प्रमाण की गोली बनाये। यह चिन्तामणिरस आठों ज्वरों कोनाश करताहै॥२५८.२५९॥

वृ.पक्क्यो रसाहै

अथ त्रैलोक्य-चिन्तामणि रस: ॥

भागद्वयं स्वर्णभस्म द्विभागं तारमभ्रकम् ।
लौहात् पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकं त्रयसाम्मितम् ॥ २६
भस्मसूतं सप्तकञ्च सर्वं मर्द्यन्तु कन्यया ।
छाया शुष्का वटी कार्य्या छागीदुग्धानुपानतः ॥ २६
क्षयं हन्ति तथा कासं गुल्मञ्चापि प्रमेहनुत् ।
जीर्णज्वरहरश्चायं उन्मादस्य निकृन्तनः ।
सर्वरोगहरश्चापि वारिदोषनिवारणः ॥ २६२ ॥

स्वर्ण भस्म दो तोले, चांदी भस्म दो तोला, अभ्रक दो लौह भस्म पांच तोला, मूंगा भस्म और मोती भस्म प्रत्येक तोला ले। रस सिन्दूर सात तोला ले, इन सब को पीस कुमारी के रस से खरल कर छाया में सुखा कर दो रत्ति गोली बनावे। इसे बकरी के दूध के अनुपान से पीने से क्षय गुल्म, प्रमेह दूर होता है। जीर्ण ज्वर, उन्माद और सब रो नाश करता है तथा पानी के दोष से होने वाले ज्वरादि रो भी यह त्रैलोक्य चिन्तामणि रस दूर करता है ॥ २६०—२६

अथ वृहच्चिन्तामणि रसः ।

रसं गन्धं विषञ्चैव त्रिकटु त्रैफलं तथा ।
शिलाह्वा रौप्यकं स्वर्णं मौक्तिकं तालकं समम् ॥ २६
मृगकस्तूरिकायाश्च ग्राह्यं षाणमाषिकं भिषक् ।
भृङ्गराजरसेनैव तुलस्याः स्वरसेन वा ॥ २६४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव वटीं कुर्य्यात् द्विगुञ्जिकाम् ।
चिन्तामणि रसो ह्येष सर्वरोगकुलान्तकः ॥ २६५ ॥
सन्निपात ज्वरहरः कफरोगं विनाशयेत् ।
एकजं द्वन्द्वजञ्चैव विविधं विषमज्वरम् ॥ २६६ ॥

अग्निमान्द्यं शिरः शूलं विद्रधिं सभगन्दरम् ।
एतान्येव निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २६७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध विष, सोंठ चूर्ण, मिरच चूर्ण, ल चूर्ण, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आंवला चूर्ण, शुद्ध मनसिल, ती भस्म, सोना भस्म, मोती भस्म, हड़ताल शुद्ध प्रत्यक द्रव्य २ तोला ले, कस्तूरी छः माशा ले । पहले पारा गंधक की ज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर भांगरे के रस से तथा सी के स्वरस से घोटे। फिर अदरक के रस से घोट कर दो रत्ति की गोली बनावे । यह चिन्तामणि रस सब रोगों को दूर करता । सन्निपात ज्वर, कफ रोग, एकज, द्वन्द्वज विविध विषम ज्वर, ग्निमांद्य, शिर दर्द, विद्रधि, भगन्दर, इन सब रोगों को ऐसे दूर ता है जैसे अन्धकार को सूर्य दूर करता है ॥ २६३—२६७ ॥

अथ पुटपाक-विषमज्वरान्तक लौहम् ।

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलम् ।
रसपर्पटीवत् पाच्यं सूताङ्घ्रि हेमभस्मकम् ॥ २६८ ॥
लौहं ताम्रमभ्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।
वङ्गश्चैव प्रवालञ्च रसार्द्धञ्च विनिक्षिपेत् ॥ २६९ ॥
मुक्ता शङ्खं शुक्तिभस्म रसपादिकमेव च ।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २७० ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय द्विगुञ्जाफलमानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गु ससैन्धवम् ॥ २७१ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥ २७२ ॥
सन्ततं सतताख्यञ्च त्र्याहिकं चतुराहिकम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥ २७३ ॥
ग्रहणीमामदोषञ्च कासं श्वासञ्च दारुणम् ।

मूत्रकृच्छ्रातिसारञ्च नाशयेदविकल्पतः ॥ २७४ ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा एक तोला, शुद्ध गंधक तोला दोनों की खूब कज्जली करो। फिर थोड़ी आंच दे पर्पटी बनाओ। फिर इसे पीस कर स्वर्ण भस्म तीन माशे मिलाओ। और लौह भस्म दो तोला, ताम्रभस्म दो तोला, भस्म दो तोला डालो। और बङ्गभस्म छः माशा, प्रवाल भ माशे डालो तथा मोती भस्म तीन माशे, शंख भस्म तीन मा मोती की सीप की भस्म तीन माशे डालो। फिर सब को मि पीस कर घी कुमारी के रस से घोट कर फिर सीपी में भरे। और सीपी को सम्पुट में रख कर सात या आठ जंगली उ आग से लघुपुट देवे। जब गन्धक का गन्ध आने लगे तभी को निकाल ले। और सीपियों में से औषधि निकाल कर इस पुटपाक विषमज्वरान्तक लौह को दो रत्ति भर ले पीपल, हींग और नमक मिला कर प्रातःकाल खावे। तो कफ से उत्पन्न आठों प्रकार के ज्वर, प्लीहा, यकृत्, गुल्म तथा असाध्य सतत, सन्तत, त्र्याहिक, चातुर्थक ज्वर, कामला, शोथ, प्रमेह, अरुचि, ग्रहणी, आमदोष, भयंकर खांसी और मूत्रकृच्छ्र, अतिसार इन सब रोगों को अवश्य अच्छा करता [यह अतिसार युक्त विषमज्वर में लाभ करता है] ॥ २६८

अथ वृहद्विषमज्वरान्तक लौहम्।

शुद्धसूतं तथा गन्धं कारयेत् कज्जलीं शुभाम्।
मृतसूतं हेमतारं लौहमभ्रञ्च ताम्रकम् ॥ २७५ ॥
तालसत्त्वं वङ्गभस्म मौक्तिकं सप्रवालकम्।
सुवर्णमाक्षिकञ्चापि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ २७६॥
निर्गुण्डी नागवल्ली च काकमाची सपर्पटी।
त्रिफला कारवेल्लश्च दशमूली पुनर्नवा ॥ २७७ ॥
गुडूची वृषकश्चापि सभृङ्गकेशराजकः।
एतेषाञ्च रसेनैव भावयेत् त्रिदिनं पृथक् ॥ २७८ ॥

गुञ्जामानां वटीं कुर्य्यात् शास्त्रवित् कुशलो भिषक्।
पिप्पली गुड़केनैव लिहेच्च वटिकां शुभाम् ॥ २७९ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा।
सप्तधातुगतञ्चापि नानादोषोद्भवं तथा ॥ २८० ॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
अभिघाताभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥ २८१ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, प्रत्येक एक २ तोला लेकर कज्जली करे। फिर रस सिन्दूर, स्वर्णभस्म, चांदी भस्म, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, हड़ताल का सत्त्व, वंग भस्म, मोतीभस्म, मूंगा भस्म तथा स्वर्ण माक्षिकभस्म इन सब द्रव्यों का एक २ तोला लेकर सबको मिलाकर पीसें। फिर संभालु के रस से, पानके रस से, मकोय के रस से, पित्तपापड़ा के रससे, त्रिफलाके क्वाथ से, करेला के रस से, दशमूल के क्वाथ से, पुनर्नवा के रस से, गिलोय के रस से, बांसा के रस से, भांगरे के रस से, केशराज के रस से, इनमें से प्रत्येक के रस से तीन २ दिन भावना देकर एक रत्ति भरकी गोली बना ले। इस गोली को पिप्पली और गुडसे प्रातः काल खावे तो आठों प्रकार के ज्वर, निरामज्वर, सामज्वर, सप्त धातुगत ज्वर, नानादोषोद्भव ज्वर, सतत, सन्तत, ऽयाह्निक, चातुर्थकादि विषमज्वर साध्य या असाध्य ज्वर, अभिघात तथा अभिचारोत्थ ज्वर, तथा जीर्ण ज्वर को विशेषतः दूर करती है॥ २७५—२८१॥

अथ शीतभञ्जीरसः (प्रकारभेदेन)

तालकं दरदोद्धृतपारदो गन्धकः शिला।
क्रमवृद्ध्या ताम्रपात्रीं द्रवैरेतैर्विलेपयेत् ॥ २८२ ॥
अधोमुखीं दृढ़े भाण्डे तां निरुध्याथ पूरयेत्।
चुल्ल्यां बालुकया घस्रमग्निं प्रज्वालयेद्दृढम् ॥ २८३ ॥
शीते सञ्चूर्ण्य माषो ऽस्य नागवल्लीदले स्थितः।
भक्षितो मरिचैः सार्द्धं समस्तान् विषमज्वरान्।

शीतदाहादिकं हन्यात् पथ्यं शाल्योदनं पयः ॥ २८

शुद्ध हड़ताल एक तोला, हिंगुल से निकाला हुआ पारा दो शुद्ध गंधक तीन तोला, शुद्ध मनसिल चार तोला ले। पहले गंधक की कज्जली करें फिर सब द्रव्य मिला पीसें। जल करके इसको एक छोटे से ताम्र के पात्र में लीप दें और इस नीचे मुख करके एक दृढ़ भाण्ड में रक्खें और इन दोनों के स्थान बंद करदें। ऊपर से रेता भरदें। फिर चूल्हे पर रख एक दिन अर्थात् बारह घण्टे तक तेज़ आंच दें। स्वांग शीतल पर रेता निकाल उस पात्र को खोल औषध निकाल पीसकर इसे एक माषा लेकर पान के पत्ते से खायें और साथही मिरचें भी खायें तो समस्त विषम ज्वरों को दूर करता है शीत दाहादि को दूर करता है। इसमें पथ्य दूध और चा [मात्रा एक रत्ति की पर्याप्त है।] ॥ २८२—२८४ ॥

अथ चिन्तामणिः (प्रकारभेदेन)

तालकं शुल्वकं चूर्णं शिखिग्रीवं समांशिकम्।
संपिष्य कारयेत् सर्वं चक्रिकासन्निभं शुभम् ॥ २८५ ॥
शरावपिहितं रात्रौ पचेद् गजपुटेन तु।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य भक्षयेत् माषमात्रकम्।
शर्करासहितं सेव्यं सर्वज्वरहरं परम् ॥ २८६ ॥

शुद्ध हड़ताल, ताम्र भस्म, सीपभस्म, शुद्ध नीलाथोथा, द्रव्य सम भाग लें। पीसकर जलसे घोट टिकियां बनालें इनको एक शरावे में बंद करके रात को गजपुट में फूंक दें स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल कर पीसकर रखें। इसे एक भर लेकर शक्कर के साथ खावें तो सब ज्वर दूर होते हैं। [इ ज्वर में दें। आधी रत्ति देने का व्यवहार है] ॥ २८५ ॥ २८६

अथ ज्वराङ्कुशः।

ताम्रतो द्विगुणं तालं मर्दयेत् सुपत्रीद्रवैः।
प्रपुटेत् भूधरे शीते वज्रीक्षीरैर्विमर्दयेत् ॥ २८७ ॥

प्रपुटेत् भूधरे पश्चात् पञ्चगुञ्जामितं शुभम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सर्वज्वरनिकृन्तनः॥ २८८॥
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च त्र्याहिकञ्चातुराहिकम्।
विषमं चापि शीताढ्यं ज्वरं हन्ति ज्वराङ्कुशः॥ २८९॥

ताम्रभस्म एक तोला, शुद्धहड़ताल दो तोला, दोनों को मिला ...ले के रसमें घोटकर भूधरयंत्र में पुट देवे। स्वांग शीतल होने ... निकाल थोहर के दूध में घोटकर फिर भूधर यंत्र में पुट देवे। ...र शीतल होने पर निकालकर पांच रत्ति लेकर अदरक के रस से ...लावे। तो यह सर्व ज्वरों को नाश करता है। ऐकाहिक, द्व्याहिक, ...तीयक, चातुर्थक, विषम ज्वर, शीत ज्वर इन सबको यह ज्वरा-ङ्कुश दूर करता है। [इसकी मात्रा एकरत्तिकी पर्याप्त है]॥ २८७-२८९।

अथ मेघनादो रसः।

आरं कांस्यं मृतं ताम्रं त्रिभिस्तुल्यञ्च गन्धकम्।
रसेन मेघनादस्य पिष्ट्वा बद्ध्वा पुटे पचेत्।
भक्षयेत् पर्णखण्डेन विषमज्वरनाशनम्॥ २९०॥
अस्य मात्रा द्विगुञ्जा स्यात् पथ्यं दुग्धौदनं हितम्।
पञ्चामृतपलैश्चैकमनुपानं प्रयोजयेत्॥ २९१॥

पित्तल भस्म, कांस्यभस्म, ताम्र भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला, ...द्ध गन्धक तीन तोला। सबको पीसकर लाल चौलाई के रस में ...ट पिण्डी बांधकर सम्पुट कर गजपुट में फूंक देवे। इसकी दो रत्ति ... मात्रा लेकर पान के पत्तों के रस से खावे तो विषमज्वर नाश ...ते हैं। पथ्य में दूध चावल देवे। अनुपान में पञ्चामृत एक पल ...वे॥ २९०॥ २९१॥

अथ शीतज्वरहरो रसः।

सूतमाक्षिकगन्धानां भागाश्चारुष्करस्य च।
तथा ऽष्टौ तालकाच्चूर्णात् रविदुग्धस्य षोडश॥२९२॥
स्नुहीक्षीरस्य चैवाष्टौ सर्वं मृद्वग्निना पचेत्।

स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य ततः खल्वे विमर्दयेत् ।
शीतज्वरहरो नाम्ना रसोऽयं परिकीर्त्तितः ॥२६३॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, दोनों की क
फिर स्वर्णमाक्षिक भस्म एक तोला, शुद्धभिलांवा एक तो
हड़ताल का चूर्ण आठ तोला, आक का शुद्ध दूध सोल
थोहर का शुद्ध किया हुआ दूध आठ तोला। सबको पीस
पाक कर मन्दाग्नि से पकावे। स्वाङ्ग शीतल होनेपर खरल
पीसले। यह शीतज्वर हर रस शीतज्वर को दूर करता है।
एक रत्ति तक दें] ॥ २६२ ॥ २६३ ॥

अथ शीतभञ्जीरसः (प्रकारभेदेन)

पारदं रसकं तालं तुत्थं टङ्कणगन्धकम् ।
सर्वमेतत् समं शुद्धं कारवेल्लरसैर्दिनम् ॥२६४॥
मर्दयेत् तेन कल्केन ताम्रपात्रोदरं लिपेत् ।
अङ्गुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत् सिकताह्वये ॥२६५॥
यन्त्रे यावत् स्फुटन्त्येव व्रीहयस्तस्य पृष्ठतः ।
ततस्तत् शीतलं ग्राह्यं ताम्रपात्रोदरात् भिषक् ॥२६६
माषैकं पर्णखण्डेन भक्षयेत् मरिचैः समम् ।
शीतभञ्जीरसो नाम त्रिदिनान्नाशये ज्ज्वरम् ॥२६७

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध खपरिया, शुद्ध हड़ता
नीलाथोथा, शुद्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर पी
करेले के रस से एक दिन घोटे। फिर इसी कल्क से ताम्
पात्र के पेट को चौथाई उंगल तक लेप करदे। फिर उस
करके एक हांडी पर रखे और उस ताम्र पात्र से बड़ा
पात्र लेकर उससे ताम्र पात्र को ढक दे। और बेर के पत्तो
लेप करके ऊपर शेष हांडी में बालु भरदे। उसके ऊपर कु
रखदे नीचे से पात्रको ज्वाला देवे। तब तक आग देता रहे
ऊपर के धान न फूट जांय। तब शीतल होनेपर ताम्र के पात्र

इस रस को निकाल पीसकर संभाल रखे। इस रसको एक माषा पान के पत्ते और मरिचों से खाने से तीन दिन में ज्वर नाश होता है। इसका नाम शीतभञ्जीरस है॥ [मात्रा एक रत्ति दे। थाई उंगली के स्थान में आधी उंगली भर लीपे" यह पाठ भी है। "रसक" शब्द का अर्थ खपरिया न करके चन्द्रिकाकार ने टकरी" अर्थ भी किया है] ॥ २९४ ॥ २९७ ॥

अथ पञ्चाननो रसः।

रसकं तालकं तुत्थं टङ्कणं रसगन्धकम्।
तुल्यांशं सुषवीतोयैर्मर्दयेत् यामयुग्मकम् ॥२९८॥
कृत्वा गोलं ताम्रपात्रेणाधोवक्त्रेण रोधयेत्।
स्थालीं मृतकर्पटे लिप्त्वा पचेत् चुल्ल्यां दिनं ततः॥ २९९ ॥
तच्छीतं ताम्रभस्मापि गृह्णीयात् सुरसाजलैः।
यामं मर्द्यं ततो वल्लं तुलसीमारिचैर्युतम् ॥ ३०० ॥
हन्ति सर्वं ज्वरं घोरं विषमञ्च त्रिदोषजम्।
धात्रीकल्केन वा युक्तं दाहाख्यं विषमं जयेत् ॥ ३०१ ॥
पथ्यं दुग्धौदनं दद्यात् मुद्गयूषं सशर्करम्।
ज्वरे धातुगते दद्यात् पिप्पलीक्षौद्रसंयुतम्।
अयं पञ्चाननो नाम विषमज्वरनाशनः ॥ ३०२ ॥

शुद्ध खपरिया, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध सुहागा, पारा, शुद्ध गन्धक, प्रत्येक द्रव्य एक तोला लें। पहले पारे गंधक कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य उसमें मिला कर करेले के रस से हर अर्थात् छः घण्टे तक मर्दन करे फिर उसका गोला बनाकर हांडी में रखकर ऊपर से एक ताम्र पात्र का उलटा मुंह करके ढक दें। हांडी के नीचे कपड़ मिट्टी करके चूल्हे पर रख दें। दिनभर आंच देकर स्वांग शीतल होने पर उसे निकालले। अब में ताम्रभस्म एक तोला मिला कर तुलसी के रस से उसे एक र तक मर्दन करके सुखाकर रखले। इसे पञ्चानन रस कहते हैं।

इसकी डेढ़ रत्ति मात्रा लेकर तुलसी और मिरच के साथ सर्व ज्वर, विषम ज्वर, त्रिदोषज ज्वर सब दूर होते हैं। आं कल्क से मिलाकर दें तो दाह ज्वर दूर होता है। पथ्य में दूध मूंग का रस खांड मिलाकर दें धातुगत ज्वर में पिप्पली और मिलाकर देवे। यह पञ्चाननरस विषमज्वर नाशक है॥२९९॥

अथ वमनयोगः।

कुमारीमूलकर्षैकं पिवेत् कोष्णजलेन तु।
विषमन्तु ज्वरं हन्ति वमनेन चिरन्तनम् ॥ ३०३ ॥

घीकुमार की जड़ पीस कर एक कर्ष लें इसे गर्म पानी तो वमन होकर पुराना विषम ज्वर भी दूर होजाता है॥३०३॥

अथ विश्वेश्वरो रसः।

दरदं गन्धकं सूतं तुल्यांशं मर्दयेद् द्रवैः।
अश्वत्थजैस्त्र्यहं पश्चात् रसैः कोलकमूलजैः ॥ ३०४
निदिग्धिका रसैः काकमाचिकाया रसैः पुनः।
द्विगुञ्जां वा त्रिगुञ्जां वा गोक्षीरेण प्रदापयेत्।
रात्रिज्वरं निहन्त्याशु नाम्ना विश्वेश्वरो रसः ॥ ३०

शुद्ध हिंगुल, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्रव्य समभाग पहले पारे गंधक की कज्जली करें फिर हिंगुल मिला पीस पीपल वृक्ष की छाल के क्वाथ में तीन दिन तक मर्दन बेर की जड़के क्वाथ में तीन दिन, फिर कण्टकारी के रस तीन दिन, फिर मकोय के स्वरस में तीन दिन मर्दन करके या तीन रत्ति की मात्रा गौ के दूध से दें तो रात को ज्वर दूर होता है। इसका नाम विश्वेश्वर रस है। [यह र पर उत्तम योग है]॥ ३०४॥ ३०५॥

अथ त्र्याहिकारि रसः।

रसकेन समं शङ्खं शिखिग्रीवञ्च पादिकम्।
गोजिह्वया जयन्त्या च तण्डुलीयैश्च भावयेत्॥ ३०

प्रत्येकं सप्तसप्ताथ शुष्कं गुञ्जा चतुष्टयम् ।
जरणेन घृतेनाद्यात् त्र्याहिकज्वरशान्तये ॥ ३०७ ॥

शुद्ध खपरियाभस्म, शङ्खभस्म, दोनों को एक २तोला लें,शुद्ध लाथोथा छः माशे ले। तीनों को पीसकर गोजिया के रस, जय-ो के रस तथा चौलाई के रस में सात २ दिन प्रत्येक की भावना ं। सूखने पर इसकी चार रत्ति की मात्रा ले पुराने घी से खावें तृतीयक ज्वर दूर होता है ॥ ३०६ ॥ ३०७ ॥

अथ चातुर्थकारिः।

हरितालं शिलातुत्थं शङ्खचूर्णञ्च गन्धकम् ।
समांशं मर्दयेत् प्राज्ञः कुमारीरसभावितम् ॥ ३०८ ॥
शरावसम्पुटे कृत्वा पश्चाद् गजपुटे पचेत् ।
कुमारिकारसेनैव वल्लमात्रा वटीकृता ॥ ३०९ ॥
दत्ता शीतज्वरं हन्ति चातुर्थकं विशेषतः ।
मरिचघृतयोगेण तक्रंपीत्वा चरेद्वटीम् ।
एतया वमनं भूत्वा ज्वरस्तस्माद्विनश्यति ॥ ३१० ॥

शुद्ध हड़ताल, शुद्धमनसिल, शुद्ध नीलाथोथा, शङ्खभस्म,शुद्ध क, इन सबको सम भाग लेकर घीकुमार के रससे पीसे। सूखने सम्पुट कर गजपुट में फूंक देवे । फिर स्वांग शीतल होने पर निकालकर घीकुमारी के रससे घोटकर डेढ रत्ति की गोली ले। इसे देने से शीतज्वर, विशेष करके चातुर्थकज्वर दूर होता मिरच और घी के योग से तक्र को पहले पीले फिर गोली खावे। से वमन होकर ज्वर भी दूर हो जायगा ॥ ३०८—३१० ॥

अथ चिन्तामणिरसः (प्रकारभेदेन)।

रसं गन्धं विषं शुल्वं मृतमभ्रं फलत्रिकम् ।
त्र्यूषणं दन्तिबीजञ्च समं खल्ले विमर्दयेत् ॥ ३११ ॥
द्रोणपुष्पी रसैर्भाव्यं शुष्कं तत् वस्त्रगालितम् ।
चिन्तामणिरसोऽजीर्णे ह्येष वै शस्यते सदा ॥ ३१२ ॥

ज्वरमष्टविधं हन्ति सर्वशूलहरः परः ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा देयमार्द्रकवारिणा ॥ ३१३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, ताम्रभस्म, [illegible] हरड़ चूर्ण, बहेड़ाचूर्ण, आंवला चूर्ण, सोंठचूर्ण, मिरच [illegible] चूर्ण, शुद्ध दन्ती बीज । प्रत्येक द्रव्य सम भाग ले । पहले [illegible] की कज्जली करे । फिर अन्य द्रव्य मिलाकर द्रोणपुष्पी [illegible] के रस से भावना दे । जब सूख जावे तब वस्त्र से छान [illegible] रख ले यह चिन्तामणि रस अजीर्ण रोग में बड़ा अच्छा [illegible] प्रकार के ज्वरों को नाश करता है । सब शूल दूर करता [illegible] रत्ति या दो रत्ति इस रस को लेकर अदरक के स्वरस [illegible] चाहिये ॥ ३११—३१३ ॥

अथ बृहच्चिन्तामणिरसः (प्रकारभेदेन)

रसगन्धकलौहानि ताम्रं तारं हिरण्यकम् ।
हरितालं खर्परश्च कांस्यं वङ्गश्च विद्रुमम् ॥ ३१४ ॥
मुक्तामाक्षिक काशीशं शिला च टङ्कणं समम् ।
कर्पूरं च समं दत्त्वा भावना सप्तसप्तकम् ॥ ३१५ ॥
भार्गी वासा च निर्गुण्डी नागवल्ली जयन्तिका ।
कारवेल्लं पटोलश्च शक्राशनपुनर्नवे ॥ ३१६ ॥
आर्द्रकश्च ततो दद्यात् प्रत्येकं सप्तवारकम् ।
चिन्तामणि रसो नाम सर्वज्वरविनाशनः ॥ ३१७ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं साम्निपातिकम् ।
द्वन्द्वजं विषमाख्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरं जयेत् ॥ ३१[illegible] ॥
कासं श्वासं तथा शोथं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ ३१९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, ताम्र भस्म, [illegible] स्वर्ण भस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध खपरिया, कांस्य भस्म, [illegible]

भस्म, मोती भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध कसीस शुद्ध मन-शिल, शुद्ध सुहागा, कर्पूर, ये सब द्रव्य सम भाग लें। पहले पारे गन्धक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसलें। फिर नीचे लिखे द्रव्यों की भावना देवें। भारंगी, बांसा, संभालु, पान, जय-न्ती, करेला, पटोलपत्र, भांग, पुनर्नवा, अदरक। इनमें से एक२द्रव्य की सात सप्ताह तक सात बार भावना देनी चाहिये। यह चिन्ता-मणि रस एक रत्ति भर दे तो सब ज्वरों को दूर करता है। वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्वज, विषम, धातुस्थ ज्वरों को दूर करता है। खांसी, दमा, सूजन, पाण्डुरोग, हलीमक, तिल्ली, अग्रमांस और गुल्म, इन सब रोगों को दूर करता है ॥ ३१४ ॥ ३१९ ॥

महाज्वराङ्कुशः ।

पारदं गन्धकं ताम्रं हिङ्गुलं तालमेव च ।
वङ्गं लौहं माक्षिकञ्च खर्परञ्च मनःशिला ॥ ३२० ॥
मृताभ्रकं गैरिकञ्च टङ्कणं दन्तिवीजकम् ।
सर्वाण्येतानि द्रव्याणि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३२१ ॥
जम्बीरविजयाचित्र–तुलसी तिन्तिड़ीरसैः ।
एभिर्दिनत्रयं भाव्यं निर्जने रौद्रसङ्कुले ॥ ३२२ ॥
चणमात्रां वटीं कृत्वा छायाशुष्काञ्च कारयेत् ।
मन्दाग्निदीपनी चैव सर्वज्वर विनाशिनी ॥ ३२३ ॥
द्वन्द्वजं सर्वजञ्चैव चिरकालसमुद्भवम् ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च ज्वरञ्च सान्निपातिकम् ॥ ३२४ ॥
चातुर्थकं तथाऽत्युग्रं जलदोषसमुद्भवम् ।
सर्वान् ज्वरान् निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥३२५॥
महा ज्वराङ्कुशो नाम रसोऽयं मुनिभाषितः ॥ ३२६ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध हड़ताल, वंगभस्म, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, खर्परभस्म, शुद्धमनशिल अभ्रकभस्म, शुद्ध गेरू, शुद्ध सुहागा, दन्तीबीज शुद्ध, इन द्रव्यों को समभाग

ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य
पीस कर आगे लिखे द्रव्यों से भावना देवे । जम्बीरी नी
चीता, तुलसी, इमली । इन सबके रससे तीन २ दिन भा
एकान्त स्थान में धूप में भावना देनी चाहिये । फिर चने
गोली बना कर छाया में सुखा ले । यह गोली मन्दाग्नि
करके अग्नि को दीपन करती है, तथा ज्वरनाश करती है,
सन्निपातज, पुराना ज्वर, ऐकाहिक त्र्याहिक, चातुर्थक,
से उत्पन्न ज्वर, इन सब को इस प्रकार दूर करती है जि
अन्धकार को सूरज दूर करता है । यह मुनि का कहा हु
ज्वराङ्कुश रस है ॥ ३२०—३२६ ॥

अथ तन्त्रान्तरोक्त महाज्वराङ्कुशः ।

पारदं हिङ्गुलं ताम्रं माक्षिकं तुल्यमेव च ।
वङ्गं मृतञ्च गन्धश्च खर्परश्च मनः शिला ॥ ३२७
तालकं घनपाषाणं गैरिकं टङ्गणं तथा ।
दन्तीवीजानि सर्वाणि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३
भावना पूर्ववत् देया वटीं कुर्य्याच्च पूर्ववत् ॥ ३२९

शुद्धपारा, शुद्ध हिंगुल, ताम्रभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म
भस्म, शुद्धगन्धक, खर्परभस्म, शुद्ध मनसिल, शुद्ध हड़ताल
पाषाणभस्म शुद्ध गेरू, शुद्धसुहागा, शुद्ध दन्ती बीज । प्रत्ये
समभाग लें । पहले पारे गंधक की कज्जली करें । फिर अ
मिला कर ऊपर के महा ज्वराङ्कुश रस में कहे हुए सब
भावना देकर चने के बराबर गोली बनावे । पूर्व के समान
यह सब ज्वरों को दूर करती है ॥ ३२७—३२९ ॥

अथ सर्वतो भद्ररसः ।

विशुद्धं गगनं ग्राह्यं द्विकर्षं शुद्धगन्धकम् ।
तोलकं तोलकार्द्धश्च हिङ्गुलोत्थरसं तथा ॥ ३३० ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजपत्रं लवङ्गकम् ।
जातीकोषफलश्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ ३३१ ॥

कुष्ठं तालीशपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।
हरीतकी च मरिचं शृङ्गवेरविभीतकम् ॥ ३३२ ॥
पिप्पल्यामलकञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम् ।
सर्वमेकीकृतं पिष्ट्वा वटीं कुर्याद् द्विगुञ्जिकाम् ॥ ३३३ ॥
भक्षयेत् पर्णखण्डेन मधुना सितया ऽपि वा ।
रोगं ज्ञात्वा ऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥ ३३४ ॥
हन्ति मन्दानलान् सर्वान् आमदोषं विसूचिकाम् ।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभवं तथा ॥ ३३५ ॥
आनाहं मूत्रकृच्छ्रञ्च संग्रहग्रहणीं वमिम् ।
अम्लपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ ३३६ ॥
चिरज्वरं पित्तभवं धातुस्थं विषमज्वरम् ।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥ ३३७ ॥
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन कथितः पुरा ।
सर्वतो भद्रनामायं रसः साक्षात् महेश्वरः ॥ ३३८ ॥

अभ्रकभस्म दोकर्ष, शुद्ध गंधक एक तोला, हिंगुल से निकाला आ पारा आधा तोला ले । कर्पूर, नागकेसर चूर्ण, जटामांसी चूर्ण, जपात का चूर्ण, लौंग, जायफल चूर्ण, जावित्री चूर्ण, छोटी इलाची के बीजों का चूर्ण, गज पीपल का चूर्ण, कूठ का चूर्ण, तालीश त्र चूर्ण, धाय पुष्पों का चूर्ण, दारचीनी चूर्ण, मोथा चूर्ण, हरड़ र्ण, मरिच चूर्ण, सोंठ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, पिप्पली चूर्ण, आंवला र्ण इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण ले । पहले पारे गंधक की ज्जली करें । फिर अन्य द्रव्य मिलाकर जलसे पीसकर दो रत्ति भर गोली बना ले । इसे पानके रस से, शहद से या मिश्री से खावे । तःकाल इसे खाकर रोगानुसार अनुपान करे । तो सब प्रकार मन्दाग्नि दूर होती है । तथा आमदोष, विसूचिका, पित्तश्लेष्मज, तश्लेष्मजरोग, आनाह, मूत्रकृच्छ्र, संग्रहग्रहणी, वमन, अम्लपित्त,

शीतपित्त, विशेष करके रक्तपित्त, पुरानाज्वर, पित्तज्वर, धा
ज्वर, विषम ज्वर, पांच प्रकार की खांसी, कामला, पाण्डु, इन
को दूर करता है । यह सर्वतोभद्र रस साक्षात् महेश्वर
महासामर्थ्यशाली है । इसे पहले शिव जी ने कहा है (संग्रह
भी यह अपूर्व लाभ करता है) ॥ ३३०—३३८ ॥

अथ बृहज्ज्वरान्तकलौहम् ।

रसं गन्धं तोलकञ्च जातीकोषफले तथा ।
हेमभस्म तु पादैकं तोलार्द्धं रूप्यमाहकम् ॥ ३३९ ॥
शिलाजत्वभ्रकश्चैव भृङ्गराजञ्च मुस्तकम् ।
केशराजमपामार्गं लवङ्गञ्च फलत्रिकम् ॥ ३४० ॥
वराङ्गवल्कलञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
सैन्धवञ्च विडञ्चैव गुडूचीचूर्णमेव च ॥ ३४१ ॥
कण्टकारीं रसोनञ्च धान्यकं जीरकद्वयम् ।
चन्दनं देवकाष्ठञ्च दार्वीन्द्रयवमेव च ॥ ॥ ३४२ ।
किराततिक्तकं बालं तोलकञ्च समाहरेत् ।
द्वितोलं मरिचं देयं भावयेदार्द्रकद्रवैः ॥ ३४३ ॥
माषार्द्धं भक्षयेत् प्रातर्मधुना मधुरीकृतम् ।
ज्वरं नानाविधं हन्ति शुक्रस्थं चिरकालजम् ॥ ३४४
साध्यासाध्यविचारोऽत्र नैव कार्यो भिषग्वरैः ।
अन्तर्धातुगतञ्चैव नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३४५ ॥
भूतोत्थं श्रमजञ्चापि सन्निपातज्वरं तथा ।
असाध्यञ्चज्वरं हन्ति यथा सूर्योदयस्तमः ॥ ३४६ ॥
गरुडञ्च समालोक्य यथा सर्पः पलायते ।
तथैवास्य प्रसादेन ज्वरः सोपद्रवो ध्रुवम् ॥ ३४७ ॥
बलदं पुष्टिदञ्चैव मन्दाग्निनाशनं परम् ।

वीर्यस्तम्भकरश्चैव कामलापाण्डुरोगनुत् ॥ ३४८ ॥
सदा तु रमते नारीं न वीर्यं क्षयतां व्रजेत्।
प्रमेहं विविधञ्चैव विविधां ग्रहणीं तथा।
अनुपानविशेषेण सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥ ३४९ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगन्धक एक तोला ले, दोनों की कज्जली करे। फिर इसमें जायफल एक तोला, जावित्री एक तोला, स्वर्णभस्म तीन माशे, चांदीभस्म आधा तोला, लौहभस्म आधा तोला, शुद्ध शिलाजीत, अभ्रकभस्म, भांगराचूर्ण, मोथाचूर्ण, केशराजचूर्ण, अपामार्गचूर्ण, लौंगचूर्ण, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आंवलाचूर्ण, दारचीनीचूर्ण, पिप्पलामूलचूर्ण, सेंधानमक, विड्नमक गिलोय का चूर्ण, [प्रायः "गिलोय का सत" डालने का व्यवहार है], कण्टकारी चूर्ण, लशुन, धनियां चूर्ण, सफ़ेद जीरा चूर्ण, काला जीरा चूर्ण, लाल चन्दन चूर्ण, देवदार चूर्ण, दारु हल्दी चूर्ण, इन्द्र जौ चूर्ण, चिरायता चूर्ण, सुगन्ध बाला चूर्ण, इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेवें। मिरच चूर्ण दो तोला डालकर सब द्रव्यों को एकत्र घोटकर अदरक के रसकी सात भावना देवे ॥ इसे सुखाकर शीशी में रख ले। इसको आधा माषा ले शहद से मीठा करके प्रातःकाल खावे। तो नाना प्रकार के ज्वर, पुराना ज्वर, शुक्रगत ज्वर दूर होते हैं ॥ इस रसको देते समय विद्वान वैद्य साध्यया असाध्य का विचार न करे, असाध्य में भी दे दे। धातुओं के अन्दर पहुंचे हुए ज्वर को भी यह नाश करता है यह बात असन्दिग्ध है। भूतज्वर भ्रमज्वर, सन्निपात ज्वर, और असाध्य ज्वर, को भी यह ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य अन्धकार को दूर करता है। गरुड़ को देख कर जैसे सांप भाग जाते हैं वैसेही इस रसकी कृपा से उपद्रव सहित ज्वर भाग जाते हैं। यह रस बलदायक, पुष्टिदायक, मन्दाग्नि नाशक वीर्य स्तम्भकारक, कामला पाण्डुरोग नाशक है। इसे सेवन करने वाला नित्य नारी से रमण करता है तथा वीर्य भी क्षयको प्राप्त नहीं होता है। विविध प्रकार के प्रमेह, विविध ग्रहणी रोग, तथा अन्य सब रोग भी विविध अनुपानों से दूर करता है ॥ ३३९—३४९ ॥

अथ चूड़ामणिरसः ॥

मृतं सूतं प्रवालञ्च स्वर्णं तारञ्च वङ्गकम् ।
शुल्वं मुक्ता तीक्ष्णमभ्रं सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ ३५०
पिष्ट्वा जलेन वटिका कार्य्या वल्लप्रमाणतः ।
धातुस्थं सन्निपातोत्थं ज्वरं विषमसम्भवम् ॥ ३५१
कामशोकसमुद्भूतं त्रिदोषजनितं तथा ।
कासं श्वासञ्च विविधं शूलं सर्वाङ्गसम्भवम् ॥ ३५२
शिरोरोगं कर्णशूलं दन्तशूलं गलग्रहम् ।
वातपित्तसमुद्भूतं ग्रहणीं सर्वसम्भवाम् ॥ ३५३ ॥
आमवातं कटिशूलमग्निमान्द्यं विसूचिकाम् ।
अर्शांसि कामलां मेहंमूत्रकृच्छ्रादिकञ्च यत् ॥ ३५४
तत्सर्वं नाशयत्याशु विष्णुचक्रमिवासुरान् ।
चूड़ामणिरसो ह्येष शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ३५५ ॥

रससिन्दूर, प्रवाल भस्म, स्वर्णभस्म, चांदी भस्म, वं
ताम्र भस्म, मोती भस्म, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्र
भाग लें। सबको पीस जलसे डेढ़ रत्ति की गोली बना लें। इ
करें तो धातुगत, सन्निपात, विषम, कामज, शोकज, त्रिदोष
दूर होते हैं। तथा कास, श्वास, विविधशूल, सर्वाङ्गशूल, शि
कर्णशूल, दन्तशूल, गलग्रह, वातपित्तज रोग, तथा सर्वदो
संग्रहणी भी दूर होती है। आमवात, कटीशूल अग्नि मान्द्य,
का, बवासीर, कामला, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, आदि रोगों को शी
करता है। जैसे असुरों के विष्णु का सुदर्शनचक्र नाश कर
यह रस शिव जी ने बनाया है ॥ ३५०—३५५ ॥

अथ भानुचूड़ामणिः ।

सुवर्णं रससिन्दूरं प्रवालं वङ्गमेव च ।
लौहं ताम्रं तेजपत्रं यमानीं विश्वभेषजम् ॥ ३५६ ॥

सैन्धवं मरिचं कुष्ठं खदिरं द्विहरिद्रकम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥ ३५७ ॥
वारिणा वटिका कार्य्या रक्तिद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय सर्व्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ३५८ ॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, प्रवालभस्म, वंगभस्म, लोहभस्म, ताम्रभस्म, तेजपत्र चूर्ण, अजवायन का चूर्ण, सोंठचूर्ण, सेंधानमक, मिरचचूर्ण, कूठचूर्ण, कत्थाचूर्ण, हल्दीचूर्ण,दारुहल्दी का चूर्ण,रसौंत, स्वर्णमाक्षिकभस्म। प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। चूर्ण कर जल से दो रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसे प्रातःकाल सेवन करे तो सब ज्वर नाश करती है ॥ ३५६—३५८ ॥

अथ बृहच्चूड़ामणि रसः ।

कस्तूरिका विद्रुम रौप्यलौहं तालं हिरण्यं रससिन्दुरञ्च ।
सुवर्णसिन्दूरलवङ्गमुक्ताः चोचंघनं माक्षिकराजपट्टम् ॥ ३५९ ॥
गोक्षूरजातीफलजाति कोषं मरीचकर्पूरशिखिग्रिवञ्च ।
प्रगृह्य सर्वं हि समं प्रयत्नात् अथाश्वगन्धाद्विगुणं हि वैद्यः ३६०
वक्ष्यमाणौषधैर्भाव्यं प्रत्येकं मुनिसंख्यया ।
निर्गुण्डीफञ्जिकावासा—रविमूल त्रिकण्टकैः ॥ ३६१ ॥
तद्वीर्य्यं कथयिष्यामि वातिकं पैत्तिकं ज्वरम् ।
कफोद्भवं द्विदोषोत्थं त्रिदोषजनितं तथा ॥ ३६२ ॥
सन्ततं सततं हन्ति तृतीयकचतुर्थकौ ।
ऐकाहिकं द्व्याहिकञ्च विषमं भूतसम्भवम् ॥ ३६३ ॥
नाशयेदचिरादेव वृक्षामिन्द्राशनिर्यथा ।
चूड़ामणिरसो ह्येष शिवेन परिभाषितः ॥ ३६४ ॥

कस्तूरी, प्रवालभस्म, रौप्यभस्म, लौहभस्म, हड़तालशुद्ध, स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, सुवर्णसिन्दूर, लौंग, मोतीभस्म, दारचीनी, मोथा, स्वर्णमाक्षिकभस्म, कान्तपाषाणभस्म, गोखरुचूर्ण, जायफल

चूर्ण, जावित्री चूर्ण, मिरचचूर्ण, कपूर, शुद्ध नीलाथोथा द्रव्य एक २ तोला लेकर मिलावे फिर असगंध का चूर्ण डाल कर आगे कही औषधों से सात सात बार प्रत्येक की देवे। निर्गुण्डी, ब्रह्मयष्टी, बांसा, आक की जड़, गोखरू, या काढ़े से भावना दें। फिर सूख जाने पर सुरक्षित रखे। सेवन से वातिक, पैत्तिक, कफज, द्विदोषज, त्रिदोषज, सतत, तृतीयक, चातुर्थक, ऐकाहिक, द्व्याहिक विषमज्वर सब नष्ट होजाते हैं। बिजली जिस प्रकार वृक्षों को नष्ट वैसे ही यह ज्वरों को नष्ट करता है। इसका नाम चूडामणि इसे स्वयं शिवजी ने कहा है [मात्रा एक रत्ती दें] ॥ ३५९-

अथ बृहज्ज्वरचूड़ामणिरसः ।

स्वर्णं स्वर्णसिन्दूरं लौहं तारं मृगाण्डजाम् ।
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गञ्च त्रिकण्टकम् ॥ ३६५
कर्पूरं गगनञ्चैव चोचं मुषलतालकम् ।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु तुरङ्गश्च द्विकार्षिकम् ॥ ३६६ ॥
विद्रुमं भस्मसूतञ्च मौक्तिकं माक्षिकं तथा ।
राजपट्टं शिखिग्रीवं सर्वं सञ्चूर्ण्य यत्नतः ।
खल्ले तु चूर्णमादाय भावयेत् परिकीर्त्तितैः ॥ ३६७
निर्गुण्डी फञ्जिका वासा--रविमूलत्रिकण्टकैः ।
ज्वरमष्टविधंहन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ३६८

इति रसेन्द्रसारसङ्ग्रहे ज्वराधिकारः ॥

स्वर्ण भस्म, स्वर्णसिन्दूर, लौह भस्म, चांदीभस्म, जायफल चूर्ण, जावित्री का चूर्ण, लौंग का चूर्ण, गोखरू, कपूर, अभ्रक भस्म, दारचीनी का चूर्ण, मूसली का चूर्ण। ने "मुषल तालकम्" का अर्थ मूसली तथा हड़ताल भी परन्तु अन्य रस ग्रन्थों में इस योग में "हड़ताल" नहीं पढ़ी कारण यहां केवल मूसली की जड़ अर्थात् मूसली ही ठीक

कृत टीकाकार भी यही मानता है) इन द्रव्यों में से प्रत्येक को २ कर्ष लें। शुद्ध गंधक दो कर्ष लें। मूंगाभस्म, रस सिन्दूर, ी भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, कान्त पाषाण भस्म, शुद्धनीलाथोथा क द्रव्य दो २ कर्ष लें इन सबको एकत्र करके यत्न से पीसकर शः आगे लिखे द्रव्यों की भावना देवें। संभालु, ब्रह्मदण्डी, बांसा, क की जड़, गोखरु इनके काढ़ े या स्वरस से लेकर प्रत्येक से सात भावना देवे। फिर एक २ रत्ति की गोली बनावे। इसके सेवनसे ठों प्रकारके ज्वर, साध्य या असाध्य दोनों दूर होते हैं॥३६५-३६८॥

इति रसेन्द्रसार संग्रहे ज्वराधिकारः समाप्तः ॥

अथ ज्वरातिसार-चिकित्सा ॥

अथ मृतसञ्जीवनी वटी ॥

मागधी वत्सनाभश्च तयोस्तुल्यश्च हिङ्गुलम् ।
मृतसञ्जीवनी ख्याता जम्बीररसमर्दिता ॥ १ ॥
मूलकस्य च वीजानां वटिका तुल्यरूपिणी ।
पानीया शीततोयेन ज्वरातीसारनाशिनी ।
विसूच्यां सन्निपाते च ज्वरे चैवातिदुस्तरे ॥ २ ॥

पिप्पलीचूर्ण एक तोला, शुद्ध वत्सनाभ एक तोला, शुद्ध गुल दो तोला इन सबको मिला पीस कर जम्बीरी नीबू के रससे र कर मूली के बीज के बराबर गोली बनावे । इसे ठण्डे जल से न से ज्वरातीसार दूर होता है। विसूची, सन्निपात तथा भयंकर र में भी यह लाभ देती है ॥ १ २ ॥

अथ आनन्दभैरवो रसः ।

हिङ्गुलश्च विषं व्योषं टङ्कणं गन्धकं समम् ।
जम्बीररससंयुक्तं मर्दयेत् यामकद्वयम् ॥ ३ ॥
कासश्वासातिसारेषु ग्रहण्यां सान्निपातिके ।

अपस्मारेऽनिले मेहेऽप्यजीर्णे वन्हिमान्द्यके ।
गुञ्जामात्रः प्रदातव्यो रस आनन्दभैरवः ॥ ४ ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्धविष, सोंठचूर्ण, मिरच चूर्ण पीपल सुहागा, शुद्ध गन्धक, सब द्रव्य सम भाग लेकर पीसा नीबू के रस से घोटकर एक रत्ति प्रमाण की गोली आनन्द भैरव रस कहाता है। इसके सेवन से खांसी, सार, ग्रहणी, सन्निपात, अपस्मार, वातरोग, प्रमेह, अ मांद्य रोग नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथ अमृतार्णवो रसः ।

हिङ्गुलोत्थो रसो लौहं टङ्कणं गन्धकं शटी ।
धान्यकं वालकं मुस्तं पाठाऽजाजी घुणप्रिया ॥ ५ ॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।
माषैका वटिका कार्या रसोऽयममृतार्णवः ॥ ६ ॥
वटिकां भक्षयेत् प्रातर्गहनानन्दभाषिताम् ।
धान्यजीरकयूषेण विजयाशणबीजतः ॥ ७ ॥
मधुना च्छागदुग्धेन मण्डेन शीतवारिणा ।
कदलीमोचकरसैः कश्वटद्रवकेण च ॥ ८ ॥
अतिसारं जयेदुग्रमेकजं द्वन्द्वजं तथा ।
दोषत्रयसमुद्भूतमुपसर्गसमन्वितम् ॥ ९ ॥
शूलघ्नो वन्हिजननो ग्रहण्यर्शोविकारनुत् ।
अम्लपित्तप्रशमनः कासघ्नो गुल्मनाशनः ॥ १० ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा, लौहभस्म, शुद्ध सु गंधक, कचूर चूर्ण, धनियां चूर्ण, सुगन्धबाला चूर्ण, मोथा चूर्ण, जीरा चूर्ण, अतीस का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक चूर्ण करके, बकरी के दूध से पीसकर एक माषा बनाओ। इस रसका नाम अमृतार्णव रस है तथा

इसको कहा है। इस रसकी गोली प्रातःकाल खावे और अनुपानों में मूंगके रस में धनियां और जीरा का चूर्ण मिलाकर पिवें। अथवा भांग के बीज और सनके बीजों के चूर्ण के साथ इसे दें। इसे मधु के साथ, बकरी के दूध के साथ अथवा चावलों के मण्ड के साथ, अथवा शीतल जल से अथवा केले के रस से अथवा केले के फल के साथ, चौलाई के रससे। इन भिन्न२ अनुपानोंसे देनेसे उग्रअतीसार को दूर करता है, एकज, द्वन्द्वज, त्रिदोषज तथा उपद्रवों से युक्त अतिसार को दूर करता है। शूलनाशक, अग्निदीपक, ग्रहणी, बवासीर, अम्लपित्त, खांसी तथा गुल्मरोग को नाश करता है। [आज कल इसकी मात्रा छः रत्तिकी व्यवहार की जाती है।] ॥५—१०॥

अथ सिद्धप्राणेश्वरो रसः।

गन्धेशाभ्रं पृथग्वेदभागमन्यच्च भागिकम्।
स्वार्जिटङ्गयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥ ११ ॥
वराव्योषेन्द्रबीजानि द्विजीराग्नियमानिकाः।
सहिङ्गुजीरसारश्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १२ ॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूतः प्राणिनां प्राणदायकः।
माषैकं भक्षयेदस्य नागवल्लीदलैर्युतम् ॥ १३ ॥
उष्णोदकानुपानश्च दद्यात् तत्र पलत्रयम्।
ज्वरातिसारे ऽतिस्रुतौ केवले वा ज्वरे ऽपि वा ॥ १४ ॥
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदे ऽपि च।
वातरोगे तथा शूले शूले च परिणामजे ॥ १५ ॥

शुद्धगंधक चार तोला, शुद्धपारा चार तोले, दोनों की कज्जली करे। इसमें अभ्रक भस्म चार तोला मिलावे। फिर सज्जी, यवक्षार, शुद्ध सुहागा, पांचों नमक, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इन्द्रजौ, ज़ीरा सफेद, जीरा काला, चीता, अजवायन, हींग, विडङ्ग, सौंफ इनमें से एक २ द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लेकर मिलावे। सब को पीसकर जलमें एक माषा भरकी गोली बनाले। इस रसको एक

माषा भर लेकर पान के पत्तों के रस से खावें और अनुपान; पल गरम पानी पीवें तो ज्वरातीसार, अति पतले दस्त, कफ, त्रिदोषजज्वर, घोर ग्रहणी, वातरोग, शूलरोग, परिणामशूल लाभ करता है ॥ [तीन रत्ति की गोली दें] ॥ ११—१५ ॥

अथ अभ्रवटिका ।

अथ शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च ।
प्रत्येकं कर्षमानन्तु ग्राह्यं रसगुणैषिणा ॥ १६ ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत् ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च ॥ १७ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याथ जयन्त्याः स्वरसं तथा ।
मण्डूकपर्ण्याः स्वरसं तथा शक्राशनस्य च ॥ १८ ॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम् ।
दापयेद्रसतुल्यञ्च विधिज्ञः कुशलोभिषक् ॥ १९ ॥
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं मरिचसम्भवम् ।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम् ॥ २० ॥
शुभेशिलामये पात्रे घर्षणीयं प्रयत्नतः ।
शुष्कमातपसंयोगाद् वटिकां कारयेद् भिषक् ॥ २१ ॥
कलायपरिमाणान्तु खादेत् तान्तु प्रयत्नतः ।
दृष्ट्वा वयश्चाग्निबलं यथाव्याध्यनुपानतः ॥ २२ ॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम् ।
परं वाजीकरः श्रेष्ठो बलवर्णाग्निवर्द्धकः ॥ २३ ॥
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्ध एष प्रयोगराट् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यते ऽभ्ररसायनात् ॥ २४ ॥
भोजने शयने पाने नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ।
दधि चावश्यकं भक्ष्यं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥ २५ ॥

शुद्ध पारा एक कर्ष, शुद्ध गंधक एक कर्ष, दोनों की कज्जली करे।
र अभ्रक भस्म एक कर्ष, सोंठ चूर्ण एक कर्ष, मिरच चूर्ण एक कर्ष,
फल का चूर्ण एक कर्ष मिलाकर घोटे। फिर केशराज, भांगरा,
गालु, चीता, ग्रीष्मसुन्दरक या गीमा शाक जयन्ती, मण्डूकपर्णी,
ग, श्वेतअपराजिता के पत्तों के रस से, । इन सब बूटियों के रस
क्वाथ को एक २ कर्ष भर लेकर उस चूर्ण में डालकर पत्थर की
रल में घोटे। फिर मिरचों का चूर्ण एक कर्ष तथा शुद्ध सुहागे को
ग्घा कर्ष डालकर फिर घोट ले। और सूखने से पहले ही इसकी
र के बराबर गोली बना लें और धूप में सुखाकर रखें। इसकी
त्रा खाकर ऊपर आयु, बल और रोगानुसार अनुपान भी दे तो
सी, श्वास, क्षय, वात श्लेष्मज पीड़ाएँ दूर होती हैं। यह परम
जीकरण है और बल, वर्ण और अग्निवर्द्धक है। ज्वर और अती-
र में यह योगराज प्रसिद्ध है। इस अभ्ररसायन से बढ़कर और
इ औषध नहीं। भोजन में, शयन में, पीने में कोई विशेष नियम
हीं है। नागार्जुनमुनि ने इसमें दही खाना अवश्यक पथ्य
ना है ॥ १६—२५ ॥

अथ कनकसुन्दरो रसः।

हिङ्गुलं मरिचं गन्धं टङ्गणं पिप्पलीं विषम्।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः।
मर्दयेद् याममात्रन्तु चणमात्रा वटी कृता ॥ २६ ॥
भक्षणाद् ग्रहणीं हन्ति रसः कनकसुन्दरः।
अग्निमान्द्यं ज्वरं तीव्रमतिसारञ्च नाशयत्।
दध्यन्नं दापयेत् पथ्यं सदा तक्रौदनं हितम् ॥ २७ ॥

शुद्ध हिंगुल, मरिच चूर्ण, शुद्ध गंधक, शुद्ध सुहागा, पिप्पली
र्ण, शुद्धविष, धतूरे के बीज सब सम भाग लेकर पीसें। भांग के
स से एक पहर मर्दन करके चने के समान गोली बनाकर खावें तो
हणी, अग्निमांद्य, ज्वर, तथा तीव्र अतीसार, नाश करता है। इसमें दही,
ावल और छाछका पथ्य देना कहा है। इसका नाम कनकसुन्दर
ा है ॥ २७ ॥

अथ कनकप्रभावटी ।

सुवर्णवीजं मरिचं मराल-पादं कणा टङ्कणकं विषञ्च
गन्धं जयाद्भिर्दिवसं विमर्द्य गुञ्जाप्रमाणां वटिकां विदध्या
एषा ऽतिसारग्रहणीं ज्वराग्नि-मान्द्यं निहन्यात् कनकप्र
दध्योदनं भोज्यमनुष्णवारि मांसं भजेत्तित्तिरि लावकानाम्

शुद्ध धतूरे के बीज, मिरच चूर्ण, हंसपदी अर्थात् चूर्ण, पिप्पली चूर्ण, शुद्ध सुहागा, शुद्ध विष, शुद्ध गन्धक, सम भाग लेकर पीसकर भांग के रस से एक दिन घोटकर प्रमाण की गोली बनावे। इसे सेवन करने से अतिसार, ग्र अग्निमांद्य, नाश होते हैं। इसमें दही, चावल, ठण्डाजल, बटेर का मांस खाना पथ्य है। यह कनकप्रभावटी है॥ २

अथ कारुण्यसागररसः।

भस्मसूताद्द्विधागन्धं तथा द्वित्वं मृताभ्रकम्।
दिनं सार्षपतैलेन पिष्ट्वा यामं विपाचयेत् ॥ ३०॥
रसैर्मार्कवमूलोत्थैः पिष्ट्वा यामं विपाचयेत्।
त्रिक्षारपञ्चलवण-विषव्योषाग्नि जीरकैः ॥ ३१॥
सविडङ्गैस्तुल्यभागैरयं कारुण्यसागरः।
माषमात्रं ददीताऽस्य भिषक् सर्वातिसारके ॥ ३२॥
सज्वरे विज्वरे वा ऽपि सशूले शोणितोद्भवे।
निरामे शोथयुक्ते वा ग्रहण्यां सान्निपातिके।
अनुपानं विनाप्येष कार्यसिद्धिं करिष्यति ॥ ३३॥

रससिन्दूर एक तोला, शुद्ध गन्धक दो तोला, अभ्र तोला। तीनों को पीस सरसों के तेल से घोटकर बालु एक पहर पका लेवे। फिर भांगरे के रसमें पीसकर एक कायन्त्र में पकावे। फिर यवक्षार, शुद्ध सुहागा, सज्जी, पां शुद्धविष, सोंठ चूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपल चूर्ण, चीता

र्ण, विडंग चूर्ण, इनमें से प्रत्येक द्रव्य पांच २ तोला लेकर पहले य में मिलाकर घोटे । फिर एक माषा भरकी गोली बनाकर इसे से सब प्रकार का अतीसार, ज्वरातिसार,केवल अतीसार,अती-र के उपद्रव शूल, रक्तजाना, निराम, शोथ युक्त आदि अतीसारों भी, तथा ग्रहणी, सन्निपात में भी यह कारुण्यसागर रस दें तो भ होता है । बिना अनुपान के देने सेभी यह कार्य सिद्धि ता है ॥ ३०-३३ ॥

अथ बृहत्कनकसुन्दरो रसः ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मरिचं टङ्कणं तथा ।
स्वर्णवीजंसमं मर्द्यं भार्गीद्रावैर्दिनार्द्धकम् ॥ ३४ ॥
सूततुल्यं मृतञ्चाभ्रं रसः कनकसुन्दरः ।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति पित्तासीरमुग्रकम् ॥ ३५ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, मिरच्च चूर्ण, शुद्धसुहागा, काले धतूरे शोधितबीज, प्रत्येकद्रव्य एक २ तोलाले । पहले पारागंधककी जली करे । फिर अन्य द्रव्य मिला कर पीस ले और भारंगी के या क्वाथ से आधा दिन घोटे । फिर अभ्रकभस्म एक तोला ला कर पीस कर दो रत्ति भर की गोली बनादे । इस कनक दर रस से प्रबल पित्तातीसार भी नाश होता है ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथ मृतसञ्जीवनो रसः ।

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ सूतपादं विषं क्षिपेत् ।
सर्वतुल्यं मृतञ्चाभ्रं मर्द्यं धुस्तूरजैर्द्रवैः ॥ ३६ ॥
सर्पाक्ष्याश्च द्रवैर्यामं कषायेणाथ भावयेत् ।
धातक्यतिविषा–मुस्तं शुण्ठी–जीरक–बालकम् ॥ ३७ ॥
यमानी धान्यकं विल्वं पाठा पथ्या कणान्विता ।
कुटजस्य त्वचं वीजं कपित्थं दाडिमं बलाम् ॥ ३८ ॥
प्रत्येकं कर्षमात्रं स्यात् कुट्टितं क्वाथयेत् जलैः ।
चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत् पादावशोषितम् ॥ ३९ ॥

अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वोक्तं मर्दितं रसम्।
रुद्ध्वा तद्वालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वाग्निना पचेत्॥ ४०॥
मृतसञ्जीवनो नाम चास्य गुञ्जाचतुष्टयम्।
दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत्॥ ४१॥
षट्प्रकारमतीसारं साध्यासाध्यं जयेत् ध्रुवम्।
नागरातिविषा मुस्तं देवदारु कणा वचा॥ ४२॥
यमानी बालकं धान्यं कुटजत्वक् हरीतकी।
धातकीन्द्रयवौ विल्वं पाठामोचरसं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यमनुपानं सुखावहम्॥ ४३॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगन्धक एक तोला दोनों की करे। फिर शोधित विष तीन माशे तथा अभ्रकभस्म दो तो माशे डाल कर सब को पीस धतूर के रस से घोटे। फि (कोई शालिञ्चीशाक और कोई रास्ना भी अर्थ लेते हैं) के या कषाय से एक पहर तक भावना देवें। इसके अनन्तर फूल, अतीस, मोथा, सोंठ, जीरा, सुगन्धबाला, अजवायन, बिल, पाठा, हरड़, पीपली, कुटज की छाल, इन्द्रजौ, कैथ दाना, बला, इन सत्तरह द्रव्यों में से प्रत्येक को एक २ क सब को मिला कर जौकुट करके इनसे चौगुना अर्थात् ६८ डाल कर पकावे। शेष सत्तरह कर्ष बचने पर उतार कर से पूर्वोक्त घुटे हुए पारदादि को तीन दिन तक भावित करे पर इसको एक हांडी में रख, एक छोटे शराव से ढक दे और लेप कर ऊपर हांडी में रेता भर दे। इस प्रकार के बालुका एक क्षण अर्थात् चार दण्ड तक पकावे। अग्नि मंद २ हो निकाल कर चार रत्ति भर की गोली जल से बनावे। इसे अनुपान से देने से छः प्रकार का साध्य या असाध्य अतीसार होता है। इसके साथ आगे लिखा अनुपान करे। सोंठ, मोथा, देवदारु, पिप्पली, वच, अजवायन, सुगन्धबाला,

निया, कुड़े की छाल, हरड़, धाय के फूल, इन्द्र जौ, बिल, पाठा, चरस, सब द्रव्य समभाग लेकर कूट पीस कर चूर्ण कर इसे शहद से चाटे । चूर्ण की मात्रा तीन माशे तक है ॥३६—४३॥

अथ प्राणेश्वरो रसः ।

रसगन्धकमभ्रञ्च टङ्कणं शतपुष्पकम् ।
यमानी जीरकाख्यश्च प्रत्येकं कर्षयुग्मकम् ॥ ४४ ॥
कर्षमेकं यवक्षारं हिङ्गुपटुकपञ्चकम् ।
विडङ्गेन्द्रयवं सर्ज-रसकश्चाग्निसंज्ञितम् ।
घृष्ट्वा च वटिका कार्य्या नाम्ना प्राणेश्वरो रसः ॥ ४५ ॥
पित्तज्वरे पित्तभवे ऽतिसारस्तथातिसारे यदि वा ज्वरः स्यात् ।
दोषस्य दूषस्य समानभावात् ज्वरातिसारः कथितो भिषग्भिः ॥४६॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्धसुहागा, सौंफचूर्ण, अजवायन चूर्ण जीरा चूर्ण, प्रत्येक दो २ कर्ष लें । पहले पारेगन्धक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला लें । फिर यवक्षार, हींग, पाँचों नमक, विडंग, इन्द्रजौ, राल, चीता, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का एक एक २ कर्ष लें । सब को मिला पीस कर जल से घोट गोली बना लें । इसका नाम प्राणेश्वर रस है । इसे देने से पित्तज्वर में होने वाला पित्तातीसार तथा अतिसार में होने वाला ज्वर अर्थात् ज्वरातीसार अच्छा होता है । वातादि दोष और रसरक्तादि दूष्यों के समान होने से ज्वरातिसार होता है विद्वान वैद्यों ने कहा है । [इसकी मात्रा एक रत्ति की है] ॥ ४६ ॥

इति ज्वरातिसार-चिकित्सा ॥

अथ अतीसार-चिकित्सा ।

अथ अतिसारवारणो रसः ।

दरदं कृतकर्पूरं मुस्तेन्द्रयवसंयुतम् ।
सर्वातीसारशमनं खाखसीक्षीरभावितम् ॥ १ ॥

शुद्ध हिंगुल, उड़ाया हुआ कपूर, मोथा चूर्ण, इन्द्रजौ प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर अफीम के रस से भावित कर रत्ति भरकी गोली बनालें । इससे सब अतीसार शान्त हों।

अथ पूर्णचन्द्रोदयो रसः ।

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलं पलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ २ ॥
जातीकोषमुरापत्रं शटीतालीश केशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पिचुमम्मितम् ॥ ३ ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वरूपिणीम् ॥ ४ ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
रसायनवरश्चायं वाजीकरण उत्तमः ॥ ५ ॥

शुद्ध हड़ताल, लोह भस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य लें । कपूर, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्रव्य आठ आठ जावित्री चूर्ण, मुरामांसी चूर्ण, तेजपत्र चूर्ण कचूर चूर्ण, चूर्ण, नागकेशर चूर्ण, सोंठ चूर्ण, मिरच चूर्ण, पीपल चूर्ण, का चूर्ण, पिप्पलामूल चूर्ण, लौंग चूर्ण, ये सब एक २ कर्ष पारा गंधक की कज्जली करें फिर सब द्रव्यों को मिलाकर गोली बनाले । इसे गुरू तथा देव ब्राह्मण की पूजा करनेवाला काल खाये तो नाना रूप के अतिसार, सब प्रकार की ग्रहणी पित्त, शूल, परिणाम शूल इन सबको नाश करता है । तथा वाजीकरण और रसायन भी है [मात्रा एक रत्ति की है

अथ कणाद्यं लौहम्।

कणा नागरपाठाभिस्त्रिवर्गत्रितयेन च।
विल्वचन्दनह्रीवेरैः सर्वातीसारजिद्भवेत् ॥ ६ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तामपि हन्ति प्रवाहिकाम्।
नानेन सदृशं लौहं विद्यते ग्रहणीहरम् ॥ ७ ॥

पिप्पली, सोंठ, पाठा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़ बेहड़ा आंवला, डंग, नगरमोथा, चीता, विलका गूदा, लाल चन्दन, सुगन्धबाला, नमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण सम भाग ले और सबके बराबर लौह स्म डाले। इसकी गोली बना रखे। इसे देने से सब अतीसार दूर ते हैं। तथा सब उपद्रवों से प्रयुक्त प्रवाहिका रोग को यह लौह र करता है। इस "कणाद्यलौह" से बढ़कर और ग्रहणी रोग को श करने वाला लौह नहीं है॥ [मात्रा दो रत्तिकी देवे]॥ ६ ॥ ७॥

अथ बृहद्गगनसुन्दरो रसः।

पारदं गन्धकञ्चाभ्रं लौहञ्चापि वराटकम्।
रूप्यं चातिविषं कर्षं समभागं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥
धान्यशुण्ठीकृतक्वाथैर्भावयेच्च पृथक् पृथक्।
गुञ्जाप्रमाणां वटिकां कारयेत् कुशलो भिषक् ॥ ९ ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः।
दग्धविल्वं गुडेनैव कुर्यात् तदनुपानकम् ॥ १० ॥
अजादुग्धेन वा पेयं जम्बूत्वक्साधितं रसम्।
अतीसारे ज्वरे घोरे ग्रहण्यामरुचौ तथा ॥ ११ ॥
सामे सशूले रक्ते च पिच्छास्रावे भ्रमे तथा।
शोथे रक्तातिसारे च संग्रहग्रहणीषु च ॥ १२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, लौह भस्म, कौड़ी भस्म, ांदी भस्म, अतीस का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष ले। पहले ारे गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सबको पीस

कर धनियां और सोंठ के काढ़ों से पृथक् २ भावना देवे एक रत्ति प्रमाण की गोली बनाकर प्रातःकाल गुरु ब्राह्मण पूजा सत्कार करके इसे खाये । इसके साथ कच्चे बिलकी मूल मिलाकर अनुपान रूप से खावे । अथवा बकरी के दूध या की छालके काढ़े से इसे पीवे । अतीसार, घोर ज्वर, ग्रहणी साम तथा शूलसहित अतिसार में रक्तातीसार में, पिच्छातिसार भ्रम में, शोथ में, रक्तातीसार तथा संग्रह ग्रहणी को दूर करता है ॥ ८—१२ ॥

लोकनाथो रसः ॥

भस्मसूतस्य भागैकं चतुरः शुद्धगन्धकात् ।
क्षिप्त्वा वराटिकागर्भे टङ्कणेन निरुध्य च ॥ १३ ॥
भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १४ ॥
नागरातिविषामुस्तं देवदारुवचान्वितम् ।
कषायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनः ॥ १५ ॥

रससिन्दूर एक तोला, शुद्ध गंधक चार तोला, दोनों कर मिलावे । फिर कौड़ियों के पेट में इसे भर कर बकरी के दूध तथा सुहागे से बंद करके सुखा कर एक रख ऊपर से मुंह बंद कर गजपुट में उसे रख कर फूंक देवे शीतल होने पर निकाल कर चार रत्ति भर इसकी मात्रा मिला कर खावे । अनुपान में सोंठ, अतीस, मोथा, देवदारु बच । इनका काढ़ा बना कर पिये तो सब प्रकार का अतिसार होता है ॥ १३—१५ ॥

चिन्तामणिरसः ।

शुद्ध सूतं मृतं ताम्रं गन्धकं प्रतिकार्षिकम् ।
चूर्णयेद्विषकर्षार्द्धं विषार्द्धं तिन्तिड़ीफलम् ॥ १६ ॥
मर्दयेत् खल्लमध्ये तु चाम्लेन गोलकीकृतम् ।
गर्त्तं षडङ्गुलं कुर्य्यात् सर्वतो वर्त्तुलं शुभम् ॥ १७ ॥

नागवल्ल्याः क्षिपेत् पत्रमादौ पात्रे च गोलकम्।
आच्छाद्य तच्च पात्रेण रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥ १८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य सपत्रञ्च विशेषतः।
कर्षार्द्धं मरिचं दत्त्वा कर्षार्द्धं तिन्तिड़ीफलम् ॥ १९ ॥
गुञ्जामितां वटीं कुर्य्यात् चिन्तामणिरसो महान्।
अतिसारे त्रिदोषोत्थे संग्रहग्रहणीगदे।
अनुपानं विधातव्यं यथादोषानुसारतः ॥ २० ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक प्रत्येक एक २ कर्ष लेकर कज्जली करे। ताम्रभस्म एक कर्ष मिला कर चूर्ण करे। फिर शोधित विष ा कर्ष, इमली का फल चौथाई कर्ष, मिलावे। सबको खूब ा करे। तथा कांजी से घोटकर एक गोला बनावे। उस गोले में ंगल गोल गढा बनाकर उसमें पान के पत्ते भरदे। फिर उस के ऊपर भी पान के पत्ते लपेट कर ऊपर से कपड़ मिट्टी भी । अथवा पात्र में बंदकर संधि बंद करके गजपुट में फूंक लेवे। शीतल होने पर मिट्टी उतार उस गोले का पत्तों समेत चूर्ण । और फिर इसमें मरिच चूर्ण आधा कर्ष और इमली का फल ा कर्ष मिलाकर घोटकर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनाले। चिन्तामणि रस कहाता है। इसे अतिसारमें, त्रिदोषज संग्रहणी े। इसके साथ दोषानुसार भिन्न २ अनुपान पीवे ॥ १९–२० ॥

अहिफेन वटिका।

अहिफेनं सखर्जूरं घृष्ट्वा गुञ्जैकमात्रकम्।
रक्तस्रावमतीसारमतिवृद्धं विनाशयेत् ॥ २१ ॥

शुद्ध अफीम, खजूर, दोनों को समभाग पीसकर एक रत्ति ग की गोली बनावे। इसे सेवन करने से अति बढ़ा हुआ रक्ताती- और अतीसार नाश होता है ॥ २१ ॥

महागन्धकं सर्वाङ्गसुन्दरञ्च।

रसगन्धकयोः कर्षं ग्राह्यमेकं सुशोधितम्।

ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन साधयेत् ॥ २२ ॥
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गारिष्टपत्रके ।
(सिन्धुवारदलञ्चैव एलाबीजं तथैव च) ॥ २३ ॥
एषाञ्च कर्षमात्रेण तोयेनाथ विमर्दयेत् ।
मुक्तागृहे पुनः स्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४ ॥
घनपङ्कं वहिर्लिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।
गुञ्जाषट्कप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २५ ॥
एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महौषधम् ।
ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव बलवर्णप्रसाधनम् ॥ २६ ॥
दुर्वारं ग्रहणीरोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।
सूतिकाञ्च जयेदेतद्रक्तार्शो रक्तसम्भवम् ॥ २७ ॥
पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः ।
यत्रौषधवरस्तिष्ठेत् तत्रसीमां न यान्ति ते ॥ २८ ॥
बालानां गदयुक्तानां स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः ।
महागन्धकमेतद्धि सर्वव्याधिनिसूदनम् ।
विना पाकेन सर्वाङ्गसुन्दरो ऽयं प्रकीर्त्तितः ॥ २९ ॥

ग्रहण्यां ये रसाः प्रोक्तास्ते ऽतीसारेप्रकीर्त्तिताः ॥ ३० ॥

शुद्ध पारा एक कर्ष, शुद्ध गन्धक एक कर्ष, दोनों की कज्जली करके मृदु २ पाक से पर्पटी की तरह पकावे । इसकी पर्पटी फिर चूर्ण करके इसमें जायफल का चूर्ण एक कर्ष, जावित्री एक कर्ष, लौंगका चूर्ण एक कर्ष, नीमके पत्तोंका चूर्ण एक कर्ष, के पत्तोंका चूर्ण एक कर्ष, इलायचीके बीजोंका चूर्ण एक कर्ष को इकट्ठा मिलाकर पीसें । फिर जलसे अच्छी प्रकार पीसकर में भरकर उसपर दूसरी सीप रखकर केले के पत्ते से लपेट गाढ़ा २ मिट्टी का गारा या कीचड़ ऊपर लपेटकर छोटे पुट अर्थात् सात आठ जंगली उपलों की आग में रख

ध निकलने के समय तक पकावे। जब गंधक का गन्ध निकलने
ो तभी बाहर निकालकर शीतल होने पर पीसकर छःरत्ति प्रमाण
त्य खावे। यह महा गंधक कहाती है। यह बच्चों की रक्षा करने
लिये महौषध है। इससे बच्चों के ज्वर, अतिसार आदि अनेक
ग दूर होते हैं। यह महागन्धक ज्वर नाशक, अग्निदीपक, बल और
ा को बढ़ाने वाली तथा भयंकर ग्रहणी रोग प्रवाहिका रोग,
तिका रोग, खूनी बवासीर, इन सब रोगों को नष्ट करती है। जहां
इ औषध सेवन की जाती हो वहां पर पिशाच, दैत्य, राक्षस
ादि २ नानाप्रकार की कीटाणुजन्य व्याधियां बच्चों को नहीं होतीं
तो इससे दूर होजाती हैं। बीमार बच्चों तथा बीमार स्त्रियों के
र, अतिसार, सूतिका आदि सबरोगों में यह महागन्धक लाभ
रती है॥ इसी औषध को सीपियों में भरकर यदि पुटपाक न करें
इसे सर्वाङ्गसुन्दर रस कहते हैं। जो रस आगे ग्रहणी रोग की
ाकित्सा में कहेंगे वेभी अतिसार में दे सकते हैं॥ [पुटमें मन्द
ांच सेही महा गंधक को पकावे। कहीं गजपुट न दे दें। नहीं तो
ारा गंधक उड़ जायेगा तथा महागन्धक नाम व्यर्थ हो जायेगा
था गुण भी उतना न करेगा। इस लिये सात आठ जंगली उपलों
ो आंच दें। जब ऊपर की मिट्टी लाल होने लगे, गन्धक की गन्ध
उने लगे, तभी निकाल लेना चाहिये। इस स्थान पर यह बातभी
बको विदित होजानी चाहिये कि सदा से वैद्यगण गुणावगुण
खकर पाठ में घटाते बढ़ाते भी रहे हैं। इस महागंधक में ["लि-
ुवार दलश्चैव एलाबीजं तथैव च"] यह पाठ बंगाल में श्रीमान्
विराज रमानाथसेन जी ने मिलाया है। यह योग अपूर्व लाभ
रता है इसमें संदेह नहीं]॥ २२—३०॥

इति रसेन्द्रसार संग्रहे द्वितीयाध्यायेऽतीसार चिकित्सा समाप्ता॥

अथ ग्रहणीरोगचिकित्सा।

जातीफलादि ग्रहणीकपाटः।

जातीफलं टङ्कणमभ्रकञ्च धुस्तूरवीजं समभागचू
भागद्वयं स्यादहिफेनकस्य गन्धालिकापत्ररसेन म
चणप्रमाणा वटिका विधेया यत्नाद्विदध्याद ग्रहण
सामेषु रक्तेषु सशूलकेषु पक्केष्वपक्केषु गुदामयेषु ॥२
रोगेषु दद्यानुपानभेदैर्मधुप्रयुक्तां ग्रहणीगदेषु।
पथ्यं सदध्योदनमत्र देयं रसोत्तमोऽयं ग्रहणीकपाट

जायफल चूर्ण, शुद्ध सुहागा, अभ्रक भस्म, शुद्ध धतू
प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेवें। शुद्ध अफीम दो तोला ले
पीसकर प्रसारणी के रस से घोटकर चने के समान गोली
ग्रहणी में, आम में, खून आने में, तथा शूलयुक्त पक्व या अप
रोग अतीसार तथा ववासीर में भिन्न २ अनुपानों से इस
दें। ग्रहणी रोग में शहद से दें और पथ्य में दही चावल
नाम ग्रहणी कपाट है॥ १-३॥

अपरग्रहणीकपाटोरसः।

टङ्कणक्षारगन्धाश्म-रसं जातीफलं तथा।
विल्वं खादिरसारश्च जीरकश्च मधूलिका॥ ४॥
कपिहस्तकवीजश्च तथा चोरकपुष्पकम्।
एषां शाणं समादाय श्लक्ष्णचूर्णञ्च कारयेत् ॥५॥
विल्वपत्रक कार्पास--फलं शालिञ्च--दुग्धिकाम्।
शालिञ्चमूलं कुटजं तथा कञ्चटपत्रकम् ॥६॥
सर्वेषां स्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक्।
रक्तिकैकप्रमाणेन खादयेत् दिवसत्रयम् ॥७॥
दधिमस्तु ततः पेयं पलमात्रप्रमाणतः।

अपि योगशताक्रान्तां ग्रहणीमुद्धतां जयेत् ॥ ८ ॥
आमशूलं ज्वरं कासं श्वासञ्चैव प्रवाहिकाम् ।
रक्तस्रावकरं द्रव्यं कार्य्यं नैवात्र युक्तितः ॥ ६ ॥
कृष्णवार्त्ताकुमत्स्यश्च दधितक्रञ्च शस्यते ।
ज्ञात्वा वायोः कृतिं तत्र तैलं वारि प्रदापयेत् ॥ १० ॥

शुद्ध सुहागा, यवक्षार, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा, जायफलचूर्ण, का गूदा, कत्था, जीरे का चूर्ण, मूर्वा, कौंच के बीज तथा नी का चूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण लें। पहले पारा गंधककी ली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर चूर्ण करें। और बिल के पत्ते स के फल, शालिञ्चशाक, दूर्वा, शालिञ्चमूल, कुटज तथा जल ाई, इन सबके स्वरस या क्वाथ से घोटकर एक२रत्ति की गोली कर तीन दिन तक खावे और ऊपर दही का पानी एक पल भर । सैकड़ों योगों सेभी जो ग्रहणी दूर न हुई हो वह इस योगसे होती है । आमशूल, ज्वर, खांसी, श्वास, प्रवाहिका, इन रोगोंको दूर करता है । रक्तस्राव करने वाले पदार्थों को इसे सेवन करने समय न खावे । काला बैंगन, मछली, दही, छाछ, इन सबको में खा सकते हैं । वायु की गतिको जानकर तेल वा जल का हार करे ॥ ४—१० ॥

जातीफलाद्या वटिका ।

भ्रस्य सूतस्य च गन्धकस्य प्रत्येकशो माषचतुष्टयञ्च ।
धाय शुद्धोपलपात्रमध्ये सुकज्जलीं वैद्यवरः प्रयत्नात् ॥ ११ ॥
तीफलं शाल्मलिवेष्टमुस्तं सटङ्कणं सातिविषं सजीरम् ।
त्येकमेषां मरिचस्यशाण-प्रमाणमेकं विषमाषकञ्च ॥ १२ ॥
चूर्ण्य सर्वाण्यवलोड्य पश्चात् विभावयेत् पत्ररसैरमीषाम् ।
द्राणिकेन्द्राशनकश्च जम्बू जयन्तिका दाड़िम-केशराजौ ।
विद्धकर्णापि च भृङ्गराजौ विभाव्य सम्यक् वटिका विधेया १३॥

कोलास्थिमानाथ बहुप्रकारं सामं निहन्यादनिलान् ग
कुर्याद्विशेषादनलप्रवृद्धिं कासञ्च पञ्चात्मकमम्लपित्त
इयं निहन्याद् ग्रहणीमसाध्यां मर्त्यस्य जीर्णग्रहणीं प्र
असारकत्वं त्वतिसारमुग्रं श्वासं तथा पाण्डुमरोचकञ्च ।
चिरोद्भवां संग्रहकोष्ठदुष्टिं जयेद्भृशं योगशतैरसाध्याम्
अनेकसम्भावितमर्त्यलोका नानाविधव्याधि-पयोधि-

शुद्ध पारा चार माषा, शुद्ध गंधक चार माषा लेकर खरल में कज्जली करे। फिर अभ्रक भस्म चार माशे मिला दें। फिर जायफल, मोचरस, मोथा, शुद्ध सुहागा, अतीस मिरच इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ शाण ले। और विष एक माषा लेकर सबको मिलाकर चूर्ण करे। फिर इन बूटियों के रस से भावना देवे। संभालु, भांग, जामुन, जयन्ती, केशराज, पाठा, भांगरा, केशराज (अथवा काला श्वेत) इनमें से प्रत्येक द्रव्य के रस से भावना देकर बेर के समान गोली बना लेवे। इसका नाम जातीफलाद्यावटी है। यह अनेक प्रकार के आमातिसार तथा वायु रोगों को दूर करती है। अग्नि बढ़ाती है। पांचों प्रकार की खांसी, अम्लपित्त, असाध्य ग्रहणी, पुरानी ग्रहणी, अतिसार, अल्पसार, उग्र अतिसार, श्वास, पाण्डु तथा बहुत पुरानी संग्रहणी और कोष्ठ की पुष्टि को ठीक करती है। चाहे सैंकड़ों योग ठीक न कर सके हों परन्तु इससे संग्रहणी शान्त होती है। इससे मनुष्यों की प्राण रक्षा होती है तथा यह व्याधि रूपी समुद्र में नौका के समान है ॥ ११-१६ ॥

पूर्णकलावटी ।

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पविल्वकम् ।
विषं कुटजवीजञ्च पाठाजीरकधान्यकम् ॥ १७ ॥
रसाञ्जनं टङ्कणञ्च शिलाजतु पलं तथा ।
अभ्रांशश्च फलं ग्राह्यं प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ १८ ॥

भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकश्चटदाड़िमम् ।
शृङ्गाटं केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥ १९ ॥
केशराजो भृङ्गराजः प्रत्येकं तोलकद्वयम् ।
द्विमाषा वटिका कार्य्या तक्रेण परिषेविता ॥ २० ॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी ।
शूलघ्नी दाहशमनी वन्हिदा ज्वरनाशिनी ।
भ्रमच्छर्दिच्छेदकरी संग्रहग्रहणीं जयेत् ॥ २१ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, मोथा चूर्ण, लौह भस्म, धाय के फूल, ल का गूदा, शोधित विष, इन्द्रजौ, पाठा, जीरा, धनियां, रसौंत, द्ध सुहागा, शुद्ध शिलाजीत, अभ्रकभस्म इन सब में प्रत्येक का र्ण एक २ पल लें । पहले पारा गंधक की कज्जली करें । फिर शेष व्य मिला दें और हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण तथा आंवला चूर्ण प्रत्येक न २ तोला लेकर सब को मिला कर खरल करें । फिर इसमें ड़ूकपर्णी, छोटी पञ्चमूली, बला, जल चौलाई, अनारदाना, ग्घाड़ा, नागकेशर, जामुन की छाल, जयन्ती, केशराज, भांगरा में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दो २ तोला डाले । तथा दही का नी दो तोला डाल कर, सब को भली प्रकार खरल करे । फिर माषा भर की गोली बना कर तक्र से सेवन करे तो यह पूर्ण· ला नाम की वटी ग्रहणी रोग को दूर करती है । शूल नाश करती, ह शान्त करती, अग्निदीपन करती, ज्वर नाश करती भ्रम, वमन, था संग्रहग्रहणी को दूर करती है ॥ [कुछ आचार्य "घन" शब्द ा अर्थ मोथा न करके अभ्रक करते हैं । उनके मत से पारा एक ज तथा गन्धक एक पल लें । शेष "घन" अर्थात् अभ्रक से लेकर फला तक सब द्रव्य प्रत्येक तीन २ तोला लेंगे । पल का अर्थ यहां र्ष" न जाने क्यों संस्कृत टीकाकारने कर डाला है ???] ॥१७–२१॥

वज्रकपाटो रसः ।

पारदं गन्धकश्चैव आहिफेनं समोचकम् ।

त्रिकटु त्रैफलश्चैव सममेकत्र कारयेत् ॥ २२ ॥
भङ्गभृङ्गद्रवैश्चैतद् भावयेच्च पुनः पुनः।
रक्तित्रयं ततश्चास्य मधुना सह भक्षयेत्।
असाध्यां ग्रहणीं हन्ति रसो वज्रकपाटकः ॥ २३ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्ध अफ़ीम, मोचरस, सौंठ, पीपल, हरड़, बहेड़े, तथा आंवले इन सब का चूर्ण, प्रत्येक तोला लें। पहले पारे गन्धक की कज्जली करें। फिर अ मिला कर भांग के रस और भांगरे के रस से सात भावना देकर तीन रत्ति की गोली बना ले। इसे शहद से असाध्य ग्रहणी रोग भी दूर होता है। इसका नाम व रस है॥ २२ ॥ २३ ॥

जातीफलरसः।

पारदाभ्रकसिन्दूरं गन्धं जातीफलं समम्।
कुटजस्य फलश्चैव धूर्त्तबीजानि टङ्गणम् ॥ २४ ॥
व्योषं मुस्ता ऽभया चैव चूतबीजं तथैव च।
बिल्वकं सर्जबीजश्च दाड़िमीफलवल्कलम् ॥ २५ ॥
एतानि समभागानि निक्षिपेत् खल्लमध्यतः।
विजयास्वरसेनैव मर्दयेत् श्लक्ष्णचूर्णितम् ॥ २६ ॥
गुञ्जाफलप्रमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
एकां कुटजमूलत्वक्–कषायेण प्रयोजयेत् ॥ २७ ॥
आमातिसारं हरते कुरुते वान्हिदीपनम्।
मधुना बिल्वशुण्ठेन रक्तग्रहणिकां जयेत् ॥ २८ ॥
शुण्ठीधान्यकयोगेन चातिसारं निहन्त्यसौ।
जातीफलरसो ह्येष ग्रहणीगदनाशनः ॥ २९ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म, रससिन्दूर, शुद्ध गन्धक, चूर्ण, इन्द्रजौ का चूर्ण, धतूरे के शोधित बीज, शुद्ध सुहागा,

ी, मिरच, पिप्पली, मोथा हरड़ इन सबका चूर्ण, आमकी गुठली गिरी, बिलका गूदा, शालका बीज, अनार के फलका छिलका, सब द्रव्य सम भाग लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करें फिर य द्रव्य इसमें मिलालें। फिर भांग के स्वरस या काथ से घोंटकर रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इस गोली को कुटजकी जड़की के काथ से पीवें तो आमातिसार नष्ट होता है तथा अग्नि प्रदीप्त ी है। इसे शहद और विलकी गिरी से मिलाकर दें तो खून की णी को अच्छा करती है। सोंठ और धनियें के योगसे अतिसार दूर करती है। यह जाती फल रस ग्रहणी रोग को नाश ता है ॥ २४—२६ ॥

ग्रहणीगजेन्द्रवटिका।

रसगन्धकलौहानि शङ्खटङ्गणरामठम्।
शटीतालीशमुस्तानि धान्यजीरकसैन्धवम् ॥ ३० ॥
धातक्यतिविषा शुण्ठी गृहधूमोहरीतकी।
भल्लातकं तेजपत्रं जातीफललवङ्गकम् ॥ ३१ ॥
त्वगेला वालकं विल्वं मेथी शक्राशनं समम्।
छागीदुग्धेन वटिका रसवैद्येन कारिता ॥ ३२ ॥
गहनानन्दनाथेन भाषितेयं रसायने।
वटी गजेन्द्रसंज्ञेयं श्रीमता लोकरक्षणे ॥ ३३ ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति ज्वरातिसारनाशिनी।
शूलगुल्माम्लपित्तानि कामलाश्च हलीमकम् ॥ ३४ ॥
बलवर्णाग्निजननी सेविता च चिरायुषी।
कण्डूं कुष्ठं विसर्पश्च गुदभ्रंशं क्रिमिं जयेत् ॥ ३५ ॥
माषद्वयां वटीं खादेच्छागीदुग्धानुपानतः।
वयोऽग्निबलमात्रीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥ ३६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोह भस्म, शंख भस्म, शुद्ध सुहागा,

हींग, कचूर का चूर्ण, तालीशपत्र का चूर्ण, नागर मोथे का, जीरे का, इन सबका चूर्ण, सेंधा नमक, धाय के फल, चूर्ण, सोंठका चूर्ण, रसोईघर का धुआं हरड़ का चूर्ण, (न सहने पर लाल चन्दन डालें), तेजपात का चूर्ण, लौंग का, दारचीनी का, इलायची का, सुगन्धबाला, गूदे का, मेथी का, इन सबका चूर्ण, भांग के बीज, प्रत्येक भाग लें। पहले कज्जली करें। और बकरी के दूध से पीस बना लेवे। श्रीमान् गहनानन्द ने यह गजेन्द्रवटी लोक लिये कही है। यह विविध प्रकार की ग्रहणी, ज्वरातीसार, गुल्म, अम्लपित्त, कामला, हलीमक रोग, नाश करती है, वर्ण और अग्नि को बढ़ाती है। आयु को बढ़ाती है। विसर्प, गुदभ्रंश, क्रिमि रोग इन सबको नाश करती है। की गोली बकरी के दूधसे पीवें। परन्तु अग्नि बलको देख अधिक मात्रा करनी चाहिये। [चार रत्ति की मात्रा ठीक है]

पीयूषवल्लीरसः।

सूतमभ्रं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम्।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक् पृथक् ॥ ३७ ॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठा जीरकधान्यकम्।
समङ्गातिविषा लोध्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥ ३८ ॥
जातीफलं विश्वविल्वं कनकं दाड़िमीच्छदम्।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ३९ ॥
भावयेत् सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः।
चणकाभा वटी कार्य्या छागीदुग्धेन पेषिता ॥ ४० ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धविल्वं समं गुडैः।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरजामपि ॥ ४१ ॥
आमसम्पाचनो सम्यग् वन्हिवृद्धिकरस्तथा।
पीयूषवल्लीनामायं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ४२ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, चांदी भस्म, लौह भस्म, शुद्ध सुहागा, ीत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, सब एक २ शाण लें। लौंग, चन्दन, था, पाठा, जीरा, धनियां, बराहक्रान्ता, अतीस, लोध, कुड़े की ल, इन्द्रजौ, दारचीनी, जायफल, सोंठ, बिलगिरी, धतूर के शुद्ध ज (धतूर के स्थान में 'बालक" अर्थात् सुगन्धवाला भी पाठ), अनार के पत्ते, बराहक्रान्ता, धाय के फूल, कूठ इनमें से प्रत्येक य का चूर्ण एक २ शाण (शाण के स्थान में "एक कोल" भी ठ है) लें। पहले पारागंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्यों चूर्ण मिला कर केशराज के रस में सात वार भावना दें। फिर री के दूध में पीसकर चने के समान गोली बनालें। इसे खिला र ऊपर स आग में भुना हुआ बिलका गूदा और गुड खिलाओ। से सब प्रकार के अतीसार तथा पुरानी ग्रहणी ठीक होती है। रस आम को पचाता तथा अग्नि दीप्त करता है। यह पीयूष-ी नाम का रस ग्रहणी रोग नाशक है ॥ ३७—४२ ॥

ग्रहणीशार्दूल रसः।

रसगन्धकयोश्चापि कर्षमेकं सुशोधितम्।
द्वयोःकज्जलिकां कृत्वा हाटकं षोडशांशतः ॥ ४३ ॥
लवङ्गं निम्बपत्रं च जातीकोषफले तथा।
एतेषां कर्षचूर्णेन सूक्ष्मैलां सह मेलयेत ॥ ४४ ॥
मुक्तागृहेण संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत्।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ ४५ ॥
सूतिकां ग्रहणीरोगं हरत्येष सुनिश्चितम्।
अर्शोघ्नो दीपनश्चैव बलपुष्टिप्रसाधनः ॥ ४६ ॥
कासश्वासातिसारघ्नो बलवीर्य्यकरः परः।
दुर्वारं ग्रहणी रोगं चामशूलं च नाशयेत्।
संसार लोकरक्षार्थं पुरा रुद्रेण भाषितः ॥ ४७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक प्रत्येक आठ २ तोले ले दोनों की कज्ज-

ली करे। स्वर्ण भस्म एक तोला डालें। और लौंग का पत्ते, जावित्री, जायफल, छोटी इलायची के बीज, इन द्रव्य का चूर्ण सोलह २ तोले डालें। सबको अत्यन्त पी में भरकर लघुपुट में पाक करें। इस रसको पांच रत्ती प्रतिदिन खायें तो सूतिका ग्रहणी रोग को अवश्य दू बवासीर को नाश करता तथा अग्निदीपन करता है। है। कास श्वास अतीसार को नाश करता है। बल वीर्य भयंकर ग्रहणी रोग तथा आमशूल को नाश करता है। भले के लिये रुद्र भगवान ने पहले इसे कहा था॥ [महा तरह इसमें बहुत छोटी सात आठ उपलों का पुट दें नहीं दियों की भस्म हो जायगी जिससे गुण में हानि होगी]।

श्री वैद्यनाथ वटी।

शाणं रसस्य संगृह्य काञ्जिकेन तु शोधयेत्।
चित्रकस्य रसेनापि त्रिफलायाश्च बुद्धिमान्॥ ४८
रसार्द्धं गन्धकं शुद्धं भृंगराजरसेन वै।
द्वाभ्यां संमूर्छनं कृत्वा स्वरसैः शाणसम्मितैः॥ ४
खल्लयेच्च शिलाखण्डे क्रमशो वक्ष्यमाणकैः।
निर्गुण्डीमधुकश्वेता कुठरग्रीष्मसुन्दरैः॥५०॥
भृङ्गाब्दकेशराजैश्च जयेन्द्राशनकोत्कटैः॥
सर्षपाभां वटीं कृत्वा दद्यात्तां ग्रहणीगदे॥ ५१॥
सामवातेऽग्निमांद्ये च ज्वरे प्लीहोदरेषु च।
वातश्लेष्मविकारेषु तथा श्लेष्मगदेषु च।
अम्लतक्रादि सेवां च कुर्वीत स्वेच्छया बहु॥ ५२
श्रीमता वैद्यनाथेन लोकानुग्रहकारिणा।
स्वप्नान्ते ब्रह्मणस्येयं भाषिता लिखितेन तु॥ ५३

पारा एक शाण लेकर कांजी के साथ शुद्ध करे। फि

थ से शुद्ध करे, फिर त्रिफला के क्वाथ से शुद्ध करे। फिर भांगरे रस से शुद्ध हुआ २ गंधक आधा शाण लेकर पारे से मिला जली करे। फिर संभालु, मुलट्ठी, सफेद तुलसी, बावुई तुलसी, समसुन्दरक, भांगरा, केशराज, जयन्ती, भांग, सिंहली पिप्पली, में से प्रत्येक के रसको एक २ शाण लेकर भावना दे और फिर सों के समान गोली बनावें। इसे ग्रहणी, आमवात, अग्निमांद्य, र, प्लीहा, उदररोग, वातश्लेष्म विकार, श्लेष्म रोगों में दे। खटाई, आदि इसमें खूब खावें पीवें। श्रीमान परोपकारी वैद्यनाथ ने स्वप्न के अन्त में प्रातःकाल ब्राह्मण को बताया था इस लिये इसका म वैद्यनाथ वटी है ॥ ४८—५३ ॥

रसपर्पटिका ।

या ऽम्लपित्ते विधातव्या गुड़िका च क्षुधावती ।
तत्र प्रोक्तविधाशुद्धौ समानौ रसगन्धकौ ॥ ५४ ॥
सम्मर्द्य कज्जलाभौ तु कुर्य्यात् पात्रे दृढ़ाश्रये ।
ततो बादरवन्हिस्थ-लौहपात्रे द्रवीकृतम् ॥ ५५ ॥
गोमयोपरि विन्यस्त-कदलीपत्रपातनात् ।
कुर्य्यात् पर्पटिकाकारमस्य रक्तिद्वयं क्रमात् ॥ ५६ ॥
रक्तिद्वादशकं यावत् प्रयोगः प्रहरार्द्धतः ।
तदूर्ध्वं बहुपूगस्य भक्षणं दिवसे पुनः ॥ ५७ ॥
तृतीय एव मांसाज्य-दुग्धाद्यत्रविधीयते ।
वर्ज्यं विदाहि स्त्री रम्भा-मूलं तैलञ्च सार्षपम् ॥ ५८ ॥
कृष्णमत्स्याम्बुजखगां स्त्यक्तनिद्रः पयः पिबेत् ।
ग्रहणीक्षयकुष्ठार्शः शोथाजीर्णविनाशिनी ॥ ५९ ॥
रसपर्पटिका ख्याता निबद्धा चक्रपाणिना ॥ ६० ॥

अम्लपित्त रोगकी चिकित्सा में जो क्षुधावती गुड़िका बनाई जाती है। उसमें लिखे प्रकार से पारे और गन्धक को शुद्ध करके नों को सम भाग लेकर खरल कर उत्तम कज्जली बनालें। उसे एक

लोहे के पात्र में डालकर बेर की लकड़ी की आग पर
स्वच्छ धरती पर गोबर लीपकर ऊपर नया केल का
बिछा दें। आगपर कज्जली के पिघलते ही इस केले के प
डाल दें और ऊपर से दूसरा पत्ता रख दबादें। यह रस
गई। यह रस पर्पटी दो रत्ति से आरम्भकर क्रमशः दस
बढ़ाके प्रतिदिन खावें। आधे पहर के बाद कुछ सुपारि
तीसरे पहर में मांस, घी दूध आदि खावें। तथा विदाही
भोग, केले की जड़, सरसों का तेल, काली मछली, जल
न खावें। निद्रा अधिक न लें। दूध पीवें। यह ग्रहणी, क्षय
सीर, शोथ, अजीर्ण रोगों को नाश करती है। यह रस प
पाणि ने प्रथम प्रसिद्ध की थी। [नई कज्जली बनाके रस प
येंगे तो बनेगी। पुरानी रखी हुई कज्जली से बनायेंगे तो न
इस पर्पटी को दूध से भी और छाछ से भी ग्रहणी में देते
तथा दक्षिण देश के वैद्य पर्पटी के साथ केवल मीठे आमों
पिलाकर रोग दूर करते हैं] ॥ ५४—६० ॥

विजयपर्पटी ॥

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र परिदीयते।
विजयाख्या तु सा ज्ञेया सर्वरोगनिसूदनी ॥ ६१ ॥

शुद्ध पारा और शुद्ध गन्धक, स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म
प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली
अन्य भस्म मिलाकर अत्यन्त घोटकर रस पर्पटी की तरह प
लें इसका नाम विजय पर्पटी है। यह सभी रोगों को दूर करती

स्वर्णपर्पटी।

रसोत्तमं पलं शुद्धं हेम तोलकसंयुतम्।
शिलायां मर्दयेत् तावत् यावदेकत्वमागतम् ॥ ६२ ॥
गन्धकस्य पलञ्चैकमयः पात्रे ततो दृढे।
मर्दयेत् दृढपाणिभ्यां यावत् कज्जलतां व्रजेत् ॥ ६३ ॥
ततः पाकविधानज्ञः पर्प्पटीं कारयेत् सुधीः।

रक्तिकादिक्रमेणैव योजयेदनुपानतः ॥
ग्रहणीं विविधां हन्ति वृष्या सर्वज्वरापहा ॥ ६४ ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा आठ तोला, स्वर्ण भस्म एक
ला, दोनों को खरल करे जब एक हो जावे तो शुद्ध गंधक आठ
ला डाले। और लोहे के खरल में डाल दोनों हाथों से दृढता से
तक घोटता रहे जबतक कज्जल नहीं होजाता। फिर रसपर्पटी के
मान पर्पटी बनाले। इसे रत्ति आदि के क्रम से (पहले दिन एक
त दूसरे दिन दो रत्ति, दसवें दिन दस रत्ति इस प्रकार से) अनु-
नों से दें तो यह त्रिविध प्रकार की ग्रहणी को दूर करती है। तथा
य और सर्व ज्वरों को नाश करती है ॥ ६२—६४ ॥

अथ पञ्चामृतपर्पटी ।

अष्टौ गन्धकमाषका रसदलं लौहं तदर्द्धं शुभम् ।
लौहार्द्धश्च वराभ्रकं सुविमलं ताम्रं तथाऽर्द्धिकम् ।
पात्रे लौहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतश्चैकतो ।
दर्व्यां बादरवन्हिनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले ॥ ६५ ॥
रम्भाया लघु ढालयेत् पटुरियं पञ्चामृतापर्पटी ।
ख्याता चौद्रघृतान्विता प्रातिदिनं गुञ्जाद्वयं वृद्धितः ।
लौहे मर्दनयोगतः सुविमलं भच्चयाक्रिया लौहवत् ।
गुञ्जाष्टावथवा त्रिकं त्रिगुणितं सप्ताहमेवं भजेत् ॥ ६६ ॥
नानावर्ण ग्रहण्यामरुचि समुदये दुष्टदुर्नामकादौ ।
छर्द्यां दीर्घातिसारे ज्वरभवकासिते रक्तपित्ते चयेऽपि ।
वृष्याणां वृष्यराज्ञी बलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री ।
तत्स्थं दीप्तास्थिराग्निं पुनरपि नवकं रोगिदेहं करोति ॥ ६७ ॥
पाकोऽस्याः त्रिविधः प्रोक्तो मृदुर्मध्यः खरस्तथा ।
आद्ययोर्दृश्यते सूतः खरपाके न दृश्यते ॥ ६८ ॥
मृदौ न सम्यग्भङ्गः स्यात् मध्ये भङ्गश्च रौप्यवत् ।

खरे लघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः।
मृदुमध्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः॥

शुद्ध गंधक आठ माषा, शुद्ध पारा चारमाषा, दोनों की करे। फिर लौह भस्म दो माशे, अभ्रक भस्म एक माषा भस्म आधा माषा मिला लोहकी खरल में खूब घोटे। फिर लोहे के पात्र में डाल, बेरकी लकड़ी की आग दे पिघलावे की सलाई से सारे चूर्ण को हिलाता जाये। पिघलते ही पर पूर्व के समान ढाल देवे और दबाकर पर्पटी बनाले यह पर्पटी कहाती है। इसे घी और शहद में मिलाकर खिलावे दो रत्ति से क्रमशः बढ़ाकर खिलाता जावे, लोहे के पात्र कर इसे खावे, इसकी खाने की क्रिया लौह भस्म के समान रत्ति अथवा नौ रत्ति तक एक सप्ताह तक खावे॥ इससे की ग्रहणी, अरुचि, दुष्ट बवासीर आदि, वमन, लंबे अति ज्वर से उत्पन्न खांसी, रक्तपित्त, क्षयरोग इनमें देने से इन नाश करती है। यह वृष्य औषधों में महारानी है, बलि बालों को दूर करती है। नेत्र रोगों के नाश करने में एक खाने से अग्निदीप्त और स्थिर होती है तथा रोगी के दे से नया कर देती है॥ ६५॥ ६६॥ ६७॥ इस पर्पटी का का पाक है। मृदु, मध्य तथा खर।मृदु और मध्याक में पा है परन्तु खर पाक में पारा नहीं दीखता। मृदु पाक होतो टूट नहीं सकती वह चूर्ण के समान कोमल रहती है, मध्य चांदी के समान टूट सकती है, खरपाक होतो आसान जाती है तथा रूखा चिकना और लाल रंग दीखता है और मध्य पाक वाली पर्पटी तो खानी चाहिये परन्तु खर नहीं खानी चाहिये क्योंकि विष के तुल्य होजाती है॥

अथ अग्निकुमारो रसः

शुद्धसूतं समं गन्धं त्रिकटु पटुपञ्चकम्।
दशकं तुल्यतुल्यञ्च विजया सर्वसाम्मिता।

भावयेच्चित्रभृङ्गोत्थैस्त्रिधा च विजयाद्रवैः ॥ ७० ॥
दीप्ताग्निना तु यामैकं बालुकायन्त्रके पचेत् ।
सञ्चूर्ण्य चार्द्रकद्रावैर्भावयित्वा च भक्षयेत् ॥ ७१ ॥
मधुना शाणमानन्तु रसो ह्यग्निकुमारकः ।
दीप्ताग्निकारकः साम–ग्रहणीदोषनाशनः ॥ ७२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक प्रत्येक एक २ तोला लेकर कज्जली करे। र सोंठ, मिरच, पीपल, पांचों नमक, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का णि एक २ तोला ले और भांग का चूर्ण दस तोला डाले । सबको ला पीसकर चीता के क्वाथ से तीन वार भावना देवे । फिर भां- के रस से तीन वार भावना दे फिर भांग के रस से तीन वार वना दे । फिर इसे एक पहर तक बालुकायन्त्र में पकावे। फिर इसे काल चूर्णकर अदरक के रस से भावना देकर रखे । इसे एक ण भर लेकर शहद से खावे तो यह अग्निकुमार रस अग्नि दीप्त रता तथा आम सहित ग्रहणीदोष को नाश करता है ॥[मात्रा एक षा पर्याप्त है] ॥ ७० ॥ ७२ ॥

बड़वामुखो रसः ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मृतताम्राभ्रटङ्कणम् ।
सामुद्रञ्च यवक्षारं सर्जिसैन्धव नागरम् ॥ ७३ ॥
अपामार्गस्य च क्षारं पलाशवरुणस्य च ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यादम्लयोगेन मर्दयेत् ॥ ७४ ॥
हस्तिशुण्डीद्रवैश्चाग्नौ मर्दयित्वा पुटेल्लघु ।
माषमात्रः प्रदातव्यो रसोऽयं बड़वामुखः ।
ग्रहणीं विविधां हन्ति सङ्ग्रहग्रहणीं ज्वरम् ॥ ७५ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध सुहागा, मुद्रलवण, यवक्षार, सज्जी, सेंधानमक, सोंठ का चूर्ण, अपामार्ग । क्षार, वरुण का क्षार, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा और

गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर काढ़े
फिर हाथी सुण्डी के रस से पीसे और फिर चीते के काढ़े
करके लघुपुट देवे। फिर निकाल कर एक माषा भर खावे
प्रकार की ग्रहणी, संग्रहग्रहणी तथा ज्वर नष्ट होते हैं ॥७६॥

ग्रहणीकपाटो रसः।

रसगन्धकयोश्चापि जातीफललवङ्गयोः।
प्रत्येकं शाणमानश्च श्लक्ष्णचूर्णीकृतं शुभम् ॥ ७६ ॥
सूर्यावर्त्तरसेनैव विल्वपत्ररसेन च।
शृङ्गाटकसमुद्भूत-स्वरसेन च मर्दयेत् ॥ ७७ ॥
चण्डातपेन संशोष्य वटिकां कारयेद्भिषक्।
विल्वपत्ररसेनैव दापयेद्रक्तिकाद्वयम् ॥ ७८ ॥
दध्ना च भोजनीयोऽसौ ग्रहणीरोगनाशनः।
पाण्डुरोगमतीसारं शोथं हन्ति तथा ज्वरम्।
अयञ्च ग्रहणीरोगे कपाटो रस उत्तमः ॥ ७९ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, जायफल का चूर्ण, लौंग का चूर्ण
द्रव्य एक २ शाण लें। पारा गंधक की कज्जली करें। फिर
द्रव्य मिला कर घोटे। और सूर्यमुखी के रस से, बिल्व
रस से तथा सिंघाड़े के रस से क्रमशः घोट कर तेज
सुखालें। फिर बिलपत्र के रस से घोट कर दो रत्ति
गोली बना रोगी को दें, खाने को दही दें तो ग्र
नाश होता है। पाण्डुरोग, अतीसार, शोथ, ज्वर इन स
ग्रहणीकपाट रस दूर करता है ॥ ७६—७९ ॥

सङ्ग्रहणीकपाटो रसः।

मुक्ता सुवर्णं रसगन्धटङ्गं घनः कपर्दोऽमृततुल्यभागः।
सर्वैः समं शङ्खकचूर्णमत्र भाव्यं च खल्लेऽतिविषाद्रवेण।
गोलश्च कृत्वा मृदुकर्पटस्थं सम्पाच्य भाण्डे दिवसार्द्धं
सर्वाङ्गशीतो रस एष भाव्यो धुस्तूरवन्ह्योर्मुषलीद्रवैश्च

ोहस्य पात्रे परिभावितश्च सिद्धो भवेत् सङ्ग्रहणीकपाटः ।
साधितः सद्भिषजां प्रयत्नात् योगस्थितेनार्य्यसमर्च्चितेन ॥ ८२ ॥
ातोत्तरायां मरिचाज्ययुक्तैः पित्तोत्तरायां मधुपिप्पलीभिः ।
कफोत्तरायां विजया रसेन कटुत्रयेणाज्ययुतो ग्रहण्याम् ॥८३॥
ये ज्वरे चार्शसि षट्प्रकारे सामातिसारे ऽरुचिपीनसे च ।
ाहे च कृच्छ्रे गतधातुवृद्धौ गुञ्जाद्वयश्चापि महामयघ्नः ॥ ८४ ॥

मोतिभस्म, सुवर्णभस्म, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धसुहागा, कभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध विष प्रत्येक द्रव्य समभाग लें, सबके ान शंखभस्म ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य मिला लें और अतीस के स्वरस या क्वाथ से मर्दन करके एक ा बना.वे । इसे एक पतले कपड़े में लपेट कर एक पात्र में डाल या दिन पकावे । जब सर्वांगशीत होजाये तब इसको धतूरा, ा, मूसली इन तीनों के रससे क्रमशः लोहे के पात्र में भावित । सूखने पर शीशी में डाल ले । इसे संग्रहणी कपाट रस कहते इसे भगवान के उपासक समाहित चित्त वाले वैद्य बनावें । इसे वातोत्तरा ग्रहणी में मिरचों का चूर्ण और घी मिलाकर दें, ोत्तरा ग्रहणी में शहद और पिप्पली के चूर्ण के साथ दें । कफो- ा ग्रहणी में भांग के रस और सोंठ, मिरच,पीपल का चूर्ण और ेसे मिलाकर दें । क्षय में,ज्वर में,बवासीर में,आमातिसार अरुचि, ास, प्रमेह मूत्रकृच्छ्र, धातुक्षीणता में इसे दो रत्ति दें तो इन रोगों तथा अन्य महारोगों को दूर करता है ॥ ८०—८४ ॥

अन्यग्रहणीकपाटोरसः ।

गिरिजाभवबीजकज्जलीं परिमृद्यार्द्ररसेन शोषिता ।
कुटजस्य तु भस्मना पुनर्द्विगुणेनाथ विमृद्य मिश्रिता ॥८५॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमस्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
अजाक्षीरेण दातव्यं क्वाथेन कुटजस्य वा ॥ ८६ ॥
यूषं देयं मसूरस्य वारिभक्तश्च शीतलम् ।

दध्ना सह पुनर्देय रक्तादौ रक्तिकाद्वयम् ॥
वर्द्धयेद्दशपर्य्यन्तं ह्रासयेत् क्रमशस्तथा ।
निहन्ति ग्रहणीं सर्वां विशेषात् कुक्षिमार्दवम् ॥ ८

शुद्ध गन्धक और शुद्ध पारा दोनों एक २ तोला ले करें। फिर कुटज की छालकी भस्म चार तोला मिलाये इसकी चार रत्ति की गोली बनाकर बकरी के दूध से कुटज के क्वाथ से दें तो ग्रहणी रोग दूर होता है। इसके में मसूर का यूष, शीतल जल, तथा दही चावल आदि दे सार में दो रत्ति से चार रत्ति पर्यन्त क्रमशः बढ़ा इस से सब प्रकार का ग्रहणी रोग दूर होता है विशेष मृदुता दूर होती है ॥ ८५—८७ ॥

विजयावटिका।

हाटकं रजतं ताम्रं यद्यत्र परिदीयते ।
विजयाख्या तु साज्ञेया सर्वरोगनिषूदनी ॥ ८८॥

यदि उपर्युक्त ग्रहणी कपाट रस में सोना भस्म, च तथा ताम्बा भस्म भी मिला दें तो यह विजया वटिका स दूर करने वाली है ॥ ८८ ॥

ग्रहणीकपर्दपोट्टली।

कपर्दतुल्यं रसकन्तु गन्धं लौहं मृतं टङ्कणकञ्च तुल्य जया रसेनैकदिनं विमर्द्य चूर्णेन संवेष्ट्य पुटञ्च भाण्डे ददीत तत् पोट्टलिकाऽभिधानं वातप्रधानग्रहणीनिवृ

कौड़ी भस्म, शुद्धपारा। शुद्ध गन्धक, लौह भ सुहागा, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। यथाबाध मर्दन करें रस से सबको घोट कर सम्पुट करके भाण्ड में रख पुट ग्रहणी कपर्द पोटली रस वातप्रधान ग्रहणी को दूर करता

हंसपोट्टली।

दग्धान् कपर्दकान् पिष्ट्वा त्र्यूषणं टङ्कणं विषम् ।
गन्धकं शुद्धसूतञ्च तुल्यं जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ९० ॥

मर्दयेन्भक्षयेन्माषं संलिह्यान्मरिचार्द्रकम् ।
निहन्ति ग्रहणीरोगं पथ्यं तक्रौदनं हितम् ॥ ६१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सोंठ का चूर्ण, मिरच का चूर्ण, पीपल चूर्ण, कौड़ी भस्म, शुद्ध सुहागा, शुद्ध विष, प्रत्येक द्रव्य समभाग। पहले पारा गंधक की कज्जली कर फिर अन्य द्रव्य मिलाले और कोजम्बीरी नीबू के रसमें घोटकर एक माषा भरकी गोली बना इसे अदरक और मिरच के चूर्ण के साथ दे तो ग्रहणी रोग दूर ता है. पथ्य में छाछ और चावल देवे।(मात्रा दो रत्तिकी दे)॥६०-६१॥

अन्यः ग्रहणीकपाटः।

तुल्यं कान्तं रसं तालं माक्षिकं टङ्कणं तथा ।
सपादनिष्कं प्रत्येकं पञ्चनिष्कं वराटकम् ।
द्विनिष्कं गन्धकं सर्वं पिष्ट्वा जम्बीरजैर्द्रवैः ॥ ६२ ॥
अर्द्धभागकरीषेण पुटितं भस्म शोभनम् ।
प्रदद्याद् ग्रहणीगुल्म--क्षयकुष्ठप्रमेहके ॥ ६३ ॥

कान्तलौहभस्म, शुद्धपारा, शुद्धहड़ताल, स्वर्णमाक्षिकभस्म, द्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य सवानिष्क लें, कौड़ी भस्म पांच निष्क लें, द्ध गंधक दो निष्क लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करके फिर य द्रव्य मिलायें। फिर जम्बीरी के रस से घोट कर। गढ़ा खोद के आधे में जंगली उपल भर उसमें इस दवा का सम्पुट रख दें। स्वांगशीतल होने पर निकाल रखें। इसे देने से ग्रहणी, म क्षय तथा कुष्ठ और प्रमेह नाश होते हैं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

ग्रहणी कपाटः।

रसाभ्रगन्धान् क्रमवृद्धियुक्तान् जङ्घारसेन त्रिदिनं विमर्द्य ।
जयन्तिका भृङ्गकलम्बिनीरैः दिनं यवक्षारसटङ्कणञ्च ॥६४॥
क्षिप्त्वा तु गन्धस्य च तुल्यभागं वातारितैलेन युतं पुटित्वा ।
गुडूचिका शाल्मलिका रसेन जया रसेनापि विमर्द्य शाणम् ॥६५॥
मरीचसार्द्धं मधुना समेतं ददीत पथ्यं दधिभक्तकञ्च ।

शिवनप्रोक्तो जगतां हिताय महारसोऽयं ग्रहणीकपाटः।

शुद्धपारा एक तोला, अभ्रक भस्म दो तोला, शुद्ध गं तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अभ्र कर सब को काकजंघा के रस से तीन दिन तक खरल फिर जयन्ती के रस से, भांगरे के रस से तथा नारीशाक एक २ दिन खरल करे। फिर यवक्षार तीन तोला, सु तोला मिला कर पीसे और एरण्ड के तेल से घोट कर फिर गिलोय का रस, सिम्बल का रस, तथा भांग का घोट कर रखे। इस ग्रहणीकपाट रस को एक शाण मिरचों के चूर्ण और मधु के साथ देवे। पथ्य में दही चा इस ग्रहणीकपाट रस को शिव जी ने लोकोपकार के लि था ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥

ग्रहणीवज्रकपाटः।

सूतं गन्धं यवक्षारं जयन्त्युग्राऽभ्रटङ्कणम्।
जयन्तीभृङ्गजम्बीर-द्रवैः पिष्ट्वा दिनत्रयम् ॥ ९७ ॥
यामार्द्धं गोलकं स्वेद्यं मन्देन पावकेन च।
शीते जयारससमैः शाल्मली विजयाद्रवैः ॥ ९८ ॥
भावयेत् सप्तधा वज्र-कपाटः स्यात् रसोत्तमः।
माषद्वयं त्रयं वाऽस्य मधुना ग्रहणीं जयेत् ॥ ९९ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, यवक्षार, यजन्ती, वच, सुहागा शुद्ध, इन सबको समभाग ले पहले पारागंधक करे। फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिलावे। फिर जयन्ती, नींबू के रस से तीन दिन पीस कर गोला बना कर मन्दाग्नि से स्वेदन करे। जब शीतल होजाये तो जयन्ती समान ही सीमल के रस और भांग के रस से इसको स भावना देवे। इस रस का नाम वज्रकपाट रस है। इसे या तीन माषा लेकर शहद से दें तो ग्रहणी रोग न है (मात्रा दो रत्ति की दें) ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥

प्रकारान्तरो ग्रहणीवज्रकपाटः ।

तारमौक्तिक हेमानि सारश्चैकैकभागिकः ।
द्विभागो गन्धकः सूतस्त्रिभागो मर्दयेदिमान् ॥ १०० ॥
कपित्थस्वरसैर्गाढं मृगशृङ्गे ततः क्षिपेत् ।
पुटेत् मध्यपुटेनैव तत उद्धृत्य मर्दयेत् ॥ १०१ ॥
बलारसैः सप्तधैवमपामार्गरसैस्त्रिधा ।
लोध्रप्रतिविषामुस्ता–धातकीन्द्रयवामृताः ॥ १०२ ॥
प्रत्येकमेतत् स्वरसैर्भावना स्यात् त्रिधा त्रिधा ।
माषमात्रो रसो देयो मधुना मरिचैस्तथा ॥ १०३ ॥
हन्यात् सर्वानतीसारान् ग्रहणीं सर्वजामपि ।
कपाटो ग्रहणीरोगे रसोऽयं वन्हिदीपनः ॥ १०४ ॥

ी भस्म, मोती भस्म, स्वर्ण भस्म, लौह भस्म, प्रत्येक एक २ तोला शुद्ध गंधक दो तोला लें। शुद्ध पारा तीन तोला लें। पहले पारा धक की कज्जली करें फिर सब द्रव्य मिलाकर मर्दन करें और फिर के रस से घोटकर सुखाके हरिण के सींग में भर दें। और सम्पुट मध्यपुट में भस्म करें। फिर सींग मेंसे निकाल कर चूर्ण करें। बला के रससे सात वार भावना देवें फिर अपामार्ग के रस से त वार भावना देवें तथा लोध, अतीस, मोथा, धाय के फूल, जौ, तथा गिलोय इनमें से प्रत्येक के स्वरस से या क्वाथसे तीन भावनायें दें। फिर इसको सुखा ले। इसको एक माषा लेकर शहद मिरचों के चूर्ण से मिलाकर खावें तो सब प्रकार के अतीसार सब प्रकार की ग्रहणी दूर होती है। यह रस अग्नि को दीपन ने वाला है तथा इसका नाम ग्रहणी वज्रकपाट रस है॥ १००-१०४

पानीयभक्तवटी ।

कृष्णाभ्रलौहमलशुद्धविडङ्गचूर्णं,
प्रत्येकमेव पलिकं विधिवद्विधाय ।

चव्यं कटुत्रयफलत्रयकेशराज-
दन्तीपयोदचपलानलघण्टकर्णाः ॥१०५॥
माणीलकन्दबृहतीत्रिवृताः ससूर्या--
वर्त्ताः पुनर्नविकया सहितास्त्वमीषाम् ।
मूलं प्रति प्रतिविशोधितमत्तमेकं,
चूर्णं तदर्द्धरसगन्धकमेकसंस्थम् ॥१०६॥
कृत्वाऽऽर्द्रकीयरससम्बलितञ्च भूयः ।
संपिष्य तस्य वटिका विधिवत् विधेया ।
हन्त्यम्लपित्तमरुचिं ग्रहणीमसाध्यां ।
दुर्नामकामलभगन्दर शोथगुल्मान् ॥१०७॥
शूलञ्च पाकजनितं सतताग्निमान्द्यं ।
सद्यः करोत्यपचितिं चिरनष्टवह्नेः ।
कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धाम् ।
श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥१०८॥
वार्य्यन्नमांस-दधिकाञ्जिकतक्रमत्स्य-
वृन्ताम्लतैलपरिपक्वभुजो यथेष्टम् ।
शृङ्गाटविल्वगुड़कञ्चटनारिकेल-
दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत् तु ॥१०९॥

कृष्णाभ्रक भस्म, मण्डूर चूर्ण, तुषरहित विडंग का चू
एक २ पल विधिपूर्वक ले । चव्य, सोंठ, मिरच, पीपल, हर
आंवला, केशराज, दन्तीमूल, मोथा, पिप्पली, इनका
चीता, घण्टाकर्ण अर्थात् खारकोन, माणकन्द, बड़ी कटे
सूर्यावर्त्त, पुनर्नवा इनमें से प्रत्येक का मूल लेकर शुद्ध क
करलें । चव्य से पुनर्नवा तक प्रत्येक द्रव्य को एक २ अ
शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक आधा २ कर्ष लें (कई आचा

ा गंधक को आधा कर्ष लेते हैं।) पहले पारे गंधक को कज्जली : अनन्तर उपर्युक्त सब द्रव्यों को उसमें मिलाकर खरल करें। र अदरक का रस डालकर दो रत्ति भरकी गोली बनालें। इसके ान से अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य ग्रहणी, बवासीर, कामला, ान्दर, शोथ, गुल्म, परिणामजशूल, निरन्तर रहनेवाला अग्निमांद्य रोगों को दूर करता है। नष्ट अग्नि वाले की अग्नि को शीघ्र ाता है। कुष्ठ नाश करता है, पलितरोग तथा बढ़ी हुई बलियों को : करता है, तथा श्वास, कास और पाण्डुरोग को नाश करता है, ाके सेवन के समय बासी अन्न, मांस,दही, कांजी, छाछ, मछली ाम्ल अर्थात् मट्ठा अदरक तथा तेलमें पकाये पदार्थ यथेष्ट खावे, ान्तु सिंघाड़े बिल, गुड़, चौलाई, नारियल, दूध तथा सब प्रकार ा दालें न खावे॥ १०५-१०९॥

शम्बूकादिवटी।

दग्धशम्बूक सिन्धूत्थं तुल्यं क्षौद्रेण मर्दयेत।
निष्कैकेण निहन्त्याशु वातसङ्ग्रहणीगदम्॥ ११०॥

शम्बूक अर्थात् घोंघे की भस्म और सेंधा नमक सम भाग लेकर हद से मिलाकर एक निष्कभर खायें तो वात संग्रहणी रोग दूर ता है॥ ११०॥

हिरण्यगर्भपोट्टलीरसः।

एकांशो रसराजस्य ग्राह्यौ द्वौ हाटकस्य च।
मुक्ताफलस्य चत्वारो भागाः षड् दीर्घनिस्वनात्॥ १११॥
त्र्यंशं बलेर्वराट्याश्च टङ्कणो रसपादिकः।
पक्वनिम्बुकतोयेन सर्वमेकत्र मर्दयेत्॥ ११२॥
मूषामध्ये न्यसेत् कल्कं तस्य वक्त्रंनिरोधयेत्।
गर्त्ते ऽरत्निप्रमाणेतु पुटेत्त्रिंशद्वनोपलैः॥ ११३॥
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा रसं मूषोदरात् नयेत्।
ततः खल्लोदरे मर्द्यः सुधारूपं समुद्धरेत्॥ ११४॥

एतस्यामृतरूपस्य दद्यात् गुञ्जाचतुष्टयम् ।
घृतमाध्वीकसंयुक्तमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥ ११५॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च ग्रहण्यां विषमज्वरे ।
गुदाङ्कुरे महाशूले पीनसे श्वासकासयोः ॥ ११६॥
अतीसारे ग्रहण्यां च श्वयथौ पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कुष्ठरोगेषु यकृत्प्लीहोदरेषु च ॥ ११७॥
वातपित्तकफोत्थेषु द्वन्द्वजेषु त्रिजेषु च ।
दद्यात् सर्वेषु रोगेषु श्रेष्ठमेतद् रसायनम् ॥ ११८॥

शुद्ध पारा एक तोला, स्वर्ण भस्म दो तोला, कांस्यभ[illegible] शुद्ध गंधक तीन तोला, कौड़ी भस्म तीन तोला, शुद्ध सु[illegible] माशा ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर सब [illegible] कर एकत्र सबको भली प्रकार पीस ले। फिर पके हुये [illegible] से सबको इकट्ठा मर्दन करे। फिर इस कल्क को मूषा [illegible] रख मूषा का संधि बंधन करदे। और एक हाथ प्रमाण [illegible] को रख तीस जंगली उपलों की आग में फूंक देवे। स्वां[illegible] होने पर मूषा के अन्दर से रसको निकाल ले। इसे खरल [illegible] महीन पीसकर शीशी में भर रखे। इस अमृतरूपी रसकी [illegible] की मात्रा को घी शहद और उनत्तीस काली मिरचों के चू[illegible] लाकर दे तो मन्दाग्नि में, तथा जहां अनेक रोग इकट्ठे हों [illegible] देने से लाभ करता है। तथा ग्रहणी, विषम ज्वर, गुदांकु[illegible] बवासीर, महाशूल, पीनस, श्वास, कास, अतीसार, ग्रह[illegible] पाण्डुरोग, सब प्रकार के कुष्ठरोग, यकृत, प्लीहा, उदर रोग[illegible] कफ से होने वाले एक दोषज रोग, द्विदोषजरोग, त्रिदोषज[illegible] अन्य सब रोगों में यह लाभ करता है। तथा यह श्रेष्ठ र[illegible] [अन्य पाठों में गंधक दो तोला तथा पक्क नींबू के स्थान[illegible] हुआ तिन्दुक फलभी लिखा है] ॥ १११—११५॥

रसाभ्रवटी ।

शुद्धसूतस्य कर्षैकं कर्षैकं गन्धकस्य च ।

द्वयोः कज्जलिकातुल्यं व्योमचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ११९ ॥
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याश्चित्रकस्य च।
ग्रीष्मसुन्दरमण्डूकी–जयन्तीन्द्राशनस्य च ॥ १२० ॥
श्वेतापराजितायाश्च स्वरसं पर्णसम्भवम्।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्च मारिचोद्भवम् ॥ १२१ ॥
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं टङ्कणसम्भवम्।
सम्मर्द्य वटिकां कुर्यात् कलायसदृशीं बुधः ॥ १२२ ॥
हन्ति कासं क्षयं श्वासं वातश्लेष्मभवां रुजम्।
ज्वरे चैवातिसारे च सिद्धएष प्रयोगराट् ॥ १२३ ॥
चातुर्थके ज्वरे श्रेष्ठो ग्रहण्यातङ्कनाशनः।
दधि चावश्यकं देयं प्राह नागार्जुनो मुनिः ॥१२४॥

शुद्ध पारा एक कर्ष, शुद्धगंधक एक कर्ष, लेकर दोनों की ली करे। फिर अभ्रक भस्म, दो कर्ष डालकर मिलाले। फिर शः केशराज, भांगरा, संभालु, चीता, ग्रीष्मसुन्दरक, मण्डूकपर्णी, न्ती, भांग, श्वेतापराजिता के पत्ते. इनके स्वरस या क्वाथ से वना दें। फिर मिरचों का चूर्ण एक कर्ष डालें और शुद्ध सुहागे आधा कर्ष डालकर, सबको भली प्रकार मर्दन कर मटर के समान ली बनावें। इसके सेवन से खांसी, क्षय, श्वास, वातकफ से होने ले रोग, ज्वरातीसार ज्वर तथा अतीसार में निश्चय से लाभ होता। इन रोगों में यह योगराज प्रसिद्ध है। चातुर्थक ज्वर को दूर रने में उत्तम है। ग्रहणी रोगको नाश करता है। इसमें दही खाना वश्यक है। इस प्रयोग को नागार्जुन मुनि ने कहा है ॥११९-१२४॥

अन्यो ऽग्निकुमारः।

रसं गन्धं विषं व्योषं टङ्कणं लौहभस्मकम्।
अजमोदाऽहिफेनञ्च सर्वतुल्यं मृताभ्रकम् ॥ १२५ ॥
चित्रकस्य कषायेण मर्दयेद् यामभात्रकम्।

मरिचाभां वटीं खादेदजीर्णं ग्रहणीं तथा।
नाशयेन्नात्र सन्देहो गुह्यमेतच्चिकित्सितम् ॥ १२६

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, सोंठ का चूर्ण, मिर्च, पीपल का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, लोह भस्म, अजमोदा का चूर्ण, अफीम, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें, अभ्रक भस्म दस तोला। पहले पारे गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलावें, चीते के क्वाथ से एक पहर तक मर्दन करें। फिर काली मिर्च बराबर गोली बना रखें। इससे अजीर्ण तथा ग्रहणी में आराम होता है। यह रहस्य है ॥ १२५ ॥ १२६ ॥

नृपतिवल्लभो रसः।

जातीफललवङ्गाब्द–त्वगेला टङ्करामठम्।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानीविश्वसैन्धवाः ॥ १२७॥
लौहमभ्रं रसो गन्धस्ताम्रं प्रत्येकशः पलम्।
मरिचं द्विपलं दत्वा छागीक्षीरेणपेषयेत् ॥ १२८॥
धात्रीरसेन वा पेष्यं वटिकाः कुरु यत्नतः।
श्रीमद्गहननाथेन विचिन्त्य परिनिर्मितः ॥ १२९॥
सूर्यवत् तेजसा चायं रसो नृपतिवल्लभः।
अष्टादशवटीं खादेत् पवित्रः सूर्यदर्शकः ॥ १३०॥
हन्ति मन्दानलं सर्वमामदोषं विसूचिकाम्।
प्लीहगुल्मोदराष्ठीला-यकृत्पाण्डुत्वकामलाम् ॥ १३१॥
सर्वानेव गदान् हन्ति चण्डांशुरिव पापहा।
बलवर्णकरो हृद्य आयुष्यो वीर्यवर्द्धनः ॥ १३२॥
परं वाजीकरः श्रेष्ठः पटुदो मन्त्रसिद्धिदः।
अरोगी दीर्घजीवी स्याद्रोगी रोगाद्विमुच्यते ॥ १३३॥
रसस्यास्य प्रसादेन बुद्धिमान् जायते नरः।
बदरास्थि प्रमाणेन वटिकां कारयेत् भिषक् ॥ १३४॥

जायफल, लौंग,नागरमोथा, दारचीनी, छोटी इलायची के बीज सुहागा, हींग, जीरा, तेजपत्र, अजवायन, सोंठ, सेंधा नमक, ह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म प्रत्येक य एक२पल लेवें। काली मिर्चों का चूर्ण दो पल (अन्य पुस्तकों तीन पल लिखा है)लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर य द्रव्यों का चूर्ण मिलाकर घोटें और फिर बकरी के दूध से पीसें थवा आंवले के रस से पीसकर गोलियां बना लें। इसकी एक ली प्रतिदिन खावें तो अठारह दिन तक तो यह रोगी को नीरोग के सूर्य के स्वयं दर्शन करने योग्य करा देता है।मन्दाग्नि,आमदोष, सूचिका, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, उष्ठीला, यकृत्, पाण्डु, कामला दि रोगों को हरता है तथा सूर्य के समान पापों अर्थात् रोग के माणुओं का नाश करता है। बल, वर्ण बढाने वाला है, हृदय के ये हितकारी है। आयु को बढ़ाने वाला है; वीर्यवर्धक, परमवाजी रण, मंत्र सिद्धि देनेवाला, रोगी सेवन करे तो रोगरहित होकर र्घ जीवन प्राप्त करता है।इसके सेवन से मनुष्य बुद्धिमान होजाता इसकी गोली बेरकी गुठली के तुल्य बनानी चाहिये॥१२७-१३४॥

राजवल्लभो रसः ।

जातीफल लवङ्गाब्द-त्वगेलाटङ्करामठम् ।
जीरकं तेजपत्रञ्च यमानी विश्वसैन्धवम् ॥ १३५ ॥
लौहमभ्रं सताम्रञ्च रसगन्धकमेव च ।
मरिचं त्रिवृता रूप्यं प्रत्येकं द्विपलोन्मितम् ॥ १३६ ॥
धात्रीरसे वटीं कुर्य्यात् द्विगुञ्जाफलमानतः ।
हन्ति शूलं तथा गुल्ममामवातं सुदारुणम् ॥ १३७ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च चक्षुः शूलं हलीमकम् ।
शिरः शूलं कटीशूलमानाहञ्चाष्टशूलकम् ॥ १३८ ॥
क्रिमिकुष्ठानि दद्रूणि वातरक्तं भगन्दरम् ।
उपदंशमतीसारं ग्रहण्यर्शः प्रवाहिकाम् ।

राजवल्लभनामाऽयं महेशेन प्रकाशितः ॥ १३६॥

जायफल, लौंग, मोथा, दारचीनी, इलायची, शुद्ध सु... जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सेंधानमक, लौहभस्म, अ... ताम्र भस्म, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, मिरच, त्रिवी, रौप्यभस्म... द्रव्य का चूर्ण दो २ पल लें। पहले पारा गंधक की कज्जली... फिर अन्य द्रव्य मिलाकर आंवले के रस से घोटकर दो र... की गोली बनावें ! तो शूल, गुल्म, घोर आमवात, हृदय... पार्श्व शूल, चक्षु:शूल, हलमिक, शिर:शूल, कटीशूल, आन... प्रकार के शूल, क्रिमिरोग, कुष्ठरोग, दाद, वातरक्त, भगन्दर... अतीसार, ग्रहणी, बवासीर, प्रवाहिका, इन रोगों को नाश... यह राजवल्लभ नामक रस महादेवजी ने कहा है ॥ १३५-...

बृहन्नृपवल्लभः ।

रसगन्धकलौहाभ्रं नागं चित्रं त्रिवृत्समम् ।
टङ्कं जातीफलं हिङ्गु त्वगेलाब्दलवङ्गकम् ॥ १४०॥
तेजपत्रमजाजी च यमानी विश्वसैन्धवम् ।
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं मरीचतारयोस्तथा ॥ १४१॥
निरुत्थकं मृतं हेम तथा द्वादशरक्तिकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव धात्र्याश्चस्वरसेनच ॥१४२॥
भावयित्वा प्रदातव्यो माषद्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत प्रातरुत्थाय पथ्यं भक्षेत् यथेप्सितम् ॥१४३॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च दुर्नामग्रहणीं जयेत् ।
आमाजीर्णप्रशमनः सर्वरोगानिसूदनः ।
नाशयेदौदरान् रोगान् विष्णुचक्रमिवासुरान् ॥१४४॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, सी... चीते का चूर्ण, त्रिवी का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, जायफल का... दारचीनी का चूर्ण, इलायची के बीजों का, नगरमोथे का... तेजपात का, जीरे का, अजवायन का, सोंठ का चूर्ण लें। और ...

चों का चूर्ण, चांदी भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले । पहले गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। स्वर्ण भस्म बारह रत्ति डालकर खरल करे। इन सबको अदरक रस से तथा आंवले के रस से भावना देकर दो माषा प्रमाण से प्रातःकाल खाने को देवे। पथ्य जो चाहे सो खावे। अग्निमांद्य, अजीर्ण, बवासीर, ग्रहणी, आमाजीर्ण आदिरोग शान्त करता है। तथा सब रोगों को नाश करता है। उदर के सब रोगों को इस प्रकार दूर करता जैसे विष्णुकाचक्र असुरोंको ॥ १४०—१४४ ॥

महाराजनृपतिवल्लभोरसः

कर्षत्रयं मृतं कान्तं मृताभ्रं मृतताम्रकम् ।
मृतंतारं माक्षिकञ्च कर्षं कर्षं प्रदापयेत् ॥ १४५ ॥
मृतं स्वर्णं मृतंतारं टङ्कणं भृङ्गमेव च ।
वसिरं दान्तिमूलञ्च मरिचं तेजपत्रकम् ॥ १४६ ॥
यमानीं वालकं मुस्तं शुण्ठकञ्च सधान्यकम् ।
सिन्धूद्भवं सकर्पूरं विडङ्गं चित्रकं विषम् ॥ १४७ ॥
पारदं गन्धकञ्चैव तोलमानं प्रदापयेत् ।
तोलद्वयं त्रिवृच्चूर्णं लवङ्गं तच्चतुर्गुणम् ॥ १४८ ॥
जातीकोषफलञ्चैव तत्समं स्याद्वराङ्गकम् ।
सर्वेषामर्द्धभागन्तु विडकं तत्र मिश्रयेत् ॥ १४९ ॥
सर्वमेकीकृतं यद् यत् त्रुटिचूर्णञ्च तत्समम् ।
भावना च प्रदातव्या छागीदुग्धेन सप्तधा ॥ १५० ॥
मातुलुङ्गरसैः पश्चात् भावयेत् सप्तवारकम् ।
छायाशुष्कां वटीं कृत्वा भक्षयेद्दशरक्तिकाम् ॥ १५१ ॥
मन्दानलं सङ्ग्रहणीं प्रवृद्धामामानुबन्धां क्रिमिपाण्डुरोगम् ।
अम्लपित्तं हृदयामयञ्च गुल्मोदरानाहभगन्दरञ्च ॥ १५२ ॥

अर्शांसि वै पित्तकृतानशेषान् सामं सशूलाष्टकमेव हन्ति।
साजीर्णविष्टम्भविसर्पदाहं विलम्बिकाश्चाप्यलसं प्रमेहम् ॥१५
कष्ठान्यशेषाणि च कासशोषं हन्यात् सशोथं ज्वरमूत्रकृच्छ्रम्
मतान्तरे सर्वसुभद्रनामा महेश्वरेणैव विभाषितोऽयम् ॥ १५

कान्तलौह भस्म तीन कर्ष, अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, रौप्य
स्वर्णमाक्षिक भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष ले। स्वर्णभस्म,
भस्म, शुद्ध सुहागा, काकड़ा सिंगी का चूर्ण, गजपीपल का, इलायची
का, मिरच का, तेजपत्र का, अजवायन का, सुगन्धबाला का,
का, सोंठ का, धनियां का इन सबका चूर्ण, सेंधा नमक, कपूर,
विडंग का चूर्ण,चीते का चूर्ण,शुद्ध विष, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक
द्रव्य एक २ तोला लें। त्रिवी का चूर्ण दो तोले । लौंग का चूर्ण
फल का, जावित्री का, दारचीनी का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य आठ
ले। सब वस्तुओं का जितना मान हो उससे आधा भाग विड़
डाले। फिर जितना सब वस्तुओं का मान हो उतना छोटी इ
के बीजों का चूर्ण डाले। पहले पारा गंधक की कज्जली करें
अन्य सब वस्तुओं को मिलाकर भली प्रकार मर्दन करें फिर
का दूध डाल कर सात वार भावना देवें। फिर खट्टे नीबू के
सात वार भावना देवें। फिर छाया में सुखाकर दस रत्ति
गोली बनालेवें इसे खानेसे मन्दाग्नि,बढ़ी हुई संग्रहणी,आमयुक्त
क्रिमि रोग,पाण्डुरोग,छर्दी, अम्लपित्त,हृदयरोग, गुल्म, उदर,
भगन्दर,बवासीर, सब पित्तजरोग, आम, आठों शूल, अजीर्ण,
म्भ, विसर्प, दाह, विलम्बिका, अलसक, प्रमेह, सब प्रकार के
कास, शोषरोग, शोथरोग, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, आदि सब रोग इस
राज नृपतिवल्लभरस से दूर होते हैं इसका दूसरा नाम स
द्र रस भी है। इसे महेश्वर ने कहा है ॥ १४५-१५४ ॥

अन्यो महाराजनृपतिवल्लभः ।

माक्षिकं लौहमभ्रञ्च वङ्गं रजतहाटकम् ।
ग्रन्थिः यमानिका चोचं ताम्रं नागरङ्गणम् ॥ १५५

सैन्धवं बालकं मुस्तं धान्याकं गन्धकं रसम्।
शृङ्गीकर्पूरकश्चैव प्रत्येकं माषकोन्मितम्॥ १५६॥
माषद्वयं रामठं स्यात् मरिचानां चतुष्टयम्।
जातीकोषं लवङ्गश्च पत्रञ्च तोलकोन्मितम्॥ १५७॥
नाभिशङ्खं विडङ्गञ्च शाणं माषद्वयं विषम्।
कर्षषट्कं सत्रिमाषं सूक्ष्मैलानां ततः क्षिपेत्॥ १५८॥
विडं कर्षद्वयं सर्वं छागीक्षीरेण पेषयेत्।
चतुर्गुञ्जमितं खादेत् सानाहग्रहणीं जयेत्॥ १५९॥
शम्भुना निर्मितो ह्येष पूर्ववत् गुणकारकः।
नाम्ना महाराजपूर्वो नृपवल्लभ उच्यते॥ १६०॥

स्वर्णमाक्षिकभस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, बंगभस्म, चांदी भस्म, स्वर्णभस्म, पिप्पलामूल का चूर्ण, अजवायन का चूर्ण, दारचीनी का चूर्ण, ताम्रभस्म, सोंठ का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, सेंधानमक, सुगन्धबाला, नागरमोथे का चूर्ण, धनियां का चूर्ण, शुद्धगंधक, शुद्ध पारा, काकड़ासिंगी का चूर्ण, कपूर, इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ माषा लें। हींग दो माषे लें। मिरच का चूर्ण चार माषे लें। जावित्री का चूर्ण, लौंग का चूर्ण, तेजपत्र का चूर्ण, प्रत्येक एक २ तोला लें। शंख की नाभि की भस्म, विडङ्ग का चूर्ण एक २ शाण लें। शुद्ध विष दो माषा लें। छोटी इलायची के बीजों का चूर्ण छः कर्ष तीन माशा लें। विड्लवण दो कर्ष लें। पहले पारे गन्धक की कज्जली करें। फिर सब द्रव्य मिला कर पीस कर बकरी के दूध में घोट कर चार रत्ति प्रमाण की गोली बनावें। इससे आनाह सहित ग्रहणी रोग आराम होता है। यह रस शम्भु ने बनाया है। पूर्वोक्त महाराज नृपति वल्लभ रस के समान यह महाराज नृपवल्ल रस भी गुण करता है॥ १५५—१६०॥

इति ग्रहणी रोग चिकित्सा।

अथार्शः-चिकित्सा ॥

चक्रेश्वरो रसः।

चतुर्भागं शुद्धसूतं पञ्च टङ्कणमभ्रकम् ।
त्रिदिनं भावयेद् घर्मे द्रवैः श्वेतपुनर्नवैः ॥ १ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं वातदुर्नामशान्तये ।
सिद्धश्चक्रेश्वरो नाम रसश्चार्शःकुलान्तकः ॥ २ ॥

शुद्ध पारद चार तोले, शुद्ध सुहागा पांच तोले, अभ्रक पांच तोला ले। मर्दन करके श्वेतपूनर्नवा के रस में तीन दिन में रख कर भावना दें। इस चक्रेश्वर रस की दो रत्ति की मात्रा खाने से वातज बवासीर नाश होती है। यह चक्रेश्वर रस बवासीर का नाश करने वाला है ॥ [मूल पाठ में शुद्ध पारा लेना लिखा परन्तु इसके स्थान में पारद भस्म अर्थात् रससिन्दूर चार डालना चाहिये। अथवा बिना लिखे भी शुद्ध पारा चार तोले शुद्ध गन्धक भी चार तोले डालना चाहिये। केवल मात्र शुद्ध लेना परिणाम में अनिष्टकारक है] ॥ १ ॥ २ ॥

तीक्ष्णमुखो रसः।

मृतसूतार्क हेमाभ्रं तीक्ष्णं मुण्डञ्च गन्धकम् ।
मण्डूरञ्च समं ताप्यं मर्द्यं कन्याद्रवैर्दिनम् ॥ ३ ॥
अन्धमूषागतं सर्वं ततः पाच्यं दृढाग्निना ।
चूर्णितं सितया मासं खादेत् तच्चार्शसां हितम् ।
रसस्तीक्ष्णमुखो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ४ ॥

रससिन्दूर, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, अभ्रकभस्म, तीक्ष्ण भस्म, मुण्डलौहभस्म, शुद्ध गंधक, मण्डूरभस्म, स्वर्णमाक्षिक इन सब द्रव्यों को समभाग लेकर घीकुमार के रस से घोटकर मूषा में रख कर तेज आंच देकर पाक करे। स्वांगशीतल होने निकाल लें। इसकी एक रत्ति की मात्रा मिश्री में मिलाकर खा

बवासीर को नाश करती है। यह तीक्ष्णमुख नाम का रस असाध्य बवासीर को भी साध्य कर देता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

अर्शः कुठारो रसः ।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं मृतलौहञ्च ताम्रकम् ।
प्रत्येकं द्विपलं दन्ती त्र्यूषणं शूरणं तथा ॥ ५ ॥
शुभाटङ्गयवक्षार-सैन्धवं पलपञ्चकम् ।
पलाष्टकं स्नुहीक्षीरं द्वात्रिंशच्च गवां जलैः ॥ ६ ॥
आपिण्डितं पचेदग्नौ खादेत् माषद्वयं ततः ।
रसश्चार्शः कुठारोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥ ७ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगंधक दो तोला दोनों की कज्जली करें। फिर लौहभस्म दो पल, ताम्रभस्म दो पल मिलावे। फिर दन्तीमूल, सोंठ, मिरच, पीपल, जिमींकंद, वंशलोचन, शुद्धसुहागा, यवक्षार, सेंधानमक, इनमें से प्रत्येक का चूर्ण पांच २ पल ले। थोहर का दूध आठ पल ले, गोमूत्र बत्तीस पल ले। सबको मिला आग पर पकावे। गाढ़ा होने पर निकाल कर दो माषा खावे। यह अर्शः कुठार रस बवासीर आदि रोगों को नाश करता है ॥ [मात्रा चार रत्ति तक दें] ॥ ५—७ ॥

चक्राख्यो रसः ।

मृतसूताभ्रवैक्रान्तं ताम्रं कांस्यं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन दिनं भल्लातकैर्द्रवैः ॥ ८ ॥ ॥
मर्दयेत् यत्नतः पश्चात् वटीं कुर्य्यात् द्विगुञ्जिकाम् ।
भक्षणादूगुदजान् हन्ति द्वन्द्वजान् सर्वजानपि । ६ ॥

रस सिन्दूर, अभ्रकभस्म, वैक्रान्तभस्म, ताम्रभस्म, कांस्यभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोले ले। शुद्ध गंधक सब के बराबर अर्थात् पांच तोला ले। सब को एकत्र पीस कर भिलावे के क्वाथ से (संस्कृत टीकाकार ने यहां भिलावे को भी एक तोला लेना लिखा है। तब जल से मर्दन करना होगा) घोट कर दो रत्ति भर की गोली

बना ले। इसके खाने से मस्से सहित बवासीर, एक दोषज, दोषज, तथा सर्व दोषज बवासीर भी अच्छी होती है ॥८॥९॥

नित्योदितो रसः ।

मृतसूताभ्रलौहार्क-विषं गन्धं समं समम् ।
सर्वतुल्यन्तु भल्लात-फलमेकत्र चूर्णयेत् ॥ १० ॥
द्रवैः शूरणकन्दोत्थैः खल्लमर्द्यं दिनत्रयम् ।
लिहेदाज्यैर्माषमात्रं रसश्चार्शांसि नाशयेत् ।
नित्योदितो रसो नाम गुदोद्भवकुलान्तकः ॥ ११ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध शुद्ध गंधक, ये सब द्रव्य समभाग लें और सबको मिला खरल फिर जितने यह सब हों उतना ही शुद्ध भिलांवे के फल का चूर्ण इन सब को पीस कर जिमींकंद के रस से तीन दिन तक खरल घोटे। इसको माषा भर लेकर घी से खावे तो बवासीर और नष्ट होजाते हैं। [इसकी दो २ रत्ति की गोली बनानी उत्तम भिलांवा न सहा जाये तो उसके स्थान में लालचन्दन डाल हैं। इस रस का नाम "गुदजान्तक रस" भी है, १०॥११॥

चन्द्रप्रभागुड़िका ।

क्रिमिरिपुदहनं व्योष-त्रिफलासुरदारुचव्यभूनिम्बः ।
मागधीमूलमुस्तं सशटी वचा धातुमाक्षिकश्चैव ।
लवणक्षारनिशायुग-कुस्तुम्बुरुगजकणाऽतिविषाः ॥ १२ ॥
कर्षांशकान्येव समानि कुर्यात् पलाष्टकं चाश्मजतोर्विदध्यात्
निष्पत्रशुद्धस्य पुरस्य धीमान् पलद्वयं लौहरजस्तथैव ॥ १३ ॥
सिताचतुष्कं पलमत्र वांशया निकुम्भकुम्भी त्रिसुगंधियुक्तम् ।
चन्द्रप्रभेयं गुड़िका विधेया अर्शांसि निर्णाशयते षडेव ॥ १४ ॥
भगन्दरं कामलपाण्डुरोगं विनष्टवन्हेः कुरुते च दीप्तिम् ।
हन्त्यामयान् पित्तकफानिलोत्थान् नाडीगते मर्मगते व्रणे च

ग्रन्थ्यर्बुदे विद्रधिराजयक्ष्म–मेहे भगाख्ये प्रदरे च योज्या।
शुक्रक्षये चाश्मरिमूत्रकृच्छ्रे मूत्रप्रवाहेऽप्युदरामये च ॥ १६ ॥
तक्रानुपानं त्वथ मस्तुपानमाजो रसो जाङ्गलजो रसो वा।
पयोऽथवा शीतजलानुपानं बलेन नागस्तुरगो जवेन ॥ १७ ॥
दृष्ट्या सुपर्णः श्रवणे वराहः कान्त्या रतीशो धिषणश्च बुद्ध्या।
न पानभोज्ये परिहार्य्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु ॥
शम्भुं समभ्यर्च्य कृतप्रणामैः प्राप्ता गुड़ी चन्द्रमसः प्रसादात् १८॥
शुक्रदोषान् निहन्त्याशु प्रमेहानपि दारुणान्।
वलीपलितनिर्मुक्तो वृद्धो ऽपि तरुणायते ॥ १९ ॥

वायविडंग का चूर्ण, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, देवदार, चव्य, चिरायता, पिप्पलामूल, मोथा, कचूर, बच, स्वर्णमाक्षिकभस्म, सेंधानमक, यवक्षार, हल्दी, दारुहल्दी, धनियां, गजपिप्पली, अतीस, प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष लें। शिलाजीत आठ पल लें। शुद्ध गुगुल दो पल लें। लौहभस्म दो पल लें। मिश्री चार पल लें। वंशलोचन, दन्तीमूल का चूर्ण, त्रिवीका चूर्ण, दारचीनी का चूर्ण, इलायची के बीजों का चूर्ण, तेजपात का चूर्ण, प्रत्येक एक २ पल लें। इन सबको पीस कर चार रत्ति प्रमाण गोली जल से बना लें। यह चन्द्रप्रभा गुटिका कहाती है। इससे छः बवासीरें, भगंदर, कामला, पाण्डु, मन्दाग्नि, वातपित्त तथा कफ के रोग, नासूर, मर्मगतव्रण, ग्रन्थि, अर्बुद, विद्राध, राजयक्ष्मा, प्रमेह, भगसम्बन्धी रोग, प्रदर रोग, शुक्रक्षय, अश्मरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्रप्रवाह उदरामय रोग नष्ट होते हैं। इसके साथ अनुपान के रूप में छाछ, दही का पानी, बकरे के मांस का रस, जांगल जीवों के मांस का रस दूध, शीतल जल आदि रोगानुसार विचार कर पीवें। इसके सेवन से हाथी के समान बली, घोड़े के समान वेगवान, गरुड़ के समान तीव्र दृष्टि वाला, वराहके समान श्रवण शक्तिवाला, कामदेवके समान सुन्दर तथा बृहस्पति के समान बुद्धिमान होजाता है। इनके सेवन के समय में खानपान में कुछ विशेष त्याज्य नहीं है। शीत, वायु, धूप, मैथुन

आदि सेवन भी इसमें वर्जित नहीं है । यह गुड़िका शिवजी की
करके चन्द्रमा की कृपा से मिली है ॥ [यहां पर वृद्ध वैद्य नीचे
और भी पढ़ते हैं—वृद्ध वैद्योपदेशेन पलार्द्धं रस गन्धकम्
मूर्च्छितं वा ऽपि पलं वा दापयेद्रसम ॥ अभ्रकञ्च क्षिपेत् काञ्चन
मानं भिषग्वरः । सम्मर्द्य मधुसर्पिर्भ्यामादौ रक्ति चतुष्टयम् ॥
वुद्ध्या यथायुक्ति यावन्माषचतुष्टयम । त्रिवृद्दन्ती त्रिजातानां
मानं पृथक् पृथक्॥" अर्थात् इस चन्द्रप्रभा गुडिकामें शुद्ध पारा
पल तथा शुद्ध गंधक आधा पल लेकर इनकी कज्जली करके
देना चाहिये, अथवा रससिन्दूर एक पल मिला देना चाहिये
अभ्रक भस्म भी एक पल डालनी चाहिये, और त्रिवी, दन्ती
तथा दारचीनी, इलायची और तेजपात का चूर्ण केवल एक
पृथक् २ डालना चाहिये, इसे चार रत्ति भर लेकर शहद और
मिलाकर आदि में खाना चाहिये ॥] इसके सेवन से वीर्य के
शीघ्र दूर होजाते हैं तथा भयंकर प्रमेह भी दूर हो जाते हैं, तथा
आदमी भी वलि अर्थात् झुरियों और श्वेत बालों से रहित हो
युवा पुरुष के समान हो जाता है, ॥ १२—१९ ॥

माणाद्यं लौहम् ।

माणशूरणभल्लात-त्रिवृद्दन्तीसमन्वितम् ।
त्रिकत्रयसमायुक्तं लौहं दुर्नामनाशनम् ॥ २० ॥

माणकन्द, जिमींकंद, शुद्ध भिलावा, निशोथ, दन्तीमूल, हरड़,
बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, विडंग, मोथा, चीता इनमें
प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर, सबके समान लौहभस्म मिला
कर जल से पीस कर एक रत्ति भर की गोली बनावे । इससे बवा
सीर दूर होती है ॥ २० ॥

वज्रकुठारो रसः ।

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं भागयुग्मकम् ।
त्रिकटुदन्तिकुष्ठैकं षड्भागं लाङ्गलस्य च ॥ २१ ॥
क्षारसैन्धवटङ्कणानां प्रत्येकं भागपञ्चकम् ।

गोमूत्रस्य च द्वात्रिंशत् स्नुहीक्षीरं तथैव च।
यावच्च पिण्डितं सर्वं तावन्मृद्वग्निना पचेत् ॥ २२ ॥
माषद्वयं ततः खादेत् दिवास्वप्नादि वर्जयेत्।
रसश्चञ्चत् कुठारोऽयमर्शसां कुलनाशनः ॥ २३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक प्रत्येक दो - तोला ले। दोनों की कज्जली करे। फिर लौहभस्म दो तोला डाल मिलावे। फिर सोंठ, मिरच, पीपल दन्ती, कूठ इनमें से प्रत्येक का चूर्ण एक २ तोला ले। शुद्ध लाङ्गली विषका चूर्ण छः तोला लें। यवक्षार, सेंधा नमक, शुद्ध सुहागा, प्रत्येक पांच २ तोला लें, गोमूत्र ३२ तोलालें, थोहरका दूध ३२ तोला लें। सबको मिलाकर मिट्टी के पात्र में डाल कर मंद आग पर पकावें। पकते पकते जब गाढ़ा होजाये तब उतार रखें। इसे दो माषाभर खावें। इसे खाने के दिनों में दिनको सोना आदि बंद करदे। यह चञ्चत्कुठार रस सब प्रकार की बवासीरों का नाश करता है (मात्रा चार रत्ति दें) ॥ २१-२३ ॥

शिलागन्धकवटकः।

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग् भृङ्गरसासुतम्।
सप्ताहं भावयेत् सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥ २४ ॥
अर्शसश्चानुलोम्यार्थं हताग्नि बलवर्द्धनम्।
रक्तिकाद्वितयं खादेत् कुष्ठादिरहितो नरः ॥ २५ ॥

शुद्ध मनसिल, शुद्ध गंधक, दोनों को सम भाग ले मिलाकर मर्दन कर भांगरे के रसकी सात दिन भावना देवे सूखने पर दोरत्ति प्रमाण इस रसको लेकर घी और शहद से मिलाकर खावे। इससे बवासीर और मस्सों का कष्ट नहीं होता। क्योंकि मल मूत्र तथा वायु ठीक २ निकल जाते हैं। यह मन्दाग्नि को तीव्र करता है। परन्तु इसे कुष्ठ आदि रोगों से रहित रोगी सेवन करे। (मात्रा चौथाई रत्ति दें) ॥ २४ ॥ २५ ॥

जातीफलादिवटी।

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पली सैन्धवं तथा।
शुण्ठीधुस्तूरबीजञ्च दरदो टङ्कणं तथा ॥ २६ ॥
समं सर्वं विचूर्ण्याथ जम्भनीरेण मर्दयेत्।
वटीजातीफलाद्येयमर्शोऽग्निमान्द्यनाशिनी ॥ २७ ॥

जायफल, लौंग, पिप्पली, सैंधा नमक, सोंठ, धतूरे के बीज, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध सुहागा । प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण सम लेकर जम्बीरी रस से पीसकर एक रत्ति की गोली बनालें इसके सेवन से बवासीर और अग्निमांद्य रोग नष्ट होता है । इसका नाम जाती फलादिवटी है ॥ २६ ॥ २७ ॥

पञ्चाननवटी ।

मृतसूताभ्रलौहानि मृतार्कगन्धकैः सह ।
सर्वाणि समभागानि भल्लातं सर्वतुल्यकम् ॥ २८ ॥
वन्यशूरणकन्दोत्थैर्द्रवैः पलप्रमाणतः ।
मर्दयेत् दिनमेकञ्च माषमात्रं पिबेद् घृतैः ॥ २९ ॥
भक्षणात् हन्ति सर्वाणि चार्शांसि च न संशयः ।
असाध्येष्वपि कर्त्तव्या चिकित्सा शङ्करोदिता ।
कुष्ठरोगं निहन्त्याशु मृत्युरोगविनाशिनी ॥ ३० ॥

रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, लौह भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सबके समान शुद्ध भिलांवे का चूर्ण मिलावें।फिर पीसकर जंगली जिमींकंद के रस से एकदिन भर घोटें फिर एक माषा भरकी गोली बनाकर घी से पीवें तो सब प्रकार की बवासीरें दूर होता है । यह रस असाध्य बवासीरों को भी अच्छा करता है ॥ कुष्ठरोग को शीघ्र दूर करता है तथा मृत्युरोगको समय से पूर्व नहीं आने देता । [भिलांवे को स्थान में न सहा जाय तो लाल चंदन डाल लें । मात्रा दो रत्ति की दें ॥] ॥ २८—३० ॥

अष्टाङ्गो रसः ।

गन्धं रसेन्द्रं मृतलौहाकिट्टं फलत्रयं त्र्यूषणवन्हिभृङ्गम् ।
कृत्वा समं शाल्मलिका–गुडूची–रसेन यामात्रितयं विमर्द्य ॥ ३१ ॥
निष्कप्रमाणं गदितानुपानैः सर्वाणि चार्शांसि हरेद्रसस्य ।
लोकोपकृत्यै करुणामयेन रसोऽयमुक्तस्त्रिपुरान्तकेन ॥ ३२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, मण्डूरभस्म, हरड़चूर्ण बहेड़े का

आंवले का, सोंठ का, मिरच का, पीपल का, चीते का, दारचीनी का, चूर्ण इन सब में से प्रत्येक द्रव्य को समभाग लें। पहले पारे और गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर मर्दन करें। और फिर सीमल के रस या क्वाथ से तीन पहर घोटें, सूखने पर गिलोय के स्वरस से तीन पहर तक घोटें। फिर एक निष्क भरकी गोली बना लें। एक गोली खाकर रोगानुसार अनुपान पीवें तो सब प्रकार की बवासीरों को दूर करती है। यह रस शङ्कर भगवान ने संसार के लोगों के लिये जगत् में पहले पहल बनाकर प्रसिद्ध किया था ॥ ३१ ॥ ३२

इति अर्शोऽधिकारः ॥

अथाजीर्ण-चिकित्सा

महोदधि-वटी ।

एकैकं विषसूतश्च जातीटङ्कं द्विकं द्विकम् ।
कृष्णात्रिकं विश्वषट्कं द्विकं गन्धं कपर्दकम् ॥१॥
देवपुष्पं बाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः ।
नाम्ना महोदधिवटी नष्टमग्निं प्रदीपयेत् ॥ २ ॥

शोधित मीठा विष एक तोला, शुद्धपारा एक तोला, जायफल का चूर्ण दो तोला, शुद्ध सुहागा दो तोला, पीपल का चूर्ण तीन तोला, सोंठ का चूर्ण छः तोला, शुद्ध गन्धक दो तोला, कौड़ीभस्म दो तोला, लौंग का चूर्ण पांच तोला, सब से पूर्व पारे गन्धक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिला कर यत्नपूर्वक पीस कर एक २ रत्ति की मात्रा देने से यह महोदधि वटी नष्ट अग्नि को प्रदीप्त करती है ॥ १ ॥ २ ॥

अग्नितुण्डी रसः ।

शुद्धसूतं विषं गन्धमजमोदा फलात्रिकम् ।
सर्जिक्षारं यवक्षारं वन्हिसैन्धव जीरकम् ॥ ३ ॥

सौवर्चल विडङ्गानि सामुद्रं त्र्यूषणं तथा ।
विषमुष्टिसमं सर्वं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥
मरिचाभां वटीं खादेत् वन्हिमांद्यप्रशान्तये ॥ ४ ॥

शुद्धपारा, शुद्धविष, शुद्धगन्धक, अजवायन का चूर्ण, का चूर्ण, बहेड़ का, आंवले का, सज्जी, यवक्षार, चीता का सेंधानमक, जीरे का चूर्ण, सौंचल नमक, वायविडंग का चूर्ण, लवण, सोंठ का चूर्ण, मिरच, पीपल का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य भाग लें। सबके समान भाग शुद्ध हुए कुचला का चूर्ण लें। कज्जली करें। फिर सब को एकत्र पीस कर जम्बीरी नीबू के मर्दन करके मिरच के समान गोली बना लें। इसे खाने से मांद्य रोग शान्त होता है ॥ ३ ॥ ४ ॥

बड़वानलो रसः ।

शुद्धसूतस्य कर्षकं गन्धकं तत्समं मतम् ।
पिप्पली पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥ ५ ॥
क्षारत्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवेणैव भावयेद्दिनमेकतः ।
बड़वानलनामाऽयं मन्दाग्निश्च विनाशयेत् ॥ ६ ॥

शुद्धपारा एक कर्ष, शुद्ध गंधक एक कर्ष, पिप्पली, नमक, मिरच हरड़, बहेडे, आंवले इन सब का चूर्ण, सज्जी, सुहागा तथा यवक्षार, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष ले। पहले गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर खरल करे। एक दिन भर निर्गुण्डीका रस डाल कर भावित करे। यह नल रस मन्दाग्नि रोग को नाश करता है ॥ ५ ॥ ६ ॥

हुताशनो रसः ।

गन्धेशटङ्कणैकैकं विषमत्र त्रिभागिकम् ।
अष्टभागंतु मरिचं जम्भाम्भोमर्दितं दिनम् ॥ ७ ॥
तद्वटीं मुद्गमानेन कृत्वा द्वेण प्रयोजयेत् ।

शूलारोचकगुल्मेषु विसूच्यां वन्हिमांद्यके।
अजीर्णे सन्निपातादौ शैत्ये जाड्ये शिरोगदे ॥ ८ ॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। शुद्ध विष तीन तोला लें, मिरच का चूर्ण आठ तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला कर जम्बीरी नीबू के रस से मर्दन करें। और मूंग के बराबर गोली बनाकर अदरक के रस से खावें तो शूल, अरुचि, गुल्म, विसूची, अग्निमांद्य, अजीर्ण, सन्निपात आदि तथा शीत, जड़ता, और सिर दर्द इन रोगों को दूर करता है ॥ ७ ॥ ८ ॥

बृहत्-हुताशनोरसः।

एक द्विकद्वादशभागयुक्तं योज्यं विषं टङ्कणमूषणञ्च।
हुताशनो नाम हुताशनस्य करोति वृद्धिं कफजित् नराणाम् ॥९।

शुद्ध विष एक तोला, शुद्ध सुहागा दो तोला, शुद्ध मिरच बारह तोला, इन सब को घोट कर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसे खाने से अग्नि वृद्धि होती है तथा कफ नाश होता है। इसका नाम हुताशन रस है ॥ ९ ॥

अमृतकल्पवटी।

शुद्धौ पारदगन्धौ च समानौ कज्जलीकृतौ।
तयोरर्द्धं विषं शुद्धं तत्समं टङ्कणं भवेत् ॥ १० ॥
भृङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यत्नतः पुनः।
मुद्गप्रमाणा वटिका कर्त्तव्या भिषजां वरैः ॥ ११ ॥
वटीद्वयं हरेत् शूलमग्निमांद्यं सुदारुणम्।
अजीर्णं जरयत्याशु धातुपुष्टिं करोति च ॥ १२ ॥
नानाव्याधि हरा चेयं वटी गुरुवचो यथा।
अनुपान विशेषेण सम्यक् गुणकरी भवेत् ॥ १३ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला दोनों की कज्जली करे। फिर शुद्ध विष एक तोला, शुद्ध सुहागा एक तोला डाल कर

मर्दन करे। फिर भांगरे के रस की तीन दिन भावना दे। और के बराबर गोली बनाले। दो गोली खाने से शूल, अग्निमांद्य आदि रोग दूर होते हैं तथा धातुपुष्टि करता है। यह वटी नाना व्याधि को विशेष २ अनुपानों से दूर करती है। यह बात गुरु के वचन समान सत्य है। इस का नाम अमृतकल्पवटी है ॥१०॥१३॥

अग्निकुमारो रसः।

रसेन्द्रगन्धौ सह टङ्कणेन समं विषं योजयमिह त्रिभागम्।
कपर्दशङ्खाविह नेत्रभागौ मरीचमत्राष्टगुणं प्रदेयम् ॥ १४॥
सुपक्वजम्बीररसेन घृष्टः सिद्धो भवेदग्निकुमार एषः।
विसूचिकाऽजीर्ण समीरणार्त्ते दद्यात् द्विवल्लं ग्रहणीगदे च॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, शुद्ध सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एक तोला ले। शुद्धविष तीनतोला, कौड़ीभस्म दो तोला, शंखभस्म तोला, मिरच का चूर्ण आठ तोला। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पके हुये जम्बीरी नीबू के रस से कर इसकी तीन रत्ति की गोली बनाकर देने से यह अग्निकुमार विसूचिका, अजीर्ण, वायुरोग, ग्रहणीरोग, इन सबको दूर है ॥ १४ ॥ १५॥

बृहदग्निकुमारो रसः।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च टङ्कणम्।
फलत्रयं यवक्षारं व्योषं पञ्चपटूनि च॥ १६॥
द्वादशैतानि सर्वाणि रसतुल्यानि दापयेत्।
सम्मर्द्य सप्तधा सर्वं भावयेदार्द्रकद्रवैः॥ १७॥
संशोष्य चूर्णयित्वा तु भक्षयेदार्द्रकाम्बुना।
शाणमात्रं वयो वीक्ष्य नानाऽजीर्णप्रशान्तये॥ १८॥
रसश्चाग्नि कुमारोऽयं महेशेन प्रकाशितः।
महाग्निकारकश्चैव कालभास्करतेजसाम्॥ १९॥
अग्निमांद्यभवान् रोगान् शोथं पाण्डवामयं जयेत्।

दुर्नामग्रहणीसाम–रोगान् हन्ति न संशयः।
यथेष्टाहारचेष्टस्य नास्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥ २० ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, शुद्ध सुहागा दो तोला। हरड़, बहेड़ा, आंवला, यवक्षार, सोंठ, मिरच, पीपल, पांचों नमक, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर अदरक के रसकी सात भावना दें और सुखाकर चूर्ण करलें। इसे एक शाण भर लेकर अदरक के रससे आयुका विचार करके दें तो नानाप्रकार के अजीर्ण नाश होते हैं। यह अग्निकुमार रस महेश ने प्रकाशित किया है यह महा अग्निकारक है, काल और सूर्य के समान तेजस्वी है। इससे अग्निमांद्य से होने वाले रोग, शोथ, पाण्डु, बवासीर, ग्रहणी आमयुक्तरोग, नष्ट होते हैं इसमें कोई संशय नहीं। इसके सेवन के समय यथेष्ट आहार चेष्टाकर सकता है। इसमें कोई पथ्य का नियम नहीं ॥ १९—२० ॥

अपरोबृहदग्निकुमारो रसः।

व्योषं जातीफले द्वे च लवङ्गश्च वराङ्गकम्।
पत्रं शृङ्गी कणा टङ्कं यमानी जीरकद्वयम् ॥ २१ ॥
सैन्धवश्च विडं हिङ्गु रसं गंधश्च रौप्यकम्।
लौहमभ्रं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥ २२ ॥
अजीर्णशान्तये खादेच्चतुर्गुञ्जां वटीं नरः।
अत्यग्निकारकश्चायं रसश्चाग्निकुमारकः ॥ २३ ॥
संग्रहग्रहणीञ्चैव वातपित्तकफोद्भवाम्।
नाशयेदामदोषश्च त्रिदोषजनितश्च यत्।
शूलदोषं विसूचीञ्च भास्करास्तिमिरं यथा ॥ २४ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, जावित्री, जायफल, लौंग, दारचीनी, तेजपत्र, काकड़ासिंघी, पिप्पली, सुहागा शुद्ध, अजवायन, जीरा श्वेत, जीरा काला, सैंधा नमक, विडनमक, हींग, प्रत्येक द्रव्य का

चूर्ण एक२ तोला ले । तथा शुद्ध पारा,शुद्ध गंधक,चांदी भस्म, भस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले । पहले पारे गंधक की कज्जली करे । फिर अन्य द्रव्य मिला के जम्भीर के मर्दन कर चार रत्ति भरकी गोली बनाले । इसके सेवन से अ नाश होता है, अत्यग्नि बढ़ाता है, संग्रहणी, वातपित्त के आमदोष, त्रिदोषजनितरोग, शूलरोग, विसूची इन सबको ऐसे करता है जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है ॥ २१-२४॥

बृहन्महोदधिवटी ।

लवङ्गं चित्रकं शुण्ठी जयपालः समं समम् ।
टङ्गणञ्च प्रदातव्यं वृद्धदारस्य कार्षिकम् ॥ २५ ॥
चतुर्दश भावनाश्च दंतीद्रावैः प्रदापयेत् ।
लिम्पाकेन त्रिधा देया वृद्धदारेण पञ्चधा ॥ २६ ॥
रसं गंधञ्च गरलं मेलायित्वा विभावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव चित्रकस्य रसेन वा ॥ २७ ॥
मुद्गप्रमाणां वटिकां कृत्वा खादेत् दिने दिने ।
क्षुत्प्रबोधकरी चेयं जीर्णज्वर विनाशिनी ॥ २८ ॥

लौंग, चीता, सोंठ, शुद्ध, जमालगोटा, शुद्ध सुहागा, वि इनमें से प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष लेकर दन्ती के रस की भावनायें दें । फिर नींबू के रस से तीन २ भावना दें । फिर वि के क्वाथ की पांच भावनायें दें । फिर शुद्धपारा तथा शुद्ध प्रत्येक एक २ कर्ष ले इसकी कज्जली करे तथा शुद्ध विष एक मिलाके खूब मर्दन करे। इन सब द्रव्यों को एकत्र करे । और अ के रस से तथा चीते के रस से क्रमशःभावना देकर मूंग के गोली बना लें । इसे नित्य खावें तो यह भूख को जगाती है जीर्णज्वर नाश करती है । [मूंग से भी छोटी गोली बनायें और की शक्ति देखकर प्रयुक्त करे] ॥ २५—२८ ॥

रामवाणरसः ।

पारदामृत लवङ्गगंधकं भागयुग्ममरिचेन मिश्रितम् ।

जातिकाफलमथार्द्धभागिकं तिन्तिड़ीफलरसेन मर्दितम् ॥२९॥
माषमात्रमनुपानयोगतः सद्य एव जठराग्निदीपनः।
वन्हिमान्द्य-दशवक्त्रनाशनो रामबाण इति विश्रुतो रसः॥३०॥
जाठरामयरुजाश्च ताड़कां दुःसहंह्यरुचिकं कबंधकम्।
संग्रहग्रहणिकुम्भकर्णकं सामवातखरदूषणं जयेत् ॥ ३१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धविष, लौंगका चूर्ण शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले मिरचों का चूर्ण दो तोला, जायफल का चूर्ण आधा तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिला कर कच्चे इमली के रससे घोटकर एक माषा भरकी गोली बनाकर अनुपान से खावें तो शीघ्रही जठराग्नि प्रदीप्त होती है। अग्निमांद्यरूपी रावण के लिये यह रस रामबाण है। अतीसार रूपी ताड़काको, दुःसह अरुचिरूपी कबन्धको, संग्रहग्रहणीरूपी कुम्भकरण को तथा आमवात रूपी खरदूषण को यह रामबाण जीतता है ॥ [इसकी मात्रा आधी रत्ति की देनी] ॥ २९—३१ ॥

अजीर्णकण्टकोरसः।

शुद्धसूतं विषं गन्धं समंसर्वं विचूर्णयेत्।
मरिचं सर्वतुल्यञ्च कण्टकार्य्याः फलद्रवैः ॥ ३२ ॥
मर्दयेद् भावयेत् सर्वमेकविंशतिवारकम्।
त्रिगुञ्जां वटिकां खादेत् सर्वाजीर्णप्रशान्तये।
अजीर्णकण्टकः सोऽयं रसो हन्ति विसूचिकाम् ॥ ३३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धविष, शुद्ध गंधक प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करे। फिर विष मिला खरल करे। फिर सबके बराबर मिरचों का चूर्ण मिला दें। इस सारे द्रव्य को कण्टकारी का रस डालकर, इक्कीस वार मर्दन कर भावना देवे। इसकी तीन रत्ति की गोली बनाकर खावे तो सब अजीर्ण नाश होते हैं। तथा विसूचिका रोग को दूर करता है इसका नाम अजीर्ण कण्टक रस है [इसकी मात्रा एक रत्तिकी पर्याप्त है]॥ ३२ ॥ ३३ ॥

पाशुपतो रसः ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम् ।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रकक्काथ भावितम् ॥ ३४ ॥
धूर्त्तबीजस्य भस्मापि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।
कटुत्रयं त्रिभागं स्यात् लवङ्गैले च तत्समे ॥ ३५ ॥
जातीफलं तथा कोषमर्द्धभागं नियोजयेत् ।
तथार्द्धं लवणं पञ्च स्नुह्यर्केरण्डातिन्तिड़ी-
ह्यपामार्गाश्वत्थजञ्च क्षारं दद्यात् विचक्षणः ॥ ३६ ॥
हरीतकी यवक्षारं स्वर्जिका हिङ्गुजीरकम् ।
टङ्कणं सूततुल्यञ्च अम्लयोगेन मर्दयेत् ॥ ३७ ॥
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥ ३८ ॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हंति विसूचिकाम् ॥ ३९ ॥
तालमूलीरसेनैव उदरामयनाशनः ।
अतीसारं मोचरसैः ग्रहणीं तक्रसैन्धवैः ॥ ४० ॥
सौवर्चलकणाशुण्ठी-युतः शूलं विनाशयेत् ।
अर्शो हंति च तक्रेण पिप्पल्या राजयक्ष्मकम् ॥ ४१ ॥
वातरोगं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलान्वितः ।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोगं निहंत्ययम् ॥ ४२ ॥
पिप्पली क्षौद्रयोगेण श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात् ।
अस्मात् परतरो नास्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥ ४३ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला पहले इन दोनों कज्जली करे। फिर लोहभस्म तीन तोला, शुद्धविष छः तोला, ह मिला एकत्र पीसकर चीते के क्वाथ से भावित करे। फिर धतू बीजों की भस्म भी बत्तीस तोला मिलावे। तथा सोंठ का चूर्ण

तोला, मिरच
तीन तोला,
तोला, जाति
तोला मिला
इमली की भ
का चूर्ण, यव
द्रव्य एक २ त
एक रत्ति भर
पाशुपत नाम
है, पाचन है,
है ॥ मूसली
रोग को दूर
दूर करता है
है। और सों
मिलाकर दें
नाश करता
और सोंचल
और धनियां
और शहद से
कर धन्वन्तरि

दग्धश
तिन्ति
तथैव
अपाम
भावये
यावत्
सद्यो

तोला, मिरच का चूर्ण तीन तोला, पीपल का चूर्ण तीन तोला, लौंग तीन तोला, इलायची के बीजों का चूर्ण तीन तोला, जायफल आधा तोला, जावित्री आधा तोला, पांचों नमक, प्रत्येक आधा २ तोला मिलावें। तथा थोहर की भस्म, आक की भस्म, एरण्ड की भस्म इमली की भस्म, अपामार्ग की भस्म, पीपल वृक्ष की छाल की भस्म हरड़ का चूर्ण, यवक्षार, सज्जी, हींग, जीरा का चूर्ण, शुद्ध सुहागा प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला डाले। इन सबको अम्ल रस से मर्दन करे। इसकी एक रत्ति भर की गोली बना रखे। इसे भोजन के अन्त में खावे। यह पाशुपत नामक रस लाभ होने का तुरन्त विश्वास दिलाता है। दीपन है, पाचन है, हृदय के लिये हित है तथा शीघ्र विसूचिका को दूर करता है॥ मूसली के रस से दें तो सब प्रकार के उदरामय अर्थात् अतीसार रोग को दूर करता है। मोचरस से दें तो सामान्य अतीसार को दूर करता है॥ सेंधानमक तथा तक्र से दें तो ग्रहणी को नाश करता है। और सौंचल नमक और पीपल के चूर्ण तथा सोंठ के चूर्ण से मिलाकर दें तो शूल को नाश करता है। तक्र से दें तो बवासीर को नाश करता है। पिप्पली से दें तो राजयक्ष्मा को नाश करता है। सोंठ और सौंचल नमक से दें तो वातरोग को शीघ्र नाश करता है। खांड और धनियां मिलाकर दें तो पित्तरोग को नाश करता है। पिप्पली और शहद से दें तो श्लेष्मरोग को तत्क्षण दूर करता है। इससे बढ़ कर धन्वन्तरिजी ने कोई इस नहीं माना है॥ ३४—४३॥

बृहच्छङ्खवटी।

दग्धशङ्खस्य चूर्णं स्यात् तथा लवणपञ्चकम्।
तिन्तिड़ी क्षारकश्चैव कटुकत्रयमेव च॥ ४४॥
तथैव हिङ्गुकं ग्राह्यं विषं पारदगंधकम्।
अपामार्गस्य वन्हेश्च क्वाथैर्लिम्पाकजैर्द्रवैः॥ ४५॥
भावयेत् सर्वचूर्णं तदम्लवर्गैर्विशेषतः।
यावत् तदम्लतां याति गुड़िकाऽमृतरूपिणी॥ ४६॥
सद्यो वन्हिकरी चैव भसकश्च नियच्छति।

भुक्त्वाऽऽकण्ठंतु तस्यांते खादेच्च गुड़िकामिमाम् ॥ ४७ ॥
तत्क्षणाज्जारयत्याशु पुनर्भोजन मिष्यति !
हंति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषम ज्वरम् ॥ ४८ ॥
गुल्माख्यं पाण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरोचकम् ।
शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम् ।
रक्तस्रावञ्च शोथञ्च दुर्नामानि विशेषतः ॥ ४६ ॥

शंखभस्म, पांचों लवण, इमली का क्षार, सोंठ, मिरच, पी
इनका चूर्ण, हींग, शुद्ध विष, शुद्धपारा. शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्र
समभाग लें। पहले पारागंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्र
मिलाकर अपामार्ग के रससे, चीते के क्वाथ से, तथा जम्बीरी नीबू
रस से सारे चूर्णको भावना देवे। विशेष करके अम्लवर्ग से तबत
भावना देवे जबतक कि वह गोली खट्टी न हो जाये। यह अमृत
गोली शीघ्रही अग्नि को बढ़ाती है। तथा भस्मक रोग को दूर कर
है। कण्ठ तक पेट भरके ऊपर से इस गोली को खावें तो त
भोजन पच जाता है तथा और भोजन की इच्छा होती है। वातपि
कुष्ठ, विषमज्वर, गुल्म, पाण्डुरोग, निद्रा, आलस्य, अरुचि,
परिणामशूल, प्रमेह, प्रवाहिका, रक्तस्राव,शोथ, और विशेषकर ब
सीर रोग को यह नाश करती है ॥ ४४—४६ ॥

भक्तविपाकवटी ।

माक्षिकं रसगंधौ च हरितालं मनः शिला ।
त्रिवृद्दंती वारिवाहः चित्रकञ्च महौषधम् ॥ ५० ॥
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी कृष्णजीरकम् ।
रामठं कटुकापाठा सैंधवं साजमोदकम् ॥ ५१ ॥
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥ ५२ ॥
सूर्य्यावर्त्त रसेनैव तुलस्याः स्वरसेन च ।

आतपे भावयेद्द्वैद्यः खल्लपात्रे च निर्म्मले ॥
पेषयित्वा वटीं खादेत् गुञ्जाफलसमप्रभाम् ॥ ५३ ॥
भुक्तोत्तरीये बहुभोजनांते मुहुर्मुहुर्वाञ्छति भोजनानि।
आमानुबंधे च चिराग्निमांद्ये विड्विग्रहे पित्तकफानुबंधे ॥ ५४ ॥
अर्शः सु शोथोदरके ऽप्यजीर्णे शूलप्रदोषप्रभवे ज्वरे च।
शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा सुखं विपाच्याशु निरस्य कोष्ठम् ५५

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध मनासिल, त्रिवी का चूर्ण, दन्तीमूल का चूर्ण, नागरमोथे का, चीते का, तथा सोंठका, पीपल का, मरिच का, हरड़ का, अजवायन का, काले जीरे का चूर्ण, हींग, कुटकी का चूर्ण, पाठा का चूर्ण, सैंधानमक, अजमोदा अर्थात् अजवायन का चूर्ण, जायफल, यवक्षार, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिलाकर पीसें और अदरक के रस से तथा निंगुण्डी के रस से तथा सूर्यावर्त्त के रस से तथा तुलसी के रस से धूप में भावना दे। फिर पीस कर एक रत्ति भरकी गोली बना लें। खाने के पीछे, बहुत अधिक भोजन कर चुकने के बाद इसे दें तो बारम्बार और भोजन खाने की इच्छा होती है। आमके अनुबन्ध में, पुराने अग्निमान्द्य में, कब्ज में, पित्तकफ के अनुबन्ध में, बवासीर में, शोथमें, उदर में, अजीर्ण में, शूलमें, रातको होने वाले ज्वर में, यह वटी देनी अच्छी है यह कोष्ठमें सुखसे अन्नको पचाकर निकाल देती है ५०-५५॥

पञ्चामृतवटी।

अभ्रकं पारदं ताम्रं गंधकं मरिचानि च।
समभागमिदं चूर्णं चाङ्गेरीरसमार्दितम् ॥ ५६ ॥
मर्दिते हि रसे भूयो जयंतीसिंधुवारयोः।
भावनापि च कर्त्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥ ५७ ॥
तप्तोदकानुपानेन चतस्रस्तिस्र एव वा।
वह्निमांद्ये प्रदातव्याः वट्यः पञ्चामृताः शुभाः ॥ ५८ ॥

अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, ताम्र भस्म, शुद्ध गंधक, मिरचका
सब द्रव्य सम भागलें पहले पारा गंधक को कज्जली करें,
अन्य द्रव्यों को मिलाकर चाङ्गेरी के रस से मर्दन करके फि
न्ती के रससे और संभालु के रससे भावना देकर एक रत्तीके स
गोली बनावे। इसकी तीन या चार गोली लेकर गरम जलसे पी
अग्निमांद्य शान्त होता है ॥ ५६—५८ ॥

क्रव्यादो रसः ।

पलं रसस्य द्विपलं बलेः स्याच्छुल्वायसी चार्द्धपलप्रमाणे।
सञ्चूर्ण्य सर्वं द्रुतमग्नियोगादेरण्डपत्रेऽथ निवेशनीयम् ॥ ५९
कृत्वाऽथतां पर्पटिकां विदध्याल्लौहस्य पात्रे त्ववपूतमस्मिन्।
जम्बीरजं पक्वरसं पलानां शतं नियोज्याग्निमथाल्पमल्पम् ॥ ६०
जीर्णे रसे भावितमेतदेतैः सुपञ्चकोलाङ्कुरवारिपूरैः ।
सवेतसाम्लैः शतमत्र योज्यं समं रजष्टङ्कणजं सुभृष्टम् ॥ ६१ ॥
विडं तदर्द्धं मरिचं समञ्च तत् सप्तवारं चणकाम्लकेन ।
क्रव्यादनामा भवतिप्रसिद्धो रसस्तुमन्थानकभैरवोक्तः ॥ ६२
माषद्वयं सैन्धवतक्रपीतो ह्यसौ सुधन्यः खलुभोजनांते ।
गुरूणि मांसानि पयांसि पिष्ट–घृतानि सेव्यानि फलानि चा
मात्रातिरिक्तान्यपि सेवितानि यामद्वयाज्जारयति प्रसिद्धः ।
निहंत्यजीर्णान्यपिषट् प्रवृद्धमग्निं करोति क्रमसेवनेन ॥ ६४ ॥
कार्श्य स्थौल्य निवर्हणो गरहरः सामार्त्तिनिर्णाशनः ।
गुल्मप्लीहनिसूदनो ग्रहणिकाविध्वसंनः स्रंसनः ।
वातश्लेष्मनिवर्हणः श्रमहरः शूलार्त्तिशूलापहः ।
वातग्रंथिमहोदरापहरणः क्रव्यादनामा रसः ॥ ६५ ॥

शुद्ध पारा एक पल, शुद्ध गंधक दो पल, दोनों की कज्जली क
फिर ताम्रभस्म आधा पल, लौहभस्म आधा पल, मिलावे । सब
खरल कर आगपर रख जब पिघलने लगे तब एरण्ड के पत्ते पर

कर पर्पटी बना लें फिर इसे चूर्णकर एक लोहे के पात्र में डाले और जम्बीरी का छना हुआ रस एक सौ पल डाले और मन्द २ आगपर पकावे। जब सब रस सूख जावे तब उतार कर पीसे और फिर पंच कोल अर्थात् पिप्पली, पिप्पली मूल, चव्य, चीता और सोंठ इन पांचों के एकत्र क्वाथ से उसे भावना देवे, फिर अम्लवेत के क्वाथसे भावना देवे। फिर भुने हुये सुहागे की खील चार पल डाले. विड्लवण दो पल डाले, मरिच का चूर्ण चार पल डाले। फिर सबको मिलाकर पीस कर चणकाम्ल से सातवार भावित करे। इस रसको मन्थान भैरव ने रावण को अधिक मांस पचाने के लिये कहा था। इसका नाम क्रव्याद रस है॥ इसे दो माषा लेकर सेंधा नमक तथा तक्र से मिला कर भोजन के अन्त में पीवे तो बड़ा लाभ करता है। यह रस धन्य है। इसके साथ भारी मांस, दूध, पीठी, घृत, फल, सेवन करने चाहियें अधिक मात्रा में भी खाये हुये द्रव्यों को दो पहर में अर्थात् छः घण्टों में पचा देता है। तथा छः प्रकार के अजीर्ण दूर करता है॥ अग्नि क्रमशः प्रवृद्ध करता है॥ कृशता तथा स्थूलता दोनों को दूर करके शरीर को समता में लाता है। संयोगजविष को दूर करता है आमके रोगको दूर करता है। गुल्म, प्लीहा, तथा ग्रहणी का नाश करता है तथा स्रंसन है। तथा वातश्लेष्म को दूर करता है। श्रम हरता है, शूल रोगों को दूर करता है। वातग्रंथि, महा उदर रोगों को दूर करता है। यह क्रव्यादरस कहाता है॥ [इसकी मात्रा दो रत्ति पर्य्याप्त है]॥ ५९—६५॥

ज्वालानलो रसः।

क्षारद्वयं सूतगंधौ पञ्चकोलमिदं समम्।
सर्वतुल्या जया देया तदर्द्धं शिग्रुवल्कलम्॥ ६६॥
एतत् सर्वं जयाशिग्रु-वन्हिमार्कवजै रसैः।
भावयेत् त्रिदिनंघर्मे ततो लघुपुटे पचेत्॥ ६७॥
भावयेत् सप्तधा चार्द्र-द्रवैर्ज्वालानलो भवेत्।
पाचनो दीपनो हृद्यश्चोदरामयनाशनः॥ ६८॥

निष्कोऽस्य मधुना लीढोऽनुपानं गुडनागरैः ।
ज्वराजीर्णमतीसारं ग्रहणीं वन्हिमार्दवम् ।
श्लेष्महृल्लासवमनमालस्यमरुचिं जयेत् ॥ ६९ ॥

यवक्षार, सज्जीक्षार, शुद्धपारा, शुद्धगन्धक, पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ इनका चूर्ण। इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ तोले ले। सार चूर्ण के बराबर अर्थात् नौ तोला भांग का चूर्ण ले, सुहांजने की छाल का चूर्ण साढ़े चार तोले ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर पीसे। और सुहांजना, चीता, और भांगरा इनमें से प्रत्येक के रस या क्वाथ से तीन २ दिन धूप में भावना देवे। फिर सुखा कर लघुपुट में पाक कर ले। फिर अदरक के रस से सात वार भावना देवे। इसे ज्वालानल रस कहते हैं। यह अग्नि को दीपन करता तथा पाचक है। हृदय के लिये हित है, उदरामय अर्थात् अतीसार को नाश करता है। इसे एक निष्क भर मधु से चाटकर ऊपर से गुड़ और सोंठ मिला कर अनुपान करे तो ज्वर, अजीर्ण, अतीसार, ग्रहणी, अग्निमांद्य, श्लेष्म, हल्लास, वमन, आलस्य अरुचि को जीतता है ॥ ६९ ॥

अमृतावटी ।

अमृत वराटकमरिचैर्द्विपञ्चनवभागयोजितैः क्रमशः ।
वटिकामुद्गसमाना कफत्रिदोषानलमान्द्यहारिणी ॥ ७० ॥

शोधित विष दो तोला, शुद्ध कौड़ीभस्म पांच तोला, मिरचों का चूर्ण नौ तोला। सब को पीस जल से घोट कर मूंग के समान गोली बनावें। यह कफ नाशक, त्रिदोषनाशक तथा अग्निमांद्य नाशक है ॥ ७० ॥

बृहदग्निकुमारवटी ।

अभ्रं पारदगन्धकौ सदरदौताम्रञ्च तालं शिला ।
वङ्गञ्च त्रिफला विषञ्च कुनटी भागास्त्रयो दन्तिनः ।
शृङ्गी व्योषयमानि चित्रजलदं द्वे जीरके टङ्गणम् ।

एलापत्रलवङ्गहिङ्गुकटुकी जातीफलं सैन्धवम् ॥ ७१ ॥
एतान्यार्द्रक-चित्रदन्ति-सुरसा-वासा रसैर्बिल्वजैः।
पत्रोत्थैरपिसप्तधा सुविमले खल्लेविभाव्यान्यतः।
खादेद्वल्लमितं तथा च सकलव्याधौ प्रयोज्या बुधैः।
विड्बंधे कफजे त्रिदोषजनिते ह्यामानुबंधे ऽपि च ॥ ७२ ॥
मंदे ऽग्नौ विषमज्वरे च सकले शूले त्रिदोषोद्भवे।
हन्यात् तानपि भक्तपाक वटिका भूयश्च सामं जयेत् ॥ ७३ ॥

अभ्रकभस्म, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहिंगुल, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध मनशिल, बंगभस्म, हरड़, बहेड़े, आंवले इनका चूर्ण, शुद्ध विष, शुद्ध नैपाली मनसिल, प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग लें। दन्ती का चूर्ण तीन भाग ले। तथा काकड़ासिंघी, सोंठ, मिरच, पीपल, अजवायन, चीता, मोथा, श्वेतजीरा, कालाजीरा, इलायची के बीज, तेजपत्र, सुहागा शुद्ध, लौंग, हींग, कुटकी, जायफल, सेंधानमक, इन सबका चूर्ण पृथक २ एक २ भाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला कर खरल करें॥ फिर अदरक के रस से, चीता, के क्वाथ से, दन्ती के क्वाथ से, तुलसी के पत्तों के रस से, बांसा के पत्तों के रस से, तथा बिल के पत्तों के रस से सात २ बार भावना दें। डेढ रत्ति के बराबर गोली बनालें। इसे सब रोगों में दे सकते हैं। कब्ज, कफज, त्रिदोषज, आमयुक्त, अग्निमांद्य, विषमज्वर, सब प्रकार के शूल, त्रिदोषजशूल इन सब रोगों में लाभ करती और आम को जीतती है॥ ७१-७३॥

लवङ्गादिवटी।

लवङ्गशुण्ठी मरिचानि भृष्ट—सौभाग्यचूर्णानि समानि कृत्वा।
भाव्यान्यपामार्गहुताश वारा प्रभूतमांसादिक जारणाय ॥ ७४ ॥

लौंग, सोंठ, मिरच, भुनेहुये सुहागेकी खील, इन सबका चूर्ण समभाग लेकर पीले। फिर अपामार्ग के रस और चीते के रस से भावना देकर खावे। इसके खाने से मांस आदि गरिष्ठ भोजन भी पच जाता है॥ ७४॥

बृहल्लवङ्गादि वटी ।

लवङ्गजातीफल धान्यकुष्ठं जीरद्वयं त्र्यूषण त्रैफलञ्च ।
एलात्वचं टङ्गवराटमुस्तं वचा ऽजमोदाविडसैन्धवञ्च ॥ ७५ ॥
तदर्द्धकं पारदगन्धमभ्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्ण्य सर्वम् ।
तन्नागवल्लीदलतोयपिष्टं वल्लप्रमाणां वटिकाञ्च कृत्वा ॥ ७६ ॥
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णातोयैरियं निहन्याद् ग्रहणीविकारम् ।
आमानुबन्धं सरुजंप्रवाहं ज्वरं तथा श्लेष्मभवं सशूलम् ॥ ७७ ॥
कुष्ठाम्लपित्तं प्रबलं समीरं मन्दानलं कोष्ठगतञ्च वातम् ।
वटी लवङ्गादि वसुप्रणीता तथा सवातं विनिहंति शीघ्रम् ॥ ७८ ॥

लौंग, जायफल, धनियां, कूठ, श्वेतजीरा, काला जीरा, सों[ठ], मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, इलायची, दारचीनी, शु[द्ध] सुहागा, कौड़ी भस्म, मोथा, वच, अजमोदा, विड़नमक, सेंधा नम[क] प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लें। शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौ[ह] भस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य आधा २ तोला लें। पहले पा[रा] गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसलें और सब[को] चूर्ण करके पान के रस से खरल करके डेढ़रत्ति प्रमाण की गो[ली] बनाकर प्रातःकाल खावे। ऊपर से गरम पानी पीवे। तो ग्रहणी विकार,आम, पीडा तथा प्रवाहयुक्त ग्रहणी ठीक होती है श्लेष्म[ज] शूल, कुष्ठ, अम्लपित्त, प्रबल वायुरोग, मन्दाग्नि, कोष्ठगतवात, त[था] वातरोगों को यह लवङ्गादिवटी दूर करती है ॥ ७५—७८ ॥

जातिफलादिवटी ।

जातीफलं लवङ्गञ्च पिप्पली सिन्धुकामृतम् ।
शुण्ठीधुस्तूरबीजञ्च दरदं टङ्गणं तथा ॥ ७९ ॥
समं सर्वं समाहृत्य जम्भनीरेण मर्दयेत् ।
वल्लमाना वटी कार्य्या चाग्निमान्द्यप्रशान्तये ॥ ८० ॥

जायफल, लौंग, पिप्पली, सेंधा नमक, शुद्धविष, सोंठ,

धतूरे के बीज, शुद्ध हिंगुल, भुना हुआ सुहागा। प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर खरल करें और जम्बीरी के रस से मर्दन करके डेढ़ रत्ति प्रमाण गोली बनावे। इसके खाने से अग्निमांद्य रोग दूर होता है॥ ७९॥ ८०॥

शङ्खवटी।

सार्द्धकर्षं रसेन्द्रस्य गंधकस्य तथैव च।
विषं कर्षत्रयं दद्यात् सर्वतुल्यं मरीचकम्॥ ८१॥
दग्धशङ्खश्च तत्तुल्यं पञ्च कर्षाणि नागरात्।
स्वर्जिका रामठकणा–सिन्धुसौवर्चलं विडम्॥ ८२॥
सामुद्रमौद्भिदश्चैव भावयेत् निम्बुकद्रवैः।
वटी ग्रहण्यम्लपित्त शूलघ्नी वन्हिदीपनी।
वन्हिमांद्यकृतान् रोगान् सामदोषं विनाशयेत्॥ ८३॥

शुद्ध पारा डेढ़ कर्ष, शुद्ध गंधक डेढ़ कर्ष, शुद्धविष तीन कर्ष, मिरचों का चूर्ण छः कर्ष, शंख भस्म छः कर्ष, सोंठका चूर्ण, सज्जी, हींग, पीपली, सेंधा नमक, सौंचल नमक, विडनमक, सामुद्र लवण, तथा औद्भिद नमक अर्थात् नौशादर इनमें से प्रत्येक का चूर्ण पांचर कर्ष लेकर पीसकर नीबू के रस से भावना देवे। और एक रत्ति भर की गोली बनाकर खावें तो ग्रहणी, अम्लपित्त, शूलरोग को नष्ट करती है। अग्नि दीपन करती है, तथा अग्निमांद्य से होने वाले रोगों तथा आम दोष को दूर करती है॥ ८१—८३॥

चिन्तामणिरसः।

रसं गन्धं मृतं ताम्रं मृतमभ्रं फलत्रयम्।
त्र्यूषणं दंतिबीजश्च सर्वं खल्ले विमर्दयेत्॥ ८४॥
द्रोणपुष्पीरसैश्चापि भावयेच्च पुनः पुनः।
अस्य मात्रा प्रदातव्या गुञ्जैका वा द्विगुञ्जिका॥ ८५॥
चिन्तामणिरसो ह्येष चाजीर्णे शस्यते सदा।

आमवातं ज्वरं हन्ति सर्वशूलनिसूदनः ॥ ८६ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, हरड़ का च् बहेड़, आंवले, सोंठ मिरच, पीपल, इन सब का चूर्ण, दान्ती शुद्ध किये हुए बीज इनमें से प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिला कर खरल करें। द्रोणपुष्पी अर्थात गूमा के रस से सात बार भावना दें। इसकी रत्ति या दो रत्ति की मात्रा दें। यह चिन्तामणि रस अजीर्ण आमवात में, ज्वर में, सब प्रकार के शूल में देने से लाभ करता है ॥ ८४—८६ ॥

प्रदीपनो रसः ।

रसनिष्कं गंधनिष्कं निष्कमात्रं प्रदीपनम् ।
मानमर्द्धं प्रदातव्यं चुल्लिकालवणं भिषक् ॥ ८७ ॥
मर्दयित्वा प्रदातव्यमथास्य माषमात्रकम् ।
अजीर्णे चाग्निमान्द्ये च दातव्यो रसवल्लभः ॥ ८८ ॥

शुद्धपारा, एक निष्क, शुद्ध गंधक एक निष्क, चीते का एक निष्क, चुल्लिका लवण, अर्थात् नौशादर डेढ़ निष्क ले। प पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलावे। इसकी माषा मात्रा देवे तो अजीर्ण तथा अग्निमांद्य दूर होता है [पन का अर्थ यहां चीता है एक विशेष प्रकार का लालावण "प्रदीपन" कहाता है। नौशादर को आधा पल भी कई लेते मात्रा दो रत्ति दें] ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

विजय रसः ।

रसस्यैकं पलं दत्त्वा नागञ्च गन्धकं पलम् ।
क्षारत्रयं पलं देयं लवङ्गं पलपञ्चकम् ॥ ८९ ॥
दशमूली जयाचूर्णं तद्द्रवेण तु भावयेत् ।
चित्रकस्य रसेनाथ भृङ्गराजरसेन तु ॥ ९० ॥
शिग्रमूलद्रवैश्चापि ततो भाण्डे निरुध्य च ।

यामभात्रं पचेदग्नौ मर्दयेदार्द्रकद्रवैः ।
ताम्बूली पत्रसंयुक्तं खादेत् निष्कामितं सदा ॥ ९१ ॥

शुद्ध पारा एक पल शुद्ध गंधक एक पल, दोनों की कज्जली करे । शुद्धविष एक पल, यवक्षार, सज्जी, भुना हुआ सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एक पल, लौंगका चूर्ण पांच पल, दशमूल के द्रव्यों, तथा भांग का प्रत्येक का चूर्ण पांच २ पलले । सबको मिला चीते के रससे तथा भांगरे के रस से तथा सुहांजने की जड़के रस से भावना दें । फिर एक पात्र में सारे भावित चूर्ण को डाल मुंह बंदकर एक पहर तक अग्निपर पकावें फिर अदरक के रस से भावना दें । फिर पानके पत्ते में रखकर एक निष्क भर खावें तो अजीर्णादि रोग नष्ट हों [मात्रा दो रत्ति दें] ॥ ८९-९१ ॥

महाभक्तपाक वटी ।

माक्षिकं रसगन्धौ च हरितालं मनः शिलाम् ।
गगनं कान्तलौहश्च सर्वमेतच्च कार्षिकम् ॥ ९२ ॥
त्रिवृद्दन्ती वारिवाहं चित्रकञ्च महौषधम् ।
पिप्पलीं मरिचं पथ्यां यमानीं कृष्णजीरकम् ॥ ९३ ॥
रामठं कटुकां पाठां सैन्धवं साजमोदकम् ।
जातीफलं यवक्षारं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ९४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ।
सूर्य्यावर्त्त रसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ ९५ ॥
आतपे भावयेद्वैद्यः कृत्वा गुञ्जामितां वटीम् ।
भक्षयेत् तां वटीं प्राज्ञो लवङ्गेन नियोजिताम् ॥ ९६ ॥
भुक्तोत्तरीये बहुभोजनान्ते आमानुबन्धे चिरवान्हिमान्द्ये ।
विड्विग्रहे वातकफानुबंधे शोथोदरानाहगदेऽप्यजीर्णे ॥ ९७ ॥
शूले त्रिदोषप्रभवे ज्वरे च शस्ता वटी भक्तविपाकसंज्ञा ।
सुखं विरेच्याशु नरस्य कोष्ठं मुहुर्मुहुर्वाञ्छयतीप्सितान्नम् ॥ ९८ ॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धहड़ताल, मनासिल,अभ्रक भस्म, कान्त लाहभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष पहले पारा गंधक की कज्जली फिर अन्य द्रव्य मिलायें। फिर दन्ती, मोथा, चीता, सोंठ, पीपल, मिरच, हरड़, अजवायन जीरा, हींग, कुटकी, पाठा, सेंधानमक, अजमोदा, जायफल, इनमें से प्रत्येक द्रव्य के चूर्ण को एक २ कर्ष लें। सबको मिला अदरक के रस से, निर्गुण्डी के रस से, सूरजमुखी के रस से, कंगनी के रस से धूपमें भावना देकर एक२ रत्ति भरकी गोली उसे बुद्धिमान वैद्य रोगी को लंगके चूर्णके खिलावे भोजन बहुत भोजन खा चुकने के बाद, आमानुबंध में, पुराने अग्निमांद्य कब्ज़ में, वातकफ के अनुबंध में, शोथमें, उदरराग, अनाह, शूल त्रिदोषज ज्वर, इनमें यह भक्तविपाकवटी देवे। मनुष्य को यह सुखपूर्वक विरेचन करके यह अन्नकी भूखको लगाती है॥ ९२—९८

रसराक्षसः।

ताम्रं पारदगन्धकं त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलम्।
खल्वे मर्द्य दिनं निधाय सिकताकुम्भेषु यामं ततः।
स्विन्नं तेष्वपि रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं भावयेत्।
एकीकृत्य च मातुलुङ्गकजलैर्नाम्ना रसो राक्षसः॥ ९९॥

ताम्र भस्म, शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, सोंठ, मिरच,पीपल, लौह भस्म, सौंचल नमक इनमें से प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर घोटें और बालुकायन्त्र में एक पहरभर स्वेदन करें। फिर निकालकर उस में लाल पुनर्नवा के क्षारको उस चूर्ण के बराबर डाले। फिर पीस मातुलुंग नींबू के रससे सातदिन भावना दें। यह रस राक्षस इसकी मात्रा एक रत्ति की है। यह अजीर्ण तथा अग्निमांद्य को करता है॥ ९९॥

त्रिफला लौहम्।

त्रिफलामुस्तवेल्लैश्च सितया कणया समम्।
खरमञ्जरिबीजैश्च लौहं भस्मकनाशनम् ॥ १०० ॥

हरड़ का चूर्ण, बहेड़ का, आंवले का, मोथे का, विडंगका चूर्ण, मिश्री, पीपलका चूर्ण, अपामार्ग के बीजों का चूर्ण इन सबको सम भाग ले। तथा सबके समान लौहभस्म लेकर मिलावें। इस त्रिफला लौह की बलानुसार चार रत्ति की मात्रा लें तो भस्मक रोग दूर होता है ॥ १०० ॥

अपामार्गाद्यञ्जनम्।

अपामार्गस्य पत्रश्च मरिचश्च समं समम्।
अम्लरोलीयुतं पिष्टमञ्जनात् सूचिकां जयेत् ॥ १०१ ॥

अपामार्ग के पत्ते, मिरच दोनों समभाग लें। चूर्ण करें और चांगेरी के रसमें पीसकर अंजन करें तो विसूचिका रोग नाश को प्राप्त होता है ॥ १०१ ॥

अग्निकुमारः।

टङ्कणं रसगन्धौ च समं भागत्रयं विषात्।
कपर्दशङ्खयोस्त्र्यंशं वसुभागं मरीचकम् ॥ १०२ ॥
दिनं जम्भाम्भसा पिष्टं वल्लमात्रं प्रदापयेत्।
विसूचीशूलविष्टम्भ-वन्हिमान्द्ये ज्वरे तथा।
अजीर्णे संग्रहण्याश्च सिद्धश्चाग्निकुमारकः ॥ १०३ ॥

सुहागे की खील, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले, शुद्ध विष तीन तोला ले। कौड़ी भस्म तीन तोला, शंख भस्म तीन तोला लें। मिरच का चूर्ण आठ तोला लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्यों को मिलाकर खरल करें। और फिर जम्बीरी के रस से भावना दें। इसे डेढ़ रत्तिभर देवे तो विसूची, शूल, विष्टम्भ, अग्निमांद्य, ज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी इन रोगों को दूर करने में अग्निकुमार सिद्ध है ॥ १०२ ॥ १०३ ॥

अपरा शङ्खवटी।

द्वौ क्षारौ रसगंधकौ सलवणौ क्षारेण तुल्यं विषम्।
चिञ्चाशङ्खचतुर्गुणं रसवरैर्लिम्पाकजातैः कृतम्।

वारं वारमिदं सुपाकरचितं लौहं दिपेत् हिङ्गुकम् ।
भूयष्टङ्कसमं सुमर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणं भजेत् ॥ १०४ ॥
ख्याता शङ्खवटी महाग्निजननी शूलांतकृत् पाचनी ।
कासश्वासविनाशिनी क्षयहरी मंदाग्निसंदीपनी ।
वातव्याधिमहोदरादिशमनी तृष्णामयोच्छेदिनी ।
सर्वव्याधिनिसूदनी क्रिमिहरी दुष्टामयध्वंसिनी ॥ १०५ ॥

सज्जी, यवक्षार, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सेंधानमक, शुद्ध वि... प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें पहले पारा गंधक की कज्जली ... फिर अन्य द्रव्य मिलावें। फिर इमली के फल का भस्म चार तोला तथा शंख भस्म चार तोला डालें। फिर सबको इकट्ठा मिला पीस... नीबू के रससे सातबार भावना देवे। फिर लौह भस्म एक तोला हींग एक तोला, शुद्ध सुहागा एक तोला सबको मिलावे फिर पी... कर एक रत्तिके समान गोली बनावें। यह शंखवटी महा अग्नि ... उत्पन्न करती है। शूल नाशनी है, पाचनी है। खांसी तथा दमे ... नाश करती है। क्षय रोगको दूर करती है। मन्दाग्नि को सन्दी... करती है। वातव्याधि, महोदरादि उदर रोगों को शान्त करती... तृष्णा रोग को नाश करती तथा सब रोगों को दूर करती तथा क्रि... नाश करती तथा दुष्ट रोगों को दूर करती है॥ १०४ ॥ १०५ ॥

इति अजीर्ण चिकित्सा ॥

अथ क्रिमिचिकित्सा ।

क्रिमिकालानलो रसः ।

विडङ्गं द्विपलञ्चैव विषचूर्णं तदर्द्धकम् ।
लौहचूर्णं तदर्द्धञ्च तदर्द्धं शुद्धपारदम् ॥ १ ॥
रसतुल्यं शुद्धगंधं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।

छायाशुष्कां वटीं कृत्वा खादेत् षोडशरक्तिकाम् ॥ २ ॥
धान्यजीरानुपानेन क्रिमिकालानलो रसः ।
उदरस्थं क्रिमिं हन्याद् ग्रहण्यर्शः समन्वितम् ॥ ३ ॥
अग्निदः शोथशमनो गुल्मप्लीहोदरान् जयेत् ।
गहनानन्दनाथेन भाषितो विश्वसम्पदे ॥ ४ ॥

वायविडंग का चूर्ण दोपल, शुद्ध विष एक पल, लौहभस्म आधा पल, शुद्ध पारा चौथाई पल, शुद्ध गंधक चौथाई पल, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर बकरी के दूध से खरल करें और छाया में सुखाकर रखें। इस रसको सोलह रत्ति भर खाये और ऊपर से धनियें और और जीरे का अनुपान पिये; यह क्रिमिकालानल रस कहाता है। इसे खाने से पेटके कीड़े नाश होते हैं तथा ग्रहणी, बवासीर, नाश होती है अग्निवृद्धि करता और शोथ को दूर करता है, गुल्म, प्लीहा तथा उदर रोगों को जीतता है। यह रस लोकोपकार के लिये गहनानन्द ने कहा है। [मात्रा एक रत्ति की दें] ॥ १—४ ॥

क्रिमिविनाशो रसः ।

शुद्धसूतं समं गन्धमभ्रं लौहं मनः शिला ।
धातकी त्रिफलालोध्रः विडङ्गं रजनीद्वयम् ॥ ५ ॥
भावयेत् सप्तधा सर्वं भृङ्गबेरभवैः रसैः ।
चणमात्रां वटीं कृत्वा त्रिफलारससंयुताम् ॥ ६ ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय क्रिमिरोगोपशान्तये ।
वातिकं पैत्तिकं हंति श्लैष्मिकञ्च त्रिदोषजम् ।
नाम्ना क्रिमिविनाशोऽयं क्रिमिरोगकुलान्तकः ॥ ७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, लौह भस्म, शुद्ध मनासिल, धाय के फूल, हरड़ का चूर्ण, बहेड़े, आंवले, लोध, वायविडंग हल्दी, दारुहल्दी, इन सबका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले

पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसें और अदरक के रस से सातवार भावना देवें फिर चने के समान गोली बनावें इसे प्रातःकाल त्रिफला के रस से खावें तो क्रिमिरोग शान्त होता है वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, त्रिदोषज, तथा सब प्रकार के क्रिमियों को यह क्रिमिविनाशरस नाश करता है। (गोली एक रत्ती की बनावें।)

क्रिमिरोगारि रसः।

सूतं गन्धं मृतं लौहं मरिचं विषमेव च।
धातकी त्रिफला शुण्ठी मुस्तकं सरसाञ्जनम्॥ ८॥
पाठा त्रिकटु मुस्ता च बालकं बिल्वमेव च।
भावयेत् सर्वमेकत्र स्वरसैर्भृङ्गजैस्ततः॥ ९॥
वराटिकाप्रमाणेन भक्षणीयो विशेषतः।
क्रिमिरोगविनाशाय रसोऽयं क्रिमिनाशनः॥ १०॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लौह भस्म, मिरच का चूर्ण, शुद्ध किया हुआ विष, धाय के फूल हरड़ का चूर्ण, बहेड़े, आंवले, सोंठ, मोथा, सुगंधबाला, बिल का इन सबका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सबको भांगरे के रसकी भावना देकर एक कौड़ी भर खावें तो क्रिमि रोग नष्ट होता है॥ (मात्रा दो रत्ती की दें)॥ ८—१०॥

कीटमर्दो रसः।

शुद्धसूतं शुद्धगन्धो ह्यजमोदा विडङ्गकम्।
विषमुष्टिः ब्रह्मबीजं क्रमात् द्वि त्रिगुणं भवेत्॥ ११॥
चूर्णयेन्मधुना मिश्रं निष्कैकं क्रिमिजिद्भवेत्।
कीटमर्दो रसो नाम मुस्ताक्वाथं पिबेदनु॥ १२॥

शुद्धपरा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला ले इनकी कज्जली करें। फिर विडंग का चूर्ण तीन तोला, शुद्ध कुचला पांच तोला तथा ढाक के बीज छः तोला क्रम से लें। इन सब को पीस कर

शहद के साथ मिला कर एक निष्क भर खावें तो क्रिमियों को नाश करता है। यह कीटमर्द रस कहाता है। इसे खाकर नागरमोथे का क्वाथ पीवे ॥ [यहां "क्रमाद्द्वित्रिगुणं भवेत्" के स्थान में "यथाक्रमं गुणोत्तमम" तथा "क्रमोत्तरगुणं" तथा "क्रमाद्वृद्धगुणितं भवेत्" पाठ भी हैं। 'ब्रह्मबीज' का अर्थ संस्कृत टीकाकार ने "भार्गी के बीज" भी किया है। परन्तु यहां ढाक के बीज लें] ॥११॥१२॥

क्रिमिघ्नो रसः।

क्रिमिघ्नकिंशुकारिष्ट--बीजं सुरसभस्मकम्।
वल्लद्वयं चाखुपर्णी-रसैः क्रिमिविनाशनम् ॥ १३ ॥

वायविडंग, ढाकके बीज, नीम के बीज, और रससिन्दूर। प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पीस कर डेढरत्तिभर की गोली बनावें और मूषकपर्णी के रस से खावें तो क्रिमि नाश होते हैं ॥ १३ ॥

क्रिमिमुद्गरोरसः।

क्रमेण वृद्धं रसगन्धकाजमोदा विडङ्ग विषमुष्टिकाच।
पलाशबीजश्च विचूर्णमस्यानिष्कप्रमाणं मधुनाऽवलीढम् ॥१४॥
पिबेत् कषायं घनजं तदूर्ध्वं रसोऽयमुक्तः क्रिमिमुद्गराख्यः।
क्रिमिं निहन्यात् क्रिमिजांश्च रोगान् सन्दीपयत्याग्नि मयं त्रिरात्रात् १५

शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगन्धक दो तोला, अजवायन तीन तोला, वायविडंग का चूर्ण चार तोला, शुद्धकुचला पांच तोला, ढाक अर्थात् पलाश के बीज छः तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्यों को मिला कर पीस कर रखें। इसे क्रिमि मुद्गररस कहते हैं। इस को एक निष्क भर लेकर शहद से चाटे और ऊपर से नागर मोथे का क्वाथ पीवें। यह रस क्रिमि नाश करता है तथा क्रिमियों से उत्पन्न होने वाले रोगों का नाश करता है। तीन रात प्रयोग करने से ही अग्नि को प्रदीप्त करता है ॥ [इस की एक रत्ति की गोली बनावें] ॥ १४ १५ ॥

क्रिमिधूलिजलप्लवो रसः ।

पारदं गन्धकं शुद्धं वङ्गं शङ्खं समं समम् ।
चतुर्णां योजयेत् तुल्यं पथ्याचूर्णं भिषग्वरः ॥ १६ ॥
दण्डयन्त्रेण निर्मथ्य पटोलस्वरसं क्षिपेत् ।
कार्पासवीजसदृशीं कुर्य्याद्वै यत्नतो वटीम् ।
त्रिवटीं भक्षयेत् प्रातः शीततोयं पिबेदनु ॥ १७ ॥
केवलं पैत्तिके योज्यः कदाचित् वातपैत्तिके ।
श्रीमद्गहननाथोक्तः क्रिमिधूलिजलप्लवः ॥ १८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, वंगभस्म, शंखभस्म, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। सब के समान हरड़ का चूर्ण लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलावें और पटोल पत्र का स्वरस डालकर घोटकर कपास के बीज के समान गोली बनावें प्रातःतीन गोली खाकर ऊपर से ठण्डा पानी पियें इसे केवल पित्तज क्रिमिरोग में प्रयोग करें। कदाचित् वातपित्तज क्रिमिरोग में प्रयोग करें, यह श्रीमान गहनानन्द ने कहा है इसका नाम क्रिमिधूलिजलप्लव रस है ॥ [यह रस गुदा के निकटस्थ अति क्षुद्र श्वेत क्रिमियों को नाश करता है,] ॥१६-१८।

क्रिमिकाष्ठानलो रसः ।

विशुद्धं पारदं गन्धं वङ्गं तालं वराटकम् ।
मनः शिला कृष्णकाचं सोमराजी विडङ्गकम् ॥ १९ ॥
दन्तीवीजञ्च जैपालं शिला टङ्गणचित्रकम् ।
कर्षमात्रन्तु प्रत्येकं वज्रीक्षीरेण मर्दयेत् ॥ २० ॥
कलायसदृशीं कृत्वा वटिकां भक्षयेत् ततः ।
क्रिमिकाष्ठानलो नाम रसोऽयं परिनिर्मितः ।
श्लैष्मिके श्लेष्मपित्ते च श्लेष्मवाते च शस्यते ॥ २१ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, बंग भस्म, शुद्ध हड़ताल, वराटी भस्म, शुद्ध मनसिल, काला नमक, बावची के बीज, बायविडंग, दन्ती के शुद्ध बीज, शुद्ध जमालगोटा, शिलाजीत, सुहागा, चीता प्रत्येक द्रव्य एक कर्ष लेकर थोहर के दूध से मर्दन करके छोटे मटर के समान गोली बना कर रखें। इसका नाम क्रिमिकाष्ठान रस है, इसे श्लेष्मिक क्रिमिरोग, श्लेष्मपित्तज रोगमें तथा श्लेष्मवातज क्रिमिरोग में देने से लाभ होता है, [मात्रा एक रत्ति] ॥ १९—२१ ॥

लाक्षादिवटी ।

लाक्षाभल्लात श्रीवास–श्वेतापराजिताशिफाः ।
अर्जुनस्य फलं पुष्पं विडङ्ग सर्जगुग्गुलू ॥ २२ ॥
एभिः कीटाश्च शाम्यन्ते धूपितैश्च गृहे सदा ।
भुजङ्गा मूषिका दंशाः घुणा लूताश्च मत्कुणाः ।
दूरादेव पलायन्ते क्लिन्नकीटाश्च ये स्मृताः ॥ २३ ॥

लाख, भिलांवा, बिरोज़ा, श्वेत विष्णुक्रान्ता की जड़, अर्जुन अर्थात् कौह वृक्ष के फल और फूल, वायविडंग, राल, गूगल इन सबको समभाग पीसकर रखें। इसको अग्नि लगाकर धूप दें तो घरमें से सब प्रकार के कीड़े नष्ट होजाते हैं। सांप, चूहे, दंश, घुण, मकड़ी, खटमल, आर्द्र अर्थात् गीले स्थानों में उत्पन्न होनेवाले सभी कीट तथा अन्य सभी प्रकार के कीट इस धूपकी गंध से दूर सेही भाग जाते हैं। [इस धूपको कमरे बंदकरके देवे। इसके धुएं से आदमी को बचना चाहिये] ॥

क्रिमिहरो रसः ।

शुद्धसूतमिन्द्रयवमजमोदां मनःशिलाम् ।
पलाशवीजं गन्धञ्च देवदाल्या द्रवैर्दिनम् ॥ २४ ॥
सम्मर्द्य भक्षयेन्नित्यं शालपर्णीरसैः सह ।
सितायुक्तं पिबेच्चानु क्रिमिपातो भवत्यलम् ॥ २५ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, इन्द्रजौका चूर्ण, अजमोदा अर्थात् अजवायन

का चूर्ण, शुद्ध मनसिल, ढाक के बीज, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलावें। फि बंदाल डोड के रसमें एक दिन घोटकर रखें। इसे आधी रत्ति खा ऊपर से मिश्री मिलाकर शालपर्णी का रस पीवें। तो कीड़े अ गिर जाते हैं ॥ २४ ॥ २५ ॥

विडङ्गलौहम्।

रसं गन्धश्च मरिचं जातीफललवङ्गकम्।
शुण्ठी टङ्गं कणा तालं प्रत्येकं भागसम्मितम् ॥ २६॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम्।
लौहं विडङ्गकं नाम कोष्ठस्थक्रिमिनाशनम् ॥ २७॥
दुर्नाम ह्यरुचिश्चैव मन्दाग्निश्च विसूचिकाम्।
शोथं शूलं ज्वरं हिक्कां श्वासं कासं विनाशयेत् ॥ २८॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, मिरचों का चूर्ण, जायफल, लौं सोंठ, इन सबका चूर्ण शुद्ध सुहागा, पिप्पली का चूर्ण शुद्ध हड़ताल प्रत्येक द्रव्य सम भाग लें। सबके समान लौहभस्म डालें फिर सबके समान बायविडंग का चूर्ण डालें। पहले पारा गंधक की कज् करें फिर अन्य द्रव्य मिलाये। सबको पीसकर रखलें। इस वि लौह से कोष्ठके क्रिमि नाश होते हैं बवासीर, अरुचि मन्दाग्नि विसूचिका, शोथ, शूल ज्वर हिचकी श्वास, कास दि सब इससे नाश होते हैं ॥ २६—२८

अथ पाण्डु-कामला-चिकित्सा ।

निशालौहम् ।

लौहचूर्णं निशायुग्मं त्रिफला-रोहिणीयुतम् ।
प्रलिह्यात् मधुसर्पिर्भ्यां कामलापाण्डुशान्तये ॥ १ ॥

हल्दी, दारुहल्दी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कुटकी, प्रत्येकद्रव्योंका चूर्ण समभाग लें। सबके बराबर लौह भस्म लें (लौहभस्म के अभाव में मण्डूर भस्म डालें)। सबको पीसकर घी और शहद से खावें तो कामला और पाण्डुरोग अच्छा होता है ॥ १ ॥

धात्री लौहम् ।

धात्री लौहरजो व्योष-निशा क्षौद्राज्यशर्कराः ।
भक्षणाच्च विनिघ्नन्ति कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २ ॥

आंवला का चूर्ण, लोह भस्म, सोंठ का चूर्ण, मिरच, पीपल हल्दी, इन सबका चूर्ण, घी, शहद और खांड, प्रत्येक द्रव्य समभाग मिलाकर खावें तो कामला तथा पाण्डुरोग नष्ट होता है ॥ २ ॥

पञ्चाननवटी ।

शुद्धसूतं तथा गन्धं मृतताम्राभ्रगुग्गुलु ।
जैपालबीजं तुल्यांशं घृतेन वटकीकृतम् ॥ ३ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभं शोथपाण्डुप्रशान्तये ।
पञ्चाननवटी ख्याता पाण्डुरोग कुलान्तिका ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, अभ्रक भस्म, शुद्धगुग्गुल, शुद्ध जमालगोटा, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर घी से गोली बनावे। बेरकी गुठली के समान एक गोली खावें। शोथ और पाण्डुरोग इस से दूर होता है इसका नाम पञ्चाननवटी है यह पाण्डुरोग को समूल नष्ट करती है ॥ [प्रथम एक रत्ति भरकी गोली खावें। सब द्रव्योंके समान जमालगोटे का चूर्ण लें, ऐसा भी संस्कृत टीकाकार ने लिखा है।] ॥ ३ ॥ ४ ॥

प्राणवल्लभो रसः।

हिङ्गुलसम्भवं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकम्।
लौहं ताम्रं वराटश्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम्॥ ५॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालः दन्तिकं त्रिवृत्।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेषयत्॥ ६॥
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेत् वारिणा मधुना सह।
प्राणवल्लभनामायं गहनानन्दभाषितः॥ ७॥
श्लेष्मदोषं समालोक्य युक्त्या च त्रुटिवर्द्धनम्।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा॥ ८॥
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम्।
शोथशूलमुरुस्तम्भं सङ्ग्रहग्रहणीं जयेत्॥ ९॥
वान्ति मूर्च्छां भ्रमिं दाहं कासं श्वासं गलग्रहम्।
असाध्यं सन्निपातश्च जीर्णज्वरमरोचकम्॥ १०॥
वातरक्तं तथा शोषं कण्डूं विस्फोटकापचीम्।
नातः परतरं किञ्चित् कामलार्त्तिरुजापहम्॥ ११॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा, आंमलासार शुद्ध गंधक, लोह भस्म, ताम्रभस्म, कौड़ी भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, हींग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, थोहर का दूध, जौखार, शुद्ध जमालगोटा, दन्तीमूल, निसोत प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण लेकर बकरी के दूध से पीसे। फिर चार रत्ति प्रमाण की गोली बनाकर जलसे और शहद से खावें। यह प्राणवल्लभ नामक रस गहनानन्द ने कहा है। श्लेष्मदोष बढ़ा हो तो युक्ति से मात्रा कम या अधिक भी दे सकते हैं। इससे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, शोथ, शूल, उरुस्तम्भ, संग्रहग्रहणी, वमन, मूर्छा, भ्रम, दाह, कास, श्वास, गलग्रह, असाध्य सान्निपात, जीर्णज्वर, अरोचक, वातरक्त, शोष, कण्डूरोग, विस्फोटक, अपची, आदि नाश होते हैं। इससे ब

कामला रोगकी और कोई औषध नहीं है ॥ ["काश्मीरदेशोद्भव" का अर्थ काश्मीरी केसर है यहभी पारे के समानही लेना कई इसको नहीं लेते,] ॥ ५—११ ॥

कामेश्वरो रसः।

पलं सूतं पलं गन्धं पथ्याचित्रकयोः पलम्।
मुस्तैलापत्रकाणाञ्च प्रति सार्द्धपलं क्षिपेत् ॥ १२ ॥
त्र्यूषणं पिप्पलीमूलं विषञ्चापि पलं न्यसेत्।
नागकेशरकं कर्षमेरण्डस्य पलं तथा ॥ १३ ॥
पुरातनगुडेनैव तुल्येनैव विमिश्रयेत्।
मर्दयेत् कनकद्रावैर्भावयेच्च घृतान्विताम् ॥ १४ ॥
वटिकां बदरास्थ्याभां कारयेत् भक्षयेत् निशि।
पाण्डुरोगहरः सोऽयं रसः कामेश्वरः स्वयम् ॥ १५ ॥

शुद्ध पारा एक पल, शुद्ध गंधक एक पल, दोनों की कज्जली करे। फिर हरड़का चूर्ण एक पल, चीते का चूर्ण एक पल, मोथेका चूर्ण डेढ पल, इलायची का चूर्ण डेढ पल, तेजपातका चूर्ण डेढ पल, सोंठ का चूर्ण एक पल, मिरच का चूर्ण एक पल, पीपल का चूर्ण एक पल, पिप्पलीमूल का चूर्ण एक पल, शुद्धविष का चूर्ण एक पल लें, नागकेशर का चूर्ण एक कर्ष, एरण्ड का चूर्ण एक पल डालें। सबको खरल करके सारे चूर्ण के समान पुराना गुड डालें। और सारे को मिलायें। फिर धतूरे के रस से भावना दें। और फिर घोट कर घी मिलाकर बेरकी गुठली के बराबर गोली बनालें और रातको खावें। यह कामेश्वर रस पाण्डुरोग को नाश करने वाला है॥१२-१५॥

त्रिकत्रयाद्यं लौहम्।

पलं लौहस्य किट्टस्य पलं गव्यस्य सर्पिषः।
सितायाश्च पलञ्चैकं क्षौद्रस्यापि पलं तथा ॥ १६ ॥
तोलकं कान्तलौहस्य त्रिकत्रयसुभावितम्।
ततः पात्रे विश्रान्तव्यं लौहे च मृन्मये तथा ॥ १७ ॥

हविषा भावितश्चापि रौद्रे च शिशिरे तथा ।
भोजनादौ तथा मध्ये चान्ते चापि प्रदापयेत् ॥ १८ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च सुदारुणहलीमकम् ।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १९ ॥

मण्डूरभस्म एक पल, गौ का घी एक पल, मिश्री एक पल, शहद एक पल, और त्रिफला, त्रिकुटा तथा विडंग, मोथा और चीता इन तीन त्रिकों के क्वाथ से सुभावित किया हुआ तथा लोहे या मिट्टी के पात्र में घी से भावित कर धूप और छाया में सुखाया हुआ कान्त लौह भस्म एक तोला लें । सब को मिला रखें । इसे भोजन के आदि में, मध्य में और अन्त में सेवन करें । और दोष के बल अबल को देखकर अनुपान दें । इससे कामला, पाण्डु, भयंकर हलीमक रोग, दूर होते हैं, इसमें सन्देह नहीं । [मिश्री और शहद पीछे से डालें । यह सिद्ध फल योग है] ॥ १६—१९ ॥

विडङ्गादिलौहम् ॥

विडङ्गमुस्तत्रिफला–देवदारु षडूषणैः ।
तुल्यमात्रमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २० ॥
तैरक्षमात्रां गुड़िकां कृत्वा खादेत् दिने दिने ।
कामलापाण्डुरोगार्त्तः सुखमाप्नुयते ऽचिरात् ॥ २१ ॥

विडंग चूर्ण, हरड़, बहेड़ा, आंवला, देवदार, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चीता, मरिच, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले । लोहभस्म ग्यारह तोले डाले । फिर सारे चूर्ण से आठ गुणा अर्थात् १७६ तोले गौमूत्र डालकर सबको पकावें । पकने पर एक अक्ष बराबर की गोली बना ले । प्रतिदिन अपने योग्य मात्रा देख कर खावे तो कामला, पाण्डु रोग दूर होते हैं तथा शरीर निरोग रहता है ॥ [किसी के मतमें लौहेसे आठ गुणा गोमूत्र लेकर केवल लोह उसमें पकाना चाहिये पीछे अन्य द्रव्य लौह में मिलावें । पुट मुद्रा करके करें]॥

अन्यविडङ्गादिलौहम्।

विडङ्गत्रिफला व्योषं शुद्धलौहन्तु तत्समम्।
पुरातनगुडेनाथ लेहयेत् दिनसप्तकम्।
श्वयथुं नाशयेत् शीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ २२ ॥

वायविडंग, हरड़, बहेड़ा आंवला, सोंठ मिरच, पीपल सब द्रव्य समभाग लें सबके समान लोह भस्म लें पुराने गुड़के साथ मिलाकर उचित मात्रा में सेवन करने से सातादन में सूजन, पाण्डु रोग तथा हलीमक रोग नष्ट होते हैं ॥ २२ ॥

त्रैलोक्यसुन्दरो रसः।

मानश्चैकं ततः सूतं षडभ्रं वसुलौहकम्।
गन्धकं त्रिफलाव्योष-चूर्णं मोचरसस्य च ॥ २३ ॥
मुषली चामृतासत्त्वं प्रत्येकं पञ्चभागिकम्।
भावयेत् सर्वमेकत्र त्रिफलानां कषायके ॥ २४ ॥
भावना विंशतिर्देया दशरात्रं सुभावना।
शिग्रुचित्रकमूलाभ्यामष्टधा च पृथक् पृथक् ॥ २५ ॥
त्रैलोक्यसुन्दरो नाम रसो निष्कमितो हितः।
सितया च समं क्षौद्रैः शोथपाण्डुक्षयापहः।
ज्वरातिसारसंयुक्त-सर्वोपद्रवनाशनः ॥ २६ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, अभ्रक भस्म छः तोला, लोहभस्म आठ तोला, शुद्ध गंधक, हरड, बहेड, आंवले, सोंठ, मिरच, पीपल, मोच-रस, मूसली, इन सबका चूर्ण, गिलोय का सत, प्रत्येक द्रव्य पांच २ तोले लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर त्रिफला के काथसे बीस भावना दें। फिर सुहांजने की तथा चीते की जड़के क्वाथकी आठ२ भावना दें। यह त्रैलोक्य सुन्दर रस एक निष्कभर ले मिश्री तथा शहद से खाने से शोथ, पाण्डु, क्षय तथा ज्वरातिसार युक्त सर्वोपद्रव सहित पाण्डुरोग शान्त होता है ॥ २३—२६ ॥

दार्व्यादि लौहम् ।

दार्वीसत्रिफलाव्योष-विडङ्गान्ययसो रजः ।
मधुसर्पिर्युतं लिह्यात् कामलापाण्डुरोगवान् ॥ २७ ॥
शालियष्टिकगोधूम-यवमुद्गादयो हिताः ।
रसाश्च जाङ्गलभवा मधुराः पाण्डुरोगिणाम् ॥ २८ ॥

दारु हल्दी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, वाय
विडंग, इनका चूर्णकर प्रत्येक को समभाग लें। सबके समान लौह
भस्म मिलावें। पीसकर रखें। इस दार्व्यादिलौह को शहद तथा घी
से मिलाकर खावें तो पाण्डु और कामला रोग अच्छे होते हैं। इसमें
शालिधान्य, गेहूं, जौ, मूंग आदि तथा जांगल जीवों का रस तथा
मधुर रस सब पथ्य है ॥ २७ ॥ २८ ॥

चन्द्रसूर्य्यात्मकोरसः ।

सूतकं गन्धको लौहमभ्रकश्च पलं पलम् ।
शङ्खं वराटकश्चैव प्रत्येकार्द्धपलं हरेत् ॥ २९ ॥
गोक्षुरबीजचूर्णश्च पलैकं तत्र दीयते ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वाष्पयंत्रे विभावयेत् ॥ ३० ॥
पटोलः पर्पटी भार्गी विदारी शतपुष्पिका ।
दन्तीवासा कुण्डली च काकमाचीन्द्रवारुणी ॥ ३१ ॥
वर्षाभूः केशराजश्च शालिञ्ची द्रोणपुष्पिका ।
प्रत्येकार्द्धपलैर्द्रावैर्भावयित्वा वटीं चरेत् ॥ ३२ ॥
चतुर्दशवटीं खादेत् छागीदुग्धानुपानतः ।
गहनानन्दनाथोक्तश्चन्द्रसूर्य्यात्मको रसः ॥ ३३ ॥
हलीमकं निहन्त्याशु पाण्डुरोगं सकामलम् ।
जीर्णज्वरं सविषममम्लपित्तमरोचकम् ॥ ३४ ॥
शूलं प्लीहोदरानाहमष्ठीलागुल्मविद्रधीन् ।

शोथं मन्दानलं हिक्कां कासं श्वासं वमिं भ्रमिम् ॥३५॥
भगन्दरोपदंशौ च दद्रुकण्डूव्रणापचीः।
ऊरुस्तम्भमामवातं दाहं तृष्णां कटीग्रहम् ॥ ३६ ॥
युक्तो मण्डेन मद्येन मुद्गयूषेण वारिणा।
गुडूचीत्रिफलावासा-क्वाथनीरेण वा क्वचित् ॥ ३७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, अभ्रक भस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ पल ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलायें। फिर शंख भस्म आधा पल, कौड़ी भस्म आधा पल ले, गोखरु के बीजका चूर्ण एक पल ले। सबको पीसकर तप्त खरल में आगे लिखी औषधों से भावित करे। पटोलपत्र, पित्तपापड़ा, भार्गी विदारीकन्द, सौंफ, दन्ती, बांसा, गिलोय, मकोय, इन्द्रायण, पुनर्नवा केशराज, शालिञ्च शाक, गूमा, प्रत्येक का आधा २ पल रस लेकर भावना दें। फिर एक रत्ति भरकी गोली बनालें। चौदह गोली खाकर ऊपर से बकरी के दूधका अनुपान करें। यह चन्द्रसूर्यात्मक रस गहनानन्द ने कहा है। यह हलीमक, पाण्डु, तथा कामला रोग को शीघ्र नाश करता है। जीर्णज्वर, विषमज्वर, अम्लपित्त, अरोचक, शूल, प्लीहा, उदररोग, आनाह, अष्ठीला, गुल्म, विद्रधि, मन्दाग्नि हिचकी, कास, श्वास, वमन, भ्रम, भगन्दर, उपदंश, दद्रु, कण्डु, व्रण अपची, उरुस्तम्भ, आमवात, दाह, तृष्णा, कटीग्रह, सबको दूर करता है। इस रसको मण्डसे, मद्यसे, मूंगके रस से, जलसे, गिलोय के स्वरस से, त्रिफला के रससे, बांसे के रस या काढ़ेसे या जलसे खावें ॥ २९—३७ ॥

पाण्डुसूदनरसः।

रसं गन्धं मृतं ताम्रं जयपालञ्च गुग्गुलुम्।
समांशमाज्यसंयुक्तां गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३८ ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रशान्तये।
शीतलञ्च जलं चाम्लं वर्जयेत् पाण्डुसूदने ॥ ३९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध गुग्गुल

प्रत्येक द्रव्य समभाग ले । पहले पारा गन्धक की कज्जली करे फि अन्य द्रव्य मिलाकर समभाग घीसे मर्दन करे और एक रत्त भर गोली बनाले। एक गोली नित्य खावे तो पाण्डुरोग, शोथ दोनों शा होते हैं। इस रसमें ठण्डा पानी और खटाई न खावें ॥ ३८ ३९।

मण्डूरवज्रवटकः।

पञ्चकोलं समरिचं देवदारु फलत्रिकम् ।
विडङ्गमुस्तयुक्ताश्च भागास्त्रिपलसम्मिताः ॥ ४० ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं ततः ।
पक्का चाष्टगुणे मूत्रे घनीभूते तदुद्धरेत् ॥ ४१ ॥
ततोऽक्षमात्रान् वटकान् पिबेत् तक्रेण तक्रभुक् ।
पाण्डुरोगं जयत्याशु मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ४२ ॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषमूरुस्तम्भमथापि वा ।
क्रिमिंप्लीहानमानाहं गलरोगञ्च नाशयेत् ।
मण्डूरवज्रनामायं रोगानीकप्रणाशनः ॥ ४३ ॥

पिप्पली, पिप्पलामूल चव्य, चीता, सोंठ, मिरच, देवदार, ह बहेडा, आंवला, विडंग, मोथा, प्रत्येक का चूर्ण तीन २ पल लें। इ चूर्ण से दुगुना मण्डूर भस्म ले। मण्डूर से आठ गुणा गोमूत्र ले पहले गौमूत्र में मण्डूर को पकावे जब गाढ़ा हो जाये तो पि आदिका चूर्ण डाले। फिर मिलाकर एक अक्ष बराबर गोली बना छाछके साथ खावे। छाछकाही पथ्य लेवे इससे पाण्डुरोग, मन्दा अरोचक, बवासीर, ग्रहणीदोष, ऊरुस्तम्भ, क्रिमिरोग, प्लीहा, आन गलरोग आदि सब रोग नष्ट होते हैं। यह मण्डूरवज्र नामक अनेक रोगों को नाश करता है।

लघ्वानन्दरसः।

पारदं गन्धकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
समांशं मरिचञ्चाष्टौ टङ्कणञ्च चतुर्गुणम् ॥ ४४ ॥
भृङ्गराजरसैश्चाम्लवेतसैः सप्तभावनाः ।

गुञ्जाद्वयं पर्णखण्डे खादेत् सायं निहन्ति च ॥ ४५ ॥
पाण्डुतामरुचिञ्चैव मन्दाग्निं ग्रहणीं ज्वरम् ।
वातश्लेष्मभवान्रोगान् जयेदचिरसेवनात् ॥ ४६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लौह भस्म, शुद्धविष, अभ्रक भस्म प्रत्येक द्रव्य एक तोला ले। मरिच चूर्ण आठ तोला लें शुद्ध सुहागा चार तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर मर्दन करे। फिर भांगरे के रससे और अम्लवंत के रससे सात २ पृथक् भावना देकर दोरत्ति भरकी गोली बनाले। इसे पान के पत्ते में रखकर सायंकाल खावें तो पाण्डु, अरुचि, मन्दाग्नि, ग्रहणी, ज्वर, वातश्लेष्मरोग इन सबको दूर करता है ॥ ["अम्लवतस" के स्थान पर "अम्लदाडिमैः" खट्टे अनार के रससे यह भी पाठ है। अनुपान शहदादि अन्य भी दें] ॥ ४४—४६ ॥

सम्मोहलौहः।

त्रिकटुत्रिफला वन्हिविडङ्ग लौहमभ्रकम् ।
एतानि समभागानि घृतेन वटिकां कुरु ॥ ४७ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च ।
भगन्दरं कोष्ठक्रिमिं मन्दानलमरोचकम् ॥ ४८ ॥
तान् सर्वान् नाशयेदाशु बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
सम्मोहलौह नामाऽयं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥ ४९ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, वायविडंग, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग लें। पीसकर घी से मिलाकर दोरत्ति भरकी गोली बनालें। इससे कामला पाण्डु, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर, पेटके कीड़े, मन्दाग्नि, अरुचि, ये सब रोग दूर होते हैं। तथा बल, वर्ण और अग्नि बढ़ते हैं। यह सम्मोह लौह पाण्डुरोग में प्रसिद्ध फलदायक है ॥ ४७ ॥ ४९ ॥

त्र्यूषणादिमण्डूरम् ।

स्विन्नमष्टगुणे मूत्रे लौहकिट्टं सुशोधितम् ।

पाकान्ते त्र्यूषणं वन्हि-वरादार्वीसुरद्रुमान् ॥ ५० ॥
विडङ्गबीजचूर्णञ्च मुस्तं किट्टसमं क्षिपेत् ।
प्रातः कर्षं भजेदस्य जीर्णे तक्रौदनं भजेत् ॥ ५१ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगमर्शांसि श्वयथुं तथा ।
ऊरुस्तम्भं जयेदेतत् कामलां कुम्भकामलाम् ॥ ५२ ॥

गौमूत्र एक सेर लें उसमें दस तोला मण्डूर भस्म डाल पकावें । पकजाने के बाद उसमें सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, ह बहेड़ा, आंवला, दारुहल्दी, देवदार, विडंग के बीज, मोथा इन स में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दस २ तोला लें और उसी मण्डू डालकर पीसकर गोली बना रखें।इसे एक कर्षभर प्रातःकाल खा इसके पचने के बाद छाछ और चावल खावें इससे हलीमक, पा रोग, अर्शरोग, सूजन, उरुस्तम्भ, कामला, कुम्भ कामला ये सब दूर होते हैं ॥ (मात्रा दो माषा दें) ॥ ५०—५२ ॥

कामला-चिकित्सा ।

पाण्डुरोगोदिता योगा घ्नन्ति ते कामलामपि ।
त्रिफलाया गुडूच्या वा दार्व्या निम्बस्य वा रसः ।
प्रातर्माक्षिकसंयुक्तः शीलितः कामलापहः ॥ ५४ ॥

जो योग पाण्डुरोग में कहे हैं वे कामला रोग को भी नाश क हैं ॥ ५३ ॥ त्रिफला का रस, गिलोय का स्वरस, दारु हल्दी का या नीम का रस, प्रातःकाल शहद मिलाकर पीवें तो कामला नष्ट होता है ॥ ५४ ॥

इति पाण्डुकामला चिकित्सा ॥

अथ रक्तपित्त चिकित्सा ॥

अर्केश्वरो रसः ।

मृतार्कं मृतवङ्गश्च मृताभ्रश्च समाक्षिकम् ।
अमृतास्वरसैर्भाव्यं पुटे त्रिःसप्तकं पचेत् ॥ १ ॥
वासाक्षीरविदारीभ्यां चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
भक्षणाद्विनिहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ २ ॥

ताम्रभस्म, बंगभस्म, अभ्रकभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, प्रत्येक समभाग लें । सब को मिला कर गिलोय के स्वरस से इक्कीस वार भावना देकर पुट देदें । फिर इसे निकाल पीस कर रखें । इस अर्केश्वर रस की चार रत्ति की मात्रा लेकर बांसा के स्वरस या विदारीकंद के साथ दें तो शीघ्र ही भयंकर रक्तपित्त भी दूर होता है ॥ १ ॥ २ ॥

सुधानिधिरसः ।

सूतं गन्धं माक्षिकञ्चैव लौहं सर्वं घृष्ट्वा त्रैफलेनोदकेन ।
लौहे पात्रे गोमयैः पाचयित्वा रात्रौ दद्याद्रक्तपित्तप्रशान्त्यै ॥ ३ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, स्वर्णमाक्षिकभस्म, लोहभस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलावे । लोहे के पात्र में इस चूर्ण को डाल कर और त्रिफला के क्वाथ को डाल कर उपलों की आग से पकावे । पक चुकने पर एक रत्ति की गोली बना कर रखे । इसे रात्रि को देवे तो रक्तपित्त रोग शान्त होता है ॥ ३ ॥

आमलाद्यं लौहम् ।

आमलापिप्पलीचूर्णं तुल्यया सितया सह ।
रक्तपित्तहरं लौहं योगराजमिदं स्मृतम् ॥ ४ ॥
वृष्याग्नि दीपनं बल्यमम्लपित्तविनाशनम् ।
पित्तोत्थानपि वातोत्थान् निहन्ति विविधान् गदान् ॥ ५ ॥

आमला, पीपल, मिश्री इन सब का चूर्ण प्रत्येक समभाग लें और सब के समान लौहभस्म मिला कर पीस कर रखे। यह आमलाद्य लौह रक्तपित्त के नाश करने में योगों का राजा है। यह चूर्ण अग्निदीपक, बलदायक, अम्लपित्त नाशक, पित्तज तथा वातज रोगों को तथा अन्य अनेक रोगों को दूर करता है ॥ [मात्रा दो रत्ति दें] ॥ ४ ॥ ५ ॥

शतमूल्याद्यं लौहम्।

शतमूली सिताधान्य-नागकेशरचन्दनैः।
त्रिकत्रयतिलैर्युक्तं लौहं सर्वगदापहम् ॥ ६ ॥
तृष्णादाह ज्वरच्छर्दि-रक्तपित्तविनाशनम्।
रक्तपित्ते पिबेत् व्योमसहितं पर्पटीरसम् ॥ ७ ॥
वासा द्राक्षाऽभयानाञ्च क्वाथं वा शर्कराऽन्वितम्।
योगवाहिरसान् सर्वान् रक्तपित्ते प्रयोजयेत् ॥ ८ ॥

शतावर, मिश्री, धनियां, नागकेशर, लालचन्दन, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, मोथा, विडंग, चीता, काले तिल इन सब द्रव्यों में से प्रत्येक का चूर्ण समभाग लें। सब के समान लोहभस्म लें। सब को मिलाकर दो रत्ति भर की गोली बना लें। यह शतमूल्याद्य लौह सर्वरोग नाशक है। तृष्णा, दाह, ज्वर, वमन, रक्तपित्त इन्हें नाश करता है। रक्तपित्त में इस रस में अभ्रकभस्म मिला कर पित्तपापड़े के रस से दें या बांस, मुनक्का, हरड़ इनके क्वाथ में चीनी मिला कर पीने को दें तो रक्तपित्त दूर होता है। रक्तपित्त में सभी योगवाही रस दे सकते हैं ॥ ६-८ ॥

रक्तपित्तान्तको रसः।

मृताभ्रं मुण्डतीक्ष्णञ्च माक्षिकं रसतालकम्।
गन्धकश्च भवेत् तुल्यं यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवैः ॥ ९ ॥
दिनैकं मर्दयेत् खल्ले सिताक्षौद्र समन्वितम्।
माषमात्रं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदारुणम्।

ज्वरं दाहं क्षतक्षीणं तृष्णा शोषमरोचकम् ॥ १० ॥

अभ्रकभस्म, मुण्डलौहभस्म, तीक्ष्णलौहभस्म, स्वर्णमाक्षिक-भस्म, शुद्धपारा, शुद्धहड़ताल, शुद्धगंधक, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारागंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य इसमें मिलायें और मुलह्ठी, किशमिश, गिलोय के क्वाथ वा रस से सब को एक दिन मर्दन करके रखे। फिर इसे एक माषा भर लेकर मिश्री और शहद मिला कर खावे तो घोर रक्तपित्त को शान्त करता है। तथा ज्वर, दाह, क्षतक्षीण, तृष्णा, शोषरोग, अरुचि इन्हें नाश करता है। [मात्रा एक रत्ति से आरंभ करें। "रसतालकम्" का अर्थ संस्कृत टीकाकार ने केवल "हड़ताल" किया है। पारा नहीं] ॥ ६॥१० ॥

रसामृतरसः।

रसस्य द्विगुणंगन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु।
गुडूचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ ११ ॥
कुटजस्य त्वचं वीजं धातकीं निम्बपत्रकम्।
यष्टीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयाऽन्वितम् ॥ १२ ॥
विधिना मर्दयित्वातु कर्षमात्रन्तु भक्षयेत्।
धारोष्णपयसायुक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ १३ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः।
निहन्ति सर्वदोषञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः।
रसामृतरसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला दोनों की कज्जली करे। फिर स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध शिलाजीत, गिलोय, चन्दन, दाख, महुआ के फूल, धनियां, कुटज की छाल, इन्द्रजौ, धाय के फूल, नीम के पत्ते, मुलठी, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले कज्जली में मिला पीस कर रखें। फिर शहद और मिश्री मिलाकर एक कर्ष भर खाकर ऊपर से धारोष्ण दूध प्रातःकाल उठकर पियें तो पित्तरोग, अम्लपित्त, तथा रक्तपित्त, सर्वदोषजज्वर इनको नष्ट

करता है। यह रसामृत रस गहनानन्द ने रक्तपित्त के लिये विशे
कहा है। [मात्रा एक माषा दें] ॥ ११—१४ ॥

खण्डकूष्माण्डकः ।

कूष्माण्डकात् पलशतं सुस्विन्नं निष्कुलीकृतम् ।
पचेत् तप्ते घृतप्रस्थे शनैस्ताम्रमये दृढ़े ॥ १५ ॥
यदा मधुनिभः पाकः न्यस्येत् खण्डशतं तदा ।
पिप्पली-शृङ्गवेराभ्यां द्वे पले जीरकस्य च ॥ १६ ॥
त्वगेलापत्रमरिच-धान्यकानां पलार्द्धकम् ।
न्यसेत् चूर्णीकृतं तत्र दर्व्या सङ्घट्टयेत् मुहुः ॥ १७ ॥
तत्पक्कं स्थापयेत् भाण्डे दत्त्वाक्षौद्रं घृतार्द्धकम् ।
तद्यथाऽग्निबलं खादेद् रक्तपित्ती क्षतक्षयी ॥ १८ ॥

पके हुए पेठके छिलके और बीज निकालकर, गूदा अलग करे, उ
गूदे में कुछ जल डालकर आगपर कुछ देर स्वेदन कर उतार
कपड़े में से छान रस निचोड़ दे। शेष गूदेको कुछ देर धूप में सु
कर पीसकर सौ पल ले। इसमें एक प्रस्थ घी डाल तांबे के बड़े
में पकावे। जब पकते २ शहद की तरह लाल रंग का पाक होजावे
उसमें एक सौ पल खांड डाले और पिप्पली, सोंठ, जीरा श्वेत,
में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दो २ पल, और दारचीनी, इला
तेजपात, मिरच, धनिया इनमें से प्रत्येक का चूर्ण आ॥२
डाले। इस सारे चूर्णको पाक शेष होनेपर मिलावे और कड़छी
भली प्रकार मिलाकर उतार ले। ठण्डा होनेपर घी से आधा अ
आधा प्रस्थ शहद मिलावे। इसे खण्ड कूष्माण्डक कहते हैं।
अग्निबल देखकर रोगी को दे तो रक्तपित्त, क्षतक्षय, इससे
होते हैं ॥ १५—१८ ॥

शर्कराद्यं लौहम् ।

शर्करातिलसंयुक्तं त्रिकत्रययुतन्त्वयः ।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु चाम्लपित्तहरं परम् ॥ १९ ॥

खांड, तिल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, विडंग, मोथा, चीता, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें। सबके समान लौह भस्म मिलावें। तो रक्तपित्त और अम्लपित्त रोग शीघ्र अच्छे होजाते हैं॥ १९॥

समशर्कर लौहम्।

लौहाच्चतुर्गुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम्।
चूर्णं पादन्तु वैडङ्गं दद्यात् मधुसिते समे॥ २०॥
ताम्रपात्रे दृढ़े पक्त्वा स्थापयेद् घृतभाजने।
माषकादिक्रमेणैव भक्षयेत् विधिपूर्वकम्॥ २१॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम्।
रक्तपित्तं जयेत् तीव्रमम्लपित्तं क्षतक्षयम्।
प्रहृष्टकान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम्॥ २२॥

लौह भस्म एक सेर, गौका दूध चार सेर, गौका घी दो सेर ले। सबको तांबे के पात्र में डालकर पकावें। गाढ़ा होने पर विडंग का चूर्ण एक पाव डालदें। अच्छी प्रकार मिलाकर उतार लें। ठंडा होने पर शहद एक सेर और मिश्री एक सेर मिलाकर घी से चिकने हुए पात्र में रखें। इस समशर्कर लौह को एक माषा से आरंभकर क्रमशः बढ़ाकर खावें। अनुपान में नारियल का जल आदि पीवें। तो तीव्र, रक्तपित्त, अम्लपित्त, क्षतक्षय रोग दूर होते हैं यह रस प्रसन्नता देता है, कान्ति तथा आयु को बढ़ाता है॥ २०—२२॥

कपर्दको रसः।

मृतं वा मूर्च्छितं सूतं कार्पासकुसुमद्रवैः।
मर्दयेद् दिनमेकन्तु तेन पूर्या वराटिका॥ २३॥
निरुध्य चान्धमूषायां भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत्।
उद्धृत्य चूर्णयेत् श्लक्ष्णं मरिचैर्द्विगुणैः सह॥ २४॥
गुञ्जामात्रं घृतेनैव भक्षयेत् प्रातरुत्थितः।
उडुम्बरं घृतश्चैव ह्यनुपानं प्रयोजयेत्।

कपर्दकरसोनाम्ना रक्तपित्तविनाशनः ॥ २५ ॥
नीलोत्पलासिताक्षौद्र-संयुक्तं पद्मकेशरम् ।
तण्डुलोदकपानेन रक्तपित्तं नियच्छति ॥ २६ ॥

रससिन्दूर अथवा पारे गंधक की कज्जली को कपास के फूलों के रससे एक दिन घोटे। फिर इसे पीली कौडियों में भरकर सन्धि बंद करे और अन्धमूषा में रखे उस मूषा को एक हांडी में रखे और हांडी का मुंह बंद करके पुट दे। स्वांग शीतल होनेपर निकाल कौडियों समेत सारे द्रव्यको पीसले। अब जितना यह चूर्ण हो उस से दूना काली मिरचों का चूर्ण मिलाकर पीसकर रखे। इस कपर्दक रसको एक रात भर लेकर घी में मिलाकर प्रातःकाल खावें, और अनुपान में गूलर और घी खावें तो रक्तपित्त नाश होता है॥२३-२५॥ नीलोफर, मिश्री, शहद इनसे मिलाकर कमलकेशर खाया जाये और ऊपर से तण्डुलोदक पिया जाये तो रक्तपित्तरोग शान्त होताहै॥२६॥

इति रक्तपित्त चिकित्सा॥

अथ यक्ष्म-चिकित्सा ॥

रास्नादि लौहम् ।

रास्ना ऽश्वगन्धाकर्पूर-भेकपर्णी शिलाह्वयैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैः लौहं यक्ष्मान्तकृन्मतम् ॥ १ ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविवर्जितम् ।
हन्ति कासं स्वराघातं राजयक्ष्मक्षतक्षयम् ।
बलवर्णाग्निपुष्टीनां वर्द्धनं दोषनाशनम् ॥ २ ॥

रास्ना, असगंध, कर्पूर मण्डूकपर्णी, शिलाजीत, हरड, बहेडा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, विडंग, मोथा, चीता, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले और सबके समान लौहभस्म मिलाकर रखे, इस रास्नादि लौह के सेवन से यक्ष्मा नाश होता है, सर्व उपद्रव

संयुक्त और वैद्यों से वर्जित खांसी को दूर करता है। तथा स्वराघात और राजयक्ष्मा, क्षतक्षय को दूर करता है। और बल, अग्नि, पुष्टि को बढ़ाता है। तथा दोषों को नाश करता है ॥ १ ॥ २ ॥

राजमृगाङ्को रसः।

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम् ।
मृततारस्य भागैकं शिलागन्धकतालकम् ॥ ३ ॥
प्रतिभागद्वयं शुद्धमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
वराटिका तेन पूर्य्या चाजाक्षीरेण टङ्कणम् ॥ ४ ॥
पिष्ट्वा तेन मुखं रुद्ध्वा मृद्भाण्डे तां निरोधयेत् ।
शुष्कं गजपुटे पाच्यं चूर्णयेत् स्वाङ्गशीतलम् ॥ ५ ॥
दशपिप्पलिकैः क्षौद्रैर्मरिचैर्वा घृतान्वितैः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चास्य क्षयरोगप्रशान्तये ॥ ६ ॥
सघृतैर्दापयेद्वाऽथ वातश्लेष्मभवे क्षये ।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं नानारोगनिसूदनः ॥ ७ ॥

रससिन्दूर तीन तोला, स्वर्णभस्म एक तोला, चांदी भस्म एक तोला, शुद्ध मनासिल, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, प्रत्येक द्रव्य एक तोला लेकर चूर्ण करके कौड़ियों में भरदे। और कौड़ियों के मुखको बकरी के दूध और सुहागे से पीसकर बंद करदें। उन सब कौड़ियों को एक हांडी में बंद करके संधि लेप करके सुखाकर गजपुट में फूंक दें। स्वांग शीतल होनेपर निकाल कर कौड़ी समेत चूर्ण कर रखें। इस रसकी चार रत्तिकी मात्रा लेकर इसमें दस छोटी पीपल और शहद मिलाकर दें। अथवा काली मिरच और घी मिलाकर दें तो क्षयरोग प्रशान्त होता है। यदि वातश्लेष्मभवक्षय होतो इसे केवल घी से पीवे। यह राजमृगाङ्क रस नाना रोगों को शान्त करता है ॥ ३—६ ॥

मृगाङ्को रसः।

स्याद्रसेन समं हेम मौक्तिकं द्विगुणं भवेत् ।

गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्कणम् ॥ ८ ॥
तत्सर्वं गोलकं कृत्वा काञ्जिकेन च पेषयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णेऽथ पचेद् यामचतुष्टयम् ॥ ९ ॥
मृगाङ्कसंज्ञको ज्ञेयो राजयक्ष्मनिकृन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचैः सह भक्षयेत् ॥ १० ॥
पिप्पलीदशकैर्वापि मधुना सह लेहयेत् ।
पथ्यन्तु लघुभिर्मांसैः प्रयोगेऽस्मिन् प्रयोजयेत् ॥ ११ ॥
व्यञ्जनैर्घृतपक्वैश्च नातिक्षारैरहिङ्गुभिः ।
एलाऽजाजीमरीचैस्तु संस्कृतैरविदाहिभिः ॥ १२ ॥
वृन्ताकबिल्वतैलानि कारवेल्लञ्च वर्जयेत् ।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चापि विवर्जयेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, स्वर्ण भस्म एक तोला, मोती भस्म दो तोला, शुद्ध गन्धक दो तोला, शुद्ध सुहागा एक तोला । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य वस्तु मिलाकर कांजी से पीसकर एक मूषा में रखे । और सन्धि बंद करदे । फिर एक हांडी में नमक नीचे ऊपर भरकर बीच में इस मूषा को रखदे और बारह घण्टे की आंच दे स्वांग शीतल होनेपर निकालकर रखे यह राजयक्ष्मा का नाशक मृगाङ्क रस है । इसकी चार रत्तिकी मात्रा मिरचों के चूर्ण के साथ मिलाकर खावे अथवा दस पिप्पली और मधु मिलाकर खावे । और पथ्य में लघुमांस, घी में पके हुई नानाप्रकार की भाजियें तथा भोज्य पदार्थ, जिनमें अतिक्षार और हींग न डाली गई हो तथा पदार्थ विदाही न हो । उन्हें इलायची, जीरा तथा काली मिरच का चूर्ण मिलाकर खाने को देवे बैंगन, बिल, तेल, करेला न खावें । स्त्रियों से दूर रहें तथा क्रोध को त्याग देवें ॥ ८—१३ ॥

रत्नगर्भपोट्टलीरसः ।

रसं वज्रं हेम तारं नागं लौहञ्च ताम्रकम् ।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्ताविद्रुममाक्षिकम् ॥ १४ ॥
शङ्खं तुत्थञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकद्रवैः ।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याथ तेन पूर्य्या वराटिका ॥ १५ ॥
टङ्कणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत् ।
मृद्भाण्डे तां निरुध्याथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ १६ ॥
आदाय चूर्णयेत् सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसैः सप्त चित्रकस्यैकविंशतिः ॥ १७ ॥
द्रवैर्भाव्यं ततः शोष्यं देयं गुञ्जाचतुष्टयम् ।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्यासाध्यं न संशयः ॥ १८ ॥
योजयेत् पिप्पलीक्षौद्रैः सघृतैर्मरिचैस्तथा ।
महारोगाष्टके कासे श्वासे चैवातिसारके ।
पोट्टलीरत्नगर्भोऽयं सर्वरोगकुलान्तकः ॥ १९ ॥

शुद्ध पारा, हीराभस्म, स्वर्णभस्म, चांदी भस्म, सीसा भस्म, लौह भस्म, तांबा भस्म, मिरचों का चूर्ण, मोती भस्म, मूंगा भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शंख भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, प्रत्येक समभाग ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर चीते के क्वाथ से सबको भावना देवे। फिर इस चूर्णको कौडियों में भरकर इनका मुख सुहागे और आक के दूधको मिलाकर बंद करदें। फिर इन कौडियों को एक मिट्टी के पात्र में भरें। और उस पात्रकी संधि बंद करके गजपुट में फूंक देवें। स्वांग शीतल होने पर निकाल कौडियों समेत सारे चूर्णको पीसकर सम्भालु के रस से सातवार भावना देवे। फिर अदरक के रस से सातवार भावना देवें। फिर चीते के रस से इक्कीस भावना देवें। फिर सुखाकर चार रत्तिकी मात्रा पिप्पली चूर्ण और शहद से देवे अथवा मिरचों के चूर्ण तथा घी से देवें।

इससे क्षयरोग साध्य हो या असाध्य हो तो वह भी नष्ट होता है आठों महारोग, खांसी, श्वास, अतिसार, इन सब रोगों को रत्नगर्भ पोट्टलीरस दूर करता है १४—१६ ॥

Usaga Bhushan

लोकेश्वरपोट्टलीरसः ।

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेत् चित्रकाम्बुना ॥ २० ॥
पूर्यां वराटिका तेन टङ्कणेन निरुध्य च ।
भाण्डे चूर्णप्रलिप्तेऽथ क्षिप्त्वा रुद्ध्वा च मृन्मये ॥ २१ ॥
शोषयित्वा गजपुटे पुटेत् तु चापराह्णिके ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥ २२ ॥
एष लोकेश्वरो नाम वीर्यपुष्टिविवर्द्धनः ।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ २३ ॥
मरिचैर्घृतयुक्तैश्च भक्षयेद्दिवसत्रयम् ।
अङ्गकार्श्येऽग्निमान्द्ये च कासे पित्ते क्षयेऽपि च ॥ २४ ॥
लवणं वर्जयेत् तत्र साज्यं दधि च योजयेत् ।
एकविंशदिनं यावत् सघृतं मरिचं पिबेत् ।
पथ्यं मृगाङ्कवद्देयं शयीतोत्तानपादतः ॥२५॥
ये शुष्का विषमाशनैः क्षयरुजा व्याप्ताश्च ये ऽष्ठीलया ।
पाण्डुत्वेन हताश्च वैद्यविधिना ये चाधिनादुर्भगाः ।
ये तप्ता विविधैर्ज्वरैः श्रममदोन्मादैः प्रमादं गताः ।
ते सर्वे विगतामया हतरुजः स्युः पोट्टलीसेवनात् ॥ २६ ॥

रससिन्दूर एक तोला, स्वर्ण भस्म तीन माशे, शुद्ध गंधक दो तोला । पहले पारा गंधक की कज्जली बनावे फिर अन्य द्रव्य मिला घोटें । फिर चीते के क्वाथ की भावना देवे । फिर इस चूर्ण को कौड़ियों में भरदे । और सुहागे से कौड़ियों का मुंह बंद करे

हांडी ऐसी ले जिसके अन्दर चूना फिरा हो। उस हांडी में इन कौडियों को भरद मुंह पर कपड़ मिट्टी कर सुखा ले। गजपुट में फूंक देवे। फिर स्वांग शीतल होनेपर निकालकर कौड़ियों समेत चूर्ण कर लेवे। इसको चार रत्ति लेकर पीपल और शहद मिलाकर अथवा काली मिरचों का चूर्ण और घी मिलाकर तीन दिन खावे तो इससे वीर्य्यपुष्टि होती है। तथा कृशाङ्गव्यक्ति मोटा हो जाताहै। साथही अग्निमांद्य खांसी, पित्तरोग तथा क्षय रोग को अच्छा करता है खाने में नमक न खावें। घी और दही खिलावें। इक्कीस दिन घी और काली मिरचों का चूर्ण मिलाकर पीवें इसमें पथ्य मृगाङ्क के समान देवें। रोगी सीधा लेटा रहे। जो रोगी विषम भोजनोंसे सूख गये हैं,जो क्षयरोग से ग्रस्त हैं, जो अष्ठीला,पाण्डुरोग,से मारे जारहेहैं जो चिन्ता शोक आदि मानसिक रोगों से सौन्दर्य हीन होगये हैं। जो विविध ज्वरों से तपरहे हैं तथा जो श्रम, मद और उन्माद से प्रमाद को प्राप्त होगये हैं। वे सभी इस लोकेश्वर पोटली रस के सेवन से रोग मुक्त होजाते हैं॥ २०—२६॥

कनकसुन्दरो रसः।

रसस्य तुर्य्यभागेण हेमभस्म प्रयोजयेत्।
मनः शिला गन्धकश्च तुत्थं माक्षिकतालकम्॥ २७॥
विषं टङ्कणकं सर्वं रसतुल्यं प्रदापयेत्।
मर्दयेत् सर्वमेकत्र खल्वपात्रे च निर्मले॥ २८॥
जयन्तीभृङ्गराजोत्थैः पाठायाः वासकस्य च।
अगस्ति लाङ्गलाग्नीनां स्वरसैश्च पृथक् पृथक्॥ २९॥
भावयित्वा विशोष्याथ पुनश्चार्द्रकवारिणा।
सप्तधा भावयित्वा च रसः कनकसुन्दरः॥ ३०॥
गुञ्जाद्वयं त्रयं वा ऽस्य राजयक्ष्मप्रशान्तये।
मधुना पिप्पलीभिर्वा मरिचैर्वा घृतान्वितम्॥ ३१॥
सन्निपाते प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै।

जयपालरजोभिर्वा गुल्मिने शूलरोगिणे ॥ ३२ ॥
अम्लवर्ज्जं चरेत् पथ्यं बल्यं हृद्यं रसायनम् ।
वर्ज्जयेल्लवणं हिङ्गु तक्रं दधि विदाहि यत् ॥ ३३ ॥

शुद्धपारा एक तोला, स्वर्णभस्म ३ माशा, शुद्ध मनसिल, शु गन्धक, शुद्ध नीलाथोथा, स्वर्णमाक्षिकभस्म हड़ताल शुद्ध शुद्ध वि शुद्ध सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें । पहले पारा गंधक कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसें । फिर जयन्ती, भांग पाठा, बांसा, अगस्त्य, लाङ्गली या कलिहारी, चीता इन सब के र से पृथक् २ भावना देकर और सुखा कर फिर अदरक के रस सात वार भावना देकर सुखा कर रखे । यह कनक सुन्दर र कहाता है । इस रस की दो या तीन रत्ती की मात्रा पिप्पली औ शहद से दें । या घी और मिरचों से दें तो राज यक्ष्मा रोग न होता है । इसको सन्निपात ज्वर में अदरक के रस से दें । गुल्म रो तथा शूल रोग में इसे जमालगोटे के चूर्ण से देवें । इसके प्रयोग समय पथ्य ऐसा खावें जो बलदायक, हृदय को सुख देने वा तथा रसायन हो, खटाई नमक, हींग, छाछ, दही तथा विदाही पद न खावें ॥ २७—३३ ॥

हेमगर्भपोट्टली ।

रसभस्म त्रयो भागा भागैकं हेमभस्मकम् ।
मृतताम्रस्य भागैकं भागैकं गन्धकस्य च ॥ ३४ ॥
मर्दयेच्चित्रकद्रावैर्द्वियामान्ते समुद्धरेत् ।
पूरयेद्वराटिका तेन टङ्कणेन विलेपयेत् ॥ ३५ ॥
वराटीं पूरयेद्भाण्डे रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
विचूर्णयेत् स्वाङ्गशीते पोट्टलीं हेमगर्भिकाम् ।
मृगाङ्कवच्चतुर्गुञ्जा-भक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ ३६ ॥

रस सिन्दूर तीन तोला, स्वर्णभस्म एक तोला, ताम्रभस्म ए तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, प्रत्येक को मिला मर्दन कर चीते

रस से दो पहरों तक घोटे। फिर कौड़ियों में इसे भरे और मुख को सुहागे से बंद करदे। उन कौडियों को एक हांडी में भर कर सन्धि बंद करके गजपुट में फूंक देवे। स्वांग शीतल होने पर कौडियों सहित इस हेमगर्भ पोट्टली को चूर्ण कर लें इस रस को मृगाङ्क के समान चार रत्ति भर देने से राज यक्ष्मा रोग दूर होता है॥ [इसकी मात्रा १ रत्ति की दें] ॥ ३४—३६॥

सर्वाङ्गसुन्दरो रसः।

गन्धो रसश्च तुल्यांशं द्वौ भागौ टङ्कणस्य च।
मौक्तिकं विद्रुमं शङ्खभस्म देयं समांशिकम्॥ ३७॥
हेमभस्मार्द्धभागश्च सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
निम्बुद्रवेण सम्पिष्य पिण्डिकां कारयेत् ततः॥ ३८॥
पश्चाद् गजपुटं दत्त्वा सुशीतश्च समुद्धरेत्।
हेमभस्मसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णार्द्धं दरदं मतम्॥ ३९॥
एकीकृत्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत्।
ततः पूजां प्रकुर्वीत रसस्य दिवसे शुभे॥ ४०॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयक्ष्मानिकृन्तनः।
वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे॥ ४१॥
अर्शःसु ग्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे।
निहन्ति वातजान् रोगान् श्लैष्मिकांश्च विशेषतः॥ ४२॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा।
भक्षयेत पर्णखण्डेन सितया चार्द्रकेण वा॥ ४३॥

शुद्ध गन्धक एकतोला, शुद्धपारा एक तोला दोनों की कज्जली, करे। फिर शुद्ध सुहागा दो तोला, मोती भस्म दो तोला, मूंगाभस्म, दो तोला, शंख भस्म दो तोला, स्वर्ण भस्म आधा तोला। सब द्रव्यों को मिलाकर खरल में पीसकर नीम्बू के रस से (अन्य पुस्तक में नीमके रस से घोटना लिखा है, यह ठीकभी है) खरलकर पिण्डी

सी बनाकर सम्पुट में रखकर गजपुट में फूंक देवे। फिर स्वांग शीत
होनेपर उसको निकालकर पीसलें। और तीक्ष्ण लौहकी भस्म आ
तोला और शुद्ध हिंगुल तीन माषा मिलाकर सूक्ष्म चूर्ण कर लेवे
फिर शुभदिन में रसकी पूजाकर सेवन करे। यह सर्वाङ्गसुन्दर र
राजयक्ष्मा रोगको नाश करता है। वातपित्तज ज्वर में, घोर सन्नि
में बवासीर, ग्रहणी दोष, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वातजरोग, श्लें
रोग इन सबको दूर करता है। पिप्पल तथा मधुके साथ, घी कस
पानके पत्ते से, मिश्री से या अदरक के रससे खावें॥ ३७—४३।

लोकेश्वरो रसः।

पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः।
माषञ्च टङ्कणस्यैवजम्बीराद्भिर्विमर्दयेत्।
पुटेत् लोकेश्वरो नाम्ना लोकनाथरसोत्तमः॥ ४४॥
ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्यान् रोगान् बलाज्जयेत्।
पुष्टिवीर्य्यप्रसादौजः—कान्तिलावण्यदः परः॥ ४५॥
कोऽस्ति लोकेश्वरादन्यो नृणां शम्भुमुखोद्गतात्।
पथ्यं शाल्योदनं सर्पिर्दधि शाकं सहिङ्गुकम्॥ ४६॥
नित्यं यामद्वयादूर्ध्वं कार्य्यं वारत्रयं दिवा।
त्र्यहाद्भ्रान्तेऽरुचौ वापि लग्नः सूतो न चेत् पुनः॥ ४७॥
अष्टमेऽह्नि प्रदातव्यः पूर्ववत् कार्य्यसिद्धये।
प्रथमे सप्तमे देया लावशूरणमुद्गकाः॥ ४८॥
द्वितीये माषगोधूमा भक्ष्या पूर्वोदितश्च यत्।
देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम्॥ ४९॥
तैलबिल्वारनालानि कोपस्त्रीस्वप्नजागरान्।
त्यजेत् कादीनि द्रव्याणि हृद्यं स्वादुचशीलयेत्॥ ५०॥
वायौ सेव्यं पयः कोष्णं पित्ते तु ससितं हितम्।
अत्यग्नौ चोरबीजानि तिलेक्षुकदलीफलम्॥ ५१॥

खर्जूरमांसमृद्वीका-सितादि सकलं भजेत् ।
वीर्य्यच्युतौ नारिकेलजलं तालफलानि च ॥ ५२ ॥
आनाहारुचिमूर्च्छार्त्ति धूमोद्गारविसूचिकाः ।
एतेषु लघु शाल्यन्नं केवलं सघृतं हितम् ॥ ५३ ॥
अतिवान्तौ पिवेच्छिन्नारसं क्षौद्रेण संयुतम् ।
सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्य्यये ॥ ५४ ॥
भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ।
यवान्नं मधुसंयुक्तं पिवेद्वा माहिषं दधि ॥ ५५ ॥
घृतान्नं भक्षयेन्नित्यं सुखोष्णेन च वारिणा ।
छिन्नाऽम्बु सहितं देयं दाहेऽजीर्णे सुधाजलम् ॥ ५६ ॥
आर्द्रकं सर्षपं रम्भा-फलं भृङ्गं कफोल्वणे ।
अन्ये ऽप्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्यै यथौषधम् ॥ ५७ ॥
द्वात्रिंशद्दिवसे कार्य्यं स्नानमामलकैस्तिलैः ।
युक्तं सेव्यं बले जाते शनैराग्निवलादनु ॥ ५८ ॥

कौड़ी भस्म एक पल, शुद्ध पारा आधा पल, शुद्ध गंधक आधा पल शुद्ध सुहागा एक माषा लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर जम्बीरी के रससे घोटकर सम्पुट में बंद कर पुटमें फूंकदें। यह लोकनाथ रस कहाता है। सिवाय कुष्ठ और रक्तपित्त के अन्य रोगों को बलपूर्वक जीतता है। पुष्टि, वीर्य, ओज प्रसाद, कान्ति, तथा परम लावण्य देता है। शम्भुने मनुष्यों के हित के लिये जो रस कहे हैं उनमें से लोकेश्वर रससे भिन्न और कौन उत्तम रस है। इसके सेवन करने वाले को पथ्य में शाली चावल, घी, दही, हींगयुक्त शाक खाना चाहिये। नित्य छःछः घण्टे के बाद दिनमें तीनवार पथ्य देना चाहिये। तीनदिनके बाद यदि वमन हो जाये या अरुचि होनेसे पारा ठीक अनुकूल न बैठे तो बीचमें बंद करके फिर आठवें दिन कार्य्य सिद्धि के लिये देना चाहिये। पहले

सप्ताह में बटेर, जिमीकंद, और मूंगका पथ्य देना चाहिये । दूसरे सप्ताह में उरद गेहूं तथा पूर्वोक्त पथ्य दें । तीसरे सप्ताह में मछली का मांस दें तथा तैलादि मर्दन करावे । तेल, विल, कांजी, क्रोध स्त्रीसंग, अधिक सोना, अधिक जागना तथा करेला, ककड़ी आदि क्षराष्टक द्रव्यों को छोड़ देवे । जो हृदय के लिये हितकारी तथा मांस द्रव्य हैं वे सेवन करें । वायुके दोष में गरम दूध पीवें, पित्तके दोष में मिश्री, अत्यग्नि रोग अर्थात् भस्मक रोग में चोरक के बीज, तिल ऊख, केलेका फल, खजूर, मांस, द्राक्षा, मिश्री आदि सबकुछ खावें। वीर्यपात होता हो तो नारियल का जल तथा ताल फल खावें। आनाह, अरुचि, मूर्छारोग, धुंयेकेसे मुंहसे डकार आना, विसूचिका रोग, इन सब रोगों में इस रसको देंतो लाभ करता है पथ्यमें हलके शाली चावलों का भात और घृत दें ॥ अति वमन होता हो तो गिलोय के स्वरस में शहद मिलाकर पिलावें । रक्तपित्त में बांसा के रस और शहद पिये । अरुचि हो तो भुने हुए धान्यों को मिश्री व शहद मिलाकर अथवा जौ के अन्नमें शहद मिलाकर पीवे अथवा भैंस का दही पिये ॥ नित्य घी मिला हुआ अन्न खावे और साथ ही गरम जल पीवें । दाह रोगमें गिलोय के रसके साथ दें और अजीर्ण में चूने के जलके साथ देवें अदरक, सरसों, केला का फल, दारचीनी ये सब द्रव्य कफोल्वण रोगमें अनुपान रूपमें देवें । अन्य जो उपद्रव हों उनमें वैसे २ ही अनुपान से औषध देवें । बत्तीसवें दिन आमले और तिलके साथ स्नान करे । और अग्निबल होजाये तो यथाशक्ति अपने लिये जो उचित पथ्य हो वह करता रहे ॥ ४४-५८ ॥

स्वल्प मृगाङ्कः ।

रसभस्म हेमभस्म तुल्यं गुञ्जाद्वयं भजेत् ।
दोषं बुद्ध्वाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं क्षयापहः ॥ ५६ ॥

रससिन्दूर, और स्वर्ण भस्म, दोनों को एकर रत्ती लेकर मिलाकर दोरत्ती की मात्रा देवे और दोषानुसार उचित अनुपान से दे तो क्षयरोग को लाभ होता है इसका नाम स्वल्प मृगाङ्करसहै।

काञ्चनाभ्र रसः।

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम्।
विद्रुमञ्चाभया तारं कस्तूरी च मनः शिला ॥६०॥
प्रत्येकं बिन्दुमात्रन्तु सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
वारिणा वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ॥६१॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथादोषानुसारतः।
क्षयं हन्ति तथा कासं श्लेष्मपित्तसमुद्भवम् ॥६२॥
प्रमेहं विविधञ्चैव दोषत्रयसमुत्थितम्।
कफजान् वातजान् रोगान् नाशयेत् सद्य एव हि ॥६३॥
बलवृद्धिं वीर्य्यवृद्धिं लिङ्गदार्ढ्यं करोति च।
श्रीकरः पुष्टिजननः नानारोगनिसूदनः।
गहनानन्दनाथाक्तो रसो ऽयं काञ्चनाभ्रकः ॥ ६४ ॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, मोती भस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, मूंगा भस्म, हरड़ चूर्ण, चांदी भस्म, कस्तूरी, शुद्ध मनासिल, प्रत्येक द्रव्य एक२कर्ष लें। पीसकर जलसे दो रत्तिकी गोली बनालें। इस गोली को दोषानुसार भिन्न २ अनुपानों से दें तो क्षयरोग,पित्त तथा श्लेष्मा से उत्पन्न हुई खांसी, त्रिदोषज विविध प्रमेह, कफज, तथा वातज सर्व रोगों को शीघ्र नाश करता है। बल बढ़ाता है, बीर्य बढ़ाता है, लिंग को दृढ़ करता है। तथा सौन्दर्यकवर्द्धक, पुष्टिकारक और नानारोग नाशक है। यह गहनानन्द ने कहा है। इसका नाम काञ्चनाभ्र रस है ॥ ६०–६४ ॥

बृहत्काञ्चनाभ्ररसः।

काञ्चनं रससिन्दूरं मौक्तिकं लौहमभ्रकम्।
विद्रुमं मृतवैक्रान्तं तारं ताम्रञ्च वङ्गकम् ॥ ६५ ॥
कस्तूरिका लवङ्गञ्च जातीकोषैलबालुकम्।
प्रत्येकं बिन्दुमात्रञ्च सर्वं मर्द्यं प्रयत्नतः ॥ ६६ ॥

कन्यानीरेण सम्मर्द्य केशराजरसेन च ।
अजाक्षीरेण सम्भाव्यं प्रत्येकं दिवसत्रयम् ॥ ६७ ॥
चतुर्गुञ्जा प्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं यथा दोषानुसारतः ॥ ६८ ॥
क्षयं हन्ति तथा कासं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।
प्रमेहान् विंशतिश्चैव दोषत्रयसमुद्भवान् ।
सर्वरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ६९ ॥

स्वर्ण भस्म, रससिन्दूर, मोती भस्म, लौहभस्म, अभ्रक भस्म, मूंगा भस्म, वैक्रान्त भस्म, चांदी भस्म, ताम्र भस्म, बंगभस्म, कस्तूरी, लौंग, जावित्री, एलवा, प्रत्येक द्रव्य एक२ कर्ष लेकर सबको पीसकर घी कुमार के रससे, फिर केशराज के रससे, फिर बकरी के दूधसे पीसकर प्रत्येक की तीन २ दिन भावना देवे इस रसकी चाररत्ति की गोली बनाकर यथा दोष अनुपान से खावे तो क्षय, खांसी, यक्ष्मा, श्वास रोग, बीसों प्रकार के त्रिदोषज प्रमेह, इन सब को यह रस ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य भगवान अन्धकार को दूर करते हैं ॥ ६५—६९ ॥

शिलाजत्वादिलौहम् ।

शिलाजतु मधु व्योषं ताप्यं लौहरजस्तथा ।
क्षीरेण लेहितस्याशु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥ ७ ॥

शिलाजीत, मुलहठी, सोंठ, मिरच, पीपल, स्वर्णमाक्षिक भस्म प्रत्येक द्रव्य एक२ भाग लें । और सबके समभाग लौह भस्म लें सबको पीसकर दो रत्ति भरकी गोली बना लें । इसे दूध से खावे तो क्षयरोग का नाश होता है ॥ ७० ॥

कुमुदेश्वरोरसः

हेमभस्म रसभस्म गन्धकं मौक्तिकन्तु रसटङ्कणं तथा ।
तारकं गरुड़सर्वतुल्यकं काञ्जिकेन परिमर्द्य गोलकम् ॥७१॥
मृत्स्नया च परिवेष्ट्यशोषितं भाण्डगे लवणगेऽथपाचयेत्

एकरात्रमृदुसम्पुटेन वा सिद्धिमेति कुमुदेश्वरो रसः।
वल्लमस्य मरिचैः घृताप्लुतै राजयक्ष्मपरिशान्तये पिबेत् ॥७२॥

स्वर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्धगंधक, मोतीभस्म, शुद्धसुहागा (अन्य द्रव्य एक २ तोला हों तो भुना सुहागा चौथाई अर्थात् तीन माशे लें, यह भी अर्थ "रस टङ्कणम्" का है और यही व्यवहार भी है) चांदीभस्म, स्वर्णमाक्षिकभस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कांजी से पीस गोला बना कर ऊपर कपड़ मिट्टी कर सुखा के लवण यंत्र में एक रात पाक करें। अथवा मृदुपुटमें पाक करें तो कुमुदेश्वर रस सिद्ध होजाता है। इसकी डेढ रत्ति की मात्रा मिरचें और घी मिला कर पीवें तो राजयक्ष्मा शान्त होता है ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

क्षयकेशरीरसः।

त्रिकटु त्रिफलैलाभिर्जातीफललवङ्गकैः।
नवभागोन्मितैस्तुल्यं लौह-पारदसिन्दुरम्।
मधुना क्षयरोगांश्च हन्त्ययं क्षयकेशरी ॥ ७३ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़ बहेड़ा, आंवला, इलायची, जायफल लौंग, इन में से प्रत्येक द्रव्य का कपड़ में छना हुआ चूर्ण एक २ तोला लें। सारा चूर्ण नौ तोला हुआ इसमें साढे चार तोला लोह-भस्म, तथा रससिन्दुर साढे चार तोला डालें। सब को पीस कर शहद के साथ चाटें तो क्षयरोग दूर होता है। इसका नाम क्षय केशरी रस है ॥ ७३ ॥

बृहच्चन्द्रामृतो रसः।

रसगंधकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात् पलार्द्धञ्च विचक्षणः ॥ ७४ ॥
कर्पूरं शाणकं दद्यात् स्वर्णं तोलकसम्मितम्।
ताम्रञ्च तोलकं दद्यात् विशुद्धं मारितं भिषक् ॥ ७५ ॥
लौहं कर्षं क्षिपेत् तत्र वृद्धदारकजीरकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरकश्च बला तथा ॥ ७६ ॥

मर्कट्यतिबला चैव जातीकोषफले तथा ।
लवङ्गं विजयाबीजं श्वेतसर्जरसं तथा ॥ ७७ ॥
शाणभागं समादाय चैकीकृत्यप्रयत्नतः ।
मधुना मर्दयेत् तावत् यावदेकत्वमागतम् ॥ ७८ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटीं कुर्य्यात् प्रयत्नतः ।
भक्षयेद्वटिकामेकां पिप्पलीमधुना सह ॥ ७९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लेकर कज्ज करें । फिर अभ्रकभस्म आधापल, कर्पूर एक शाण, स्वर्णभ एक तोला, ताम्रभस्म एक तोला, लौहभस्म एक कर्ष, विधारे बीज, जीरा, विदारीकंद, शतावर, तालमखाना, बला, कौंचके बी अतिबला, जायफल, जावित्री, लौंग, भांग के बीज, सफेदराल प्रत्ये द्रव्य का चूर्ण एक २ शाण लेकर पीसें । फिर शहद से मिला पीसें । जब सब एक रस होजाये तो चार रत्ति प्रमाण की गोलं बना ले । एक गोली को पीपल और शहद से खावे तो क्षय र तथा खांसी आदि अच्छे होते हैं ॥ ७४—७९ ॥

महामृगाङ्को रसः ।

निरुत्थभस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्मसूतकम् ।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुकपुच्छं चतुर्गुणम् ॥ ८० ॥
मृतताप्यश्च पञ्चांशं तारभस्म चतुर्गुणम् ।
सप्तभागं प्रवालश्च रसतुल्यश्च टङ्कणम् ॥ ८१ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा खरातपे ॥ ८२ ॥
लवणैः पात्रमापूर्य्य तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।
तन्मुखन्तु मृदा रुद्ध्वा पचेत् यामचतुष्टयम् ॥ ८३ ॥
आकृष्य चूर्णयेत् सर्वं चतःषष्टिविभागतः ।
वज्रं वा तदभावे तु वैक्रान्तंषोडशांशिकम् ॥ ८४ ॥

महामृगाङ्कः खलु एष सिद्धः श्रीनन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम्।
वल्लोऽस्य सेव्यो मरिचाज्ययुक्तः सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ८५॥
तत्रोपचाराः कर्त्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः।
बल्यं वृष्यश्च भोक्तव्यं त्यजेत् सूतविरोधि यत् ॥ ८६ ॥
यक्ष्माणं बहुरूपिणं ज्वरगणं गुल्मं तथा विद्रधिम्।
मन्दाग्निं स्वरभेदकासमरुचिं वान्तिश्चमूर्च्छां भ्रमिम्।
अष्टावेव महागदान् गरगदान् पाण्ड्वामयान् कामलान्।
पित्तोत्थांश्च समग्रकान् बहुविधानन्यांस्तथा नाशयेत् ॥ ८७ ॥

स्वर्ण भस्म एक तोला, रससिन्दूर दो तोला, मोती भस्म तीन तोला, शुद्ध गंधक चार तोला, स्वर्णमाक्षिक भस्म पांच तोला, चांदी भस्म चार तोला, प्रवाल भस्म सात तोला, शुद्ध सुहागा दो तोला। सबको पीसकर मातुलुंग नींबूके रससे तीनदिन घोटकर तीव्र धूपमें सुखावे। फिर नमक से पात्र भरकर उसके मध्य में इसका गोला धर दे और मुख बंद करके बारह घण्टे आगपर पकावे। स्वांग शीतल होनेपर निकालकर चूर्ण करके उसमें सारे चूर्ण का चौंसठवां भाग हीरा भस्म डालदे, हीरा भस्म न हो तो सोलहवां भाग वैक्रान्त भस्म डालदे। इसे मिलाकर पीसकर रखे। यह महामृगाङ्करस सिद्धफल है। इसे श्री नन्दिनाथ ने प्रकाशित किया है। इसकी डेढ रत्ति की मात्रा मरिच और घी से मिलाकर सेवन करें अथवा पिप्पली चूर्ण मिलाकर सेवन करें। इसके खाने के साथ क्षयाधिकार में कहे हुये पथ्य आदि सब पालन करें। यह बलदायक तथा वृष्य है। इसके सेवन के समय वे सब वस्तुएँ सेवन न करें जोकि पारा सेवन करने के समय अपथ्य कही हैं। इससे यक्ष्मारोग अनेक रूपों से युक्त भी दूर होता है। तथा अनेक ज्वर, गुलमरोग, विद्रधि, मन्दाग्नि, स्वरभेद कास, अरुचि, वमन, मूर्छा, भ्रम, आठों महारोग, विषरोग, पाण्डुरोग कामला, पित्तसे होनेवाले सभी रोग तथा अन्य अनेक प्रकार के रोग इससे नाश होते हैं ॥ ८०-८७ ॥

बृहत् क्षयकेशरी।

मृतमभ्रं मृतं सूतं मृतं लौहं तथा रविः।
मृतं नागश्च कांस्यश्च मण्डूरं विमलं शिला ॥ ८८॥
वङ्गं खर्परकं तालं शङ्खटङ्कणमाक्षिकम्।
वैक्रान्तं कान्तलौहश्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम् ॥ ८९॥
वराटं मणिरागश्च राजपट्टश्च गन्धकः।
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य खल्लमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ ९०॥
मर्दयेत् त्वग्निभानुभ्यां प्रपुटेत् त्रिदिनं लघु।
भावयेत् पुटयेदभिर्वारांस्त्रींश्च पृथक् पृथक् ॥ ९१॥
मातुलुङ्गवराबन्हि–स्वम्लवेतसमार्कव–
हयमारार्द्रकरसैः पाचितो लघुवन्हिना ॥ ९२॥
वातपित्तकफोत्क्लेशान् ज्वरान् संमर्दितानपि।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमारुतान् ॥ ९३॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसायुतः।
मधुकार्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणौषधैः ॥ ९४॥
रोगिणांसेवितो हन्ति व्याधिवारणकेशरी।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं क्रिमिं जयेत् ॥ ९५॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम्।
अश्मरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम्।
सर्वव्याधिहरो बल्यो वृष्यो मेध्यो रसायनः ॥ ९६॥

अभ्रक भस्म, रससिन्दूर, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसक भस्म, कां भस्म, मण्डूर भस्म, रौप्य माक्षिक भस्म, शुद्ध मनासिल, वंग भ खपरिया भस्म, शुद्ध हड़ताल, शंख भस्म, शुद्ध सुहागा, स्वर्णमाक्षि भस्म, वैक्रान्त भस्म, कान्तलौह भस्म, स्वर्ण भस्म, मूंगा भस्म, मो भस्म, कौड़ी भस्म, शुद्ध हिंगुल, कान्त पाषाण भस्म, अर्थात् व

क पत्थर की भस्म, शुद्ध गंधक, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें । सबको इकट्ठा कर चूर्ण करे और चीते के काथकी तीन भावना देकर तीन पुट तीन दिनमें देवे । फिर आक की भावना प्रतिदिन देकर पुटदे । इस प्रकार तीन भावना और तीन पुट तीन दिन में देकर सुखाले फिर आगे लिखे द्रव्यों की भावना दे और लघुपुट दे। लोहेके पात्र में सब द्रव्यों का चूर्ण डाले उसमें मातुलुङ्ग नींबू, त्रिफला, कागज़ी नींबू, (वन्हिका अर्थ यहां नींबूही संस्कृत टीकाकार ने माना है), अम्लवेत, भांगरा, कनेर, अदरक का रस, इनसे भावना देकर लघु-पुट दें ॥ स्वांग शीतल होनेपर पीसकर रखें। इसके खाने से वात-पित्त कफ के बढ़े हुए ज्वर भी दूर होजाते हैं । सन्निपात ज्वर, सर्वांगवात, एकाङ्गवात, इन सबको शीघ्र दूर करता है॥इसे मिश्री और पिप्पली के चूर्ण के साथ खावें, या शहद और अदरक के रससे खावें, अथवा भिन्न २ रोगों की नाशक औषधों के साथ रोगियोंके रोगको दूर करता है । ग्यारह लक्षण युक्त क्षय, शोष, पाण्डु, क्रिमि, पांचों प्रकार की खांसी, श्वास, प्रमेह, मेद, महोदर, अश्मरी, शर्करा शूल, प्लीहा, गुल्म, हलीमक आदि रोग नाश करता है, बल बढ़ाता है. वृष्य मेधावर्द्धक तथा रसायन है (शिला का अर्थ शिलाजीतभी कई करते हैं ॥ ८८—९६ ॥

क्षयारिः ।

भस्मत्वं समुपागतं विधिकृतं हेमामृतेनान्वितम् ।
पादांशेन कणाऽऽज्यवल्लसहितं गुञ्जोन्मितं सेवितम् ॥
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजान् श्वासञ्च कासामयम् ।
दुष्टाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुखान् रोगान् जयेत् देहभृत् ॥९७॥

स्वर्ण भस्म चार तोले, शुद्धविष एक तोला, दोनों को पीसकर रखे। इस क्षयारि रसकी एक रत्ति की मात्रा को पीपल के चूर्ण दो रत्ति और घी मिलाकर खावें तो यक्ष्मा रोग, ज्वर, पाण्डु, बवासीर, श्वास, कास, दुष्टग्रहणी, क्षतक्षयोन्मुख, रोग दूर होते हैं ॥ ९७ ॥

क्षयसंहारः।

लीढो व्योषवरान्वितो विमलको युक्तोघृतैः सेवितो ।

हन्यात् हृद्गददुर्जयं श्वयथुकं पाण्डुप्रमेहारुचिम् ।
शूलार्त्तिं ग्रहणीञ्च गुल्ममतुलं यक्ष्मामयं कामलाम् ।
सर्वान् पित्तमरुद्गदान् किमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥ ९८ ॥

शुद्ध रौप्यमाक्षिक की भस्म लेकर उस सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, इन सबका चूर्ण तथा घी मिलाकर चाटें तो भयंकर हृदयरोग, सूजन, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, शूल, ग्रहणी, गुल्म, यक्ष्मा, कामला, सब प्रकार के पित्त और वायुके रोग शान्त होते हैं। अन्य औषधों से क्या लाभ जबकि यही सब रोगों को नाश करता है ॥ ९८ ॥

रजतादिलौहम् ।

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं ।
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं साय आज्येन युक्तम् ॥
लीढं प्रातः क्षपयतितरां यक्ष्मपाण्डूदरार्शः ।
श्वासं कासं नयनजरुजः पित्तरोगानशेषान् ॥ ९९ ॥

चांदी भस्म एक तोला लें, अभ्रक भस्म एक तोला लें त्रिकुटा अर्थात् सोंठ, मिरच, पीपल, का चूर्ण मिला हुआ दो तोला लें त्रिफला अर्थात् हरड़, बहेड़ा, आंवला का चूर्ण मिलाकर कुल [illegible] तोला लें। सबके बराबर लौह भस्म लें। इसकी एक रत्तिकी मात्रा घी से प्रातःकाल खाने से यक्ष्मा, पाण्डु उदर रोग, बवासीर, श्वास, कास, आंखके रोग तथा पित्तके अनेक रोग दूर होते हैं ॥ ९९ ॥

नित्योदयो रसः ।

सुशुद्धं पारदं गन्धः प्रत्येकं शुक्तिसम्मितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मर्दयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १०० ॥
बिल्वाग्निमन्थश्योणाकः काश्मरीपाटलाबला ।
मुस्तंपुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥ १०१ ॥
विदारी बहुपुत्री च एषां कर्षरसैर्भिषक् ।
सुवर्णं रजतं ताप्यं प्रत्येकं शाणमानकम् ॥ १०२ ॥

पलमात्रन्तु कृष्णाभ्रं तदर्द्धञ्च शिलाह्वयम् ।
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम् ॥ १०३ ॥
प्रत्येकं कोलमानन्तु वासानीरैर्विमर्दयेत् ।
शोषयित्वाऽऽतपेपश्चाद्विदारीरसमर्दितम् ॥ १०४ ॥

द्विगुञ्जाभां वटीं खादेत् पिप्पलीमधुसंयुताम् ।
नाम्नानित्योदयश्चायं रसो विष्णुविनिर्मितः ॥ १०५ ॥
पञ्च कासान् निहन्त्याशु चिरकालोद्भवानपि ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं जीर्णज्वरमरोचकम् ॥ १०६ ॥

धातुस्थं विषमाख्यञ्च तृतीयकचतुर्थकम् ।
अर्शांसिकामलां पाण्डुमग्निमान्द्यं प्रमेहकम् ।
सेवनादस्यकन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ १०७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक दो २ कर्ष लेकर कज्जली करें। फिर बिल, अग्निमन्थ, श्योणाक, गंभारी, पाटला, बला, नगरमोथा, पुनर्नवा, आंवला, बड़ी कटेली, बांसे के पत्ते, विदारीकंद, शतावर, इन सबके एक २ कर्ष रससे पृथक् २ मर्दन करे। फिर स्वर्ण भस्म, चांदी भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण लेवे। कृष्णाभ्रक की भस्म एक पल ले, मनसिल शुद्ध आधा पल ले। जावित्री का चूर्ण, जायफल, जटामांसी, तालीशपत्र, इलायची के बीज का, लौंग, इन सबका चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ कोल अर्थात् आधा २ कर्ष लेवे। फिर सबको एकत्र कर बांसे के रससे मर्दन करके धूपमें सुखावे। फिर विदारीकंद के रस से मर्दन करे और दोरत्ति भरकी गोली बनाकर पिप्पली के चूर्ण और शहद से खावे। यह नित्योदय रस विष्णु भगवान का बनाया हुआ है। इससे बहुत पुरानी पांचों प्रकार की खांसी, दूर होती है। अति उग्र राजयक्ष्मा तथा जीर्णज्वर, अरुचि धातुगत ज्वर तथा विषमज्वर, तृतीयक ज्वर, चतुर्थज्वर, बवासीर रोग, कामला, पाण्डुरोग, अग्निमांद्य,

प्रमेह, इसके सेवन से दूर होते हैं। तथा इसके सेवन करने वाला कामदेव के समान रूपवान होजाता है ॥ १००—१०७

इति राजयक्ष्मचिकित्सा ॥

अथ कासचिकित्सा ।

बृहद्रसेन्द्र गुटिका ।

कर्षं शुद्धरसेन्द्रस्य गन्धकस्याभ्रकस्य च ।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च विषस्य च ॥ १ ॥
मनः शिलायाः क्षाराणां बीजस्यकनकस्य च ।
मरिचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ २ ॥
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकर्णोऽथ मण्डुकी ।
शक्राशनं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽर्द्रकम् ॥ ३ ॥
निर्गुण्डीस्वरसेनापि कर्षमात्रेण मर्दयेत् ।
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्भिषक् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव पञ्चकासं व्यपोहति ॥ ४ ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं यक्ष्माणं सभगन्दरम् ।
अग्निमान्द्यारुचिं शोथमुदरं पाण्डुकामलम् ।
रसायनी च वृष्या च बलवर्णप्रसादिनी ॥ ५ ॥
वृंहणं मधुरं स्निग्धं मत्स्यं मांसञ्चजाङ्गलम् ।
घृतपक्वं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म, शुद्धविष, शुद्ध मनसिल, यवक्षार, शुद्ध धतूरे के बीज, काली मिरच का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष लेकर रखें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलावे। फिर जयन्ती के रस, चीते के क्वाथ, माणकंद के रस, शकरकंदी, मण्डूकपर्णी,

पर्णी, भांग, भांगरा, केशराज, अदरक तथा संभालु इन सबके एक२ कर्ष रससे उस चूर्णको घोटकर मटर के समान गोली बनालो। इस गोली को अदरक के रस से खावें तो पांचों प्रकार की खांसी दूर होती है। तथा खांसी, श्वास, राजयक्ष्मा, भगन्दर, अग्निमांद्य, अरुचि, शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला दूर होता है। यह वृष्य, रसायन, बल और वर्णको बढ़ाती है। इस रसके साथ २ बृंहण मधुर, स्निग्ध, द्रव्य तथा मछली, मांस, जांगल जीवों का मांस रस और घी में पके हुये पदार्थ सदा भक्ष्य हैं। इसमें रूखा और तीक्ष्ण आहार बर्जित है॥ १—६॥

अमृतार्णवो रसः।

पारदं गन्धकं शुद्धं मृतलौहञ्च टङ्कणम्।
रास्ना विडङ्गं त्रिफला देवदारु च चित्रकम्॥ ७॥
अमृता पद्मकं चौद्रं विषञ्चैव विमर्दयेत्।
द्विगुञ्जं वातकासार्त्तः सेवयेदमृतार्णवम्॥ ८॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, शुद्ध सुहागा, रास्ना का चूर्ण, वायविडंग, हरड़, बहेड़ा, आंवले, इन सबका चूर्ण, देवदारु, चीता, गिलोय, पद्माख, शहद, शुद्धविष, सब समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। और पीस कर दोरत्ति भरकी मात्रा खिलावे तो वातकास नाश होता है। इसका नाम अमृतार्णव रस है॥ ७॥ ८॥

पित्तकासान्तको रसः।

भस्म ताम्राभ्रकान्तानां कासमर्दत्वचो रसैः।
मणिजैर्वेतसाम्लैश्च दिनं मर्द्य सुपिण्डितम्॥ ६॥
निष्कार्द्धं पित्तकासार्त्तो भक्षयेच्च दिनत्रयम्।
कासश्वासाग्निमान्द्यञ्च क्षयञ्चापि निहन्त्यलम्॥ १०॥

ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कान्तलौह भस्म, प्रत्येक द्रव्य सम भाग लेकर कसौंदी की छालके काथसे तथा अगस्त के फूलों के रस से तथा अम्लबेत से एक २ दिन मर्दन करे फिर अच्छी प्रकार से

गोली बांध रखे। इसकी आधे निष्क की मात्रा खाने से पित्तशा तीन दिनमें अच्छा होता है। कास, श्वास अग्निमांद्य तथा ज्वर को दूर करता है ॥ ९१० ॥

कासंहारभैरवो रसः ।

रसगन्धक ताम्राभ्र-शङ्खटङ्कणलौहकम् ।
मरिचं कुष्ठतालिशं जातीफललवङ्गकम् ॥ ११ ॥
कार्षिकं चूर्णमादाय दण्डेनामर्द्य भावयेत् ।
भेकपर्णी केशराज-निर्गुण्डी-काकमाचिकाः ॥ १२ ॥
द्रोणपुष्पी शालपर्णी ग्रीष्मसुन्दरकः तथा ।
भार्गी हरीतकी वासा कार्षिकैः पत्रजैरसः ॥ १३ ॥
वटिकां कारयेद्वैद्यः पञ्चगुञ्जाप्रमाणतः ।
श्रीमद्गहननाथेन कासंहारभैरवः ।
रसोऽयं निर्मितो यत्नात् लोकरक्षणहेतवे ॥ १४ ॥
वासा शुण्ठी कण्टकारी-क्वाथेन पाययेद्बुधः ।
वातजं पैत्तिकं कासं श्लैष्मिकं चिरजं तथा ॥ १५ ॥
कासं नानाविधं हन्ति श्वासमुग्रमरोचकम् ।
बलवर्णकरःश्रीदः पुष्टिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ १६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, अभ्रक भस्म, शंख भस्म शुद्ध सुहागा, लौह भस्म, मिरच, कूठ, तालीशपत्र, जायफल लौंग इनमें से प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक२कर्ष लेकर पीसलें। फिर मण्डूक पर्णी, केशराज, संभालु, मकोय, गूमा, शालपर्णी, ग्रीष्म सुन्दर, भार्गी, हरड़, वांसा, के पत्ते इन सब औषधों को एक २ कर्ष लेकर इनके रससे घोटकर पांचरत्ति प्रमाण की गोली बनावें। यह रस बड़े यत्न से लोक रक्षा के निमित्त श्रीमान् गहनानाथ ने बनाया है इसका नाम कास संहार भैरव है ॥ इस रसको बांसा, सोंठ, छोटी कटेली, इन तीनों के क्वाथसे पिलावें तो वातज, पित्तज तथा श्लेष्म

कास और पुरानी खांसी तथा अन्य किसी प्रकार की भी खांसी को यह दूर करता है। उग्र श्वास तथा अरुचि को यह दूर करता है। बल वर्ण को बढ़ाता है तथा श्रीदायक, पुष्टिदायक, और कान्ति को खूब बढ़ाता है ॥ ११-१६ ॥

लक्ष्मीविलासो रसः।

शुद्धसूतं सतालञ्च तालार्द्धं रसखर्परम्।
वङ्गं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलं पलम् ॥ १७ ॥
केशराजरसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम्।
कुलत्थस्य रसेनैव भावयेच्च पुनः पुनः ॥ १८ ॥
एलाजातीफलाख्यञ्च तेजपत्रं लवङ्गकम्।
यमानी जीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १९ ॥
नतं भृङ्गं वंशगर्भं कर्षमात्रञ्च कारयेत्।
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत् सर्वमौषधम्।
छाया शुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ॥ २० ॥
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये।
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात् स्निग्धभोजनम् ॥ २१ ॥
क्षयं कासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम्।
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ॥ २२ ॥
अर्शोनाशं करोत्येव बलवृद्धिञ्च कारयेत्।
वर्जयेच्छाकमम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ २३ ॥

शुद्ध पारा एक पल, शुद्धगन्धक एक पल दोनों की कज्जली करे। फिर शुद्ध हड़ताल, वंग भस्म, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लौह भस्म, कांस्य भस्म, प्रत्येक एक २ पल लें। और खपरिया भस्म आधा पल लें। सबको मिलाकर पीसें और केशराज के रस से तीन दिन भावना देवे। फिर कुलथी के रससे तीनदिन भावना देवे। फिर सूख जानेपर इसमें इलायची, जायफल, तेजपात, लौंग, अज-

वायन, जीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, त
दारचीनी, वंशलोचन, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष लेकर, पू
द्रव्य में मिलादे। सबको पीसकर फिर भांगरे और कुलथी की भा
देकर छाया में सुखाकर चने के समान गोली बनाकर शीतल ज
देनेसे सब प्रकार की खांसी की निवृत्ति होती है मछली, मांस, दू
स्निग्ध भोजन इसमें पथ्य है। और क्षय, खांसी, दमा, ज्वर सा
वा ज्वर रहित, श्वास रोग, हलीमक, पाण्डुरोग, शोथ, शूल, ग्र
बवासीरादि रोग नाश करता है। तथा बल बढ़ाता है। इसमें श
खटाई, भुने हुए चने आदि द्रव्य तथा आग सेंकना वर्जित है। ७

सर्वेश्वरो रसः

रसगन्धकयोश्चूर्णमेकीकृत्याभ्रकं तथा ।
हेमभिश्च समं कृत्वा मर्दयेत् यामकद्वयम् ॥ २४ ॥
त्र्यूषणानि लवङ्गैलाटङ्कणं हेमतुल्यकम् ।
कण्टकार्य्या रसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम् ॥ २५ ॥
शिग्रुबीजार्द्रकरसैः सप्तधा भावयेत् पृथक् ।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विभीतकफलत्वचम् ॥ २६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक एक २ तोला लेकर दोनों
कज्जली करें। फिर अभ्रक भस्म, स्वर्णभस्म, प्रत्येक एक२ तो
डालकर इसे दो पहरों तक मर्दन करें। फिर सोंठ, मिरच, पी
लौंग, इलायची, शुद्ध सुहागे का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक
तोला लेकर पूर्वोक्त द्रव्य में मिला खरल करें। और फिर कटेली
रससे इक्कीसवार भावना देवें। फिर सुहांजने के बीजों के रस
सातवार भावना दें, फिर अदरक के रससे सातवार भावना दें
फिर इसकी गोली दो रत्ति भरकी बनालें। यह सर्वेश्वर रस खां
दमा तथा क्षयरोग का नाश करने वाला है। इसके साथ अनुपा
बहेड़े के फलका चूर्ण देना चाहिये ॥ २४—२६ ॥

शृङ्गाराभ्रम्।

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं शाणमानं यदन्यत् ।
कर्पूरं जातिकोषं सजलमिभकणा तेजपत्रं लवङ्गम् ।
मांसी तालीशचोचे गजकुसुमगदं धातकी चेति तुल्यम् ।
पथ्या धात्री विभीतं त्रिकटुरथ पृथक् त्वर्द्धशाणं द्विशाणम् ॥२७॥
एलाजातीफलाख्यं क्षितितलविधिना शुद्धगन्धाश्मकोलम् ।
कोलार्द्धं पारदस्य प्रतिपदविहितं पिष्टमेकत्र मिश्रम् ।
पानीयेनैव कार्य्याः परिणतचणकस्विन्नतुल्याश्च वट्यः ।
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि कियत् शृङ्गवेरं सपर्णम् ॥ २८ ॥
पानीयं पीतमन्ते श्रमपहरति क्षिप्रमेतान् विकारान् ।
कुष्ठे दुष्टाग्नि जातान् ज्वरमुदररुजो राजयक्ष्मक्षयश्च ।
कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं मेहमेदोविकारान् ।
छर्दिं शूलाम्लपित्तं तृषमपि महतीं गुल्मजालं विशालम् ॥ २६ ॥
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान् पीनसं प्लीहरोगम् ।
हन्यादामानिलोत्थान् कफपवनकृतान् पित्तरोगानशेषान् ।
बल्यो वृष्यश्च योगस्तरुणतरकरः सर्वरोगे प्रशस्तः ।
पथ्यं मांसैश्चयूषैः घृतपरिलुलितैः गव्यदुग्धैश्च भूयः ॥ ३० ॥
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया दीयमानं मुदा यत् ।
शृङ्गाराभ्रेण कामी युवतिजनशताभोग योगादतुष्टः ।
वर्ज्यं शाकाम्लमादौ दिनकतिपयचित् स्वेच्छया भोज्यमन्यत् ।
दीर्घायुः काममूर्त्तिर्गतवलिपलितो मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ३१ ॥

काले अभ्रक की भस्म दो पल, कपूर, जावित्री, सुगन्धबाला गजपीपल, तेजपात, लौंग, जटामांसी, तालीशपत्र, दारचीनी, नागकेशर, पुष्करमूल, धाय के फूल, इनमें से प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक २ शाण लेवें। फिर इलायची, जायफल, प्रत्येक का चूर्ण दो २ शाणलें।

पाताल यन्त्र से शुद्ध की गई गन्धक, एक कोल, शुद्ध पारा आ
कोल लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मि
कर पीसकर पानी सेही चने के समान गोली बनालें। इसकी
गोलियां प्रातःकाल खाकर ऊपर से अदरक का रस और पान
रस पीवें। तो इसके सेवनसे आगे लिखे रोग शीघ्रही निश्चय पू
दूर होते हैं अग्नि के दुषित होने से कोष्ठ में जो विकार उ
हुए हों, ज्वर, उदर रोग, राजयक्ष्मा, क्षय कास, श्वास, सूजन आं
का घूमना, प्रमेह, मेदरोग, वमन, शूल, अम्लपित्त, अत्यन्त प्या
गुल्मरोग, पाण्डु, रक्तपित्त, विषसे होनेवाले रोग, पीनस,
आमवात, से होनेवाले रोग, कफवात से होने वाले रोग तथा
प्रकार के पित्त रोगों को दूर करता है। यह रस बलदायक है,
है, इसके सेवन से मनुष्य अत्यन्त तरुण होजाता है। सभी रोगों
इसे प्रशस्त माना है। पथ्य में मांस का रस, घीसे मिला रस,
का दूध, तथा सुन्दर स्त्रियों से दिये हुए मन चाहते भोजन
इसके सेवन से मनुष्य कामी होकर सौ स्त्री भोगने सेभी
नहीं होता। इसके सेवन के समय शाक, खटाई, कुछदिन छोड़
चाहिये फिर यथेष्ट भोजन करना चाहिये। इससे दीर्घआयु
कामदेव के समान रूपवान और बलिपलित रहित मनुष्य होजा
है॥ २७—३१॥

सार्वभौमरसः।

जीर्णं सुवर्णं लौहं वा यद्यत्रैव प्रदीयेत।
तदाऽयं सर्वरोगाणां सार्वभौमो न संशयः॥ ३२॥

इसी शृङ्गाराभ्ररस में यदि स्वर्णभस्म वा लौहभस्म भी
दें तो यह सार्वभौम रस कहाता है, यह उपरोक्त तथा अन्य
को नष्ट करता है॥ ३२॥

तरुणानन्दरसः।

कर्षद्वयं रसेन्द्रस्य शुद्धस्य गन्धकस्य च।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुभे दृढ़शिलातले॥ ३३॥
बिल्वाग्निमन्थः श्योणाकः काश्मरी पाटला बला।

मुस्तं पुनर्नवा धात्री बृहती वृषपत्रकम् ॥ ३४ ॥
विदारीशतमूली च कर्षैरेषां पृथक् रसैः ।
मर्द्दयित्वा पुनर्वासा–स्वरसैर्दशतोलकैः ॥ ३५ ॥
मर्द्दयेत्तत्र शुद्धाभ्रं रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।
रसस्यार्द्धञ्च कर्पूरं तत्रैव दापयेद्भिषक् ॥ ३६ ॥
जातीकोषफले मांसी तालीशैलालवङ्गकम् ।
चूर्णं कृत्वा प्रयत्नेन माषमात्रं क्षिपेत् पृथक् ॥ ३७ ॥
विदारीस्वरसेनैव वटिकां कारयेद्भिषक् ।
राजयक्ष्माणमत्युग्रं क्षयश्चोग्रमुरः क्षतम् ॥ ३८ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं स्वराघातमरोचकम् ।
कामलांपाण्डुरोगञ्च प्लीहानं सहलीमकम् ॥ ३९ ॥
जीर्णज्वरं तृषां गुल्मं ग्रहणीमामसम्भवाम् ।
अतीसारञ्च शोथञ्च कुष्ठानि च भगन्दरम् ॥ ४० ॥
नाशयेदेष विख्यातस्तरुणानन्दसंज्ञितः ।
रसायनवरो वृष्यश्चक्षुष्यः पुष्टिवर्द्धनः ॥ ४१ ॥
सहस्रं याति नारीणां भक्षणादस्य मानवः ।
क्षीणता न च शुक्रस्य न च बुद्धिबलक्षयः ॥ ४२ ॥
द्विमासमुपयोगेन निहन्ति कामलान् गदान् ।
शुक्रसन्दीपनं कृत्वा ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ ४३ ॥
नारिकेलजलेनैव भक्ष्योऽयञ्चरसायनः ।
क्षीरानुपानात् वृष्योऽयं न क्वचित् प्रतिहन्यते ॥ ४४ ॥

पत्थर की खरल में शुद्ध पारे और शुद्ध गंधक को दो २ कर्ष डाल कर कज्जली करे। फिर इसे बिल, अरणी, श्योणाक, पाढ़, गंभारी, बला, मोथा, पुनर्नवा, आंवला, बड़ी कटेली, बांसा के पत्ते

विदारीकंद, शतावर, इनमें से प्रत्येक के स्वरस वा काथ को एक
कर्ष लेकर, इनसे पृथक् २ मर्दन करके फिर बांसा के दस तोल
स्वरस से मर्दन करे। फिर शुद्ध अभ्रकभस्म चार कर्ष और कपू
एक कर्ष डाले। फिर जावित्री, जायफल, जटामांसी, तालीशप
इलायची, लौंग इन सब द्रव्यों का चूर्ण पृथक् २ एक २ माषा
डाले। फिर विदारीकंद के रस से घोट कर एक रत्ति भर
गोली बना ले। इसके सेवन से अत्युग्र राजयक्ष्मा, क्षय, भयं
उरःक्षत, पांचों प्रकार की खांसी, श्वास, स्वरभंग, अरुचि, कामल
पाण्डुरोग, तिल्ली, हलीमक, जीर्णज्वर, श्वास, गुल्म, आम से उत्प
हुई ग्रहणी, अतीसार, शोथ, कुष्ठ, भगन्दर, इन सब को नाश कर
है। इसका नाम तरुणानन्द रस है। यह उत्तम रसायन है वृ
तथा आंखों के लिये हितकारी है। पुष्टिवर्धक है। इसके सेवन
एक हजार स्त्री तक भोग सकता है और वीर्य भी क्षीण नहीं होत
नांही बुद्धिबल की क्षीणता होती है॥ इस रस को दो मास त
उपयोग करने से कामला रोग नाश होता है यह वीर्य को बढ़ा
ज्वर को निस्सन्देह नाश करता है। यह रसायन नारियल के
के साथ खाना चाहिये। दूध के अनुपान से खावें तो वृष्य है
कहीं पर व्यर्थ नहीं जाता॥ ३३—४४॥

महोदधि रसः।

सूतकं गन्धकं लौहं विषञ्चैव वराङ्गकम्।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम्॥ ४५॥
त्रिकटु भद्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम्।
रेणुकामलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च॥ ४६॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या गजपिप्पलिकाम्बुभिः॥ ४७॥
मात्रा चणकतुल्या तु वटिकेयं प्रकीर्त्तिता।
कासं हन्ति तथा श्वासमर्शांसि च भगन्दरम्॥ ४८॥

हृच्छूलं पार्श्वशूलश्च कर्णरोगं कपालिकाम् ।
हरेत् संग्रहणीरोगानष्टौ च जाठराणि च ॥
प्रमेहान् विंशतिश्चैव चतुर्विधमजीर्णकम् ॥ ४९ ॥
न चान्नपाने परिहार्य्यमस्ति न शीतवातातपमैथुनेषु ।
यथेष्टचेष्टाभिरतः प्रयोगे नरोभवेत् काञ्चनराशिगौरः ॥५०॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगन्धक एक तोला दोनों की कज्जली करे। फिर लौहभस्म, शुद्ध विष, दारचीनी का चूर्ण, ताम्रभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला मिलावें फिर सोंठ, मिरच, पीपल, नागरमोथा, विडंग, नागकेसर, रेणुका, आंवला, पिप्पलीमूल प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दो २ तोला डालें। फिर इन सब को मिला कर पीस कर गजपिप्पली के क्वाथ से भावना देकर चने के समान गोली बना कर रखें। इसके सेवन से खांसी, दमा, बवासीर, भगन्दर, हृदय का शूल, पसलियों का दर्द, कानरोग, कपालिका संग्रहणी, आठों उदर रोग, वीसों प्रमेह, चार प्रकार का अजीर्ण, नाश करता है। इसके साथ अन्न खाने और पीने में कुछ बर्जित नहीं है। यथेष्ट चेष्टाओं में लगा हुआ मनुष्य भी इसके सेवन से स्वर्णराशि के समान गोरा होजाता है ॥ ४५—५० ॥

जयागुड़िका ।

सूतकं गन्धको लौहं विषं वत्सकमेव च ।
विडङ्गं केसरं मुस्तमेलाग्रन्थिकरेणुकम् ॥ ५१ ॥
त्रिकटुत्रिफला चित्रं शुद्धं जैपालवीजकम् ।
एतानिसमभागानि द्विगुणो गुड़ उच्यते ॥ ५२ ॥
तिन्तिड़ीवीजमानेन प्रातः काले च भक्षयेत् ।
कासं श्वासं क्षयं गुल्मं प्रमेहं विषमज्वरम् ॥ ५३ ॥
अजीर्णं ग्रहणीरोगं शूलं पाण्ड्वामयं जयेत् ।
अपाने हृदये शूले वातरोगे गलग्रहे ॥ ५४ ॥

अरुचावतिसारे च सूतिकाऽऽतङ्कपीड़िते ।
जयाऽऽख्या निर्मिताह्येषा भक्षणीया सुरैरपि ॥ ५५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लौह भस्म, शुद्धविष, कुड़ेकी छाल, चूर्ण विडंग, नागेकशर, मोथा, इलायची, पिप्पलामूल, रेणुका, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, शुद्ध जमालगोटे के बीजों का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसले। फिर सब द्रव्य से दुगुना गुड़ मिलाकर इमली के छोटे बीज के समान चपटी गोली बनाकर प्रातःकाल खावे तो खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म प्रमेह, विषम ज्वर, अजीर्ण, ग्रहणी, शूल, पाण्डु, गुदा का शूल, हृदय का शूल, वातरोग, गलग्रह, अरुचि, अतीसार तथा सूतिका रोगमें यह जयावटी लाभ करती है। यह वटी देवताओं को भी खानी चाहिये ॥ ५१—५५ ॥

विजया गुड़िका ।

सूतकं गन्धको लौहं विषं चित्रकपत्रकम् ।
विडङ्गरेणुकामुस्तमेलाकेसरग्रन्थिकम् ॥ ५६ ॥
फलत्रिकं त्रिकटुकं शुल्वभस्म तथैव च ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गुडः ॥ ५७ ॥
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
सूतायां ग्रहणीरोगे शूले पाण्ड्वामये तथा ।
हस्तपादादिदाहे च गुड़िकेयं प्रशस्यते ॥ ५८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, शुद्धविष, चीता, तेजपात, वायविडंग, रेणुका, मोथा, इलायची, नागकेशर, पिप्पलामूल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, ताम्र भस्म, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे और सब द्रव्य से दुगुना गुड़ डालकर गोली बनाले। इसको खांसी, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषम ज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी, शूल, पाण्डु, और हाथ पैर की जलनमें यह गोली बहुत उत्तम है ॥ ५६—५८ ॥

स्वच्छन्दभैरवो रसः ।

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वालामुखीरसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ ५६ ॥
मूषिकायां निरुध्याथ पुटेद्रात्रौ च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति वल्लमेनं प्रयच्छति ॥ ६० ॥
ग्रहण्यां संग्रहण्यां च कासेश्वासे विशेषतः ।
उग्रासु ज्वरतन्द्रासु निद्रास्वल्पासु योजयेत् ॥ ६१ ॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमसौ कुर्य्यात् सौकुमार्य्यञ्च कारयेत् ॥ ६२ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोले, मिलाकर कज्जली करे । फिर सेंधा नमक दो तोले मिलावें । सबको ज्वालामुखी अर्थात् भिलांवे के रससे पांचदिन तक खरल करे । फिर मूषा में बंद करके रात्रिभर मध्यपुटमें फूंक दे । जब सब भस्म हो जाये तो इसे पीस-कर डेढरत्ती की मात्रा दें । इससे ग्रहणी, संग्रहणी, विशेषकर खांसी तथा श्वास दूर होते हैं । तथा तेज ज्वर की तन्द्रा में और थोड़ी २ नींद, आने में इसको देवें तो यह लाभ करता है । अन्य रोगों में भी स्वछन्द भैरव रसको दें तो लाभ होता है । यह तुष्टि, पुष्टि करता है तथा शरीर को सुकुमार करता है ॥ ५६—६२ ॥

रसगुड़िका ।

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः ।
त्रिभागापिप्पली, पथ्या चतुर्भागा, विभीतकः ॥ ६३ ॥
पञ्चभागः, त्वामला च षड्गुणा, सप्तभागिका ।
भार्गी, सर्वमिदं चूर्णं भाव्यं वब्बोलजैर्द्रवैः ॥ ६४ ॥
एक विंशतिवारञ्च मधुना गुड़िका कृता ।
विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
कासं श्वासं हरेत् क्षुद्रा-क्काथं तदनु कृष्णया ॥ ६५ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्ज
बनावे । फिर पिप्पली का चूर्ण तीन तोला, हरड़ का चूर्ण चा
तोला. बहेड़े का चूर्ण पांच तोला. आमले का चूर्ण छः तोला, भा
का चूर्ण सात तोला ले । सबके चूर्ण को कज्जली से मिलावें । औ
बबूल के क्वाथ की इक्कीस भावना देवे । फिर शहद से मिला बहेड़े
फल अर्थात् एक कर्ष भरकी गोली बनावे । इसे प्रातःकाल ख
और ऊपर से छोटी कटेली के क्वाथ में पीपली का चूर्ण डाल
पीवें तो खांसी तथा श्वास नष्ट होते हैं ॥ ६३—६५

रसेन्द्रगुड़िका ।

माक्षिकञ्च शिखिग्रीवमभ्रकं तालकं तथा ।
एतांस्तु मिलितान् सर्वान् भावयेदार्द्रकद्रवैः ।
रक्तिद्वयप्रमाणान्तु कल्पयेत् गुडिकां भिषक् ॥ ६६ ॥
जीर्णान्ने भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ।
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनाशयेत् ॥ ६७ ॥
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी कृशानां पुष्टिवर्द्धनी ।
शुक्रवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी ।
वन्हिसन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरोचकविनाशिनी ॥ ६८ ॥

स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, अभ्रक भस्म, शुद्ध ह
ताल, इन सब द्रव्यों को समभाग पीसकर अदरक के रससे भाव
देकर दो रत्ति भरकी गोली बनालें । इसकी एक गोली अन्न के
जाने के पीछे खावें । दूध, मांसरस पथ्य दें । तो पांच प्रकार
खांसी, क्षय, श्वास, रक्तपित्त, इन सबका नाश होता है । यह पा
क्रिमिरोग, ज्वररोग को नाश करता है । कृशों को मोटा करती है
वीर्य बढ़ाती है, अम्लपित्त रोग नाश करती है. अग्नि को सं
करती है तथा अरुचि को नाश करती है ॥ ६६-६८ ॥

पुरन्दरवटी ।

सूतकाद्द्विगुणं गन्धमेकधा कज्जलीकृतम् ।

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥ ६९ ॥
अजाक्षीरेण संभाव्य वटिकां कारयेत् ततः।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शीततोयं पिबेदनु ॥ ७० ॥
कासश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्द्धनी।
इयं यदि सदासेव्या तदा स्याद् योगवाहिका।
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषायते ॥ ७१ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्जली करें। फिर सोंठ, मिरच, पीपल हरड़, बहेड़ा, आंवला, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला मिलावें। और बकरी के दूधमें भावना देकर गोली बना लें इस गोली को अदरक के रससे सेवन करके ऊपर से ठंडा पानी पियें तो खांसी और श्वास नाश होते हैं। विशेष करके यह अग्निवर्धक है। यदि यह गोली सदा सेवन करते रहें तो योगवाही होजाती है। इसके सेवन से बूढ़ा भी जवान के समान शक्त होकर सौ स्त्री तक भोग सकता है ॥ ६९—७१ ॥

कासान्तको रसः।

सूतं गन्धो विषश्चैव शालपर्णी च धान्यकम्।
यावन्त्येतानि चूर्णानि तावन्मात्रं मरीचकम् ॥
गुञ्जाचतुष्टयं खादेन्मधुना कासशान्तये ॥ ७२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्धविष, शालपर्णी, धनियां प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। मरिच चूर्ण पांच तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला दें और पीसकर रखें। चाररत्ति मात्रा शहद से खावें तो खांसी शान्त होती है। (मात्रा दो रत्ति दें) ॥ ७२ ॥

कासकुठारः।

हिङ्गुलं मरिचं गन्धो सव्योषं टङ्कणं तथा।
द्विगुञ्जश्चार्द्रकद्रावैः सन्निपातं सुदारुणम् ॥
कासं नानाविधं हन्ति शिरोरोगं विनाशयेत् ॥ ७३ ॥

शुद्ध हिंगुल, मरिच का चूर्ण, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिरच, पीपल का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, प्रत्येक द्रव्य को समभाग पीसकर दो रत्ती प्रमाण की गोली बनाके अदरक के रस से खावे तो दारुण सन्निपात तथा नानाप्रकार की खांसी तथा सिरके रोग नाश होते हैं॥ ७३॥

श्रीचन्द्रामृत लौहम्।

त्रिकटुत्रिफला धान्यं चव्यं जीरकसैन्धवम्।
दिव्यौषधिहतस्यापि तत्तुल्यमयसोरजः॥ ७४॥
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
प्रातः काले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम्॥ ७५॥
एकैकां वटिकां खादेत् रक्तोत्पलरसाप्लुताम्।
नीलोत्पलरसेनैव कुलत्थस्वरसेन च॥ ७६॥
निहन्ति विविधं कासं दोषत्रयसमुद्भवम्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव गरदोषसमुद्भवम्॥ ७७॥
सरक्तमथ नीरक्तं ज्वरं श्वाससमन्वितम्।
भ्रमतृड्दाहशूलघ्नं रुच्यं वन्हिप्रदीपनम्॥ ७८॥
बलवर्णकरं वृष्यं जीर्णज्वर विनाशनम्।
इदं चन्द्रामृतं लौहं चन्द्रनाथेन निर्मितम्॥ ७९॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, धनियां, चव्य, जीरा, सेंधानमक, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। और मनसिल से भस्म किया हुआ लौहभस्म दस तोला ले। इन सबको पीसकर नौ रत्ति भरकी गोली बनाले। प्रातःकाल पवित्र होकर अमृतेश्वरी का चिन्तन कर एक गोली खावे। साथ में लाल कमल का रस पिवे। नीले कमल तथा कुलथी के स्वरस से भी इसे दे सकते हैं। विविधप्रकार की तीनों दोषों से होनेवाली खांसियों को दूर करता है। वातिक, पैत्तिक, विषदोष से हुआ, रक्तसहित वा विना रक्त श्वासयुक्त ज्वर इससे दूर होता है। तथा भ्रम, तृष्णा, दाह,

नाश होता है. यह रुचिवर्द्धक, अग्नि प्रदीपक. बलबर्द्धक, वर्ण बढ़ाने वाला, वृष्य तथा जीर्ण ज्वर को नाश करता है । यह चन्द्रामृतलौह चन्द्रनाथ ने बनाया है ॥ ७४—७६ ॥

श्रीचन्द्रामृतो रसः ।

रसगन्धकलौहानां प्रत्येकं कार्षिकं क्षिपेत् ।
टङ्कणस्य पलं दत्त्वा मरिचस्य पलार्द्धकम् ॥ ८० ॥
त्रिकटु त्रिफला चव्यं धान्यजीरकसैन्धवम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत् ।
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ८१ ॥
प्रातः काले शुचिर्भूत्वा चिन्तयित्वाऽमृतेश्वरीम् ।
एकैकां वटिकां खादेत् रक्तोत्पलरसेन च ॥ ८२ ॥
नीलोत्पलरसेनापि कुलत्थस्वरसेन च ।
छागीक्षीरेण मण्डेन केशराजरसेन च ॥ ८३ ॥
निहन्ति विविधं कासं वातरक्तसमुद्भवम् ।
वातश्लेष्मज्वरं कासं पित्तश्लेष्मज्वरं तथा ।
वातिकं पैत्तिकं वाऽपि गरदोषसमन्वितम् ॥ ८४ ॥
वासा गुडूचिका भार्गी मुस्तकं कण्टकारिका ।
समभागकृतं क्वाथं प्रत्यहं भक्षयेदनु ॥ ८५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्षले । शुद्ध सुहागा एक पल ले, मिरच का चूर्ण आधा पल ले, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चव्य, धानियां जीरा, सेंधानमक प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लें । पहले पारे गंधक की कज्जली करो । फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करो । और बकरी के दूध से पीस-कर नौरत्ति की गोली बनाले । इसे प्रातःकाल पवित्र हो भगवती का चिन्तन कर खावे और साथ में लाल कमल का रस पीवे । या नीले कमल का रस अथवा कुलथी के काथ से, अथवा बकरी के

दूध से पीवे अथवा चावलों के मांड से, अथवा केशराज के रस खावे। इससे विविध कास, वातरक्त, वातश्लेष्म ज्वर, खांसी, पित्त श्लेष्म ज्वर, वातिक, पैत्तिक, विषदोष से हुआ २ ज्वर आदि रोग दूर होते हैं। इस गोली के साथ अनुपान में बांसा, गिलोय, भारंगी, मोथा, छोटी कटेली, इन सब औषधों को समान भाग लेकर इनका क्वाथ बनाकर पीयें। [मात्रा चार रत्ति दें] ॥ ८०-८५ ॥

अमृतमञ्जरी।

हिङ्गुलश्च विषश्चैव कणा मरिचटङ्कणम्।
जातीकोषं समं सर्वं जम्बीररसमर्दितम् ॥ ८६ ॥
रक्तिमानां वटीं कुर्य्यादार्द्रकद्रवसंयुताम्।
वटीद्वयं त्रयं खादेत् सन्निपातं सुदारुणम् ॥ ८७ ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च सामवातं सुदारुणम्।
उष्णतोयानुपानेन सर्वं व्याधिं नियच्छति ॥ ८८ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं सर्वाङ्गग्रहमेव च।
जीर्णज्वरं क्षयं कासं हन्यादमृतमञ्जरी ॥ ८९ ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्धविष, पीपल का चूर्ण, मिरच का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, जावित्री का चूर्ण, सब द्रव्य समभाग लेकर जम्बीरी के रस से खरलकर एक रत्ति भरकी गोली बनालें। दो, तीन गोली अदरख के रसस खावें तो भयंकर सन्निपात, अग्निमांद्य, अजीर्ण, घोर आमवात, इन सबको गरम पानी के अनुपान से नाश करता है। इससे पांच प्रकार की खांसी, श्वास, सर्वांगग्रह, जीर्णज्वर, क्षय, आदि नाश होते हैं। इसका नाम अमृतमञ्जरी है ॥ ८६-८९ ॥

कासान्तकः।

त्रिफला व्योषचूर्णञ्च समभागं प्रकल्पयेत्।
मधुना सह पानात् तु दुष्टकासं नियच्छति ॥ ९० ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर मिलावें। इसे एक माषा भर लेकर शहद से मिलाकर खावें तो दुष्ट खांसी दूर होती है ॥ ९० ॥

बृहच्छृङ्गाराभ्रम् ।

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेशरम् ।
जातीकोषञ्च कर्पूरं लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ ९१ ॥
सुवर्णञ्चापि प्रत्येकं कर्षमात्रं प्रकल्पयेत् ।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णन्तु चतुष्कर्षं प्रयोजयेत् ॥ ९२ ॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वक् धातकी तथा ।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ९३ ॥
कर्षद्वयं वा चैतेषां पिप्पलीक्वाथमर्दितम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ ९४ ॥
अग्निमान्द्यादिकान् रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम् ।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ९५ ॥
ग्रहणीं श्वासकासञ्च हन्याद् यक्ष्माणमेव च ।
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥ ९६ ॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्त्तितम् ।
एतस्याभ्यासमात्रेण निर्व्याधिर्जायते नरः ॥ ९७ ॥

शुद्धपारा एक कर्ष, शुद्ध गंधक एक कर्ष लें। दोनों की कज्जली करें। फिर शुद्ध सुहागा, नागकेशर, जावित्री, कपूर, लौंग, तेजपात, स्वर्णभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लेकर मिला दें। फिर शुद्धकृष्णाभ्रक का भस्म चार कर्ष मिलावे। तालीशपत्र, मोथा, कूठ, जटामांसी दारचीनी, धायके फूल, इलायची के बीज, सोंठ, मिरच, पीपल, हड़, बहेड़ा, आंवला, गजपीपल, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दो २ कर्ष लें। इन सबको पूर्वोक्त द्रव्यों में मिलाकर एकत्र करे और पिप्पली के क्वाथ से सबको मर्दन कर दोरत्ति भरकी गोली बनाले। इसको दारचीनी, के चूर्ण और शहद से मिलाकर खावे तो अग्निमांद्य आदि रोग, अरुचि पाण्डु, कामला, उदर रोग, शोथ, अनाह, ज्वर, ग्रहणी श्वास, कास, यक्ष्मा आदि नाना रोगों को नाश करता है। तथा बल

अग्नि और वर्णको बढ़ाता है । यह बृहच्छृङ्गाराभ्र रस विष्णु भगवा[न] ने बनाया था । इस रसका अभ्यास अर्थात् नित्य सेवन करने[से] मनुष्य व्याधि रहित हो जाता है ॥ ६१—६७ ॥

इति कास—चिकित्सा ॥

अथ हिक्का-श्वास-चिकित्सा ।

सूर्य्यावर्त्तो रसः ।

गन्धकं सूतकं मर्द्य यामैकं कन्यकाद्रवैः ।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्वकल्केन लेपयेत् ॥ १ ॥
दिनैकं हण्डिकायन्त्रे पचेच्छीतं समुद्धरेत् ।
सूर्य्यावर्त्तरसो नाम द्विगुञ्जः श्वासकासनुत् ॥ २ ॥
इन्द्रवारुणिकामूलं देवदारु कटुत्रयम् ।
शर्करासहितं खादेदूर्ध्वश्वासनिवृत्तये ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, दोनों की कज्ज[ली] करे । फिर घीकुमारके रससे एक पहर खरल करे फिर शुद्ध तां[बे के] पतले पत्र दो तोला लेकर उसपर वह पीठी लीप दे और एक हां[डी] में भर मुंह बंदकर दिनभर पकावे । स्वांग शीतल होनेपर उतार [ले ।] इसकी दोरत्ति भरकी मात्रा श्वास और कास को दूर करती है ॥ [१-२ ॥] इन्द्रायण की जड़का चूर्ण; देवदार, सोंठ, मिरच, पीपल, प्रत्येक द्र[व्य] समभाग लेकर खांड से मिलाकर यथाबल खावें तो ऊर्ध्वश्[वास] निवृत्त होता है ॥ ३ ॥

विजयवटी ।

गन्धकं सूतकं लौहं विषमभ्रकमेव च ।
विडङ्गं रेणुकं मुस्तमेला ग्रन्थिक-केशरम् ॥ ४ ॥
त्रिकटु त्रिफला ताम्रं शुद्धं जैपालचित्रकम् ।
एतानि समभागानि द्विगुणो दीयतेगुडः ॥ ५ ॥

कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे।
सूतायां ग्रहणीदोषे शूले पाण्ड्वामये तथा।
हस्तपादादिदाहेषु वटिकेयं प्रशस्यते॥ ६॥
घृतेन पाचयेत मूलं पत्रञ्च वासकस्य च।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय कासे श्वासे क्षये तथा॥ ७॥
देवदारु पिप्पली च शुण्ठीचूर्णं समं तथा।
ऊर्द्ध्वश्वासं सदा हन्ति पिवेदुष्णजलेन च॥ ८॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, लौहभस्म, शुद्धविष, अभ्रक भस्म, विडंग का चूर्ण, रेणुका, मोथा, इलायची, पिप्पलामूल, नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, ताम्र भस्म, शुद्ध जमालगोटा, चीता, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण समभाग ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिलाकर, सबसे दुगुना गुड मिलावें। इसकी मात्रा यथावल दो तीन रत्ति की खावें तो कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, सूतिकारोग, ग्रहणी, शूल पाण्डु, हाथ पैरों की दाह, आदि सब रोग निवृत्त होते हैं॥४॥५॥६॥ बांसे के पत्ते और जड़का चूर्ण घी में पकाकर प्रातःकाल खाये तो कास, श्वास, क्षयरोग नाश हों॥ ७॥ तथा देवदारु, पीपल, सोंठ, सबको समभाग लेकर चूर्णकर गरम जल से पीवें तो ऊर्ध्वश्वास नाश होता है। ये दोनों विजयवटी के अनुपान हैं॥ ८॥

लौहपर्पटी रसः।

भागौ रसस्य गन्धस्य द्वावेको लौहभस्मतः।
एतद्घृष्टंद्रवीभूतं मृद्वग्नौ कदलीदले॥ ९॥
पातयेदगोमयगते तथैवोपरियोजयेत्।
ततः पिष्ट्वा द्रवैरेभिः सप्तधा भावयेत् पृथक्॥ १०॥
भार्गी–मुण्डी–मुनि–वरा जया निर्गुण्डिका तथा।
व्योषवासककन्यार्द्र–द्रवैस्तस्मात् पुटे पचेत्॥ ११॥

आगन्धं खर्परे ताम्रे पर्पटाख्यो रसो भवेत् ।
सर्वरोगहरस्तैस्तैरनुपानैर्हि माषकैः ॥ १२ ॥
ताम्बूलीपत्रसहितः श्वासकासहरः परः ।
सकणः सुरसाक्काथोऽनुपानं वासकाजलम् ॥ १३ ॥
अम्लिकातैलवार्त्ताकु-कूष्माण्डं कदलीफलम् ।
वर्ज्यं मांसरसं सर्वं पथ्यं दद्यात् विचक्षणः ।
वर्जयेच्च विशेषेण कफकृत् स्त्रीसुखादिकम् ॥ १४ ॥

शुद्ध पारा दो तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, लोह भस्म एक तोला ले। पहले कज्जली कर फिर लौह भस्म मिलाकर खरल करे। सबको इकट्ठा कर लोहेकी कड़छी में रख आगपर पिघलावे पिघले ही गोबर पर रखे हुए केले के पत्तेपर उलटा देवे और ऊपर से केले के पत्ते को रख दवादे। इस प्रकार रस पर्पटी के समान लोहपर्पटी बनाले। फिर इसका चूर्ण करे और आगे लिखे द्रव्यों से भावना देवें। भारंगी, मुण्डी, अगस्त्य, त्रिफला, भांग, निर्गुण्डी, त्रिकुटा, बांसा, घीकुमार, अदरक इनमें से प्रत्येक के रस या क्काथसे सात वार भावना दो। फिर सुखाकर तांबे के पात्र में भर सम्पुटकर छोटा पुट दें। जब गंधक की गन्ध निकलने लगे। तभी निकाल लें। और स्वांग शीतल होनेपर खोलकर पीसलें और शीशी में डाल रखें। इस लौहपर्पटी रसको उचित मात्रा में रोगानुसार भिन्न २ एक माशे भर अनुपान से दें तो सब रोग नाश करता है। पानके पत्तों के रस के साथ दें तो श्वास तथा कास रोग नाश होता है। अनुपान में तुलसी के क्काथ में पिप्पली का चूर्ण डालकर पीवें। अथवा बांसे का रस पीवें इमली, तेल, बैंगन, पेठा, केला ये पदार्थ बर्जित हैं। मांसरस तथा अन्य पथ्य वस्तुएं पथ्य हैं। विशेषकर कफवर्द्धक वस्तु न देवे। तथा स्त्री सुख आदि से बचा रहे॥ ६—१४॥

ताम्रपर्पटी।

लौहस्थाने ताम्रयोगात् ताम्रपर्पटिका भवेत् ॥ १५ ॥

पूर्वोक्त कज्जली में लौहभस्म के स्थान में ताम्रभस्म डालें

ताम्र पर्पटी बन जाती है इससे भी हिचकी तथा श्वास नाश होते हैं ॥ १५ ॥

पिप्पल्याद्यं लौहम्।

पिप्पल्यामलकी द्राक्षा कोलास्थि मधु शर्करा।
विडङ्गपुष्करैर्युक्तं लौहंहन्ति सुदारुणाम्।
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिरात्रेण न संशयः ॥ १६ ॥

पिप्पली का चूर्ण, आंवले का चूर्ण, किशमिश, बेरकी गुठलीकी गिरी, मुलट्ठी, खांड, वायविडंग, पुष्कर मूल, प्रत्येक द्रव्य समभाग सबके तुल्य लौह भस्म, मिलाकर खरल करे। इसकी उचित मात्रा खाने से भयंकर वमन हिचकी, तृष्णा, तीन रातमें निःसन्देह नाश हो जाते हैं ॥ १६ ॥

श्वासकुठारो रसः।

टङ्कणं पारदं गन्धं शिलां विषकटुत्रिकम्।
निष्पिष्य वटिका कार्य्या वाणगुञ्जाप्रमाणतः ॥ १७ ॥
उष्णोदकं पिबेच्चानु क्षुद्राक्वाथमथापि वा।
कासं पञ्चविधं हन्ति श्वासं श्लेष्मसमुद्भवम्।
शिरोरोगं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ॥ १८ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सुहागा, शुद्ध मनसिल, शुद्धविष, सोंठ का चूर्ण, मिरच, पीपल का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर घोटकर एकरत्ति भरकी गोली बनावें। इसे खाकर ऊपर से छोटी कटेली का क्वाथ या गरम जल पीवें। तो पांचों प्रकार की खांसी तथा कफसे होनेवाले श्वास रोग को दूर करता है। तथा शिरोरोग को ऐसे नाश करता है जैसे विजली वृक्षों का नाश करता है ॥ १७ ॥ १८ ॥

श्वासकासचिन्तामणिः।

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत्।
पारदार्द्धं मौक्तिकञ्च सूताद् द्विगुणगन्धकः ॥ १९ ॥
अभ्रञ्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम्।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन च पृथक् ॥ २० ॥

यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।
भावयेत् सप्तवारञ्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्वासकासविमर्दिनीम् ॥ २१ ॥

पारा, स्वर्णमाक्षिक भस्म, स्वर्णभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तो
लें। मोती भस्म आधा तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, अभ्रकभस्म
तोला, लौहभस्म चार तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्ज
करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर छोटी कटेली
रससे, बकरी के दूधसे, मुलट्ठी के रससे, पानके रससे पृथ
सातवार भावना देकर दोरत्ति भरकी गोली बनावे और पीपल,श
मिलाकर खावे तो श्वास तथा कास दोनों नष्ट होते हैं ॥ १९-२१॥

अन्यः श्वासकुठारः ।

रसो गन्धो विषं टङ्कं शिलोषणकटुत्रयम् ।
सर्वं सम्मर्द्य दातव्योरसः श्वासकुठारकः ।
वातश्लेष्मसमुद्भूतं श्वासं कासं क्षयं जयेत् ॥ २२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्धविष, शुद्धसुहागा,
मनसिल, मिरच, का चूर्ण, सोंठ, मिरच, पीपल का चूर्ण, इन स
से प्रत्येक द्रव्य को समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली
फिर अन्य द्रव्यों को मिला पीसकर एकरत्ति की गोली जलसे
लें। इसे उचित अनुपान से दें तो वातश्लेष्म से उत्पन्न श्वास,का
तथा क्षयरोग नाश होते हैं ॥ २२ ॥

श्वासकुठारो रसः ।

रसं गन्धो विषञ्चैव टङ्कणं समनःशिलम् ।
एतानि समभागानि मरिचं तच्चतुर्गुणम् ॥ २३ ॥
त्रिभागं त्र्यूषणं ज्ञेयं खल्ले सर्वं विचूर्णयेत् ।
रसः श्वासकुठारोऽयं द्विगुञ्जः श्वासकासजित् ॥ २४ ॥
गता संज्ञा यदा पुंसां तदा नस्यं प्रदापयेत् ।
घ्रापयेन्नासिकारन्ध्रे संज्ञाजननमुत्तमम् ॥ २५ ॥

प्रतिश्यायं क्षतक्षीणमेकादशविधं क्षयम्।
हृद्रोगं श्वासशूलञ्च स्वरभेदं सुदारुणम्।
सन्निपातं तथा घोरं तन्द्रामोहान्वितं जयेत्॥ २६॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। दोनों की कज्जली करे। फिर शुद्धविष, शुद्ध सुहागा, शुद्ध मनसिल, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर कज्जली में मिला दें। फिर मिरच चूर्ण चार तोला लें और सोंठ चूर्ण तीन तोला, तथा फिर मिरच का चूर्ण तीन तोला, पीपल का चूर्ण तीन तोला, लेकर सब द्रव्यों को एकत्र मिलाकर खरल कर रखें। इसकी दोरत्ति भरकी मात्रा देने से श्वास तथा कासरोग नष्ट होजाता है॥ जब रोगी संज्ञा रहित होजावे तो इसकी नस्य देवे। इसे नाकमें सुंघाने से शीघ्र संज्ञा होजाता है। प्रतिश्याय अर्थात् जुकाम, क्षतक्षीण, ग्यारह लक्षणयुक्त क्षयरोग, हृदय का रोग, श्वास, शूल, भयंकर स्वरभेद, घोर सन्निपात जिसमें तन्द्रा और मोह भी हो उसे दूर करता है॥ २३—२६॥

॥ इति हिक्का श्वास चिकित्सा॥

अथ स्वरभेद-चिकित्सा।

भैरवो रसः।

रसं गन्धं विषं टङ्कं मरिचं चव्यचित्रकम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्य वटिकां ततः॥ १॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत् तोयानुपानतः।
स्वरभेदं निहन्त्याशु श्वासं कासं सुदुस्तरम्॥ २॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्धविष, शुद्ध सुहागा, मिरच का चूर्ण चव्य, और चीते का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। सबसे पहले पारे गंधक की कज्जली बनायें फिर अन्य पदार्थ मिलाकर घोटें। फिर अदरक के स्वरस से मर्दनकर तीनरत्ति प्रमाण की गोली बनावें इसकी एक गोली खाकर ऊपर से पानी पीवें तो स्वर भेद शीघ्र

नाश होता है। तथा खांसी और दमा भी नाश होता है। [र
मात्रा एकरत्ति की दें] ॥ १ ॥ २ ॥

चव्यादिचूर्णम् ।

चव्याम्लवेतसकटुत्रय तिन्तिड़ीक-
तालीशजीरकतुगादहनैः समांशैः ।
चूर्णं गुडप्रमृदितं त्रिसुगन्धियुक्तं,
वैस्वर्य्यपीनस-कफारुचिषु प्रशस्तम् ॥ ३ ॥
अनेनैवानुपानेन भस्मसूतं प्रयोजयेत् ।
योगवाहिरसश्चापि योजयन्ति भिषग्वराः ॥ ४ ॥
सशर्करं शुण्ठिचूर्णं क्षौद्रेण सह योजितम् ।
कोकिलस्वर एव स्याद् गुडिकाशुक्तमात्रतः ॥ ५ ॥

चव्य, अम्लवेत, सोंठ, मिरच, पीपल, इमली, तालीशपत्र,
वंशलोचन, चीता, इलायची, दारचीनी, तेजपात, प्रत्येक द्रव्य
चूर्ण समभाग लेकर, सारे द्रव्यों के बराबर गुड़ मिलाकर एक मा
भरकी गोली बना लें। इसे खावें तो स्वर भंग, पीनस, कफ व
अरुचि आदिरोग ठीक होते हैं ॥ ३ ॥ इसी गोली के अनुपान
यदि रससिन्दूर एकरत्ति खावें तोभी लाभ होता है। अथवा इ
अनुपान से अन्य योगवाहीरस खावें तोभी स्वरभंग आदि ठी
होते हैं ॥ ४ ॥ यदि खांड के साथ सोंठ का चूर्ण और शहद मि
कर खावें तो इसे खाने मात्र सेही गला मीठा होकर कोयल के स
स्वर होजाता है ॥ ५ ॥

॥ इति स्वरभेद चिकित्सा ॥

अथ अरोचक-चिकित्सा ।

सुधानिधिः रसः ।

रसगन्धौ समौ शुद्धौ दन्तीक्वाथेन भावयेत् ।
जम्बीरस्य रसेनैव आर्द्रकस्य रसेन च ॥ १ ॥

मातुलुङ्गस्य तोयेन तथा मञ्जरसेन च।
पश्चाद्विशोष्य सर्वांशं टङ्कणश्चावचारयेत्।
देवपुष्पं बाणमितं रसपादं मृतामृतम्।
माषमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ ३ ॥
सर्वारोचक शूलार्त्ति–सामवातं सुदारुणम्।
विसूचीञ्चाग्निमान्द्यञ्च भक्तद्वेषञ्च दारुणम्।
रसो ऽयं वारयत्याशु केशरी करिणं यथा ॥ ४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, प्रत्येक चार २ तोला लेकर कज्जली करें। और दन्तीमूल के क्वाथ से भावना दे। फिर जम्बीर के रससे भावना दे, फिर अदरक के रससे भावना दे फिर मातुलुङ्ग नीबू के रस से भावना दे फिर थोहर के दूध से भावना देकर सुखाले। फिर शुद्ध सुहागा आठ तोले, और लौंगका चूर्ण बीस तोले, तथा शुद्ध विष एक तोला ले। इन सबको पीसकर पूर्वोक्त द्रव्य में मिलायें। इसकी एक माषा भर मात्रा लेकर सोंठ के चूर्ण वा गुड से खावें तो सब प्रकार की अरुचि, शूल, आमवात, विसूची, अग्निमांद्य, भयंकर अरुचि अर्थात् खाने में इच्छा न होना, इन सब विकारों को यह रस ऐसे दूर करता है जैसे सिंह हाथियों को दूर करता है॥ [इसकी मात्रा चार रत्ति तक दें] ॥ १—४ ॥

सुलोचनाभ्रम।

पलं सुजीर्णं गगनन्तु वज्रकं तेजोवतीकोलमुशीरदाड़िमम्।
धात्र्यम्लरोलीरुचकं पृथग्दशपलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥५॥
अरोचकं वातकफत्रिदोषजं पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम्।
कासं स्वराघातमुरोग्रहं रुजं श्वासं बलासञ्च यकृत् भगन्दरम् ॥६॥
प्लीहाग्निमान्द्यं श्वयथुं समीरणं मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमिम्।
शूलाम्लपित्तक्षयरोगमुद्धतं सरक्तपित्तं वमिदाहमश्मरीम्।
निहन्ति चार्शांसि सुलोचनाभ्रकं बलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥७॥

अभ्रकभस्म, चव्य का चूर्ण, बेर की गुठली की गिरी, अनारदाना, आंवला, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल ले चाङ्गेरी का रस दस तोला लें तथा बिजौरे नींबू के दस तोला से क्रमशः खरल करके गोली बनावें। इसके सेवनसे वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज तथा अप्रिय गंध से होने वाली अरुचि नाश होती है। तथा खांसी, स्वर बैठ जाना, उरोग्रह पीड़ा, श्वास, कफ, भगन्दर, तिल्ली, अग्निमांद्य, सूजन, वातरोग, प्रमेह, कुष्ठ, क्रमि, शूल, अम्लपित्त, बढ़ा हुआ क्षयरोग, रक्तपित्त, वमन, पथरी, बवासीर, इन सब रोगों को नाश करता है। तथा बलकारक और वृष्यतम है। इसका नाम सुलोचनाभ्र रसायन भी है। की मात्रा दो रत्ति की दें] ॥५—७॥

शुद्धसूत योगः ।

ससूतमरुचिघ्नं स्यात् तिन्तिड़ीकगुडोषणम् ।
मृद्वीका जीरकं कृष्णा मातुलुङ्गाम्लवेतसम् ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, पकी इमली, गुड, काली मिरचका चूर्ण, किशमिश, जीरे का चूर्ण, पीपल का चूर्ण, मातुलुङ्ग नींबू का रस, अम्लवेत प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर खरल करके चार रत्ति भर खाने से अरुचि आदि रोग दूर होते हैं ॥ ८ ॥

इति इत्यरोचक चिकित्सा ॥

अथ छर्दिरोगचिकित्सा ।

छर्दिसंहारो रसः ।

अजाजी धान्यपथ्याभिः सक्षुद्राभिः कटुत्रिकैः ।
एभिः सार्द्धं भसस्सूतः सेव्यो वान्तिप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, जीरा, धनियां, हरड़, सोंठ, मिरच, पीपल, छोटी कटेली इन सब में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर, चार रत्ति मात्रा खावें तो वमनरोग नष्ट होता है ॥ १ ॥

इति छर्दि चिकित्सा ।

अथ तृष्णारोगचिकित्सा।

महोदधिरसः।

ताम्र चक्रिकया वङ्गं सूतं तालं सतुत्थकम्।
वटाङ्कुररसैर्भाव्यं तृष्णाहृत् वल्लमात्रतः॥ १॥
सक्षौद्रमाम्रजम्बूत्थं पिबेत् क्वाथं पलोन्मितम्।
सकृष्णामधुना कुर्य्यात् गण्डूषं शीतले स्थितः॥ २॥

ताम्रभस्म, वंगभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध हड़ताल, शुद्धनीलाथोथा प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर बड़ के अंकुरों के रससे भावना दे। इसकी डेढ़ रत्ति की मात्रा खाने से तृष्णा रोग दूर होता है॥ १॥ आम और जामुन के पत्तों के पल भर क्वाथ में शहद मिला कर पीवे तो तृष्णा नष्ट होती है॥ और जब यही क्वाथ ठण्डा होजाये तब इसमें पीपल का चूर्ण और शहद मिला कर गण्डूष धारण करे तो तृष्णा शान्त होजाती है॥ २॥

कुमुदेश्वरो रसः।

मृतताम्रस्य भागौ द्वौ भागैकं वङ्गभस्मकम्।
यष्टीमधुरसैर्भाव्यं शुष्कं माषार्द्धकं शुभम्।
सेवयेच्चानुपानेन वक्ष्यमाणेन बुद्धिमान्॥ ३॥
चन्दनं शारिवां मुस्तं क्षुद्रैलां नागकेशरम्।
सर्वतुल्यां तथा लाजां पचेत् षोडशिकैर्जलैः॥ ४॥
अर्द्धशेषं हरेत् क्वाथं सिताक्षौद्रयुतन्तु तत्।
छर्दिं तृष्णां निहन्त्याशु रसोऽयं कुमुदेश्वरः॥ ५॥

ताम्र भस्म दो तोला, वंगभस्म एक तोला, दोनों को खरलकर मुलहठी के रसमें भावना देकर आधा माषाभर लेकर खावे और साथमें आगे लिखा हुआ अनुपान पीवे तो वमन, तथा प्यास शान्त होती है। अनुपान के लिये लालचन्दन, शारिवा, मोथा, छोटी इलायची, नागकेशर, इन सब द्रव्यों को एक २ भागले और सबके

समान धानकी खीलें लेकर, सबसे सोलह गुणा जल लेकर पकावे आधा बचनेपर उतार कर उसमें मिश्री तथा शहद मिलाकर पीवे इस रसका नाम कुमुदेश्वर रस है । मात्रा एकरत्ती दें ॥ ३-५॥

इति तृष्णाचिकित्सा ॥

अथ मूर्च्छारोग-चिकित्सा ।

सुधानिधि रसः ।

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।
शीतसेकावगाहादि सर्वं वा शीतलं भजेत् ।
सुधानिधि रसो नाम मदमूर्च्छा विनाशनः ॥ १ ॥

पिप्पली का चूर्ण और शहद लेकर रससिन्दूर से मिलाकर सेवन करे तो मूर्च्छारोग दूर होता है ॥ तथा शीतल जल छिड़कना स्नान करना तथा सब क्रिया शीतल करनी चाहिये । यह सुधानिधि रस मद तथा मूर्च्छा को नाश करता है ॥ १ ॥

इति मूर्च्छा चिकित्सा ॥

अथ मदात्यय-चिकित्सा ।

मदात्ययभञ्जनो रसः ।

सचव्यहिङ्गुरुचकं धन्याकं विश्वदीप्यकम् ।
चूर्णं ससूतं मद्येन पीतं पानात्ययं जयेत् ॥ १ ॥

रससिन्दूर, चव्य, हींग, सौंचल लवण, धनियां, सोंठ, अजायन, प्रत्येकद्रव्य समभाग लेकर मिलाकर मद्यसे सेवन करे तो मदात्यय रोग दूर होता है ॥ १ ॥

अष्टाङ्गलवणम् ।

सौवर्चलमजाज्यश्च वृक्षाम्लं साम्लवेतसम् ।
त्वगेला मरिचार्द्धांशं शर्करामधुयोजितम् ॥ २ ॥

हितं लवणमष्टाङ्गमग्निसन्दीपनं परम् ।
मदात्यये कफप्राये दद्यात् स्रोतोविशोधनम् ॥ ३ ॥

सौंचल लवण, जीरा, वृक्षाम्ल, अम्लवेत प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला, दारचीनी, इलायची, मिरच, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण आधा २ तोला ले मिलाकर खांड और शहद मिलाकर खावें तो यह अष्टाङ्ग लवण परम अग्निदीपक है। कफ प्राय मदात्यय रोग में देना चाहिये। इससे स्रोत विशुद्ध होजाते हैं ॥ २ ३ ॥

इति मदात्यय चिकित्सा ॥

अथ दाह-चिकित्सा

दाहान्तको रसः ।

सूतात् पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सुशोभनम् ।
जम्बीरस्वरसैर्मर्द्य सूततुल्यञ्च गन्धकम् ॥ १ ॥
नागवल्लीदलैः पिष्ट्वा ताम्रपत्रीं प्रलेपयेत् ।
प्रपुटेद् भूधरेयंत्रे यावद् भस्मत्वमाप्नुयात् ॥ २ ॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैस्त्र्यूषणेन च योजयेत् ।
निहन्ति दाहसन्तापं मूर्च्छां पित्तसमुद्भवाम् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा पांच तोला, शुद्ध गंधक पांच तोला, दोनों की कज्जली कर और नीबू के रससे घोटकर भावित करें। फिर पान के रससे घोटकर शुद्ध ताम्रपत्र एक तोला ले, उसपर लेप करें। और भूधरं यंत्र में पुट देते रहें जबतक ताम्र भस्म न होजाये। इसे दोरत्ति भर लेकर अदरक के रस तथा त्रिकुटा से मिलाकर खावें तो दाह, सन्ताप तथा पित्तजन्य मूर्च्छा दूर होती है ॥ २ ॥ ३ ॥

॥ इति दाहचिकित्सा ॥

अथोन्मादरोगचिकित्सा ।

उन्मादगजाङ्कुशो रसः ।

त्रिदिनं कनकद्रावैर्महाराष्ट्रीद्रवैः पुनः ।
विषमुष्टिजलैः सूतं समुत्थाप्यार्कचक्रिकाम् ॥ १ ॥
कृत्वा तप्तां सगन्धां तां युक्त्या बन्धनमाचरेत् ।
तत्समं कानकं बीजमभ्रकं गन्धकं विषम् ॥ २ ॥
मर्दयेत् त्रिदिनं सर्वं वल्लमात्रं प्रयोजयेत् ।
दोषोन्मादं द्रुतं हन्ति भूतोन्मादं विशेषतः ॥ ३ ॥

यथेष्ट शुद्धपारा लेकर उसे धतूरे के रससे, ब्रह्मदण्डी के र[illegible] तथा कुचले के रससे एक २ दिन घोटकर ऊर्ध्वपातन करे। फिर [illegible] पारे के समभाग शुद्ध गंधक मिलाकर कज्जली करें। और इसको [illegible] ताम्बे के शराव में रखकर लघु पुट देवे। फिर कज्जली निकाल[illegible] इसके साथ धतूरे के बीज, अभ्रकभस्म, शुद्धगंधक, शुद्धविष स[illegible] भाग मिलाकर तीनदिन तक मर्दन कर डेढ़रत्ति भरकी गोली ब[illegible] इसे सेवन करें तो त्रिदोष से उत्पन्न उन्माद तथा भूतोन्माद वि[illegible] करके नष्ट होता है ॥ १—३ ॥

भूताङ्कुशो रसः ।

सूतायस्ताम्रमभ्रञ्च मुक्तां चापि समं समम् ।
सूतपादोत्तमं वज्रं शिलागन्धकतालकम् ॥ ४ ॥
तुत्थं रसाञ्जनं शुद्धमब्धिफेनं शिलाञ्जनम् ।
पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥ ५ ॥
भृङ्गराजचित्रवज्रि-दुग्धेनापि विमर्दयेत् ।
दिनान्ते पिण्डिकां कृत्वा रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ॥ ६ ॥
भूताङ्कुशरसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वयं लिहेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनापि भूतोन्मादनिवारणम् ॥ ७ ॥

पिप्पल्याक्तं पिवेच्चानु दशमूलकषायकम्।
स्वेदयेत् कटुतुम्ब्या च तीक्ष्णं रूक्षञ्च वर्जयेत् ॥ ८ ॥
माहिषं च घृतं क्षीरं गुर्वन्नमपि भक्षयेत्।
अभ्यङ्गः कटुतैलेन हितो भूताङ्कुशो रसः ॥ ९ ॥

शुद्धपारा, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, मोती भस्म, प्रत्येक द्रव्य चार २ तोला, हीराभस्म एक तोला, शुद्धमनसिल, शुद्धगन्धक, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध नीलाथोथा, रसौंत, शुद्ध समुद्रफेन, शुद्ध मनसिल पांचोंनमक प्रत्येक द्रव्यच्चार तोला लें। पहले पारा गंधककी कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला के भांगरा, चीता तथा थोहर के रससे तथा दूधसे खूब मर्दन करे। फिर पिण्ड बनाकर सम्पुट में रख गज-पुट में फूंक दे। यह भूताङ्कुश रस नित्य दोरत्ति लेकर अदरक के रससे खावे। इससे भूतोन्माद नष्ट होता है। पीछे से दशमूल के क्वाथ में पिप्पली का चूर्ण डालकर पीवें। कड़वी तुम्बी से शरीर का स्वेदन करें। और तीक्ष्ण तथा रूखी वस्तु न खावें। भैंस का घी, भैंस का दूध, तथा भारी अन्न खावें पीवें। इस भूताङ्कुश रसके सेवन के समय शरीर पर कड़वे तेलकी भी मालिश करें ॥ ४—९ ॥

उन्माद भञ्जिनी।

शुद्धं मनःशिलाचूर्णं सैन्धवं कटुरोहिणी।
वचा शिरीषवीजञ्च हिङ्गु च श्वेतसर्षपः ॥ १० ॥
करञ्जवीजं त्रिकटु मलं पारावतस्य च।
एतानि समभागानि गोमूत्रैः वटिकां कुरु ॥ ११ ॥
गिरिमल्लीवीजसमां छायाशुष्कांश्च कारयेत्।
प्रातः सन्ध्यानिशाकाले चक्षुषोरञ्जनं हितम् ॥ १२ ॥
मधुरादिरसेनाञ्ज्यं रात्रावपि जलेन च।
वटिकैका समाख्याता नाम्ना चोन्मादभञ्जिनी।
चातुर्थकमपस्मारमथोन्मादं विनाशयेत् ॥ १३ ॥

शुद्ध मनसिल, सेंधानमक, कुटकी, बच, सिरस के बीज, हींग, श्वेत सरसों, करंज के बीज, सोंठ, मिरच, पीपल, कबूतर की बीट, प्रत्येक द्रव्य समभाग पीसकर गोमूत्र से मर्दन करे और इन्द्रजौ के समान बत्ती बनाकर छाया में सुखालें। इसे प्रातःकाल, सायंकाल तथा रातको आंखों में लगावें। मधुर आदि रसों से और जल के मिलाकर रातको अंजन करे। इस गोली का नाम उन्मादभंजिनी है यह चातुर्थक ज्वर, अपस्मार, तथा उन्माद रोग को भी नाश करती है ॥ १०—१३ ॥

त्रिकत्रयादि लौहम्।

त्रिकत्रयसमायुक्तं जीवनीययुतं त्वयः ।
हन्त्यपस्मारमुन्मादं वातव्याधिं सुदुस्तरम् ॥ १४ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, विडंग, चीता, मोथा और जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, मुलहठी, इन सब द्रव्यों का चूर्ण सम भाग लें, और सबके समान लौहभस्म मिलावें तो उन्माद, अपस्मार और भयंकर वातव्याधि दूर होती है ॥ १४ ॥

उन्मादभञ्जनो रसः ।

त्रिकटुत्रिफला चैव गजपिप्पलिका तथा ।
देवदारु विडङ्गश्च किरातः कटुकी तथा ॥ १५ ॥
कण्टकारी च यष्टीन्द्र–यवं चित्रकमेव च ।
बला च पिप्पलीमूलं मूलञ्च वीरणस्य च ॥ १६ ॥
शोभाञ्जनस्य बीजानि त्रिवृता चेन्द्रवारुणी ।
वङ्गं रूप्यमभ्रञ्च प्रवालं समभागिकम् ॥ १७ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं सलिलेन विमर्दयेत् ।
उन्मादमपि भूतोत्थमुन्मादं वातजं तथा ॥ १८ ॥
अपस्मारं तथा कार्श्यं रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
नाशयेदविकल्पेन रसश्चोन्मादभञ्जनः ॥ १९ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, गजपीपल देवदारु विडंग, चिरायता, कुटकी, छोटी कटेली, मुलहठी, इन्द्रजौ, चीता, बला, पीपलामूल, खस, सुहांजने के बीज त्रिवृत, इन्द्रायण, बंग भस्म, चांदी भस्म, अभ्रक भस्म, मूंगा भस्म, इन सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग ले, और सबके बराबर लौह भस्म मिलाकर जलसे घोटकर गोली बनालें। यह उन्माद, भूतोन्माद, वातज उन्माद, अपस्मार कृशता, तथा घोर रक्तपित्त, इन सबको निश्चय से यह रस नाश करता है। इसका नाम उन्मादभञ्जन रस है॥ १५—१६॥

चतुर्भुजरसः।

मृतसूतस्य भागौ द्वौ भागैकं हेमभस्मकम्।
शिलाकस्तूरिका तालं प्रत्येकं हेमतुल्यकम्॥ २०॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यया मर्दयेद्दिनम्।
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यगर्भे दिनत्रयम्॥ २१॥
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य सर्वरोगेषु योजयेत्।
एतद्रसायनवरं त्रिफलामधुमर्दितम्॥ २२॥
तद् यथाग्निबलं खादेत् बलीपलितनाशनम्।
अपस्मारे ज्वरे कासे शोषे मन्दानले क्षये॥ २३॥
हस्तकम्पे शिरः कम्पे गात्रकम्पे विशेषतः।
वातपित्तसमुत्थांश्च कफजान् नाशयेद् ध्रुवम्॥ २४॥
सर्वौषधिप्रयोगैर्ये व्याधयो न प्रसाधिताः।
कर्मभिः पञ्चभिश्चैव मन्त्रौषधिप्रयोगतः॥ २५॥
सर्वास्तान् नाशयत्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा।
चतुर्भुजरसो नाम महेशेन प्रकाशितः॥ २६॥

रससिन्दूर दो तोला, स्वर्ण भस्म एक तोला, शुद्ध मनशिल, कस्तूरी, शुद्ध हड़ताल प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। सबको खरलमें घोटकर घीकुमार के रससे खूब मर्दन करें फिर गोला बनावें और

उसके ऊपर एरण्ड के पत्तों को लपेट दें। फिर इस गोले को धान्यों के ढेर में तीनदिन रखें। फिर निकालकर पत्ते खोलकर फेंकदें और अन्दर से औषध निकालकर पीसकर रखें। इसे सब रोगों में देवें। इस श्रेष्ठ रसायन को त्रिफला और शहद से मिलाकर अग्निबल के अनुसार मात्रा से खायें तो बली और पलित रोग दूर होते हैं। अपस्मार ज्वर, खांसी, शोष, मन्दाग्नि, क्षयरोग, हाथ कांपना, सिर कांपना, तथा सब अंगों का कांपना, इन रोगों में विशेषकर देवें तथा वातपित्त कफसे उत्पन्न हुये रोगों को यह रस निश्चय से नाश करता है। सब औषध देने सेभी जो रोग दूर न हुए हों जो पंचकर्म और मंत्र औषधि से भी सिद्ध न हुए हों वे इस औषध से ऐसे नष्ट होजाते हैं। जैसे वृक्षको बिजली नाश करती है। यह चतुर्भुज रस महेश ने प्रकाशित किया है॥ २०---२६॥

उन्मादपर्पटी रसः।

कृष्णधुस्तूरजैर्बीजैः पञ्चभिः पर्पटीरसः।
सम्प्रयोज्यः प्रशमयेदुन्मादं भूतसम्भवम्॥ २७॥

काले धतूरे के पांच बीज, रसपर्पटी के साथ मिलाकर खाने से भूतोन्माद रोग दूर होता है॥ २७॥

इति उन्माद रोग चिकित्सा॥

अथापस्मार रोग-चिकित्सा।

भूतभैरवो रसः।

मृतसूतार्कलौहञ्च शिलगन्धकतालकम्।
रसाञ्जनञ्च तुल्यांशं नरमूत्रेणमर्दयेत्॥ १॥
तद्गोलं द्विगुणं गन्धं लोहपात्रे क्षणं पचेत्।
पञ्चगुञ्जामितं खादेदपसारहरं परम्॥ २॥
हिङ्गु सौवर्चलं व्योषं नरमूत्रेण सर्पिषा।
कर्षमात्रं पिबेच्चानु रसोऽयं भूतभैरवः॥ ३॥

रससिन्दूर, ताम्र भस्म, लौह भस्म, शुद्ध मनशिल, शुद्धगंधक, शुद्ध हड़ताल रसौंत, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पुरुष के मूत्र में खरल करें, और गोला बनालें। फिर इस गोले से दुगुना गंधक मिलाकर थोड़ी देर आगपर पकावे। फिर निकालकर पांचरत्ति प्रमाण खावें तो अपस्मार रोगको नाश करता है। इसके साथ हींग, सौंचल नमक, त्रिकुटा, पुरुष का मूत्र तथा घी इन सबको मिलाकर एक कर्षभर अनुपानमें पिये। इस रसका नाम भूतभैरवरस है ॥१-३॥

सूतभस्मप्रयोगः ।

शङ्खपुष्पी वचा ब्राह्मी कुष्ठमेलारसैः सह ।
सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाद्वयमानतः ।
सर्वापस्मारनाशाय महादेवेन भाषितः ॥ ४ ॥

शखपुष्पी, बच, ब्राह्मी, कूठ, इलायची, इनको समभाग ले क्वाथ बना कर इसके साथ रससिन्दूर दो रत्ति मिलाकर खावे तो सब प्रकार के अपस्मार नष्ट होते हैं। ऐसा महादेव जी ने कहा है ॥४॥

इन्द्रब्रह्मवटी ।

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं तारं ताप्यं विषं समम् ।
पद्मकेशरसंयुक्तं दिनैकं मर्दयेत् द्रवैः ॥ ५ ॥
स्नुह्यग्निविजयैरण्ड-वचानिष्पावशूरणैः ।
निर्गुण्ड्याश्च द्रवैर्मर्द्य तद्गोलं पाचयेत् पुनः ॥ ६ ॥
कङ्गुनीसर्षपोत्थेन तैलेन गन्धसंयुतम् ।
ततः पक्त्वा समुद्धृत्य चणमात्रा वटी कृता ॥ ७ ॥
इन्द्रब्रह्मवटी नाम भक्षयेदार्द्रकद्रवैः ।
दशमूलकषायश्च कणायुक्तं पिबेदनु ।
अपस्मारं जयत्याशु यथा सूर्योदयः तमः ॥ ८ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, तीक्ष्णलौह भस्म, रौप्यभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध विष, पद्मकेशर, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर खरल करे। फिर इस थोहर, चीता, भांग, हरड़, बच, सेम, ज़िमीं-

कंद, संभालु, इन सब द्रव्यों के रस में क्रमशः एक २ दिन घोट
गोला बनावें । उस गोले को सरसों के और कंगनी के तेल में गन्ध
सहित पकावें । पक चुकने के पीछे निकाल कर चने के सम
गोली बनावें । इस रसका नाम इन्द्रब्रह्म वटी है । इसे अदरख
रस से खावें । इसके पीछे दशमूल का काथ पीपल का चूर्ण डा
कर पीये तो अपस्मार शीघ्र नाश होता है । जैसे सूर्योदय
अन्धकार नाश होता है ॥ ५—८ ॥

वातकुलान्तकः ।

मृगनाभिः शिला नागकेशरं कलिवृत्तजम् ।
पारदः गन्धको जाती फलमेला लवङ्गकम् ॥ ९ ॥
प्रत्येकं कार्षिकश्चैव श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु वटीं कुर्य्यात् द्विरक्तिकाम् ॥
यथाव्याध्यनुपानेन योजयेच्च चिकित्सकः ॥ १० ॥
अपस्मारे महाघोरे मूर्च्छारोगे च शस्यते ।
वातजान् सर्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात् ॥ ११ ॥
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्त्तते ।
ब्रह्मणा निर्मितः पूर्वं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ १२ ॥

कस्तूरी, शुद्ध मनशिल, नागकेशर, बहेड़ा, शुद्धपारा, शुद्धगंधक
जायफल, इलायची लौंग प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लें । पहले
गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें और
जलसे घोटकर दोरत्ती भरकी गोली बनालें । रोगानुसार विशेष
अनुपानों से इसे खिलावें तो यह महाघोर अपस्मार तथा घोर मूर्च्छा
रोगमें लाभ करती है वातरोगों को कुछही दिनों में आराम
देती है । इससे श्रेष्ठ औषध अपस्मार के लिये कोई नहीं है।
इसे ब्रह्मा ने पहले बनाया था।इसका नाम वातकुलान्तक रसहै।

इति अपस्मार चिकित्सा ॥

अथ वातव्याधि-चिकित्सा।

द्विगुणाख्यो रसः।

गन्धकात् द्विगुणं सूतं शुद्धं मृद्वग्निना क्षणम्।
पक्त्वा ऽवतार्य्य सञ्चूर्ण्य चैतत् तुल्याऽभयाऽन्वितम् ॥१॥
सप्तगुञ्जामितं खादेत् वर्द्धयेच्च दिने दिने।
गुञ्जैकैकक्रमेणैव यावत् स्यादेकविंशतिः ॥ २ ॥
क्षीराज्यशर्कराभिश्च शाल्यन्नं पथ्यमाचरेत्।
कम्पवातप्रशान्त्यर्थं निर्वाते निवसेत् सदा।
द्विगुणाख्यो रसो नाम त्रिपक्षात् कम्पवातजित् ॥ ३ ॥

शुद्ध गंधक एक तोला, शुद्ध पारा दो तोला दोनों को घोटकर कज्जली बना मन्द २ अग्नि से कुछ देर पकाकर उतार लें। फिर हरड़ का चूर्ण तीन तोला मिलाकर खरल करें और इस चूर्ण को शीशी में भर रखें। पहले सातरत्ति खावें, दूसरे दिन आठ रत्ति खावें। इस प्रकार बढ़ाकर एकदिनमें इक्कीस रत्ति तक खावें। खाने को दूध, घी खांड और शाली चावल, पथ्य दें। कम्पवात होतो इसे सेवन करता हुआ रोगी निर्वात स्थान में रहे। यह तीन पक्षों अर्थात् पैंतालीस दिनमें कम्पवात रोग को दूर कर देता है। इसका नाम द्विगुणाख्य रस है ॥ १—३ ॥

वातगजाङ्कुशः।

मृतं सूतं मृतं लौहं ताप्यं गन्धकतालकम्।
पथ्या शृङ्गी विषं व्योषमग्निमन्थश्च टङ्कणम् ॥ ४ ॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवैः।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत् सर्ववातप्रशान्तये ॥ ५ ॥
कणाचूर्णयुतश्चैव जिङ्गीक्वाथं पिबेदनु।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु रसो वातगजाङ्कुशः ॥ ६ ॥

सप्ताहाद् गृध्रसीं हन्ति दारुणं सान्निपातिकम् ।
क्रोष्ठुशीर्षकवातञ्चाप्यववाहुकसंज्ञकम् ॥ ७ ॥
ऊरुस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत् ।
पक्षाघातादिरोगेषु कथितः परमोत्तमः ॥ ८ ॥
रसोऽम्बुशोषणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगवाहिकः ॥ ९ ॥

रससिन्दूर, लौह भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध गंधक, शु हड़ताल, हरड़, काकड़ासिंघी, शुद्धविष, सोंठ, मिरच, पीप अरणी, शुद्ध सुहागा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर सबे मिलाकर खरल करे। फिर मुण्डी के रस और संभालु के रस खरल करके दो रत्ति भरकी गोली बनाकर खावे तो सब वातरो प्रशान्त होते हैं। ऊपर से पीपली का चूर्ण डालकर मंजीठ का क पीवे तो यह वात गजाङ्कुश रस साध्य अथवा असाध्य वातरो को नष्ट करता है। तथा एक सप्ताह में गृध्रसी को नष्ट करता है तथा दारुण सन्निपात, क्रोष्टुशीर्षकवात, अववाहुक, उरुस्तम्भ, ह स्तम्भ मन्यास्तम्भ पक्षाघात आदि सब रोगा में उत्तम है। इस साथही योगवाही वारिशोषण आदि अन्य रसभी देने चाहिये॥४

वृहद्वातगजाङ्कुशः ।

सूताभ्रतीक्ष्णकान्तानि ताम्रतालकगन्धकम् ।
स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कट्फलञ्चाभया विषम् ।
पथ्या शृङ्गी पिप्पली च मरिचं टङ्कणं तथा ॥ १० ॥
तुल्यं खल्ले दिनं मर्द्यं मुण्डी निर्गुण्डिजैर्द्रवैः ।
द्विगुञ्जां वटिकां खादेत् सर्ववातप्रशान्तये ।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु वृहद्वातगजाङ्कुशः ॥ ११ ॥

शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म, तीक्ष्णलौह भस्म, कान्तलौह भ ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म, सोंठका चूर्ण का चूर्ण, धनियां, कायफल, हरड़, शुद्धविष, हरड़, काकड़ासिं पीपल, मिरच सुहागा इन सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग

पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर मुण्डी और निर्गुण्डी के रससे क्रमशः एक २ दिन घोटकर दोरत्ति भरकी गोली बनावें। इससे सब प्रकार के वातरोग शान्त होते हैं, तथा साध्य वा असाध्य वातरोग भी इससे नष्ट होते हैं॥ इसका नाम बृहद्वात गजाङ्कुश रस है॥ १०॥ ११॥

महावातगजाङ्कुशः।

मृताभ्रतीक्ष्णताम्रञ्च सूततालकगन्धकम्।
भार्गीशुण्ठी बला धान्यं कट्फलञ्चाभया विषम्॥ १२॥
संपिष्य चपलाद्रावैः निष्कैकां भक्षयेद्वटीम्।
वातश्लेष्महरो ह्येष महावातगजाङ्कुशः॥ १३॥

अभ्रक भस्म, तीक्ष्णलौह भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध पारा, शुद्धहड़ताल, शुद्धगंधक, भार्गी, सोंठ, बला, धनियां, कायफल, हरड़, शुद्ध विष। प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। इसकी एक निष्क भरकी गोली बनाकर खावे। ऊपर से पिप्पली का क्वाथ पीये तो इससे वातरोग तथा श्लेष्मरोग नाश होते हैं। इसका नाम महावातगजाङ्कुश है। [इसकी मात्रा एकरत्ति की दे]॥ १२॥ १३॥

वातनाशनो रसः।

सूतहाटकवज्राणि ताम्रं लौहञ्च माक्षिकम्।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुफेनंसमांशिकम्॥ १४॥
पञ्चानां लवणानाञ्च भागैकं सुविमर्दयेत्।
वज्रीक्षीरैर्दिनैकन्तु रुद्ध्वा तं भूधरे पचेत्॥ १५॥
माषैकमार्द्रकद्रावैः लिह्यात् वातविनाशनम्।
पिप्पलीमूलजक्वाथं सकृष्णामनुपाययेत्।
सर्वान् वातविकारांश्च निहन्त्याक्षेपकादिकान्॥ १६॥

रससिन्दूर, स्वर्णभस्म, हीराभस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हड़ताल, रसौंत, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध समुद्रफेन,

प्रत्येक द्रव्य पांच २ तोले लें । पांचों नमक मिलित पांच तोला हैं सबको मिलाकर एकदिन थोहर के दूध में घोटें । फिर मूषा में बंद करके भूधरयंत्र में पुट दे । इसे एक माषाभर लेकर अदरक के रस से खावे तो वात नष्ट होता है । पिप्पलामूल के काथ में पिप्पली का चूर्ण मिलाकर साथ पीवे तो सब प्रकारके आक्षेपकादि वात विकारों को नाश करता है । (मात्रा एकरत्ति की दे ।) ॥ १४—१६ ॥

वातारि रसः ।

रसभागो भवेदेको द्विगुणो गन्धको मतः ।
त्रिगुणा त्रिफला ग्राह्या चतुर्भागन्तु चित्रकम् ॥ १७ ॥
गुगुग्लोः पञ्चभागश्चैरण्डतैलेन मर्दयेत् ।
क्षिप्त्वा ऽत्र पूर्वकं चूर्णं पुनस्तेनैव मर्दयेत् ॥ १८ ॥
गुडिकां कर्षमात्रान्तु भक्षयेत् प्रातरुत्थितः ।
नागरैरण्डमूलानां क्वाथं तदनु पाययेत् ॥ १६ ॥
अङ्गमेरण्डतैलेन स्वेदयेत् पृष्ठदेशतः ।
विरेके तेन सञ्जाते स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥ १६ ॥
वातारिसंज्ञको ह्येषरसो निर्वातसेवितः ॥ २० ॥

शुद्धपारा एकभाग, शुद्ध गंधक दोभाग, हरड़, बहेड़ा, आंवला प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण तीन भाग, चीता का चूर्ण चार भाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करें और अन्य सब द्रव्यों का चूर्ण उसमें मिला घोटलें । फिर शुद्ध गुग्गुल पांचभाग लेकर उसे एरण्ड के तेल से मर्दन करे । फिर उसमें सब द्रव्य मिलाकर खूब मर्दन करे। इससे एक कर्ष भरकी गोली बनाकर प्रातःकाल खावे । ऊपर से सोंठ और एरण्ड की जड़का काथ पीवे । पीठपर एरण्ड के तेल से स्वेदन करे जब विरेचन होजाये तो स्निग्ध और गरम भोजन करे । यह वातारि संज्ञक रस है । इसे वातरहित स्थान में सेवन करे ॥ १७—२० ॥

अनिलारिरसः ।

रसेन गन्धं द्विगुणं विमर्द्य वातारिनिर्गुण्डिरसैर्दिनैकम् ।

निवशेयेत् ताम्रमये पुटे तत्सर्वं मृदावेष्ट्य च बालुकाख्ये ॥२१॥
यन्त्रे पुटेत् गोमयचूर्णवन्हौ स्वभावशीते तु समुद्धरेत् तत् ।
निर्गुण्डिका वातहराग्नितोयैः सञ्चूर्ण्य यत्नेन विभावयेत् तत्॥२२।
रसोऽनिलारिः कथितोऽस्य वल्लमेरण्डतैलेन ससैन्धवेन ।
मरीचचूर्णेन ससर्पिषा वा निर्गुण्डिचित्रैश्च कटुत्रिकैर्वा ॥२३॥

शुद्ध पारा एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग, दोनों की कज्जली बनाकर एरण्ड की जड़ और निर्गुण्डी के रससे एक २ दिन घोटें फिर तांबे के शराव में बंद करके कपड़मिट्टी करके बालुकायंत्र में उपलों की आग में पुट देवे। जब स्वांगशीतल हो जाये तो उसे निकाले और चूर्णकर उसे संभालु एरण्डकी जड़, और चीतेके क्वाथ से भावित करे। इसे अनिलारि रस कहते हैं। इसको डेढ़रत्ती की मात्रा एरण्ड तेल और सेंधा नमक से, अथवा मिरचों के चूर्ण और घीसे, अथवा संभालु और चीते के क्वाथ से अथवा त्रिकुटा से खावे तो वातरोग शान्त होता है ॥ २१—२३ ॥

वातकण्टको रसः ।

वज्रमृताभ्रहेमार्क-तीक्ष्णमुण्डं क्रमोत्तरम् ।
मरिचंमर्दयेदम्ल-वर्गेण दिवसत्रयम् ॥ २४ ॥
द्विक्षारं पञ्चलवणं मर्दितं स्यात् समं समम् ।
ततो निर्गुण्डिकाद्रावैः मर्दयेत् दिवसत्रयम् ॥ २५ ॥
शुष्कमेतद्विचूर्ण्याथ विषश्चास्याष्टमांशतः ।
टङ्कणं विषतुल्यांशं दत्त्वा जम्बीरजद्रवैः ॥ २६ ॥
भावयेद् दिनमेकन्तु रसोऽयं वातकण्टकः ।
दातव्यो वातरोगेषु सन्निपाते विशेषतः ॥ २७ ॥
द्विगुञ्जमार्द्रकद्रावैः घृतैर्वा वातरोगिणे ।
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु माहिषाक्षञ्च गुग्गुलुम् ॥ २८ ॥

समांशं मर्दयेदाज्ये तद्वटी कर्षसम्मिता ।
अनुयोज्या घृतैर्नित्यं स्निग्धमुष्णञ्च भोजयेत् ॥ २९ ॥
मण्डलं नाशयेत् सर्वं वातरोगं विशेषतः ।
सन्निपाते पिबेच्चानु तालमूलीकषायकम् ॥ ३० ॥

हीरा भस्म एक तोला, अभ्रकभस्म दो तोला, स्वर्ण भस्म तीन तोला, ताम्र भस्म चार तोला, तीक्ष्णलौह भस्म पांच तोला मुण्डलौह भस्म छः तोला, मरिच चूर्ण सात तोला, लेकर पीसे। और अम्लवर्ग से तीनदिन भावना देवे। फिर यवक्षार, सज्जी, पांचों नमक प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर मिलावे और निर्गुण्डी के रससे तीनदिन घोटे। सूखने पर शुद्धविष बारह रत्ती (एक तोले का आठवां भाग) डाले, तथा शुद्ध सुहागा भी विषके समान ही डाले। फिर जम्बीरी के रससे एकदिन भावना देकर रखें। इसका नाम वातकण्टकरस है। इसे वातरोगों में तथा सन्निपातों में विशेषकर देवे। इसकी दो रत्ती की मात्रा अदरक के रससे या घीसे वातरोगी को दें तथा निर्गुण्डी की जड़का चूर्ण और शुद्ध भैंसा गुग्गुल, दोनों को समभाग लेकर मिलाकर घीसे खरल कर एक कर्षके समान गोली बनाकर नित्य ही इस रसके पीछे घीसे खावे तथा स्निग्ध और उष्ण भोजन करे। तो सब प्रकारके वातरोग इससे दूर होते हैं। इसे सन्निपातमें मूसलीके क्वाथ से पीवे ॥ २४—२४ ॥

लघ्वानन्दो रसः ।

पारदः गन्धको लौहमभ्रकं विषमेव च ।
समांशं मरिचस्याष्टौ टङ्कणन्तु चतुर्गुणम् ॥ ३१ ॥
भृङ्गराजरसेनैव दातव्याः सप्तभावनाः ।
तथा दाड़िमतोयेन वटीं कुर्य्यात् समाहितः ।
निहन्ति वातजान् रोगान् भ्रमदाहपुरःसरान् ॥ ३२ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्धविष प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलावे। फिर मिरच का चूर्ण आठ तोला

शुद्ध सुहागा चार तोला डालकर घोटले। फिर भांगरे के रससे सात भावनायें दे तथा अनार के रससे घोटकर गोली बनायें। इससे भ्रम अर्थात् सिरमें चक्कर आने, दाह होना, तथा इनसे युक्त वातरोग दूर होते हैं ॥ (मात्रा दो रत्ति की दें) ॥ ३१-३२ ॥

चिन्तामणि रसः।

कर्षैकं रससिन्दूरं तत्समं मृतमभ्रकम्।
तदर्द्धं मृतलौहञ्च स्वर्णं शाणं क्षिपेत् बुधः ॥ ३३ ॥
कन्यारसेन सम्मर्द्य गुञ्जामानां वटीं चरेत्।
अनुपानादिकं दद्यात् बुद्ध्वा दोषबला ऽबलम् ॥ ३४ ॥
हन्ति श्लेष्मान्वितं वातं केवलं पित्तसंयुतम्।
हृल्लासमरुचिं दाहं वान्तिं भ्रान्तिं शिरोग्रहम् ॥ ३५ ॥
प्रमेहं कर्णनादञ्च ज्वरगद्गदमूकताम्।
बाधिर्य्यं गर्भिणीरोगमश्मरीं सूतिकाऽऽमयम् ॥ ३६ ॥
प्रदरं सोमरोगञ्च यक्ष्माणं ज्वरमेव च।
बलवर्णाग्निदः सम्यक् कान्तिपुष्टिप्रसाधकः।
चिन्तामणिरसश्चायं चिन्तामणिरिवापरः ॥ ३७ ॥

रससिन्दूर एक कर्ष, अभ्रक भस्म एक कर्ष, लौह भस्म आधा कर्ष, स्वर्णभस्म एक शाण सब द्रव्यों को पीसकर घीकुमार के रससे खरल कर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। दोषके बलाबल को देखकर अनुपान से दें॥ इससे श्लेष्मयुक्त वातरोग, वातरोग तथा पित्तयुक्त वातरोग नाश होता है। हृल्लास, अरुचि, दाह, वमन, भ्रम, शिरोग्रह, प्रमेह, कर्णनाद, ज्वर, गद्गदवाणी, गूंगापन, बहरापन, गर्भिणी रोग, अश्मरी, सूतिका ज्वर, प्रदर, सोमरोग, राजयक्ष्मारोग, ज्वर, आदि सब रोगों को दूर करता है। तथा बल, वर्ण और अग्निवर्धक है। सौन्दर्य और पुष्टिवर्धक है। यह चिन्तामणि रस दूसरे चिन्तामणि मंत्रके समान सब सिद्धियों का देनवाला है ॥३३-३७॥

चतुर्मुखो रसः।

रसगंधक लौहाभ्रं समं सूताङ्घ्रिहेम च।
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यास्वरसमर्दितम् ॥ ३८ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्यराशौ दिनत्रयम्।
संस्थाप्य च तदुद्धृत्य त्रिफलारस संयुतम् ॥ ३९ ॥
एतद्रसायनवरं सर्वरोगेषु योजयेत्।
तद् यथाग्निबलं खादेत् बलीपलितनाशनम् ॥ ४० ॥
पौष्टिकं बल्यमायुष्यं पुत्रप्रसवकारकम्।
क्षयमेकादशविधं कासं पञ्चविधं तथा ॥ ४१ ॥
कुष्ठमेकादशविधं पाण्डुरोगान् प्रमेहकान्।
शूलं श्वासश्च हिक्काश्च मन्दाग्निश्चाम्लपित्तकम् ॥ ४२ ॥
(व्रणान् सर्वान् आढ्यवातं विसर्पं विद्रधिं तथा।)
अपसारं महोन्मादं सर्वार्शांसि त्वगामयान्।
क्रमेण शीलितं हन्ति वृक्षामिन्द्राशनिर्यथा ॥ ४३ ॥
जगताश्च हितार्थाय चतुर्मुखमुखोदितः।
रसश्चतुर्मुखो नाम चतुर्मुख इवापरः ॥ ४४ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक तोला लें, सोनेका भस्म तीन माशा लें। पहले कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर घीकुमार के रससे घोटकर गोला बनावें। फिर पर एरण्ड के पत्ते लपेटकर धान्यों के ढेर में रखदें। तीनदिन बाद इसे निकालें। पत्ते उतार अन्दर की औषधि को पीसकर उस से एक रत्ति भरकी गोली बनायें। इसे त्रिफला के रससे खावें। इस रसायन को सब रोगोंमें दे सकते हैं। इसे अग्नि बल देखकर खावें तो बली और पलित रोग दूर होता है। यह रस पौष्टिक, बल दायक, आयुवर्धक, पुत्र उत्पन्न करानेवाला है। ग्यारह लक्षण

क्षयरोग, पांचों प्रकार की खांसी, ग्याह प्रकार का कुष्ठरोग, पाण्डुरोग प्रमेह रोग, शूलरोग, श्वास रोग, हिचकी, मन्दाग्नि, अम्लपित्त, अपस्मार, महोन्माद, सब प्रकार की बवासीर, त्वचा के रोग, ["सब प्रकार के व्रण, आढ्यवात, विसर्प, विद्रधि।" भी अन्य पुस्तक में पाठ है] इन्हे क्रम से सेवन करने से ऐसे नाश करता है जैसे विजली वृक्षको। जगत के हितके लिये भगवान चतुर्मुख ने कृष्णात्रेयको यह योग बताया था। इसका नाम चतुर्मुख रसहै। ३८-४४॥

लक्ष्मीविलासो रसः।

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ।
बलानागबलाभीरु-विदारीकन्दमेव च ॥ ४५ ॥
कृष्णधुस्तूरनिचुलं गोत्तुरवृद्धदारयोः।
वीजंशक्राशनस्यापि जातीकोषफले तथा ॥ ४६ ॥
कर्पूरश्चैव कर्षांशं श्लक्ष्णचूर्णं पृथक् पृथक्।
गृहीत्वा चाष्टमांशेन स्वर्णं पर्णरसेन च ॥ ४७ ॥
वटिकां स्विन्नचणकप्रमाणां कारयेद्भिषक्।
रसो लक्ष्मीविलासो ऽयं पूर्ववत् गुणकारकः ॥ ४८ ॥

अभ्रक भस्म एक पल, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, दोनों समभाग लेकर कज्जली कर आधा पल लेवे। बला, नागबला, शतावर विदारी कंद शुद्ध हुये २ काले धतूरे के बीज, समुद्रफल, गोखरु, विधारे के बीज, शुद्ध भांग के बीज, जायफल, जावित्री, कर्पूर, प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष लेकर मिलावे। और एक कर्षका आठवां भाग स्वर्ण भस्म, मिलाकर घोटे, पान के पत्तों के स्वरस में, घोटकर चने के समान गोली बनावें। यह लक्ष्मीविलास रस पूर्वोक्त चतुर्मुख के समान गुणदायक है ॥ ४५—४८ ॥

रोगेभसिंह-श्रीखण्डवट्यौ।

सूतात् द्वयो घन-वरा ऽनल वेल्ल भार्गी-
तिक्ताकटुत्रयवरैः सवचैः समांशैः।

रोगेभसिंह इति वातकफामयघ्नः,
सान्द्रोऽयमल्पपटुतो विहितो द्विगुञ्जः ॥ ४९ ॥
एतैः गुडप्रमृदितै रसवर्जितैः स्यात् ।
श्रीखण्डनाम गुड़िका विहिता द्विगुञ्जा ।
शैत्याद्यजीर्णकफवातभवान् विकारान् ।
हन्त्यार्द्रकेण सहिताप्यथ केवला वा ॥ ५० ॥

रससिन्दूर दो भाग, लौह भस्म, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, विडंग, भार्गी, कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल, बच प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ भाग। सबको मिलाकर दोरत्ति भरकी गोली जलसे बनावे। इसे नमक मिलाकर खावे तो यह वातरोगों को नाश करता है। इसका नाम रोगेभसिंह है ॥ ४९ ॥ पूर्वोक्त सब द्रव्य लें केवल रससिन्दूर न मिलायें, और इसमें गुड़ मिलावें, यह श्रीखण्ड नामकी गोली दोरत्ति भरकी बनावें। इसे अदरक के रससे खावे अथवा अकेला ही खावें तो शैत्यादि रोग, अजीर्ण तथा कफवात के रोग दूर होते हैं ॥ ५० ॥

पिण्डी रसः।

सूतात् पञ्चार्कतश्चैकं कृत्वा पिण्डं सगन्धकम् ।
सूतांशं नागवल्ल्याश्च द्रवैः पिष्ट्वा प्रलेपयेत् ॥ ५१ ॥
ताम्रपत्रीं प्रलिप्तां तां रुद्ध्वा गजपुटे पचेत् ।
द्विगुञ्जस्त्र्यूषणेनार्द्रवपुर्वातं सकम्पकम् ।
निहन्ति दाहसन्ताप-मूर्च्छापित्तसमन्वितम् ॥ ५२ ॥

शुद्ध पारा पांच तोला, ताम्रके पत्र एक तोला, शुद्ध गंधक पांच तोला। पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर पानके रसमें घोटकर तांबे के पत्तों को लेपकर उसे सम्पुटकर गजपुटमें पकावे। स्वांग शीतल होनेपर निकालकर पीसकर रखे। इसकी दोरत्ति मात्रा लेकर सोंठ, मिरच, पीपल के चूर्णसे मिलाकर दें तो

शरीरकी वात, कम्पवात, दाह, सन्ताप मूर्च्छा तथा पित्तयुक्त वात-रोग को नाश करता है ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

कुब्जविनोदो रसः।

रसगंधौ समौ शुद्धौ चाभयातालकं तथा।
विषं कटुकि व्योषञ्च बोलजैपालकौ समौ ॥ ५३ ॥
भृङ्गराजरसैर्मर्द्य स्नुह्यर्कस्वरसैस्तथा।
गुञ्जाद्वयं भक्षयेच्च हृच्छूलं पार्श्वशूलकम् ॥ ५४ ॥
आमवाताढ्यवातादीन् कटिशूलञ्च नाशयेत्।
अग्निञ्च कुरुते दीप्तं स्थौल्यञ्चाप्यपकर्षति।
रसः कुब्जविनोदोऽयं गहनानन्दभाषितः ॥ ५५ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, हरड़ का चूर्ण, हड़ताल शुद्ध; शुद्धविष कटुकी का चूर्ण, सोंठ, मिरच, पीपल, बाल का चूर्ण, शुद्ध जमालगोटा, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर रखें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। और भांगरे के रस, थोहर के रस तथा आकके रसले घोटकर दोरत्ति भरकी गोली बनाकर खावे तो हृदय का शूल, पसली का शूल, आमवात, अढ्यवात कटिशूल नाश होता है। अग्नि को दीपन करता है, स्थूलता को कम करता है, यह कुब्जविनोदरस गहनानन्द ने कहा है ॥ ५३—५५॥

शीतवातलक्षणम्।

हिमवन्ति हि गात्राणि रोमाणि स्फुरितानि च।
शिरोऽक्षिवेदनाऽऽलस्यं शीतवातस्य लक्षणम् ॥ ५६ ॥

सारे अंग बर्फके समान ठण्डे होजायें, रोम खड़े हो जायें, सिर आंख आदिमें पीड़ा हो तथा आलस्य हो; ये शीतवातके लक्षणहैं ॥५६॥

शीतारिरसः।

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाऽग्निस्वरसैर्विभाव्य।
पक्वार्कपत्रस्य रसेण पश्चाद्विपाचयेदष्टगुणेन यत्नात् ॥ ५७ ॥
रसार्द्धभागञ्च विषञ्च दत्त्वा विपाचयेदग्निजले क्षणं तत्।

शीतारिसंज्ञस्य रसायनस्य वल्लञ्च सार्द्धं मरिचार्द्रकेण।
मरीचचूर्णेन घृताप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पथ्यम् ॥५८

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्जली करे फिर पुनर्नवा और चीते के रससे क्रमशः भावना दे। फिर पके हुए आक के पत्तों के चौबीस तोला स्वरस में कज्जली को डालकर बालुकायंत्र वा कूपी में पकावे। पक चुकने पर नीचे उतारकर शोधित विषका चूर्ण आधा तोला डालकर मिला ले। फिर चीतेके रसमें इस सारे औषध को डालकर कुछ क्षण पकावे। उतारकर पीसकर रखे। इसे शीतारि रस कहते हैं। इस रसायन औषध की डेढ़रत्ति की मात्रा लेकर अदरक के रस और मिरच के साथ खावें तथा घीयुक्त मरिच चूर्ण खावें, मांस तथा घी इसमें पथ्य है। इससे शीतवात दूर होता है ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

वातविध्वंसनो रसः।

सूतमभ्रकसत्त्वञ्च कांस्यं शुद्धञ्चमाक्षिकम्।
गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तराभिवार्द्धितम् ॥ ५९ ॥
कज्ज्लीकृत्य तत्सर्वं वातारिस्नेहसंयुतम्।
सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीकृत्य यत्नतः ॥ ६० ॥
निम्बुद्रवेण संपीड्य तिलकल्केन लेपयेत्।
अर्द्धाङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ ६१ ॥
प्रपचेत् बालुकायंत्रे द्वादशप्रहरं ततः।
जठरस्य रुजः सर्वास्तथा च मलविग्रहम् ॥ ६२ ॥
आध्मानकं तथाऽऽनाहं विसूचीं वन्हिमान्द्यकम्।
आमदोषमशेषञ्च गुल्मं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ ६३ ॥
ग्रहणीं श्वासकासौ च क्रमिरोगं विशेषतः।
हन्यात् सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैवच ॥ ६४ ॥
ज्वरे चैवातिसारे च शूलरोगे त्रिदोषजे।

पथ्यं रोगानुसारेण देयमास्मिन् भिषग्वरैः ।
कथितो नन्दिनाथेन वातविध्वंसनो रसः ॥ ६५ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, अभ्रकसत्त्व दो तोला, कांस्य भस्म तीन तोला, स्वर्णमाक्षिक भस्म चार तोला, शुद्ध गंधक पांच तोला, शुद्ध हड़ताल छः तोला ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सबको घोटले। फिर एरण्ड के तेल से एक सप्ताह तक निरन्तर मर्दन करे। उसे फिर नीबू के रससे पीसकर एक गोला बनावे। उसपर तिलों के कल्क को आधारउंगल चारों ओर चढ़ादे। फिर सारे को सुखाकर वालुकायंत्र में रख बारह पहर तक पकावे। इससे पेटके सभी रोग, कब्ज, आध्मान आनाह, विसूची, अग्निमांद्य, सब प्रकार के आमदोष, गुल्म, भयंकर वमन, ग्रहणी, श्वास, कास, विशेषकरके क्रिमिरोग, सर्वांगशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार, त्रिदोषज शूलरोग इन सबको दूरकरता है। रोगानुसार वैद्य पथ्य देवे। इस वातविध्वंसन रसको नन्दिनाथने कहा है॥५९-६५॥

पलाशादिवटी।

पलाशबीजोत्थरसेन सूतं गन्धेन युक्तं त्रिदिनं विमर्द्य ।
श्लक्ष्णीकृतं तद्विषतिन्दुबीजं संयोजयेदस्य कलाप्रमाणम् ।
मासद्वयं निष्कमितं प्रयत्नात् अर्शांसि हन्त्याशु नियोजनीयम्॥६६॥
वातरक्तं तथा शोथमस्पर्शाख्यानिलामयम् ।
वातवत् पित्तरोगेऽपि तत्र पित्तेन भावयेत् ।
पलाशादिवटी ख्याता वातरोगकुलान्तिका ॥ ६७ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक समभाग ले। दोनों की कज्जली करे। फिर ढाक के बीजों के रससे इसे तीन दिन तक घोटता रहे। फिर इसे गोमूत्र से शुद्ध किया हुआ कुचले का चूर्ण सोलहवां भाग डाल कर घोट कर रखे। इस की एक निष्क भर की मात्रा दो मास तक निरन्तर खाने से बवासीर शीघ्र ही दूर होती है। इससे वातरक्त, शोथ, वायु का अस्पर्शाख्य रोग।जिसमें छूने से ज्ञान नहीं होता।

ये सब रोग दूर होते हैं। यदि पित्त रोगों को दूर करना हो तो रस को पांच पत्तों में भावना देले। इसका नाम पलाशादिवटी है यह वातरोगों के कुल का अन्त करने वाली है। [इसकी मात्रा रत्ति दें] ॥ ६६ ॥ ६७ ॥

दशसारवटी ।

यष्टिं धात्रीं बलां द्राक्षामेलां चन्दनवालुकम् ।
मधूकपुष्पं खर्जूरं दाडिमं पेषयेत् समम् ॥ ६८ ॥
सर्वतुल्यासितायोज्या पलार्द्धं भक्षयेत् सदा ।
दशसारवटी ख्याता सर्ववातविकारनुत् ॥ ६९ ॥

मुलट्ठी, आंवला, बला, दाख, इलायची, चंदन लाल, सुगंध बाला, महुए के फूल, खजूर, अनारदाना इन सब को समभाग लेकर चूर्ण कर रखे। इसे नित्य आधा पल खावे तो यह दशसारवटी सब वात रोगों को दूर करती है ॥ ["बालुकम" पलवा के स्थान "लालकम्" पाठ भी है] ॥ ६८ ॥ ६९ ॥

गगनादिवटी ।

मृतगगनरसार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यम् ।
सबलिसममिदं स्यात् यष्टितोयप्रपिष्टम् ।
तदनुसलिलजातैर्वासकैर्गोस्तनीभिः ।
मृदितमनुविदारीवारिणा घस्रमेकम् ॥ ७० ॥
घृतमधुसहितेयं निष्कमात्रा वटीति ।
क्षपयति गुरुवातं पित्तरोगं क्षयञ्च ।
भ्रममदकफशोषान् दाहतृष्णासमुत्थान्
मलयजमिह पेयश्चानुपानं सचन्द्रम् ॥७१॥

अभ्रक भस्म, शुद्ध पारा, तांबा भस्म, मुण्डभस्म, तीक्ष्ण

भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध गंधक प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर मुलट्ठी के काढ़े से खरल करें। फिर बांसा, मुनक्का, और विदारीकंद के रससे क्रमशः एक २ दिन खरल करके रखे। इसे घी और शहद से मिलाकर एक निष्कभर खावें तो इससे बढ़ी हुई वात, पित्तरोग क्षय, भ्रम, मद, कफ रोग, शोषरोग, दाह, तृष्णारोग दूर होते हैं। इसके पीछे अनुपान में श्वेतचन्दन को जलसे घिसकर और कर्पूर मिलाकर पीना चाहिये। (मात्रा एकरत्ति दें) ॥७०-७१॥

सर्वाङ्गसुन्दरो रसः।

शुद्धसूताभ्रताम्रायो हिङ्गुलं कार्षिकं समम्।
गंधकश्चैकभागः स्यात् सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ ७२ ॥
सप्तपर्णार्कस्नुक् क्षीर–वासा–वातारि–वारिणा।
विषमुष्टिसमं सर्वं पेष्यं तद्गोलकीकृतम् ॥७३ ॥
विपचेत् बालुकायन्त्रे द्वियामान्ते समुद्धरेत्।
पिप्पलीविषसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः।
सर्ववातविकारघ्नः सर्वशूलानिसूदनः ॥ ७४ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध हिंगुल, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष लें। पहले पारे गंधककी कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलावे। फिर सतौना, आक, थोहर का दूध, बांसा, एरण्ड इनके रस वा क्वाथ से क्रमशः मर्दन करके, सब चूर्ण के समभाग शुद्ध कुचले का चूर्ण मिलावें। एक गोला बनाकर, बालुका यंत्र में रख दोपहर तक पकावें। फिर निकालकर समभाग पीपल का चूर्ण और शुद्धविष समभाग मिलाकर पीस रखें। यह सर्वांग सुन्दर रस सब प्रकार के वातरोगों को दूर करता है तथा सब प्रकारके शूलरोगों को दूर करता है॥ (मात्रा आधी रत्तिदें) ७२-७४॥

तालकेश्वरो रसः।

एकभागो रसस्य स्यात् शुद्धस्तालैकभागिकः।

अष्टौ स्युर्विजयायाश्च गुड़िकां गुडतश्चरेत् ॥ ७५ ॥
एकैकां भक्षयेत् प्रातश्छायायामुपवेशयेत् ।
तालकेश्वरनामायं रोगश्चास्पर्शनाशनः ॥ ७६ ॥

रससिन्दूर एक तोला, शुद्ध हड़ताल एक तोला, भांग आठ तो॰ सबको पीसकर बीसतोला गुड मिलाकर गोली बनावे इसे प्रातः॰ खावे और खाकर छायामें बैठा रहे। इससे अस्पर्श वातरोग नाश हो॰ है। [टीकाकार इसकी मात्रा एक तोला लिखते हैं। परन्तु दो॰ की मात्रा पर्याप्त है] ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

त्रैलोक्यचिन्तामणि रसः ।

हीरं सुवर्णं सुमृतञ्च तारमेषां समं तीक्ष्णरजश्चतुर्णाम् ।
समं मृताभ्रं रससिन्दुरञ्च निष्पिष्टतीक्ष्णस्य तथाऽश्मनो वा ॥७॰
खल्ले द्रवेणैव कुमारिकाया गुञ्जाप्रमाणां वटिकां प्रकुर्यात् ।
त्रैलोक्यचिन्तामणिरेष नाम्ना सम्पूज्य सम्यक् गिरिजां दिनेशम्॰
हन्त्यामयान् योगशतैर्विवर्ज्यानथ प्रणाशाय मुनिप्रणीतः ।
अस्य प्रसादेन गदानशेषान् जरां विनिर्जित्य सुखं विभाति ॥७॰

स्निग्धे श्लेष्मण्यार्द्रकस्य रसेन पाययेत् सुधीः ।
शुष्के च माक्षिकेणैव पित्ते घृतसितायुतम् ॥ ८० ॥
श्लेष्मणि मारुते सम्यग् दुष्टे च समतां गते ।
कणाचूर्णं क्षौद्रयुतं प्रमेहे दुग्धसंयुतम् ॥ ८१ ॥
बलवर्णाग्निजननः कासघ्नः कफवातजित् ।
आयुः पुष्टिकरो वृष्यः सर्वरोगनिसूदनः ॥ ८२ ॥

हीरा भस्म, स्वर्णभस्म, तार अर्थात् मोती भस्म, तीक्ष्ण॰ भस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें, और अभ्रकभस्म चार तोला त॰ रस सिन्दूर चार तोला लें सबको मिलाकर फौलाद के या अति॰ पत्थर के खरल में पीसें फिर घीकुमार के रससे घोटकर एक॰ प्रमाण की गोली बनावे। यह त्रैलोक्यचिन्तामणिरस गिरिजा॰

सूर्यभगवान की पूजा करके खाया जाये तो सैकड़ों योगों से जो रोग नाश नहीं हुए उन सबको यह नाश करता है। यह मुनिका बनाया हुआ है। इसके प्रसाद से सबरोग तथा बुढ़ापा दूर होकर सुख होता है॥ यदि रोगी में स्निग्ध श्लेष्मा हो तो इसे अदरक के रससे देवे। यदि कफ सूख गया हो तो शहद सेही इसे देवे। पित्तरोग में मिश्री और घीसे देवे। श्लेष्मा और वायु दुष्ट होकर समान भाव से विकृत हों तो इसे शहद और पीपल के चूर्ण से मिलाकर देवे। प्रमेह में दूध से दें। यह रस बलवर्धक, अग्निवर्धक, कास नाशक, कफवात नाशक, आयुवर्धक, पुष्टि बर्धक, वृष्य तथा सबरोग नाशक है७७-८२॥

अथ कफरोगचिकित्सा।

श्लेष्मकालानलो रसः।

रसस्य द्विगुणो गन्धः गन्धकात् द्विगुणं विषम्।
विषात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम्॥ १॥
रसतुल्या प्रदातव्या चाभया सविभीतकी।
धात्रीपुष्करमूलञ्च चाजमोदाऽजगन्धिका॥ २॥
विडङ्गं कट्फलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥ ३॥
भावयेत् सप्तधा रौद्रे स्वरसैः सुरसोद्भवैः।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः॥ ४॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्जली करे। फिर विषशुद्ध चार तोला, सोंठ मिरच पीपल, का चूर्ण मिलित आठ तोला, हरड़का चूर्ण एक तोला, बहेड़ा, आंवला, पुष्करमूल, अजमोदा, बाबुई, तुलसी विडंग, कायफल, चव्य, पांचों नमक, लौंग, त्रिवी, दन्तीमूल, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लेकर चूर्ण करे। और

तुलसी के रससे सात भावना दे यह कफज रोगों को नाश करता इसका नाम श्लेष्मकालानल रस है ॥ १—४ ॥

श्लेष्मशैलेन्द्रो रसः ।

पारदः गन्धको लौहं त्र्यूषणं जीरकद्वयम् ।
शठीशृङ्गी यमानी च पौष्करं चार्द्रकं तथा ॥ ५ ॥
गैरिकं यावशूकश्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जातीकोषाऽजमोदा च वरा यासलवङ्गकम् ॥ ६ ॥
कनकारुणवीजानि कट्फलं चव्यकं तथा ।
प्रत्येकं तोलकश्चैषां श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ७ ॥
पाषाणे विमले खल्ले घृष्टं पाषाणमुद्गरैः ।
बिल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रफलत्रिकाः ॥ ८ ॥
निर्गुण्डी–गणिका–वासा चेन्द्राशनं प्रचोदनी ।
धुस्तूरः कृष्णजीरश्च पिप्पलीपारिभद्रके ॥ ९ ॥
एतेषाञ्च रसैर्मर्द्यमार्द्रकैश्च विभावयेत् ।
उष्णतोयानुपानेन सर्वव्याधिं विनाशयेत् ॥ १० ॥
विंशतिं श्लैष्मिकान् रोगान् सन्निपातभवान् गदान् ।
उदराष्टकदुर्नाममामवातञ्च दारुणम् ॥ ११ ॥
पञ्च पाण्ड्वामयान् दोषान् क्रिमिं स्थौल्यमथो नृणाम् ।
यथा शुष्केन्धने वन्हिस्तथैवाग्निविवर्द्धनः ॥ १२ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा श्वेत, काला जीरा, कचूर, काकड़ासिंघी, अजवायन, पुष्करमूल, अदरक, गेरू, यवक्षार, सुहागा, गजपीपल, जावित्री, अजमोदा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, जवासा, लौंग, धतूरे के शुद्धवीज, कायफल, चव्य प्रत्येक द्रव्यों का चूर्ण एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलादे और पत्थर के खरल में पीसे फिर बिलकी जड़, आक, चीता, त्रिफला, संभालु, श्वेतजूही, बांसा, भांग, छोटी कटेली, धतूरा, काला जीरा, पिप्पली, नीम, इन सब

रस या क्वाथसे क्रमशः मर्दन करे, फिर अदरक के रससे भावना देवे इस रसका नाम, श्लेष्मशैलेन्द्र रस है। इस रसको गरम जलसे खावे तो सबरोग नष्ट होते हैं। बीस प्रकार के कफके रोग, सन्निपात के रोग, आठों प्रकार के उदररोग, बवासीर आमवात, पांच प्रकार के पांण्डुरोग, क्रिमि, स्थौल्य, ये सब रोग दूर होते हैं। जैसे सूखे ईंधन में अग्नि डालने से आग बढ़ती है इसी प्रकार से इस रससे जठराग्नि दीप्त होती है ॥ ५—१२ ॥

महाश्लेष्मकालानलो रसः ।

हिङ्गुलसम्भवं सूतं शिला-गन्धक-टङ्कणम् ।
ताम्रं वङ्गं तथाऽभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ १३ ॥
धुस्तूरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पलीहिङ्गुकट्फलम् ।
दन्तीबीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत् ॥ १४ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्मर्द्य वटिकां कारयेद्भिषक् ।
कलायपरिमाणान्तु खादेदेकां यथाबलम् ॥ १५ ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्राशनिर्यथा ।
मत्तसिंहो यथारण्ये मृगाणां कुलनाशनः ॥
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥ १६ ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध मनासिल, शुद्ध सुहागा, ताम्र भस्म, वंगभस्म, अभ्रक भस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्धहड़ताल, शुद्ध धतूरे के बीज, सेंधानमक, कूठ पिप्पली, हींग, कायफल, दन्ती के शुद्ध बीज, बाबची, पाषाणभेद, हरड़, बहेड़ा, आंवला, त्रिवृत् इन सब द्रव्यों मेंसे प्रत्येक को समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर थोहर के दूधसे सबको घोटकर मटर के समान गोली बनालें। इसे अग्निबल देखकर देंतो शीघ्र सन्निपात को ऐसे नाश करती है जैसे बिजली वृक्षको। जिस प्रकार से मत्तसिंह जंगल में सब मृगों को नाश करता है। वैसे ही यह सब रोगों को तुरन्त नाश करता है ॥ १३ ॥ १४ ॥

महालक्ष्मी विलासः।

पलं वज्राभ्रचूर्णस्य तदर्द्धो गन्धको भवेत्।
तदर्द्धं वङ्गभस्मापि तदर्द्धः पारदस्तथा॥ १७॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्द्धं ताम्रभस्मकम्।
रसतुल्यञ्च कर्पूरं जातीकोषफले तथा॥ १८॥
वृद्धदारकवीजञ्च वीजं स्वर्णफलस्य च।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणकम्॥ १९॥
निष्पिष्य वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान् घोरान् सुदारुणान्॥२०॥
गलोत्थानन्त्रवृद्धिञ्च तथा ऽतीसारमेव च।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान् विंशतिं तथा॥ २१॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजं तथा।
नाड़ीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम्॥ २२॥
कासपीनसयक्ष्मार्शः—स्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तनुत्।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम्॥ २३॥
उदरं कर्णनासाक्षि मुखवैजात्यमेव च।
सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत्॥ २४॥
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम्।
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयो दधि॥ २५॥
वारिभक्तं सुरा सीधु सेवनात् कामरूपधृक्।
वृद्धो ऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत्॥ २६॥
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्कताम्।
नित्यं गच्छेत् शतं स्त्रीणां मत्तवारणविक्रमः॥ २७॥
द्विलक्षयोजनी दृष्टिर्जायते पौष्टिकं तथा।

प्रोक्तः प्रयोगराजो ऽयं नारदेन महात्मना ॥ २८ ॥
महालक्ष्मीविलासो ऽयं वासुदेवो जगत्पतिः।
प्रसादादस्य भगवान् लक्षनारीषु वल्लभः ॥ २९ ॥

वज्राभ्रक की भस्म एक पल, गंधकशुद्ध आधा पल, वंगभस्म एक कर्ष, शुद्धपारा आधा कर्ष, शुद्ध हड़ताल आधा कर्ष, ताम्रभस्म चौथाई कर्ष, कपूर आधा कर्ष, जायफल एक कर्ष, जावित्री एक कर्ष विधारे के बीज एक कर्ष, शुद्ध धतूरे के बीज एक कर्ष ले स्वर्णभस्म एक शाण ले। पहले पारा गंधक की कज्जली कर फिर अन्य सब द्रव्य मिलाकर खरल करे। और फिर पीसकर जलसे दोरत्ति भरकी गोली बनाले। यह रस सन्निपातके महा भयंकर रोगों को नाश करता है। गले के रोग, अन्त्रवृद्धि, अतीसार, ग्यारह प्रकार के कुष्ठ बीस प्रकार के प्रमेह, कफवात से हुआ पुराना तथा कुल क्रमागत श्लीपदरोग, नासूर, घारव्रण, गुदाके रोग, भगन्दर, खांसी, पीनस, राजयक्ष्मा, बवासीर, स्थूलता, दुर्गन्ध, रक्तदोष, सर्व प्रकार का आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदररोग, कर्णरोग, नाकके रोग, आंखके रोग, मुखके रोग, सब प्रकार के शूल, सिरदर्द, स्त्रीरोग, इनसब रोगों का नाश करता है॥ इसकी एक गोली नित्य प्रातः काल बलानुसार खाने से और ऊपर से मांस, पीठी, दूध, दही, चावल जल, सुरा, सीधुका अनुपान सेवन करने से कामदेवके समान रूप हो जाता है। वृद्ध भी युवा के समान शक्त हो जाता है। तथा वीर्य्य का क्षय नहीं होता। लिंग शिथिल नहीं होता है, बाल पकते नहीं है। नित्य सौ स्त्रियों को भोग सकता है। तथा मस्त हाथी के समान विक्रमी होजाता है। दो लाख योजन की दृष्टि होजाती है। तथा अत्यन्त पौष्टिक है। यह योगराज महात्मा नारद ने कहा था। इसके प्रभाव से श्रीकृष्ण भगवान लाख स्त्रियों के प्रिय होगये थे। इस का नाम महालक्ष्मीविलास है॥ १७—२९॥

कफकेतु रसः।

टङ्कणं मागधी शङ्खं वत्सनाभं समं समम्।

आर्द्रकस्य रसेनैव भावयेद्दिवसत्रयम् ॥ ३० ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमार्द्रकस्य रसेन वै ।
पीनसं श्वासकासञ्च गलरोगं गलग्रहम् ॥ ३१ ॥
दन्तरोगं कर्णरोगं नेत्ररोगं सुदारुणम् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु कफकेतुरसोत्तमः ॥ ३२ ॥

शुद्ध सुहागा, पीपल का चूर्ण, शंखभस्म, शुद्ध वत्सनाभि प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर सब को खरल करे। और अदरक रस डाल कर तीन दिन भावना देवे इसे कफकेतु रस कहते हैं इसे एक रत्ति भर लेकर अदरक के रस से देवे तो पीनस, श्वास कास, गलरोग, गलग्रह, दांत के रोग, कान के रोग नेत्ररोग, त सन्निपात के रोग दूर होते हैं ॥ ३०—३२ ॥

कफचिन्तामणि रसः ।

हिङ्गुलेन्द्रयवं टङ्गं त्रैलोक्यवीजमेव च ।
मरिचश्च समं सर्वं भस्मसूतं त्रिभागिकम् ॥ ३३ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव मर्दयेत् याममात्रकम् ।
चणकाभावटी कार्य्या सर्ववातप्रशान्तये ।
कफरोगं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ३४ ॥

शुद्ध हिंगुल, इन्द्रजौ, सुहागा शुद्ध, भांग के शुद्ध बीज, मि का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला, रससिन्दूर तीन तो लें। सब द्रव्यों को घोट कर अदरक के रस से एक पहर घोट चने के समान गोली बनावें। तो सब प्रकार के वातरोग नष्ट हैं। कफरोग ऐसी शीघ्रतासे नष्ट करता है जैसे सूर्य अन्धकार को करता है ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

॥ इति कफरोग चिकित्सा ॥

अथ पित्तरोगचिकित्सा।

गुडूच्यादि लौहम्।

गुडूचीसारसंयुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः।
वातरक्तं निहन्त्याशु सर्ववातहरं परम् ॥ १ ॥

गिलोय का सत, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, विडंग, मोथा, चीता, इन सब द्रव्यों के चूर्ण को समभाग लेकर, और सब चूर्णों के समान लौहभस्म लेकर खरल करके रखे। इसका नाम गुडूच्यादि लौह है। यह वातरक्त को शीघ्र नाश करता है तथा सब प्रकार के वातराग और पित्तरोगों कोभी दूर करता है ॥१॥

धात्रीलौहम्।

धात्रीचूर्णस्याष्टौ पलानि चत्वारि लोहचूर्णस्य।
यष्टीमधुकरजश्च द्विपलं दद्यात् पुटे घृष्टम् ॥ २ ॥
अमृताक्काथेनैतद्भाव्यं चूर्णन्तु सप्ताहम्।
चण्डातपे सुशुष्कं भूयः पिष्ट्वा नवे घटे स्थाप्यम् ॥ ३ ॥
घृतेन मधुना युक्तं भोजनाद्यन्तमध्यतः।
त्रीन् वारान् भक्षयेन्नित्यं पथ्यं दोषानुबन्धतः ॥ ४ ॥
भक्तस्यादौ नाशयेच्च दोषान् पित्तकृतानपि।
मध्ये चानाहविष्टब्धं तथान्ते चाग्निमान्द्यताम्।
रक्तपित्तसमुद्भूतान् रोगान् हन्ति न संशयः ॥ ५ ॥

आंवले का चूर्ण, आठ पल, लौहभस्म चार पल, मुलठी का चूर्ण दो पल, सबको मिलाकर पीसकर, गिलोय के स्वरससे एक सप्ताह तक भावना देवे। फिर तेज़ धूपमें सुखाकर, पीसकर नये घड़े में रखले। इसे घी और शहद से मिलाकर भोजन के आदि, मध्य और अन्त में तीनवार नित्य खावे और दोषानुसार पथ्य देवे। इसे भोजन के आदिमें खाने से पित्त के दोष दूर होते हैं। भोजन के मध्य में खाने से आनाह तथा विष्टम्भ दोष दूर होते हैं तथा अन्त में खाने

से अग्निमांद्य रोग दूर होता है। यह रक्तपित्त से उत्पन्न हुए रोगों को दूर करता है इसमें संशय नहीं ॥ २—५ ॥

पित्तान्तको रसः ।

जातीकोषफलेमांसी कुष्ठं तालीशपत्रकम् ।
माक्षिकं मृतलौहञ्च अभ्रं दिव्यं समांशिकम् ॥ ६ ॥
सर्वतुल्यं मृतं तारं समं निष्पिष्य वारिणा ।
द्विगुञ्जाभावटी कार्य्या पित्तरोग विनाशिनी ॥ ७ ॥
कोष्ठाश्रितञ्च यत् पित्तं शाखाश्रितमथापि वा ।
शूलञ्चैवाम्लपित्तञ्च पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ ८ ॥
दुर्नाम–भ्रान्तिवान्ती च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।
रसःपित्तान्तको ह्येष काशिराजेन भाषितः ॥ ९ ॥

जावित्री, जायफल, जटामांसी, कुष्ठ, तालीशपत्र स्वर्णमाक्षिक भस्म, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध मनशिल प्रत्येक द्रव्य का समभाग ले। सब चूर्ण के बराबर चांदी भस्म ले फिर इन सबको पीसकर पानी से दोरत्ति भरकी गोली बनाले। इसके सेवन से पित्तरोग शान्त होते हैं। तथा कोष्ठाश्रित पित्त, शूल, अम्लपित्त, पाण्डु, हलीमक, बवासीर, भ्रम, वमन, इन सब रोगों को शीघ्र नष्ट करता है। यह पित्तान्तक रस है। इसे काशिराज ने कहा है ६—९

महापित्तान्तको रसः ।

यद्यत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते ।
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशनः ॥ १० ॥

यदि पूर्वोक्त पित्तान्तक रस में स्वर्णमाक्षिक भस्म के स्थान स्वर्णभस्म डालदी जाये तो इसे महापित्तान्तक रस कहते हैं। यह सब प्रकार के पित्तरोगों को विनाश करता है ॥ १० ॥

इति पित्तरोग चिकित्सा ॥

———

अथ वातरक्तचिकित्सा।

लाङ्गल्याद्यं लौहं।

विशुद्धलाङ्गलीमूल–त्रिकटुत्रिफलैस्तथा।
द्राक्षागुग्गुलुभिस्तुल्यं लौहचूर्णं नियोजयेत्॥ १॥
मातुलुङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च।
विमृद्य यत्नतः पश्चात् गुडिकां कोलसम्मिताम्॥ २॥
भक्षयेन्मधुना सार्द्धं करोति शृणु यान् गुणान्।
आजानु स्फुटितं घोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा।
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यासाध्यश्च शोणितम्॥ ३॥

शुद्ध कलिहारी की जड़, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, मुनक्का, शुद्ध गुगुल प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें और सबके समभाग लौह भस्म ले, इन सबको मिलाकर पीसकर मातुलुङ्ग अर्थात् खट्टे नीबू के रससे पीसकर तथा त्रिफला के रससे मर्दन करके बेरके समान गोली बनाले। इसे शहद से मिलाकर खावे तो इतने गुण करता है। घुटनों तक फूटे हुए शरीर, सर्वाङ्ग फूटे हुये शरीर, को ठीक करता है तथा साध्य या असाध्य वातरक्त को दूर करता है॥ १—३॥

वातरक्तान्तको रसः।

गन्धकं पारदं लौहं शिलां तालं घनं तथा।
शिलाजतु पुरं शुद्धं समभागं विचूर्णयेत्॥ ४॥
श्वेतापराजिता दार्वी वागुजी चित्रकं तथा।
पुनर्नवा देवकाष्ठ त्रिफला व्योष वेल्लकम्॥ ५॥
चूर्णमेषां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत्।
त्रिफला भृङ्गराजस्य रसेनैव त्रिधा त्रिधा॥ ६॥
भावयेत् भक्षयेत् पश्चात् चणमात्रं दिने दिने।

ततोऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥ ७ ॥
शाणमात्रं घृतैः कुर्य्यात् सर्ववातविकारनुत् ।
वातरक्तं महाघोरं गम्भीरं सर्वजञ्च यत् ॥
सर्वोपद्रवसंयुक्तं साध्यासाध्यं निहन्त्यलम् ॥ ८ ॥

शुद्धगंधक, शुद्ध पारा, प्रत्येक एक २ तोला लेकर कजली क
फिर लौहभस्म, शुद्ध मनासिल शुद्ध हड़ताल, अभ्रक भस्म, शिलाज
शुद्ध गुग्गुल प्रत्येक द्रव्य एक२ तोला लेकर, उसमें मिलावे। फि
विष्णुक्रान्ता, दारुहल्दी, बावची, चीता, पुनर्नवा, देवदार, हर
बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, इन सब द्रव्यों
से प्रत्येक का चूर्ण एक २ तोला ले फिर सब द्रव्यों को एकत्र पी
कर त्रिफला और भांगरे के रससे तीन२ दिन तक भावना दे
फिर चनेके समान गोली बनावे और प्रतिदिन खावे। और अनुप
में नीमके पत्ते, फूल और छाल प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर कुल
शाण भरले और उसमें घी मिलाकर खावे तो सब प्रकार के वात
दूर होते हैं। यह महाघोर वातरक्त, गम्भीर वातरक्त तथा सर्वांग
वात रक्त, तथा सर्व उपद्रवयुक्त साध्य तथा असाध्य वातरक्त
नष्ट करता है ॥ ४—८ ॥

तालभस्म।

हरितालं पलं शुद्धं तथा कर्षं विषस्य च ।
श्वेताङ्कोठरसेनैव द्वयमेकत्रखल्लयेत् ॥ ६ ॥
पलाशभस्म द्विपलं निधाय स्थालिकोपरि ।
तद्भस्मोपरि तालस्य गोलकं स्थापयेत् सुधीः ॥ १० ॥
तस्योपरि ह्यपामार्ग भस्म दद्यात् पलत्रयम् ।
स्थालीमुखे शरावञ्च दद्यात् यत्नेन लेपयेत् ॥ ११ ॥
लेपयित्वा ततश्चुल्ल्यामहोरात्रं पचेत् भिषक् ।
ततस्तु जायते भस्म शुद्ध कर्पूरसन्निभम् ॥ १२ ॥
गुञ्जात्रयं ततो भक्ष्यमनुपानं विशेषतः ।

वातरक्तञ्च कुष्ठञ्च दद्रुविस्फोटकापचीन् ॥ १३ ॥
विचर्चिकां चर्मदलं वातरक्तञ्च शोणितम् ।
रक्तपित्तं तथा शोषं गलत्कुष्ठं विनाशयेत् ।
हलीमकं तथा शूलमग्निमान्द्यमरोचकम् ॥ १४ ॥

शुद्ध हड़ताल एक पल, शुद्ध विष एक कर्ष दोनों को पीसके श्वेत अङ्कोल के रससे खरल करे। फिर एक हांडी में ढाक की भस्म दो पल रखकर ऊपर हड़ताल की टिकिया रखे, फिर ऊपर से अपामार्ग की भस्म तीन पल, रखदे। ऊपर से हांडी का मुख एक शराव से बंदकर यत्नपूर्वक लीप देवे। फिर एक दिन रात चूल्हे पर पकावे। इस प्रकार शुद्ध कर्पूर के समान श्वेत भस्म होजाती है। इसको तीनरत्ती खाके ऊपर से उचित अनुपान पीवे तो वातरक्त, कुष्ठ, दद्रु, विस्फोटक, अपची, विचर्चिका, चर्मदल, वातरक्त, खून के अन्यरोग, रक्तपित्त, शोथ, गलत्कुष्ठ, हलीमक, शूल, अग्निमांद्य और अरोचक रोग नष्ट होते हैं। (मात्रा एक चावल भर देवें)६—१४।

महातालेश्वरो रसः ।

तथा सिद्धेन तालेन गन्धतुल्येन मेलयेत् ।
द्वयोस्तुल्यं जीर्णताम्रं बालुकायंत्रगं पचेत् ॥ १५ ॥
अयं तालेश्वरो नाम रसः परमदुर्लभः ।
हन्यात् कुष्ठानि सर्वाणि वातरक्तमथापि वा ॥ १६ ॥
शूलमष्टविधं श्वित्रं रसस्तालेश्वरो महान् ॥ १७ ॥

उपर्युक्त तालभस्म एक तोला, शुद्धगंधक एक तोला, ताम्रभस्म दो तोला, सबको खरल करके बालुकायंत्र में पकावे। यह तालेश्वर रस परम दुर्लभ है। इससे सब प्रकार के कुष्ठ, वातरक्त, आठों प्रकार के शूल, तथा श्वेत कुष्ठ दूर होते हैं ॥ १५-१७ ॥

विश्वेश्वरो रसः ।

रसात् दश विषात् पञ्च गन्धकात् दशशोधितात् ।
तुत्थात् दश पलाशस्य बीजेभ्यः पञ्चकारयेत् ॥ १८ ॥

क्षुद्राश्वमार धूस्तूर-नीलीतः करहाटकात्।
दशकं दशकं कुर्यात् शोषयित्वा जटात्वचः ॥ १६ ॥
दशकं दशकं दत्त्वा कुचिलात् दशनूतनात्।
भल्लातकाच्च दशकं चूर्णयित्वा भिषक् ततः ॥ २० ॥
सुदिने च बलिं दत्त्वा वैद्यः पूजापरायणः।
रक्तिकाद्वितयं दद्यात् सहते यदि वा त्रयम् ॥ २१ ॥
वातरक्तं ज्वरं कुष्ठं खरस्पर्शमसौख्यदम्।
आजानुस्फुटितं हन्ति विषजं वास्थिनिःसृतम् ॥ २२ ॥
कुष्ठमष्टादशविधमग्निमान्द्यमरोचकम्।
विश्वेश्वरो रसो नाम विश्वनाथेन भाषितः ॥ २३ ॥
वक्ष्यते कुष्ठरोगे यदौषधं भिषजां वरैः।
वातरक्ते प्रयुञ्जीत कुर्याच्च रक्तमोक्षणम् ॥ २४ ॥

शुद्ध पारा दस तोले, शुद्धविष पांच तोले, शुद्ध गंधक द तोला, शुद्ध नीलाथोथा दस तोला, ढाक के बीज पांच तोला, छो कटेली दस तोला, शुद्ध कनेर दस तोला, शुद्ध धतूरा दस तोल नीली दस तोला,हडजोड़ी दस तोला,इन सबकी जड़ और छाल सुख कर लेवें तथा शुद्ध कुचला दस तोला, शुद्ध भिलांवा दस तोल इन सबका चूर्ण करके रखे। फिर उत्तम दिन बलि देकर पूजा लगा हुआ वैद्य इस रसकी दोरत्ति मात्रा, सह सकने पर तीनर तक मात्रा देवे। तो वातरक्त, ज्वर, कुष्ठ,कठोर स्पर्शवाले तथा दु देनेवाले, घुटनों तक फूटेहुए, विषसे उत्पन्न हुये अथवा हड्डी नि रही होंतो भी यह वातरक्त को अच्छा करता है। अठारह प्रका कुष्ठ, अग्निमांद्य, अरुचि, इन सबको भी यह विश्वनाथ का क हुआ विश्वेश्वर रस दूर करता है ॥ १८-२३ ॥
जो जो औषध कुष्ठरोग में कही है वे ही औषध वातरक्त में प्र करनी चाहियें और खून निकलवाना चाहिये ॥ २४ ॥

इति वातरक्त चिकित्सा ॥

अथोरुस्तम्भचिकित्सा ।

गुञ्जाभद्र रसः ।

निष्कत्रयं शुद्धसूतं निष्कद्वादश गन्धकम् ।
गुञ्जावीजञ्च षड्निष्कं जयन्ती निम्बवीजकम् ॥ १ ॥
प्रत्येकं निष्कमात्रन्तु निष्कं जैपालबीजकम् ।
जयाजम्बीरधुस्तूर–काकमाचीद्रवैर्दिनम् ॥ २ ॥
भावयित्वा वटीं कुर्य्यात् चतुर्गुञ्जा प्रमाणतः ।
गुञ्जाभद्ररसो नाम हिङ्गुसैन्धवसंयुतः ।
शमयत्युल्वणं दुःखमूरुस्तम्भं सुदारुणम् ॥ ३ ॥
शिलाजतु गुग्गलुं वा पिप्पलीमथ नागरम् ।
उरुस्तम्भे पिबेत् मूत्रैर्दशमूलीरसेन वा ॥ ४ ॥
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रं वारिशोषणम् ।
ऊरुस्तम्भे प्रयुञ्जीत चान्यद्वा योगवाहिकम् ॥ ५ ॥

शुद्धपारा तीन निष्क, शुद्ध गंधक बारह निष्क, श्वेतरत्ति के बीज छः निष्क, जयन्ती के बीज एक निष्क, नीमके बीज एक निष्क, शुद्ध जमालगोटा एक निष्क, प्रत्येक द्रव्य को पीसकर भांग, जम्बीरी, धतूरा, और मकोय इनके स्वरस से एक २ दिन भावित करके चार रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इस गुञ्जाभद्र रसको शुद्ध हींग और सैंधा नमक से खावे तो भयंकर दुःखदायी उरुस्तम्भ रोग नष्ट होता है ॥ १–३ ॥ ऊरुस्तम्भ रोग में शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध गुगुल को अथवा पिप्पली को वा सोंठ को गौमूत्र से अथवा दशमूल के क्वाथसे पीवे ॥ ४ ॥ आगे प्लीहाधिकार में जो वारिशोषण नामका रस कहा है उसे ऊरुस्तम्भ रोगमें प्रयोग करे या अन्य योगवाहीरसोंको देवे ॥ ५ ॥

इति ऊरुस्तम्भरोग चिकित्सा

अथामवातचिकित्सा ।

आमवातारिवटिका ।

रसगन्धकलौहाभ्रं तुत्थं टङ्कणसैन्धवम् ।
समभागं विचूर्ण्याथ चूर्णाद्द्विगुणगुग्गुलुः ॥ १ ॥
गुग्गुलोः पादिकं देयं त्रिवृतामूलवल्कलम् ।
तत्समं चित्रकं देयं घृतेन परिमर्दयेत् ॥ २ ॥
खादेत् माषद्वयञ्चास्य त्रिफलाचूर्णयोगतः ।
आमवातारि वटिका पाचिका भेदिका मता ॥ ३ ॥
आमवातं निहन्त्याशु गुल्मशूलोदराणि च ।
यकृत्प्लीहोदराष्ठीला–कामला पाण्ड्वरोचकान् ॥ ४ ॥
ग्रन्थिशूलं शिरः शूलं वातरोगञ्च गृध्रसीम् ।
गलगण्डं गण्डमालां क्रिमिकुष्ठभगन्दरान् ॥ ५ ॥
विद्रधिञ्चान्त्रवृद्धिञ्च ह्यर्शांसि गुदजानि च ।
आमवातारिवटिका पुरेशानेन चोदिता ॥ ६ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, सुहागा, सेंधानमक, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोलालें । पहले पारा गं की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलायें । फिर सब चूर्ण से दु अर्थात् चौदह तोले शुद्ध गूगल मिलायें । और गूगल का चौ भाग अर्थात् साढ़े तीन तोला त्रिवी की जड़ का चूर्ण डाले और का चूर्ण साढ़ेतीन तोला डालें । सबको एकत्र करके कूट पीस घी से मर्दन कर रखें । इसको दो माशा भर लेकर त्रिफला के चू खावें । यह आमवातारि वटी पाचक और भेदक है । आमवात शीघ्र नाश करती है । यह गुल्म, शूल, उदररोग, यकृत, प्लीहा अष्ठीला, कामला, पाण्डु, अरोचक, ग्रन्थिशूल, शिरशूल, वात गृध्रसी, गलगण्ड, गण्डमाला, क्रिमि, कुष्ठ, भगन्दर, विद्रधि,

वृद्धि, बवासीर, मस्से, आदि रोगों को नष्ट करती है। यह वटी पहले ईशानदेव ने बताई थी ॥ १–६ ॥

अपराऽऽमवातारि वटिका ।

रसगन्धौ वराबन्ही गुग्गलुः क्रमवर्धितः ।
एतदेरण्डतैलेन मर्दयेदतिचिक्कणम् ॥ ७ ॥
कर्षो ऽस्यैरण्डतैलेन हन्त्युष्णजलपायिनः ।
आमवातमतीवोग्रं दुग्धं मुद्गादि वर्जयेत् ॥ ८ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगंधक दो तोला, हरड़ का चूर्ण तीन तोला, बहेड़े का चूर्ण चार तोला, आंवले का चूर्ण पांच तोला, चीता का चूर्ण छः तोला, शुद्ध गुग्गुल सात तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलावे और एरण्ड के तेल से मर्दन करके रखे। इसे एक कर्षभर लेकर एरण्ड के तेल से खावे। और गरम पानी पीवे तो अतीव उग्र आमवातरोग को यह वटी नष्ट करती है। इसके सेवन के समय दूध और मूंग आदि न खावें ॥७॥८॥

आमवातेश्वरो रसः ।

शुद्धगन्धः पलार्द्धश्च मृतताम्रञ्च तत् समम् ।
ताम्रार्द्धः पारदः शुद्धः रसतुल्यं मृतायसम् ॥ ९ ॥
सर्वं पञ्चाङ्गुलेनैव भावयेच्च पुनः पुनः ।
सञ्चूर्ण्य पञ्चकोलोत्थैः क्वाथैः सर्वं विभावयेत् ॥ १० ॥
रौद्रे विंशतिवारांश्च गुडूचीनां रसैर्दश ।
भृष्टटङ्कणचूर्णेन तुल्येन सह मेलयेत् ॥ ११ ॥
टङ्कणार्द्धं विडं देयं मारिचं विड़तुल्यकम् ।
तिन्तिड़ीक्षार तुल्यश्च सूततुल्यश्च दन्तिकम् ॥ १२ ॥
त्रिकटु त्रिफलश्चैव लवङ्गश्चार्द्धभागिकम् ।
आमवातेश्वरो नाम विष्णुना परिकीर्त्तितः ॥ १३ ॥
महाग्निकारको ह्येष आमवातान्तको मतः ।

स्थूलानां कर्षणः श्रेष्ठः कृशणांस्थौल्यकारकः ॥ १४ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोग विनाशनः ।
अनेन सदृशो नास्ति वन्हिदीप्तिकरो महान् ।
गुल्मार्शोग्रहणीदोष-शोथपाण्डुरुजापहः ॥ १५ ॥

शुद्ध गंधक आधा पल, ताम्र भस्म आधा पल, शुद्धपारा चौ पल, लौहभस्म चौथाई पल । इनमें से पहले पारा गंधक की क करे । फिर अन्य द्रव्य मिलाकर एरण्ड की जड़के क्वाथ से सा भावना देवे । फिर उसे चूर्ण करके पंचकोल के क्वाथ से धूपमें वार भावना देवे । फिर गिलोय के स्वरस से दस भावना देवे। सूख जाये तब भूने हुये सुहागे का चूर्ण सारे चूर्ण के बराबर और सुहागे से आधा विड्लवण डाले, विडलवण के सम मिरच का चूर्ण डाले और इतनाही इमली का क्षार डाले, दन्ती चूर्ण चौथाइ पल डाले । तथा सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, ब आंवला, और लौंगका चूर्ण, सब द्रव्य आधा२पल डालकर, स घोटलें । यह आमवातेश्वर रस विष्णु भगवान ने कहा है। यह वात नाशक, अत्यन्त अग्निवर्धक, स्थूल शरीर को पतला करने तथा पतले शरीर को स्थूल करनेवाला है । अनुपान भेद से रोगों को दूर करता है । इसके समान अन्य अग्निवर्धक रस न यह गुल्म, बवासीर, ग्रहणी के दोष, शोथ, पाण्डुरोग, इनको करता है ॥ ९—१५ ॥

बृद्धदाराद्यं लौहम् ।

वृद्धदारत्रिवृद्दन्ती-गजपिप्पलिमाणकैः ।
त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकं त्वयः ।
सर्वानेव गदान् हन्ति केशरी करिणो यथा ॥ १६ ॥

विधारा का चूर्ण, त्रिवी की जड़का चूर्ण, दन्तीमूल का गजपीपल, पुराना माणकन्द, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, पीपल, विडंग, चीता, मोथा, इन सबका चूर्ण, इनमें से प्रत्येक समभाग लें और सबके समभाग लौहभस्म ले । इन सबको

रखे। इसे खाने से आमवातादि रोग ऐसे भागते हैं जैसे शेर से हाथी भागते हैं ॥ १६ ॥

शिवा गुग्गुलुः।

शिवाविभीतामलकीफलानां प्रत्येकशो मुष्टिचतुष्टयञ्च।
तोयाढ़के तत् क्वथितं विधाय पादावशेषे त्ववतारणीयम् ॥१७॥
एरण्डतैलं द्विपलं निधाय पिचुत्रयं गन्धकनामकस्य।
पचेत् पुरस्यात्र पलद्वयञ्च पाकावशेषे च विचूर्ण्य दद्यात् ॥१८॥
रास्ना विडङ्गं मरिचं कणा च दन्तीजटानागरदेवदारु।
प्रत्येकशः कोलमितं तथैषां विचूर्ण्य निक्षिप्य नियोजयेच्च॥१९॥
आमवाते कटीशूले गृध्रसी क्रोष्टुशीर्षके।
न चान्यदस्ति भेषज्यं यथा ऽयं गुग्गुलुः स्मृतः ॥ २० ॥

हरड़, बहेड़ा आंवला, प्रत्येक आधा २ शराव लेकर कूटकर एक आढक जलमें डालकर उबालें। चौथाई जल शेष बचने पर उतारकर छान लें। अब इस क्वाथमें एरण्ड का तेल दोपल, शुद्ध गंधक छः तोला, गुग्गुल दो पल, इन सबको मिलाकर पकावे। पाक शेष होनेपर रास्ना, विडंग, मिरच, पीपल, दन्तीमूल, जटामांसी सोंठ, देवदार, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कोल लेकर उसमें डालें। फिर सबको मिलाकर रखें। इसे उचित मात्रा में खावें तो आमवात, कमर का दर्द, गृध्रसी, क्रोष्टुशीर्षक ये सब रोग दूर होते हैं। तथा इन रोगों को दूर करने के लिये ऐसी उत्तम कोई दूसरी औषध नहीं है ॥ १७—२० ॥

आमवातगजसिंहमोदकः।

शुण्ठीचूर्णस्य प्रस्थैकं यमान्याश्च पलाष्टकम्।
जीरकस्य पले द्वे च धन्याकस्य पलद्वयम् ॥ २१ ॥
पलैकंशतपुष्पाया लवङ्गस्य पलं तथा।
टङ्कणस्य पलं भृष्टं मरिचस्य पलानि च ॥ २२ ॥
त्रिवृता त्रिफलाक्षार–पिप्पलीनां पलं तथा।

शठ्येलातजपत्राणां चविकानां पलं तथा ॥ २३ ॥
अभ्रं लौहं तथा वङ्गं प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।
एतेषां सर्वचूर्णानां खण्डं दद्यात् गुणत्रयम् ॥ २४ ॥
घृतेन मधुना मिश्रं कर्षमात्रन्तु मोदकम् ।
एकैकं भक्षयेत् प्रातः घृतञ्चानुपिबेत् पयः ॥ २५ ॥
शूलघ्नो रक्तपित्तघ्नश्चाम्लपित्तविनाशनः ।
आमवातकुलध्वंसी केशरी विधिनिर्मितः ॥ २६ ॥
रामवाण रसो देयो योगवाहिरसेन्द्रकाः ।
आमवाते विधीयन्ते सानुपानैः प्रयत्नतः ॥ २७ ॥

सोंठका चूर्ण एक प्रस्थ, अजवायन आठपल, जीराचूर्ण दो पल, धनियां दो पल, सौंफ एक पल, लौंग एकपल, सुहागे की खील पल, मिरच का चूर्ण एकपल, त्रिवी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, यवक्षार पीपल, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लेवे । कचूर, इलायची तेजपात, चव्य प्रत्येक का चूर्ण एक २ पल लेवे, अभ्रकभस्म, लौह भस्म, बंग भस्म, प्रत्येक एक २ पल लें । सबके चूर्णों को भली प्रकार मिलाकर खूब खरल करले । सब चूर्ण से तिगुनी खांड मिला दें और घी तथा शहद मिला कर, एक कर्ष भरका मोदक बनाके प्रातः काल एक लड्डू खावे और ऊपर से दूधमें घी डालकर पीवे । इससे शूल, रक्तपित्त, अम्लपित्त, सब प्रकार का आमवात ये रोग नष्ट होते हैं ॥ २१—२६ ॥ रामबाण रस तथा अन्य योगवाही रस अनुपानों से देने से आमवात रोग शान्त होता है ॥ २७ ॥

इति आमवातचिकित्सा ॥

अथ शूलरोगचिकित्सा ।

सप्तामृत लौहम् ।

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिहन् ।
मधुसर्पिर्युतं सम्यक् गव्यक्षीरं पिबेदनु ॥ १ ॥

छर्दिं सतिमिरं शूलमम्लपित्तं ज्वरारुचिम् ।
मूत्रकृच्छ्रं तथा मेहं हन्यादेतन्न संशयः ॥ २ ॥

मुलह्ठी का चूर्ण, हरड़, बहेड़े आंवले, का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले । लौहभस्म चार तोला ले । सबको पीसकर रखे । इसे उचित मात्रा में शहद और घी से खावें और ऊपर से गौ का दूध पीयें तो वमन, तिमिर रोग, शूल, अम्लपित्त, अरुचि, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह इन सब रोगों को निःसन्देह नाश करता है ॥ १— २॥

त्रिफलालौहम ।

तीक्ष्णायश्चूर्णसंयुक्तं त्रिफलाचूर्णमुत्तमम् ।
क्षीरेण पाययेद्धीमान् सद्यः शूलनिवारणम् ॥ ३ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, इन सबका चूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक२तोला लें, लौह भस्म तीन तोला लें । सबको मिलाकर रखे । उचित मात्रा में दूध से पिलावे तो शूल को तुरन्त दूर करता है । (मात्रा दो रत्ती दें) ॥ ३ ॥

चतुः समलौहम् ।

अभ्रं ताम्रं रसं लौहं गन्धकं संस्कृतं पलम् ।
सर्वमेतत् समाहृत्य यत्नतः कुशलो भिषक् ॥ ४ ॥
आज्ये पले द्वादशके दुग्धे वत्सरसंख्यके ।
पक्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनवाससा ॥ ५ ॥
विडङ्गत्रिफलावन्हि–त्रिकटूनां तथैव च ।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतानथ संमिश्रितान् नयेत् ॥ ६ ॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेच्च विचक्षणः ।
आत्मानः शोभने चान्हि पूजयित्वा रविं गुरुम् ॥ ७ ॥
घृतेन मधुनालोड्य भक्षयेत् माषकादिकम् ।
अष्टौमाषान् क्रमेणैव वर्द्धयेच्च समाहितः ॥ ८ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं नारिकेलजलं पयः ।

जीर्णे लोहित शाल्यन्नं मुद्गमांसरसं तथा ॥ ९ ॥
भक्षयेत् घृतसंयुक्तं सद्यः शूलात् विमुच्यते ।
हृच्छूलं पार्श्वशूलं च सामवातं कटीग्रहम् ।
गुल्मशूलं शिरः शूलं योगेनानेन नाशयेत् ॥ १० ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ पल ले। पहले पारे गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला दे। फिर गौका घी बारह पल और गौका दूध बारह पल लेकर मिलावे और इसमें पूर्व लिखित सारा चूर्ण डाल कर पकावे। पाक शेष होनेपर, कपड़े में से छना हुआ विडंग, हरड़ बहेड़ा, आंवला, चीता, सोंठ, मिरच पीपल, इन सब समभाग लिये हुए द्रव्यों का चूर्ण मिलित एक पल उस पाक शेष में मिला देवे। सबको भली प्रकार मर्दन कर उत्तम पात्र में रखे। सूर्यभगवान तथा अपने गुरु की पूजा करके इसे एक माषा से आठ माशा तक क्रमशः बढ़ा कर घी और शहद से मिलाकर खावे। ऊपर से नारियल का जल पीवे। पचने पर लाल चावल, मूंगका रस, मांसरस, घीसे युक्त करके खावे। इससे शूल तुरन्त नाश होते हैं हृदय का शूल, पसलियों का शूल, आमवात, कटिग्रह, गुल्मशूल, शिरशूल इससे नाश होते हैं ॥ [यहां लौहभस्म चार पल भी कई आचार्य डालते हैं। क्यों कि "चतुः समलौह" नाम तभी सार्थक होता है ॥] ॥ ४—७ ॥

पञ्चात्मको रसः ।

मृतसूताभ्रकं चाम्लवेतसं ताम्रगन्धकम् ।
विषं फलत्रयाच्चूर्णं तुल्यं मर्द्यं दिनावधि ॥ ११ ॥
जयन्ती मुण्डिरी वासा बृहती च गुडूचिका ।
महाराष्ट्री जम्बुरसैस्तथा नीलोत्पलस्य च ॥ १२ ॥
प्रतिद्रावैर्दिनं भाव्यं ततः संशोष्य यत्नतः ।
अर्द्धांशं पञ्चलवणं दत्त्वाऽऽर्द्रक रसेन च ॥ १३ ॥
दिनं पेष्यं ततः कुर्यात् वटिकां चणसम्मिताम् ।

प्रातर्मध्यान्हरात्रौ च भक्षयेद् वटिकात्रयम् ॥ १४ ॥
माषेक्षुपिष्टगुर्वन्नं गोपयश्च हितं तथा।
सेवेत वातशूलार्त्तो रसं पञ्चात्मकं शुभम् ॥ १५ ॥

रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, अम्लवेत, ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्धविष, हरड़, बहेड़ा, आंवला प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लेकर सबको एकदिन खरल करके मिलावे। फिर जयन्ती, मुण्डी, बांसा, बड़ी कटेली, गिलोय, ब्रह्मदण्डी, जामुन, नीलाकमल इनके स्वरस से क्रमशः सब चूर्णको एक २ दिन भावना देवे। फिर सुखा कर सब चूर्ण से आधा भाग पांचों लवणों का मिलित चूर्ण डाले। फिर अदरक के रसकी एक भावना एकदिन देकर चने समान गोली बनावे। इसकी प्रातः, मध्यान्ह, और रात को तीनवार तीन गोली खावें। पथ्यमें उड़द, ऊख पीठी, भारी अन्न, गौका दूध दे॥ ये सब द्रव्य वातशूल वाले को पथ्य हैं। यह पञ्चात्मक रस वातशूलको नाश करता है॥ ११—१५॥

धात्री लौहम्।

कुडवं शुद्धमण्डूरं यत्रश्च कुडवं तथा।
पाकार्थश्च जलं प्रस्थं चतुर्भागावशेषितम् ॥ १६ ॥
शतावरीरसस्याष्टावामलक्या रसस्य च।
तथा दधिपयो भूमिकुष्माण्डस्य चतुः पलम् ॥ १७ ॥
चतुः पलमिक्षुरसं दद्यात् तत्र विचक्षणः।
प्रक्षिपेत् जीरकं धान्यं त्रिजातं करिपिप्पलीम् ॥१८॥
मुस्तं हरीतकीश्चैव अभ्रं लौहं कटुत्रयम्।
रेणुका त्रिफला चैव तालीशं स्वर्णकेशरम् ॥ १९ ॥
कटुकं मधुकं रास्ना चाश्वगन्धा च चन्दनम्।
एतेषां कार्षिकं भागं चूर्णयित्वा विनिक्षिपेत् ॥ २० ॥
भोजनाद्यवसाने च मध्ये चैव समाहितः।
तोलैकं भक्षयेन्नित्यमनुपानं पयस्तथा ॥ २१ ॥

शूलमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ २२॥
परिणामसमुत्थञ्च ह्यन्नद्रवभवं तथा।
द्वन्द्वजानपि शूलांश्च ह्यम्लपित्तं सुदारुणम्।
सर्वशूलहरं श्रेष्ठं धात्रीलौहमिदं शुभम् ॥ २३॥

जौ एक कुड़वभर लेकर उसमें एक प्रस्थ जल डालकर पकावे चौथाई रहने पर उतार ले। इस क्काथमें एक कुड़वभर मण्डूर डाले तथा शतावर का स्वरस आठपल, आंवले का स्वरस आठ पल दही चार पल, दूध चार पल, विदारीकंद का स्वरस चार पल, ईख का स्वरस चारपल, डालकर पकावे। पाकशेष होनेपर जीरा, धनियां, इलायची, तेजपात, दारचीनी, गजपीपल, मोथा, हरड़, अभ्रक भस्म, लौहभस्म, सोंठ, मिरच पीपल, रेणुका, हरड़, बहेड़ा, आंवला तालीशपत्र, नागकेशर, कुटकी, मुलट्ठी, रास्ना, असगंध, लालचन्दन प्रत्येक द्रव्य का एककर्ष चूर्ण लेकर पूर्वोक्त द्रव्यों में मिलावे सबको मिलाकर रखे। इसे दो माशा से एक तोला तक खाकर ऊपर से दूध पीवे तो आठों प्रकार का शूल, साध्य या असाध्य शूल, वातिक पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक शूल परिणामशूल, अन्नद्रव का शूल द्वन्द्वजशूल, अम्लपित्त, तथा सब प्रकार के शूलों को हरने के लिये यह धात्री लौह उत्तम औषध है ॥ १८-२३

शूलराज लौहम्।

कर्षैकं कान्तलौहस्य शुद्धमभ्रं पलं तथा।
सितायाश्च पलञ्चैकं मधु सर्पिस्तथैव च ॥ २४॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत्।
त्रिकटु त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ २५॥
प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत्।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय शिशिराम्ब्वनुपानतः ॥ २६॥

सर्वदोषभवं शूलं कुक्षिशूलञ्च यद् भवेत्।
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ २७॥
अर्शांसि ग्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसूचिकाम्।
शूलराजमिदं लौहं हरेण परिनिर्मितम् ॥ २८ ॥

कान्तलौह भस्म एक कर्ष, अभ्रक भस्म एक पल, मिश्री एक पल, शहद एक पल, घी एक पल, प्रत्येक द्रव्य को एक लोहे के खरल में डाले और एकत्र कर खरल करे। फिर सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़ बहेड़ा, आंवला, मोथा, विडंग, चीता, चव्य, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लेकर उसमें मिलावे। इसे उचित मात्रा में प्रातःकाल खाकर ऊपर से ठण्डा जल पीवे तो सर्व दोषजशूल, कुक्षिशूल, हृदय का शूल, पसली का शूल, अम्लपित्त, बवासीर, ग्रहणीदोष, प्रमेह, विसूचिका, इन सब रोगों को दूर करता है। यह शूलराज लौह महादेवजी ने बनाया था ॥ २४—२८ ॥

विद्याधराभ्रम्।

विडङ्गमुस्तत्रिफलागुडूची-दन्ती त्रिवृद्वन्हिकटुत्रिकञ्च।
प्रत्येकमेषां पिचुभागचूर्णं पलानि चत्वार्य्ययसो मलस्य ॥२९॥
गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य यद्वाऽयसस्तानि शिवाटिकायाः।
कृष्णाभ्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥३०॥
पादोनकर्षं स्वरसेन खल्वे शिलातले मन्युमणीदलस्य।
सम्मर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्ध-पाषाणचूर्णेन पिचून्मितेन ॥ ३१ ॥
युक्त्या ततः पूर्वरजांसि दत्त्वा सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात्।
निधापयेत् स्निग्धविशुद्धभाण्डे ततः प्रयोज्यास्य रसायनस्य॥३२॥
प्राङ्माषको वाऽप्यथवा द्वितीयो गव्यं पयो वा शिशिरं जलं वा।
पिबेदयं योगवरः प्रभूत-कालप्रनष्टानलदीपकश्च ॥ ३३ ॥
रोगं निहन्यात् परिणामशूलं शूलं तथाऽन्नद्रवसंज्ञकञ्च।
यक्ष्माऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम्।

न सन्ति ते यान्न निहन्ति रोगान् योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः

मण्डूकपर्णी के स्वरस में शुद्ध किया हुआ पारा पौने दो तोला शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्जली करे। फिर गौमूत्र में शुद्ध किया हुआ मण्डूर अथवा लौह भस्म चार पल डाले। कृष्णाभ्रकभस्म एक पल डाले। फिर विडंग, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, गिलोय, दन्ती, त्रिवी, चीता, सोंठ, मिरच, पीपल, इनमें से प्रत्येक का चूर्ण दो २ तोला ले। इन सब द्रव्यों को मिलाकर घी और शहद डालकर घोटे। और एक चिकने पात्रमें रखे। इसे एक माषा से दोमाषा तक क्रमशः बढ़ाकर खावे और ऊपर से गौका दूध वा ठण्डा जल पीवे तो बहुत पुरानी मन्दाग्नि, परिणाम शूल, अन्नद्रवशूल, राजयक्ष्मा, अम्लपित्त, बढ़ाहुआ ग्रहणी रोग, जीर्णज्वर, तथा बढ़ेहुए रक्तपित्त को दूर करता है। ऐसा कोई रोग नहीं जिसे यह ठीक तरह सेवन किया हुआ रस दूर न करता हो ॥ २६-३४ ॥

वृहद्विद्याधराभ्रम्।

शुद्धसूतं तथा गन्धः फलत्रय कटुत्रयम्।
विडङ्गं मुस्तकं दन्ती त्रिवृता चित्रकं तथा ॥ ३५ ॥
आखुपर्णी ग्रन्थिकश्च प्रत्येकं कर्षसम्मितम्।
पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य मृतायश्च चतुर्गुणम् ॥ ३६ ॥
घृतेन मधुना पिष्ट्वा वटिकां कोलसम्मिताम्।
एकैकां वटिकां खादेत् प्रातरुत्थाय नित्यशः ॥ ३७ ॥
अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम्।
सर्वशूलं निहन्त्याशु वातपित्तभवं तथा ॥ ३८ ॥
एकजं द्वन्द्वजश्चैव तथैव सान्निपातिकम्।
परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ ३९ ॥
कार्श्यं वैवर्ण्यमालस्यं तन्द्रा ऽरुचिविनाशनम्।
साध्यासाध्यं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ ४० ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, प्रत्येक एक २ कर्ष लेकर कज्जली करें। फिर हरड़, आंवला, बहेड़ा, सोंठ, मिरच, पीपल, वायविडंग, मोथा दन्ती, त्रिवी, चीता, मूषकपर्णी' पिप्पलामूल, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष मिलावे। अभ्रक भस्म एक पल, लौहभस्म चार पल, सब को मिलाकर घी और शहद से घोटकर बेर के समान गोली बनाके प्रातः एक २ खावें और ऊपर से गौका दूध वा नारियल का जल पीवें। तो सर्वशूल, वातपित्त के शूल, एकज, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, परिणामशूल, तथा आमवात से हुआ शूल, कृशता, विवर्णता, आलस्य, तन्द्रा, अरुचि, इन सबका नाश करता है। साध्य वा असाध्य कैसा भी शूल हो इससे ऐसा ही नाश होता है जैसे सूर्य से अन्धकार नाश होजाता है ॥ ३५-४० ॥

सर्वाङ्गसुन्दरो रसः।

शुद्धसूतं तथा ताम्रं शिलामाक्षिक तालकम्।
रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लौहमभ्रंसनागरम् ॥ ४१ ॥
चूर्णयेत् पञ्चलवणं देयं सर्वन्तु तुल्यकम्।
गन्धकं मिश्रयेत् सर्वं रसैरेषां विभावयेत् ॥ ४२ ॥
शुण्ठी-जयन्ती-विजया-महाराष्ट्रीकधूर्त्तजैः।
सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥ ४३ ॥
खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां माषमात्रं दिने दिने।
कफवातामयं हन्ति चानुपानं वदाम्यहम् ॥ ४४ ॥
व्योषं सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जवीजसंयुतम्।
पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिकृन्तनम् ॥ ४५ ॥

शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, शुद्धमनशिल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध हड़ताल, रौप्यभस्म, स्वर्णभस्म, वंगभस्म, लौहभस्म, अभ्रक भस्म, सोंठका चूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। पांचों लवण मिलित ग्यारह तोले लें। और शुद्ध गंधक एक तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सबको सोंठ, जयन्ती

भांग, ब्रह्मयष्टी, धतूरा इनके क्वाथ वा स्वरस से घोट भावना दे रखें। यह विष्णु का बनाया हुआ सर्वांगसुन्दर रस है। यह पत और सोंठके साथ एक माषा प्रतिदिन खाया जाये तो कफवा रोगोंको नाश करता है। इसपरसे त्रिकुटा, सोंचलनमक, हींग, ज के बीज इनका चूर्ण गर्म पानी से पीवे तो सभी शूल होते हैं ॥ ४१—४५ ॥

शूलवज्रिणी वटिका।

रसगन्धक लौहानां पलार्द्धेन समन्वितम्।
त्रिफला रामठं शुल्वं शठीत्रिकटु टङ्कणम् ॥ ४६ ॥
पत्रं त्वगेला तालीश–जातीफललवङ्गकम्।
यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं तोलकं मतम् ॥ ४७ ॥
माषैका वटिका कार्य्या छागीदुग्धेन वा पुनः।
एकैका भक्षिता चेयं वटिकाशूलवज्रिणी ॥ ४८ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा।
अम्लपित्तामवातश्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ४९ ॥
शोथं गलग्रहं वृद्धिं श्लीपदं सभगन्दरम्।
वृद्धबालकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ५० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, प्रत्येक आधा २ पल पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलावे। हरड़, बहेड़ा, आंवला, हींग, ताम्रभस्म, कचूर, सोंठ, मिरच, पी सुहागा, तजपात, दारचीनी, इलायची, तालीशपत्र, जायफल, लौं अजवायन जीरा, धनियां, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। इन सब पीसकर एक २ माशे की गोली बनाकर बकरी के दूध से पीवे। शूल वज्रिणी कहते हैं। यह आठ प्रकार के शूल, प्लीहा, गुल्म, रोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गलग्रह, अण्ड श्लीपद, भगन्दर, को नाश करती है। वृद्धों को बालकों के स बनाती तथा मन्दाग्नि को दीपन करती है ॥ ४६—५० ॥

त्रिपुरभैरवो रसः ।

भागो रसस्याश्महेम्नः भागो ग्राह्योऽतियत्नतः ।
तयोर्द्वादशभागानि ताम्रपत्राणि लेपयेत् ॥ ५१ ॥
पचेत् शूलहरः सूतो भवेत् त्रिपुरभैरवः ।
माषो मध्वाज्यसंयुक्तो देयोऽस्य परिणामजे ।
अन्ये त्वेरण्डतैलेन हिङ्गुत्रययुतो रसः ॥ ५२ ॥

शुद्धपारा छः तोला, शूद्ध गंधक छः तोला दोनों की कज्जली करे। शुद्ध तांबेके सूक्ष्म पत्र एक तोला ले। पत्तों पर कज्जली की लेप करके गजपुट में फूंकदे। यह त्रिपुरभैरव रस शूल नाशक है। इसे एक माषा भर लेकर शहद और घी से खावें तो परिणामशूल नाश होता है। इसे एरण्डतैल तथा हींगसे मिलाकर देते हैं (मात्रा आधी रत्तिदें)५१-५२

अग्निमुखो रसः ।

रसबलिगगनार्कं वेतसाम्लं विषं स्यात् ।
सवरमिह पृथक् स्याद् भावयेद् घस्रमेतैः ॥
कनकभुजगवल्ली–कण्टकारी जयाद्भिः ।
कमलसलिलवासा–मुष्टिवज्र्यम्बुपूरैः ॥ ५३ ॥
अरुणसदृशपाकैर्मातुलुङ्गैश्च योज्यः ।
पुटगण इह तुल्यो भावयेदार्द्रकाद्भिः ।
दहनवदननाम्ना वल्लमात्रो निहन्ति ।
प्रबलसकल शूलं तद्विकारानशेषान् ॥ ५४ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म अम्लवेत का चूर्ण विषशुद्ध, हरड़ चूर्ण, बहेड़ा चूर्ण, आंवला चूर्ण प्रत्येक एक भाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्यद्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर क्रमशः धतूरा, पान कटेली, और भांग इनके रससे एक२ दिन भावना दे। फिर कमल, सुगंधबाला, बांसा शुद्ध कुचला, थोहर का दूध, शुद्ध गुगुल, मातुलुङ्ग नीबूका रस, पांचों नमक इनमें से

प्रत्येक द्रव्य एक २ भाग मिलाकर सबको अदरक के रससे भावना देवे। यह अग्निमुख रस डेढ़रत्ति खाने से सब प्रकार के प्रबल शूल को दूर करताहै तथा शूलसम्बन्धी सब विकारोंको दूरकरताहै॥५४॥

शूलगजकेशरी।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं यामैकं मर्दयेद् दृढम्।
द्वयोस्तुल्यं शुद्धताम्रं सम्पुटे सन्निवेशयेत्॥ ५५॥
ऊर्ध्वाधो लवणं दत्त्वा मृद्भाण्डे स्थापयेद् भिषक्।
रुध्वा गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ५६॥
सम्पुटं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं पर्णखण्डे द्विगुञ्जकम्।
भक्षयेत् सर्वशूलार्त्तो सशुण्ठीहिङ्गुजीरकम्॥ ५७॥
वचामरिचजं चूर्णं कर्षमुष्णजलैः पिबेत्।
असाध्यं नाशयेत् शूलं श्रीशूलगजकेशरी॥ ५८॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगंधक दो तोला दोनों को एक पहर घोटकर कज्जली करे। शुद्ध ताम्रभस्म तीन तोला ले। इसे कज्जली से खरल करे। इस सारे चूर्णको एक शराव में बंदकर सम्पुट करे। फिर इस सम्पुट को एक मिट्टी की छोटी हांडी के मध्य में रखकर ऊपर नीचे एक २ पल लवण भरकर हांडी का मुंह बंद करदे और गजपुट में फूंके। स्वांग शीतल होनेपर इसमें से निकालकर द्रव्य को खरल करे। इसे पान के साथ दोरत्ति भर खावे तो सब प्रकार के शूल दूर होताहै। अनुपान में हींग, सोंठ, जीरा, बच, मरिच इनको समभाग ले चूर्णकर एक कर्षभर खाके गर्म पानी पीवे। इसके सेवन से असाध्य शूलभी नष्ट होता है। इसका नाम शूलगजकेशरी रस है (मात्रा आधी रत्ति दें)॥ ५५—५८॥

त्रिगुणाख्यो रसः।

टङ्कणं हारिणं शृङ्गं स्वर्णं गन्धः मृतंरसम्।
दिनैकमार्द्रकद्रावैर्मर्द्यं रुद्ध्वा पुटे पचेत्॥ ५९॥
त्रिगुणाख्यो रसो नम्रा माषैकं मधुसर्पिषा।

सैन्धवं जीरकं हिङ्गु मध्वाज्याभ्यां लिहेदनु ।
पक्तिशूलहरः ख्यातो याममात्रान्न संशयः ॥ ६० ॥

शुद्ध सुहागा, हिरण के सींग की भस्म, स्वर्णभस्म, शुद्धगंधक रससिन्दूर प्रत्येक द्रव्य समभाग ले चूर्णकर अदरक के रससे एक दिन मर्दनकर सम्पुट में रख पुटदे तो यह त्रिगुणाख्य रस एकमाशा लेकर घी और शहद से खावे तो एक पहर में परिणामशूल नाश होता है। पीछे से अनुपान में सैंधव, हींग, जीरा, इन्हें घी और शहद से चाटे ॥ ५९ ॥ ६० ॥

शूलहरणयोगः ।

हरीतकी त्रिकटुकं कुचिलं हिङ्गु सैन्धवम् ।
गन्धकश्च समं सर्वं वटीं कुर्य्यात् सुखावहाम् ॥ ६१ ॥
लघुकोलप्रमाणान्तु शस्यते प्रातरेवहि ।
एकैका वटिका ग्राह्या गुल्मशूलविनाशिनी ॥ ६२ ॥
ग्रहण्यामतिसारे च साजीर्णे मन्दपावके ।
योजयेदुष्णपयसा सुखमाप्नोति निश्चितम् ।
सुवर्णश्च भवेद् देहंसदोत्साहयुतं नृणाम् ॥ ६३ ॥

हरड़ चूर्ण, सोंठ, मिरच, पीपल, शुद्ध कुचला, हींग, सैंधव, शुद्ध गंधक प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले घोटकर छोटे बेर के समान गोली बनाले। इसे प्रातःकाल खावे तो गुल्मशूल को नाश करती है इसे ग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण मन्दाग्नि में गरम जलसे देवे तो सुखदायक होता है। सदा उत्साहयुक्त तथा सुन्दरवर्णयुक्त देह इसके प्रयोग से हो जाता है ॥ ६१-६३ ॥

शर्करालौहम् ।

त्रिफलायास्तथा धात्र्याश्चूर्णं वा काललौहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु योजयेत् ॥ ६४ ॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, खांड प्रत्येक का चूर्ण एक तोला ले, लौह भस्म पांच तोला मिलावे। इसे उचित मात्रा में खाने से सर्व

शूल दूर होते हैं ॥ ६४ ॥

शङ्खादिचूर्णम्।

शङ्खचूर्णस्य च पलं पञ्चैव लवणानि च।
क्षारं टङ्कणकं जाती शतपुष्पा यमानिका ॥ ६५ ॥
हिङ्गु त्रिकटुकञ्चैव सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
आमवातं यकृच्छूलं परिणामसमुद्भवम्।
अन्नद्रवकृतं शूलं शूलञ्चैव त्रिदोषजम् ॥ ६६ ॥
व्यायामं मैथुनं मद्यं लवणानि कटूनि च।
वेगरोधं शुचं क्रोधं वर्जयेत् शूलवान् नरः ॥ ६७ ॥

शंख भस्म एक पल ले, पांचों नमक, यवक्षार, सुहागा शु[illegible] जायफल, सौंफ, अजवायन, हींग, सोंठ, मिरच, पीपल इनमें [illegible] प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग अर्थात् एक २ पल लेकर खरल [illegible] इसकी उचित मात्रा खानेसे आमवात, यकृत् अर्थात् जिगर का [illegible] परिणामशूल, अन्नद्रवकृतशूल, त्रिदोषज शूल दूर होता है ॥६५।[illegible] व्यायाम, मैथुन, मद्य, लवण, कटुपदार्थ, वेगों का रोकना, शोक, [illegible] इन सबको शूल रोग वाला त्याग देवे ॥ ६७ ॥

इति तृष्णाचिकित्सा ॥

अथोदावर्त्तानाह-चिकित्सा।

वैद्यनाथ वटी।

पथ्या त्रिकटु सूतश्च द्विगुणं कानकं तथा।
मन्युमणीरसैरम्ल-लोणिकाया रसैः कृता ॥ १ ॥
गुडिकोदरगुल्मादि-पाण्ड्वामयविनाशिनी।
क्रिमि कुष्ठगात्रकण्डू-पिडकांश्च निहन्ति च।
गुड़ी सिद्धफला चेयं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २ ॥

हरड़, सौंठ, मिरच, पीपल, रस सिन्दूर प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले। शुद्ध जमालगोटे के बीज दो तोला ले। सबको एकत्र पीसकर मण्डूकपर्णी के रससे तथा चाङ्गेरी के स्वरस से घोटकर गोली बनावे। इससे उदररोग, गुल्मरोग, पाण्डुरोग, नष्ट होते हैं तथा क्रिमिरोग, शरीर की खाज, पिड़िका आदि रोगों को नाश करने में यह सिद्ध फल है। इसे वैद्यनाथ ने कहा है।(मात्रा एक रत्तिदे)१-२॥

वृहत् इच्छाभेदी रसः।

शुद्धं पारदटङ्कणं समरिचं गन्धाश्मतुल्यं त्रिवृत्।
विश्वा च द्विगुणा ततो नवगुणं जैपालचूर्णं क्षिपेत्।
खल्ले दण्डयुगं विमर्द्य विधिना चार्कस्य पत्रे ततः।
स्वेदं गोमयवन्हिना च मृदुना स्वेच्छावशाद्भेदकः॥ ३॥
गुञ्जैकप्रमितोरसः हिमजलैः संसेवितो रेचयेत्।
यावन्नोष्णजलं पिवेदपि वरं पथ्यश्च दध्योदनम्।
आमं सर्वभवं सुजीर्णमुदरं गुल्मं विशालं हरेत्।
वन्हेर्दीप्तिकरो बलासहरणः सर्वामयध्वंसनः॥ ४॥
योगवाहिरसान् सर्वान् रेचके कथितानपि।
प्लीहाधिकारे कथितं रसेन्द्रं वारिशोषणम्॥ ५॥
उदावर्त्ते तथाऽऽनाहे प्रयुञ्जीतानुपानतः।
पुटितं भावितं लौहं त्रिवृत्काथैरनेकशः॥ ६॥
उदावर्त्तहरं युञ्ज्यात् ससितं वा यथाबलम्।
उदावर्त्ते प्रयोक्तव्या उदरोक्ता रसाः खलु॥ ७॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्धसुहागा एक तोला, मिरच का चूर्ण एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, त्रिवी एक तोला, सौंठ दो तोला, शुद्ध जमालगोटे के बीज नौ तोले ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्यों का चूर्ण मिलावे। फिर दो दण्डभर सारे चूर्ण को मर्दन कर आकके पत्तों में लपेटकर उपलों की मन्द २ अग्नि से

स्वेदन करे। इस रसकी एकरत्ति भरकी मात्रा ठण्डे जलसे पीवे दस्त आने आरंभ होजाते हैं। जब बन्द करने हों तो गरम जल पी पथ्य में दही, चावल खावें। आम, त्रिदोष जन्य पुराना उदर रो बहुत बढ़े हुये गुल्म रोगको ठीक करता है। अग्नि को दीप्त करता तथा कफ नाश करता है तथा सबरोगों को नाश करता है॥ सब योगवाही रस तथा विरेकाधिकार में कहे हुए रस, प्लीहाधि कार में कहा हुआ वारिशोषण रस इन सबको अनुपान भेद से उ वर्त्त और आनाह रोगमें देवे॥ ५॥ तथा लौहभस्म को त्रिवी काथ से सात २ भावना देकर मिश्री से दें तो उदावर्त नाश होता तथा उदर रोगाधिकार में कहे हुए रसभी उदावर्त्त रोग में दें॥

इत्युदावर्त्तानाह—चिकित्सा।

अथ गुल्मरोग-चिकित्सा।

महानाराच रसः।

ताम्रं सूतं समं गन्धं जैपालश्च फलत्रिकम्।
कटुकं पेषयेत् क्षारैर्निष्कं गुल्महरं पिबेत्।
उष्णोदकं पिबेच्चानु नाराचोऽयं महारसः॥ १॥

ताम्रभस्म, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्ध जमालगोटे के बीज, हर्र बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, यवक्षार, सुहागा, सज्जी प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्यद्रव्य मिलाकर पीसले। इसकी मात्रा एक निष्क खाने को दे साथमें गरम जल पिलावे तो गुल्म नाश होता है। इस का नाम महानाराच रस है (मात्रा दोरत्ति की दें)॥ १॥

पञ्चानन रसः।

पारदं शिखितुत्थञ्च गन्धजैपाल पिप्पलीः।
आरग्वधफलान्मज्जां वज्रीक्षीरेण पेषयेत्॥ २॥
धात्रीरसयुतं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये।

चिञ्चाफलरसश्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥ ३ ॥

शुद्धपारा, शुद्धनीलाथोथा, शुद्धगंधक, शुद्धजमालगोटा, पिप्पली, अमलतास के फलका गूदा प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर थोहर के दूधमें सबको पीसे। फिर आंवले के रससे इसकी उचित मात्रा खाके ऊपर से इमली के फलका पानी पिये तो रक्तगुल्म नाश होता है। पथ्य में दही चावल दे ॥ २ ॥ ३ ॥

गुल्मवज्रिणी वटिका।

रसगन्धकताम्रञ्च कांस्यं टङ्कणतालकम्।
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं मर्दयेदातियत्नतः ॥ ४ ॥
तद् यथाऽग्निबलं खादेद्रक्तगुल्मप्रशान्तये।
निर्मिता नित्यनाथेन वटिका गुल्मवज्रिणी ॥ ५ ॥
गुल्मप्लीहोदराष्ठीला–यकृदानाहनाशिनी।
कामलापाण्डुरोगघ्नी ज्वरशूलविनाशिनी ॥ ६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म, कांस्यभस्म, शुद्ध सुहागा, शुद्धहड़ताल, प्रत्येक द्रव्य एक२ पल ले। पहले पारा गंधक की कज्ज-करे फिर अन्य द्रव्य मिला खरल करे और एक रत्तिकी गोली जल से बना ले। इसे अग्निबल देखकर खावे तो रक्तगुल्म दूर होता है। यह गुल्मनाशक वटी नित्यनाथ ने बनाई है। इससे गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अष्ठीला, यकृत् रोग, आनाह, कामला, पाण्डुरोग, ज्वर तथा शूल नष्ट होते हैं ॥ ४—६ ॥

गुल्मकालानलो रसः।

सूतकं लौहकं ताम्रं तालकं गन्धकं समम्।
तोलद्वयमितं भागं यवक्षारश्च तत्समम् ॥ ७ ॥
मुस्तकं मरिचं शुण्ठीं पिप्पलीं गजपिप्पलीम्।
हरीतकीं वचां कुष्ठं तोलैकं चूर्णयेद्बुधः ॥ ८ ॥
सर्वमेकीकृतं पात्रे क्रियन्ते भावनास्ततः।

पर्पटं मुस्तकं शुण्ठ्यपामार्गं पाठचोलिकम् ॥ ९ ॥
तत्पुनश्चूर्णयेत् पश्चात् सर्वगुल्मनिवारणम् ।
गुञ्जाचतुष्टयं खादेद्धरीतक्यनुपानतः ॥ १० ॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं तथा चैव त्रिदोषजम् ।
द्वन्द्वजं श्लैष्मिकं हन्ति वातगुल्मं विशेषतः ।
गुल्मकालानलो नाम सर्वगुल्मकुलान्तकृत् ॥ ११ ॥

शुद्ध पारा, लौहभस्म, ताम्र भस्म, शुद्ध हड़ताल शुद्ध गंध प्रत्येक द्रव्य दो २ तोला ले। यवक्षार दस तोला ले। मोथा, मरि सोंठ, पीपल, गजपीपल, हरड़, बच, कूठ, प्रत्येक द्रव्य का चू एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्र मिलाये। फिर पित्त पापड़ा, मोथा, सोंठ, अपामार्ग, पाठा इनमें प्रत्येक के क्वाथ की सात २ भावना देवे। फिर सुखाकर चूर्णकर रखे इसकी चाररत्ति प्रमाण की मात्रा खाकर ऊपर से हरड़ का क्वाथ हरड़ का चूर्ण अनुपान में पिये तो सब प्रकार के गुल्म शान्त हो हैं। वातिक, पैत्तिक, त्रिदोषज, द्वन्द्वज, श्लैष्मिक, सब प्रकार के गु विशेष करके वातगुल्म इससे नष्ट होते हैं। इसका नाम गुल्मकाला नल रस है ॥ ७—११ ॥

वडवानलो रसः ।

पारदं गन्धकं ताप्यं यवक्षारार्कमभ्रकम् ।
अग्न्यम्बुना ऽहिपत्रेण संमर्द्याथ द्विगुञ्जकम् ॥ १२ ॥
भक्षयेत् पर्णखण्डेन हिङ्गुसिन्धुसुवर्चलैः ।
दाडिमश्च तथा विल्वं कार्षिकं भृङ्गजैर्द्रवैः ॥ १३ ॥
पिष्ट्वा तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलञ्च परिणामजम् ॥ १४ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णमाक्षिक भस्म, यवक्षार, ताम्रभस्म अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर चीते के क्वाथ से तथा

के स्वरस से मर्दन करके दोरत्ति प्रमाण खावे । और ऊपर से पान चबावे । इसे खाने के पीछे हींग, कालानमक, सेंधानमक,अनारदाना विलकी जड़की छाल, इन सबको एक २ कर्ष लेकर भांगरे के रससे पीसकर उचित मात्रा में सुरा से मिलाकर देने से सब प्रकारके गुल्म और परिणाम शूलको दूर करता है ॥ १२—१४ ॥

महानाराच रसः ।

सूतटङ्कणतुल्यांशं मरिचं सूततुल्यकम् ।
गन्धकं पिप्पलीशुण्ठ्योः द्वौ द्वौ भागौ विमिश्रयेत् ॥ १५ ॥
सर्वतुल्यं क्षिपेद् दन्तीबीजं निस्तुषमेव च ।
द्विगुञ्जं रेचनं सिद्धं नाराचाख्यो महारसः ॥ १६ ॥

शुद्धपारा, सुहागा, मिरच, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला । शुद्ध गंधक, पीपल, सोंठ का चूर्ण प्रत्येक दो २ तोला ले । शुद्ध दन्ती बीज नौ तोला, ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य उसमें मिलाकर दोरत्ति की गोली बनावे इस गोली से विरेचन होता है । इसका नाम महानाराच रस है ॥ १५ ॥ १६ ॥

विद्याधर रसः ।

पारदं गन्धकं तालं ताप्यं स्वर्णं मनः शिलाम् ।
कृष्णाक्काथैः स्नुहीक्षीरैर्दिनैकं मर्दयेत् सुधीः ॥ १७ ॥
निष्कार्द्धं श्लैष्मिकं गुल्मं हन्ति मूत्रानुपानतः ।
रसो विद्याधरो नाम गोदुग्धश्च पिबेदनु ॥ १८ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध मनशिल, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलावे । फिर सबको पिप्पली के काथ से तथा थोहर के दूध से एकदिन मर्दन करे । इसे पीसकर रखे। इसको आधा निष्कभर खाकर गोमूत्र या गोदूध का अनुपान करे तो श्लैष्मिक गुल्म नाश होता है । इस रसका नाम विद्याधर रस है। (मात्रा आधी रत्ति दे) ॥ १७ ॥ १८ ॥

महागुल्मकालानलो रसः।

गन्धकं तालकं ताम्रं तथैव तीक्ष्णलौहकम्।
समांशंमर्दयेत् गाढं कन्यानीरेण यत्नतः॥ १९॥
सम्पुटं कारयेत् पश्चात् सन्धिलेपञ्च कारयेत्।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ २०॥
द्विगुञ्जां भक्षयेद् गुल्मी शृङ्गवेरानुपानतः।
सर्वगुल्मं निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा॥ २१॥

शुद्ध गंधक, शुद्ध हड़ताल, ताम्र भस्म, तीक्ष्णलौह भस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर घीकुमार के रस से खूब घोटे। फिर सम्पुट में रख सन्धि बंधन करके गजपुट में फूंकदे और स्वांग शीतल होने पर निकाले। इसको दोरत्ति भर खाकर ऊपर से अदरक का रस पीवे तो सब प्रकार के गुल्मरोग ऐसे नष्ट होते हैं जैसे सूर्य से अन्धकार नष्ट होता है॥ १९—२१॥

अभयावटी।

अभया मरिचं कृष्णा टङ्कणञ्च समांशिकम्।
सर्वचूर्णसमञ्चैव दद्यात् कानकजं फलम्॥ २२।
स्नुहीक्षीरैर्वटी कार्य्या धीरैः स्विन्नकलायवत्।
वटीद्वयं शिवासेकां पिष्ट्वा चोष्णाम्बुना पिबेत्॥ २३॥
उष्णाद्विरेचयेदेषा शीते स्वास्थ्यमुपैति च।
जीर्णज्वरं पाण्डुरोगं प्लीहाष्ठीलोदराणि च।
रक्तपित्ताम्लपित्तादि सर्वाजीर्णञ्च नाशयेत्॥ २४॥

हरड़, मिरच, पीपल, सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला। जमालगोटे के शुद्ध बीज चार तोला लेकर थोहर के दूधमें घोटकर (भिगोकर फूले हुए) मटर के समान गोली बनावे। इस रस की दो गोली और एक हरड़ का चूर्ण दोनों को एकत्र पीसकर गरम जलसे पीवे। गरम पानी पीने और गर्म क्रिया करने से यह विरेचन करेगी। ठण्डाजल पीने और शीतल क्रिया करने से दस्त बंद होजायेंगे।

से जीर्णज्वर, पाण्डुरोग, प्लीहा, अष्ठीला, उदर रोग, रक्तपित्त, अम्ल-पित्त तथा सब प्रकार के अजीर्ण रोग नष्ट होते हैं ॥ २२—२४ ॥

गोपीजलः।

जैपालाष्टौ द्विको गन्धः शुण्ठी मरिचचित्रकम्।
एकः सूतः ससौभाग्यो गोपीजल इति स्मृतः ॥ २५ ॥
शूलव्याध्याश्रयान् गुल्मान् कोष्ठादौ दशपैत्तिकान्।
भगन्दरादिहृद्रोगान् नाशयेदेव भक्षणात् ॥ २६ ॥

शुद्ध जमालगोटा के बीज ८ तोला शुद्ध गंधक दो तोला, सोंठ, मिरच, चीता, शुद्धपारा, सुहागा, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर घोटे। इसका नाम गोपीजल है। इसे सेवन करने से शूल व्याधि के आश्रय गुल्मरोग, तथा कोष्ठ आश्रित दस पित्तके रोग तथा भग-न्दरादि रोग नष्ट होते हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

काङ्कायनगुड़िका।

शठीं पुष्करमूलञ्च दन्तीं चित्रकमाढ़कीम्।
शृङ्गवेरं वचाञ्चैव पलिकानि समाहरेत् ॥ २७ ॥
त्रिवृतायाः पलञ्चैकं कुर्य्यात् त्रीणि च हिङ्गुनः।
यवक्षारात् पलेद्वे च द्वे पले चाम्लवेतसात् ॥ २८ ॥
यमान्यजाजी मरिचं धान्यकञ्चेति कार्षिकम्।
उपकुञ्च्यजमोदाभ्यां पृथगर्द्धपलं भवेत् ॥ २९ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव गुडिकां कारयेद्भिषक्।
तासामेकां पिबेत् द्वे वा तिस्रो वा ऽथ सुखाम्बुना ॥ ३० ॥
अम्लैर्मद्यैश्च यूषैश्च घृतेन पयसा ऽथवा।
एषा काङ्कायनेनोक्ता गुड़िका गुल्मनाशिनी ॥ ३१ ॥
अर्शोहृद्रोगशमनी क्रिमीणाञ्च विनाशिनी।
गोमूत्रयुक्ता शमयेत् कफगुल्मं चिरोत्थितम् ॥ ३२ ॥

क्षीरेणपित्तगुल्मञ्च मद्यैरम्लैश्च वातिकम् ।
त्रिफलारसमूत्रैश्च नियच्छेत् सान्निपातिकम् ।
रक्तगुल्मेषु नारीणामुष्ट्रीक्षीरेण पाययेत् ॥ ३३ ॥

कचूर, पुष्करमूल (अभाव में कूठ), दन्तीमूल, चीता, आ
अदरक, बच, प्रत्येक द्रव्य एक २ पल ले । त्रिवी एक पल, हींग
पल, यवक्षार दो पल, अम्लवेत दो पल । अजवायन, जीरा, मि
धनियां प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष ले । कालाजीरा अ
पल, अजमोद अर्थात् अजवायन आधा पल ले । सब को पीस
मातुलुङ्ग नींबू के रस से घोट कर गोली बनावें । इस की एक
वा तीन गोली गरम पानी से खावे (अथवा कांजी या मद्य या
वा घृत वा दूध से खावे तो गुल्म नाश होते हैं ॥ यह काङ्क
गुडिका बवासीर, हृद्रोग को शान्त करती, क्रिमि नाश करती
इसे गोमूत्र से पीवें तो पुराने श्लैष्मिक गुल्म को दूर करती है ।
से पीवें तो पित्त गुल्म को नाश करती है । मद्य से तथा कांजी अ
अम्लवस्तुओं से पीयें तो वातगुल्म को नाश करती है । त्रिफला
रस से तथा गोमूत्र से सान्निपातिक गुल्म को नाश करती
ऊंटनी के दूध से इसे पिलावें तो स्त्रियों के रक्त गुल्म को नाश क
है ॥ (मात्रा चार रत्ति की गोली दें) ॥ २७—३३ ॥

गुल्मशार्दूलोरसः

रसं गन्धं शुद्धलौहं गुग्गुलोः पिट्टितं पलम् ।
त्रिवृता पिप्पली शुण्ठी शठी धान्यकजीरकम् ॥ ३४ ॥
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं पलार्द्धं कालकं फलम् ।
सञ्चूर्ण्य वटिका कार्या घृतेन वल्लमानतः ॥ ३५ ॥
वटीद्वयं भक्षयेच्चार्द्रकोष्णाम्बु पिबेदनु ।
हन्ति प्लीहयकृद्गुल्म-कामलोदरशोथकम् ॥ ३६ ॥
वातिकं पैत्तिकं गुल्मं श्लैष्मिकं रौधिरं तथा ।
गहनानन्दनाथोक्त-रसोऽयं गुल्मशार्दूलः ॥ ३७ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, लौहभस्म, शुद्ध गुगुल प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लें। त्रिवी, पिप्पली, सौंठ, कचूर, धनियां, जीरा, प्रत्येक एक २ पललें। जमालगोटे के शुद्धबीज आधा पल लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य सब द्रव्य मिलाकर खरल करे। फिर घी से डेढ़रत्ति की गोली बनालें। दो गोली खाकर ऊपर से अदरक का रस या गरम जल पीवे तो तिल्ली, जिगर, गुल्म, कामला, उदर, शोथ वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, तथा रुधिर का गुल्म ये सब रोग नाश होते हैं। यह गुल्मशार्दूलरस गहनानन्द ने कहा है ॥ ३४—३७ ॥

प्राणवल्लभो रसः।

लौहं ताम्रं वराटश्च तुत्थं हिङ्गु फलत्रिकम्।
स्नुहीमूलं यवक्षारं जैपालं टङ्कणं त्रिवृत् ॥ ३८ ॥
प्रत्येकं पलिकं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषयेत्।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद् वारिणा मधुनाऽपि वा ॥ ३९ ॥
प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः
निहन्ति कामलां पाण्डुं मेहं हिक्कां विशेषतः ॥ ४० ॥
असाध्यं सन्निपातश्च गुल्मं रुधिरसम्भवम्।
वातरक्तश्च कुष्ठश्च कण्डू-विस्फोटकापचीम् ॥ ४१ ॥

लौहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ी भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, हींग, हरड़ बहेड़ा, आंवला, थोहरकी जड़, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, सुहागा, त्रिवी, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक२ पल लेकर, बकरी के दूध से पीसे फिर चाररत्ति भरकी गोली बना ले। इसे जलसे या शहद से खावे। यह प्राणवल्लभ नामक रस गहनानन्द ने कहा है यह कामला, पाण्डु प्रमेह, हिचकी को विशेष करके नाश करता है। असाध्य सन्निपात रक्त गुल्म, वातरक्त कुष्ठ, कण्डू, विस्फोटक, अपची, इन रोगों को नाश करता है ॥ ३८—४१ ॥

सर्व्वेश्वरो रसः।

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात् स्वर्णपादं कटुत्रिकम्।

त्रिफला त्रिकटोः तुल्या त्रिफला ऽर्द्धमयो रजः ॥ ४२ ॥
अयसोऽर्द्धं विषश्चैव सर्वं सम्मर्द्य यत्नतः।
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ ४३ ॥

स्वर्णभस्म चार तोले, ताम्रभस्म चालीस तोले, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) का चूर्ण मिलित एक तोला, त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला प्रत्येक समभाग) का चूर्ण मिलित एक तोला; लौहभस्म आधा तोला, शुद्धविष चौथाई तोला ले। सबको मिलाकर यत्न से मर्दनकर के रखे। इसकी आधीरत्ति की मात्रा खावें तो यह सर्वेश्वर रस रक्तगुल्म का नाश करता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

इति गुल्मरोग चिकित्सा

अथ हृद्रोग चिकित्सा ॥

हृदयार्णवो रसः।

शुद्धसूतसमं गन्धं मृतताम्रं तयोः समम्।
मर्दयेत् त्रिफलाक्वाथैः काकमाचीद्रवै र्दिनम् ॥ १ ॥
चणमात्रां वटीं खादेद् रसोऽयं हृदयार्णवः।
काकमाचीफलं कर्षं त्रिफलाफलसंयुतम् ॥ २ ॥
द्वात्रिंशत् तोलकं तोयं क्वाथमष्टावशेषितम्।
अनुपानं पिबेच्चात्र हृद्रोगे च कफोत्थिते ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, दोनों की कज्जली करे। फिर ताम्र भस्म दो तोला मिलादे। सबको पीसकर त्रिफला के क्वाथ से एकदिन मर्दन करे। फिर एकदिन मकोय के स्वरस में घोटकर चने के समान गोली बनाले। इसे हृदयार्णव रस कहते हैं। इसे खाकर ऊपर से त्रिफला और मकोय के फल, मिलित एक कर्ष लेकर बत्तीस तोले जलमें पकाकर आठवां भाग शेष बच जानेपर उतार छानकर अनुपान पीवे। यह कफज हृदय रोगमें लाभ करता है। (मात्रा आधी रत्ति दे) ॥ १—३ ॥

नागार्जुनाभ्रम् ।

सहस्रपुटनैः शुद्धं वज्राभ्रमर्जुनत्वचः ।
सत्त्वैर्विमर्दितं सप्त-दिनं खल्वे विशोषितम् ॥ ४ ॥
छाया शुष्का वटी कार्य्या नाम्नेदमर्जुनाह्वयम् ।
हृद्रोगं सर्वशूलार्शो-हृल्लासछर्द्यरोचकान् ॥ ५ ॥
अतीसारमग्निमान्द्यं रक्तपित्तं क्षतक्षयम् ।
शोथोदराम्लपित्तञ्च विषमज्वरमेव च ।
हन्त्यन्यान्यपि रोगाणि बल्यं वृष्यं रसायनम् ॥ ६ ॥

सहस्र पुटित अभ्रक भस्म को अर्जुनकी छालके क्वाथ से सात दिन खरल करके छाया में सुखावे । इसकी एक रत्ति भरकी गोली बनाकर खावें तो हृद्रोग, सब प्रकार के शूल, बवासीर, हृल्लास अर्थात् जीमतलाना, वमन, अरुचि, अतीसार, अग्निमांद्य, रक्तपित्त, क्षतक्षय, शोथ, उदर, अम्लपित्त, विषमज्वर, इन सबको तथा अन्य२ रोगों को भी नाश करता है । तथा यह बलदायक है, वृष्य है तथा रसायन है ॥ ४–६ ॥

पञ्चाननरसः ।

सूतगन्धौ द्रवैर्धात्र्या मर्दयेत् गोस्तनीद्रवैः ।
यष्टिखर्जूरसलिलैर्दिनश्च परिमर्दयेत् ।
धात्रीचूर्णं सिताश्चानु पिबेद् हृद्रोगशान्तये ॥ ७ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक दोनों समभाग लेकर इनकी कज्जली करे । और आंवले के स्वरस तथा द्राक्षा के क्वाथ से मर्दन करे । तथा मुलहठी, तथा खजूर के क्वाथसे एक२दिन घोटे । फिर एकरत्ति भरकी गोली बनाले । इसे खाकर ऊपर से आंवला का चूर्ण और मिश्री मिलाकर पीवे तो हृद्रोग शान्त होता है ॥ ७ ॥

इति हृद्रोग चिकित्सा ॥
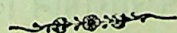
अथ मूत्रकृच्छ्र चिकित्सा।

त्रिनेत्राख्यो रसः।

वङ्गं सूतं गन्धकं भावयित्वा लौहे पात्रे मर्दयेदेकघस्रम्।
दूर्वा यष्टीगोक्षुरैः शाल्मलीभिः मूषामध्ये भूधरे पाचयित्वा॥१॥
तत्तद्द्रावैर्भावयित्वाऽस्यवल्लं दद्यात् शीतं पायसं वक्ष्यमाणम्।
दूर्वायष्टी शाल्मलीतोयदुग्धै स्तुल्यैः कुर्य्यात् पायसं तद्ददीत।
प्रातःकाले शीतपानीयपानात् मूत्रे जाते स्यात् सुखी चक्रमेण

वंगभस्म, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, प्रत्येक द्रव्य समभाग
पहले लोहेके खरल में घोटकर पारा गंधक की कज्जली करे
अन्य द्रव्य मिलाकर घोटे। फिर दूबके रस, मुलठ्ठी के क्वाथ
गोखरू के क्वाथसे तथा सिम्बल की मूसली के रससे एक २
क्रमशः भावना देकर सुखाके एक मूषा में रख भूधरयंत्र में पका
फिर पकने के बाद इस रसको निकालकर दूब, गोखरु, मुलठ्ठी
और सिम्बल की जड़के रससे पृथक् २ भावना देकर सुखाकर
रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इस औषध को खाकर ऊपर से
मुलठ्ठी और सींबल का रस एक भाग तथा दूध एक भाग दोनों
मिलाकर खीर बनावे। इस खीर को ठण्डा करके प्रातःकाल
रसके पीछे खावे। और प्रातःकाल शीतल जल पीवे तो मूत्र होकर
मनुष्य सुखी होजाता है। यह मूत्रकृच्छ्र को नाश करता है॥१॥

वरुणाद्यं लौहम्।

द्विपलं वरुणं धात्र्यास्तदर्द्धं धातुपुष्पिकाम्॥
हरीतक्याः पलार्द्धञ्च पृश्निपर्णी तदर्द्धकम्॥३॥
कर्षमानञ्च लौहाभ्रं चूर्णमेकत्र कारयेत्।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय शाणमानं विधानवित्॥४॥
मूत्राघातं तथा घोरं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम्।

अश्मरीं विनिहन्त्याशु प्रमेहं विषमज्वरम् ॥५॥
बलपुष्टिकरश्चैव वृष्यमायुष्यमेव च।
वरुणाद्यमिदं लौहं चरकेण विनिर्मितम् ॥६॥

वरुण की छाल दो पल, आंवला एक पल, धायके फूल आधा पल, हरड़ आधा पल, पृष्ठपर्णी चौथाई पल, लौह भस्म एक कर्ष, अभ्रक भस्म एक कर्ष। प्रत्येक का चूर्ण यथाविधि लेकर एकत्र खरल करे इसे एक शाणभर लेकर प्रातःकाल खावे तो मूत्राघात, भयंकर मूत्रकृच्छ्र, तथा पथरी, प्रमेह, विषमज्वर, ये रोग शीघ्र दूर होते हैं। यह बल, पुष्टि वर्धक है, वृष्य है तथा आयुष्य है। इस वरुणाद्य लौह को चरक ने बनाया था ॥ ३—६ ॥

मूत्रकृच्छ्रान्तक योगौ।

अयो रजश्लक्ष्णपिष्टं मधुना सह योजयेत्।
मूत्राघातं निहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥७॥
रसगन्धयवक्षार सितातक्रयुतं पिबेत्।
मूत्रकृच्छ्राण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम् ॥८॥
भैषज्यैरश्मरीप्रोक्तैर्मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत्।
योगवाहिरसैर्वापि चानुपानविशेषतः ॥९॥

लौहभस्म को अत्यन्त पीसकर शहद मिलाकर खावें तो मूत्राघात तथा भयंकर मूत्रकृच्छ्र शीघ्र दूर होते हैं ॥ ७ ॥ शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, यवक्षार प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर उचित मात्रा में मिश्री और तक्र से पिये तो सब प्रकार के मूत्रकृच्छ्र दूर होते हैं ॥ ८ ॥ अश्मरी अधिकारोक्त औषधों से मूत्रकृच्छ्र की चिकित्सा करे। अथवा उचित अनुपानों सहित योगवाही रसों को देवे तो मूत्रकृच्छ्र दूर होता है ९॥

मूत्रकृच्छ्रान्तको रसः।

शतावरी रसैः पिष्ट्वा मृतसूतञ्च तालकम्।
शिखितुत्थञ्च तुल्यांशं दिनैकं मर्दयेद् दृढम् ॥१०॥

तद्गोलं सार्षपेतैले पाच्यं यामश्च चूर्णयेत्।
मूत्रकृच्छ्रान्तकश्चास्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥११॥
भक्षणान्नात्रसन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्यलम्।
तुलसीतिलपिण्याकं बिल्वमूलं तुषाम्बुना।
कर्षैकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चलैः ॥ १२ ॥

रससिन्दूर शुद्धहड़ताल, शुद्ध नीलाथोथा इन सबको समभाग लेकर शतावर के रससे एकदिन दृढ़ता से पीसें। इसकागोला बनाकर इसे सरसों के तेल में एक पहर तक पकावें। और फिर चूर्ण करलें। इस रसकी चाररत्ति मात्रा लेकर शहद से खावें तो निस्सन्देह मूत्रकृच्छ्र अवश्य दूर होता है। इसे मूत्रकृच्छ्रान्तक रस कहते हैं। इस का अनुपान तुलसी, तिलकी खली, बिलकी जड़,इन सबको मिलाकर एक कर्ष लेकर तुषोदक से दें। अथवा सुरा या सौंचल नमक से दें ॥ १०—१२

इति मूत्रकृच्छ्र चिकित्सा ॥

अथ मूत्राघात चिकित्सा।

तारकेश्वरो रसः।

मृतसूताभ्रगन्धश्च मर्दयेन्मधुना दिनम्।
तारकेश्वरनामायं गहनानन्दभाषितः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत् क्षौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये।
औडुम्बरफलं पक्वं चूर्णितं कर्षमात्रकम्।
संलिह्यान्मधुना सार्द्धमनुपानं सुखावहम् ॥ २ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म,शुद्धगंधक, प्रत्येक समभाग लें सबको पीसें। फिर शहद से दिनभर पीसकर गोली बनावें। यह तारकेश्वर रस गहनानन्द ने कहा है। इसे शहद से एक माषा खावें तो बहुमूत्र रोग दूर होता है। इस रसके साथ पके हुए गूलर फलका चूर्ण एक कर्ष भर लेकर शहद से मिलाकर खावे तो इस अनुपान से शीघ्र बहुमूत्र तथा मूत्राघात रोग दूर होता है ॥ १ ॥ २ ॥

लघुलोकेश्वरो रसः।

शुद्धसूतस्य भागैकं चतुरः शुद्धगन्धकात्।
पिष्ट्वा वराटिका पूर्य्या रसपादेन टङ्कणम् ॥ ३ ॥
क्षीरैः पिष्ट्वा मुखं लिप्त्वा भाण्डे रुद्ध्वा पुटे पचेत्।
स्वाङ्गशीतं विचूर्ण्याथ लघुलोकेश्वरो मतः ॥ ४ ॥
चतुर्गुञ्जाप्रमाणन्तु मरिचेन तथैव च।
जातीमूलफलैर्युक्तमजाक्षीरेण पाययेत्।
शर्कराभावितश्चानु पिबेत् कृच्छ्रहरं परम् ॥ ५ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक चार तोला, दोनों की कज्जली बनाके कौड़ियों में भरदे और सुहागा तीन माषा और दूध पीसकर कौड़ियों के मुहंको बंद करदे। फिर सब कौड़ियों को एक हांडी में डालकर मुंह बंद करके गजपुट में फूंक देवे। स्वांग शीतल होनेपर निकाल कर चूर्ण करके रखे। यह लघुलोकेश्वर रस चाररत्ति प्रमाण लेकर मिरच और चमेली की जड़ तथा त्रिफला के चूर्ण से मिलाकर खावे। और उसके पीछे खांड मिला हुआ बकरी का दूध पिलावे। तो मूत्रकृच्छ्र अवश्य दूर होता है ॥ ३—५ ॥

क्षुद्रयोगाः

येनौषधेन मतिमान् मूत्रकृच्छ्रमुपाचरेत्।
तेनौषधेन श्रेष्ठेन मूत्रघातानुपाचरेत् ॥६॥
लवणाम्लवरायुक्तं घृतश्चापि पिबेन्नरः।
तस्य नश्यन्ति वेगेन मूत्राघातास्त्रयोदश ॥७॥
पक्वैर्वारुकवीजानामक्षमात्रं ससैन्धवम्।
धान्याम्लयुक्तं पीत्वेव मूत्राघातात् विमुच्यते ॥८॥
त्रिकण्टकैरण्डशतावरीभिः सिद्धं पयो वा तृणपञ्चमूलैः।
गुडप्रगाढं सघृतं पयो वा रोगेषु कृच्छ्रादिषु शस्तमेतत् ॥९॥

जिन योगों से मूत्रकृच्छ्र दूर होता है उनही से मूत्राघात की भी

चिकित्सा करनी चाहिये ॥ ६ ॥ सेंधा नमक, कांजी, और त्रिफला युक्त घी को पीने से तेरह प्रकार के मूत्राघात शीघ्र अच्छे होते हैं ॥ पकी हुई ककड़ी के बीज एक अक्षभर लेकर उसमें सेंधा नमक मिलाकर, कांजी सहित पीवे तो तुरन्त ही मूत्राघात रोग नष्ट होता है ॥ ८ ॥ गोखरु, एरण्डमूल, शतावर, इनसे शुद्धकिया हुआ गुड मिलाकर पीनेसे। अथवा पंचतृणमूल (कुश, काश, शर, डाभ, गन्ना इनकी जड़ों को पंचतृणमूल कहते हैं) से सिद्ध किया हुआ दूध लेकर उसमें घी और अधिक गुड़ मिलाकर पिलाने से मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात आदिरोग दूर होते हैं ॥ ९ ॥

इति मूत्राघात चिकित्सा ॥

अथाश्मरी-चिकित्सा।

पाषाणवज्रको रसः।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः।
मर्दयित्वा दिनं खल्ले रुद्ध्वा तद् भूधरे पचेत् ॥ १ ॥
दिनान्ते तत् समुद्धृत्य मर्दयेद्गुडसंयुतम्।
अश्मरीं वस्तिशूलञ्च हन्ति पाषाणवज्रकः ॥ २ ॥
गोरत्तकर्कटीमूल-क्वाथं कौलत्थकं तथा।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्वा दोषबलाबलम् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, कज्जली करे। फिर श्वेत पुनर्नवा के रससे एकदिन भर घोटकर शराव सम्पुट में रख भूधरयंत्र में पकावे। दिनके अन्त में निकाल पीसकर रखे। इसे गुड़ से मिलाकर खावे तो पथरी, वस्तिशूल, इन्हें यह पाषाणवज्रक नाश करता है। इस रसको खाकर इन्द्रायणकी जड़का क्वाथ अथवा कुल-थी का काढ़ा दोषों तथा बलको देखकर पीवें तो इस अनुपान से पूर्वोक्त गुण होते हैं ॥ १—३ ॥

त्रिविक्रमो रसः।

मृतताम्रमजाक्षीरैः पाच्यं तुल्यं गते द्रवे।
तत् ताम्रं शुद्धसूतश्च गन्धकश्च समं समम् ॥ ४ ॥
निर्गुण्डीस्वरसैर्मर्द्यं दिनं तद्गोलकीकृतम्।
यामैकं वालुकायन्त्रे पक्त्वा योज्यं द्विगुञ्जकम् ॥ ५ ॥
वीजपूरस्य मूलञ्च सजलञ्चानुपाययेत्।
रसस्त्रिविक्रमो नाम शर्करामश्मरीं जयेत् ॥ ६ ॥

ताम्रभस्म में बकरी का दूध डालकर पकावे। दूध जल जानेपर ताम्र के समान शुद्ध पारा और उतनाही शुद्धगंधक ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर ताम्र मिलादे। अब इसमें निंगुण्डी का रस डालकर एकदिन भर मर्दन करे। फिर गोला बनाकर बालुका-यंत्र में एक पहर तक पकावे। इसकी दोरत्ति की मात्रा है। इसे खा-कर विजौरे नीबू की जड़ तथा सुगंधबाला का क्वाथ बनाकर अनु-पान करे तो यह त्रिविक्रम रस शर्करा और अश्मरी रोग को जीतता है ॥ ४—६ ॥

लौहप्रयोगः।

अयोरजः श्लक्ष्णपिष्टं मधुना सहयोजितम्।
अश्मरीं विनिहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रञ्च दारुणम् ॥ ७ ॥

अत्यन्त महीन पिसाहुआ लौहभस्म मधुके साथ खाने से शीघ्र ही पथरी और भयंकर मूत्रकृच्छ्र दूर होते हैं ॥७॥

क्षुद्रयोगौ।

इन्द्रवारुणिकामूलं मरिचं क्षीरपाचितम्।
पर्पटीरससंयुक्तं सप्ताहादश्मरीं जयेत् ॥ ८ ॥
गन्धको जीरकं क्षुद्रा-फलं टङ्कद्वयं सदा।
अश्मरीं शर्करां मूत्रकृच्छ्रं क्षपयति ध्रुवम् ॥ ९ ॥

रसपर्पटी के साथ, इन्द्रायण की जड़ और मरिच इन दोनों का क्षीरपाक करके पीवें तो एक सप्ताह में अश्मरी नाश होती है॥८॥

शुद्ध गंधक, जीरा, छोटी कटेली के फल, प्रत्येक द्रव्य समभाग। इस चूर्णको दो टङ्क भर सदा खाने से पथरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, निश्चय दूर होते हैं ॥ ६ ॥

इति अश्मरी चिकित्सा ॥

अथ प्रमेह चिकित्सा।

हरिशङ्करो रसः ।

मृतसूताभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिशाद्रवैः ।
सप्ताहं भावयेत् खल्ले योगोऽयं हरिशङ्करः ।
माषमात्रां वटीं खादेत् सर्वमेहप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, दोनों समभाग लेकर पीसलें और आंवले और हल्दी के रससे एक सप्ताह तक भावित कर रखें। हरिशंकर रस एक माषाभर खाने से सब प्रमेह शान्त होते हैं (मात्रा एकरत्तिकी दें) ॥ १ ॥

इन्द्र वटी ।

मृतं सूतं मृतं वङ्गमर्जुनस्य त्वचान्वितम् ।
तुल्यांशं मर्दयेत् खल्ले शाल्मल्या मूलजैः द्रवैः ॥ २ ॥
दिनान्ते वटिका कार्या माषमात्रा प्रमेहहा ।
एषा इन्द्रवटी नाम्ना मधुमेहप्रशान्तकृत् ॥ ३ ॥

रससिन्दूर, वंगभस्म, अर्जुन की छाल, सब द्रव्य तुल्य भाग लेकर सेंबल की जड़के रससे एकदिन भर घोटें। फिर एक माषे भरकी गोली बनाकर खावे तो प्रमेह तथा मधुमेह शान्त होते हैं। इसका नाम इन्द्रवटी है। (मात्रा दोरत्ति की दें) ॥ २ ॥ ३ ॥

वङ्गावलेहः ।

वङ्गभस्म द्विवल्लञ्च लेहयेन्मधुना सह ।
ततो गुड़समं गन्धं भक्षयेत् कर्षमात्रकम् ॥ ४ ॥
गुडूचीसत्त्वमथवा शर्करासहितं तथा ।

सर्वमेहहरो वङ्गावलेह उत्तमः स्मृतः ॥ ५ ॥

वंगभस्म चाररत्ति शहद से खावे ऊपर से शुद्धगंधक और गुड समभाग लेकर कुल एक कर्षभर खायें अथवा गिलोय का सत अथवा चीनी से खावें तो यह वङ्गावलेह सब प्रमेहों को दूर करता है। (मात्रा एकरत्ति दें) ॥ ४ ॥ ५ ॥

प्रमेहसेतुः ।

सूताभ्रञ्च वटक्षीरैर्मर्दयेत् प्रहरद्वयम् ।
विशोष्य पक्वमूषायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ ६ ॥
विशेषान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जीत वल्लमेकन्तु रसेन्द्रस्यास्य वैद्यराट् ॥ ७ ॥

रससिन्दूर, अभ्रक भस्म दोनों को समभाग लेकर बहेड़े के दूध से दोपहर तक मर्दन करे। फिर सुखाकर मूषा में पकावे और फिर पीसकर रखे। इसे सब रोगों में प्रयुक्त करे। विशेष करके प्रमेह रोगों में इसे डेढ़रत्ति भर खावें तो यह प्रमेहसतु रस बड़ा लाभ करता है। (संस्कृत टीकाकारने शुद्ध गंधक भी रससिन्दूर और अभ्रक के बराबर डालना लिखा है) ॥ ६ ॥ ७ ॥

विडङ्गाद्यलौहः ।

विडङ्गत्रिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानातिदारुणान् ।
लौहो मूत्रविकारांश्च सर्वानेव विनाशयेत् ॥ ८ ॥

वायविडंग, हरड़ बहेड़ा, आंवला, मोथा, पीपली, सोंठ, श्वेत जीरा, काला जीरा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। लौह भस्म सार चूर्ण के समान ले। एकत्र पीसकर रखे इसे विडङ्गाद्यलौह कहते हैं। इससे अतिदारुण प्रमेह तथा सब मूत्रदोष दूर होते हैं ॥ ८ ॥

वृहद्धरिशङ्करो रसः ।

रसगन्धकलौहञ्च स्वर्णं वङ्गञ्च माक्षिकम् ।
समभागन्तु सम्पिष्य वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ९ ॥

सप्ताहमामलाद्रावैर्भावितोऽयं रसेश्वरः ।
हरिशङ्करनामायं गहनानन्दभाषितः ।
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १० ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, स्वर्णभस्म, वंगभस्म, स्वर्ण-
क्षिक भस्म प्रत्येक द्रव्य समभाग पीसकर आंवले के रससे ए
सप्ताह तक भावना देकर दोरत्ति भरकी गोली बनाके रखें।
हरिशंकर रसको सेवन करने से बीसों प्रमेह नाश होते हैं इस
सन्देह नहीं। यह सत्य बात है। इसे गहनानन्द ने कहा है ॥१०॥

आनन्दभैरवोरसः ।

वङ्गभस्म मृतं स्वर्णं रसं क्षौद्रैर्विमर्दयेत् ।
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं हन्ति मेहं चिरोद्भवम् ।
गुञ्जामूलं तथा क्षौद्रैरनुपानं प्रशस्यते ॥ ११ ॥

बगभस्म, स्वर्णभस्म, रसासिन्दूर सबको समभाग ले मर्दन क
इसकी दोरत्ति की मात्रा शहद से मिलाकर चाटें तो पुराने प्रमेह
होते हैं। इसके साथ गुञ्जामूल अर्थात् रत्तियों की बेलकी जड़
चूर्ण और शहद मिलाकर अनुपान करे ॥ ११ ॥

विद्यावागीशोरसः ।

मृतसूताभ्रनागश्च स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत् ॥ १२ ॥
मधुना लेहयेन्माषं लालामेहप्रशान्तये ।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा ।
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः ॥ १३ ॥

रसासिन्दूर, अभ्रकभस्म, सीसाभस्म, स्वर्णभस्म प्रत्येकद्रव्य समभाग
और सबके समान बकायन का चूर्ण लेकर सबको मिलाकर प
रखे। इसे उचितमात्रा में शहद से खावे तो लालामेह शान्त होत
है। और इसे खाने के पीछे हल्दी का चूर्ण एक तोला लेकर शहद

मिलाकर चाटैं तो यह विद्यावागीशरस असाध्य प्रमेहों को नाश करता है ॥ १२ ॥ १३ ॥

मेहमुद्गरो रसः।

रसाञ्जनं विडं दारु विल्वगोक्षुरदाडिमम्।
भूनिम्बः पिप्पलीमूलंत्रिकटुत्रिफला त्रिवृत् ॥ १४ ॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लौहचूर्णन्तु तत्समम्।
पलैकं गुग्गुलुं दत्त्वा घृतेन वटिकां कुरु ॥ १५ ॥
माषैका निर्मिता चेयं मेहमुद्गरसंज्ञिनी।
श्रीमद्गहननाथेन लोकनिस्तारकारिणा ॥ १६ ॥
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं छागीदुग्धं जलञ्च वा।
विंशन्मेहं निहन्त्याशु मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ १७ ॥
अश्मरीं कामलां पाण्डुं मूत्राघातमरोचकम्।
अर्शांसि व्रणकुष्ठञ्च वातरक्तं भगन्दरम् ॥ १८ ॥

शुद्ध रसौंत, विड्लवण, दारुहल्दी, विलकी जड़की छाल, गोखरु, अनार की छाल, चिरायता, पिप्पलामूल, सोंठ,मिरच, पीपल हरड़, वहेड़ा, आंवला, त्रिधी प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक २ तोला लें। सबके समान लौहभस्म पंद्रह तोले डालें। शुद्ध गुगुल एकपल लें। सबको पीसकर घी से मिलाकर एक२ माषे की गोली बनावें।इसका नाम मेहमुद्गर रस है। यह रस लोकोपकारी गहनानाथने बनाया था। इसको खाकर अनुपान में बकरी का दूध या जल पीना चाहिये। इस से बीस प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अश्मरी, कामला, पाण्डु, बवासीर मूत्राघात, अरुचि, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर इन सबको यह दूर करता है ॥ १४—१८ ॥

मेघनादोरसः।

भस्मसूतं समं कान्तमभ्रकन्तु शिलाजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योष-त्रिफलाऽङ्कोठजीरकम् ॥ १९ ॥
कार्पासवीजं रजनीचूर्णं भाव्यञ्च वन्हिना।

विंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुनासह ।
माषमात्रो हरेन्मेहं मेघनादरसो महान् ॥ २० ॥

रससिन्दूर, कान्तलोह भस्म, अभ्रकभस्म, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्ध मनशिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, अङ्कोल, जीरा, कपास के बीज, हल्दी का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर चीते के रससे बीसवार भावना देकर सुखाकर रखें फिर शहद से मिलाकर एक माषा भर इसे खावें तो यह मेघनाद रस प्रमेह को नाश करता है ॥ १९ ॥ २० ॥

चन्द्रप्रभावटिका ।

मृतसूताभ्रकं लौहं नागं वङ्गं समं समम् ।
एलाबीजं लवङ्गश्च जातीकोषफलं तथा ॥ २१ ॥
मधुकं मधुयष्टीश्च धात्रीश्च समशर्कराम् ।
कर्पूरं खादिरं सारं शताह्वां कण्टकारिकाम् ॥ २२ ॥
अम्लवेतसकं तुल्यं दिनैकं लाङ्गलीद्रवैः ।
भावयेत् मेषदुग्धेन नागवल्ल्या रसैर्दिनम् ॥ २३ ॥
वटिका बदरास्थ्याभा कार्य्या चन्द्रप्रभा परा ।
भक्षयेद् वटिकामेकां सर्वमेहकुलान्तिकाम् ॥ २४ ॥
धात्रीपटोलपत्राणां कषायं वाऽमृतायुतम् ।
सक्षौद्रं भक्षयेच्चानु सर्वमेहप्रशान्तये ॥ २५ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, नागभस्म, वंगभस्म, इलायची के बीज, लौंग, जायफल, जावित्री, मुलट्ठी, महुआ, आंवला, खांड, कपूर, कत्था, सौंफ, कटेली, अम्लवेत इन सबका चूर्ण एक तोला लेकर लाङ्गली के रससे एकदिन भावना देवे। फिर भेड़ के दूध से एकदिन भावित करे फिर पानके रससे एकदिन भावितकरे और बेरकी गुठली के समान गोली बनावे। इस चन्द्रप्रभा गोली को खाने से सब प्रकार के प्रमेह नष्ट होते हैं। इसे खाकर आंवला

पटोलपत्र, गिलोय इनके काढ़े को शहद मिलाकर पीवे तो सब प्रकार के प्रमेह शान्त होते हैं ॥ २१-२५ ॥

इक्षुमेहे वङ्गेश्वरो रसः।

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत् ।
अस्यमाषद्वयं हन्ति मेहान् क्षौद्रसमन्वितम् ॥ २६ ॥

रससिन्दूर और वंगभस्म दोनों को मिलाकर दोमाषाभर शहद से खावें तो सब प्रमेह नाश होते हैं। (इसकी मात्रा दोरत्ति कीदें)२६

वृहद्वङ्गेश्वरोरसः ॥

वङ्गभस्म रसं गन्धः रौप्यं कर्पूरमभ्रकम् ।
कर्षं कर्षं मानमेषां सूताङ्घ्रिहेममौक्तिकम् ॥ २७ ॥
केशराजरसैर्भाव्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।
प्रमेहान् विंशतिश्चैव साध्यासाध्यमथापि वा ॥ २८ ॥
मूत्रकृच्छ्रं तथा पाण्डु धातुस्थश्च ज्वरं जयेत् ।
हलीमकं रक्तपित्तं वातपित्तकफोद्भवम् ॥ २९ ॥
ग्रहणीमामदोषश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ।
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु वृत्तमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ३० ॥
वृहद्वङ्गेश्वरो नाम सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
बहुमूत्रं बहुविधं मूत्रमेहं सुदारुणम् ॥ ३१ ॥
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्द्धनः ।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्यक् वृषायते ।
बलवर्णकरो रुच्यः शुक्रसंजननः परः ॥ ३२ ॥
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम् ।
अनुपानं प्रयुञ्जीत बुद्ध्वा दोषगतिं भिषक् ॥ ३३ ॥
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेवनार्थं रसायनम् ॥ ३४ ॥

वंगभस्म, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, चांदी भस्म, कपूर, अभ्रक

भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। स्वर्णभस्म तीन माशे, मोती भस्म तीन माशे लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर केशराज के रससे भावित कर रत्ति प्रमाण की गोली बनावें। इससे बीस प्रकार के प्रमेह, साध्य हों या असाध्य दूर होते हैं। मूत्रकृच्छ्र, पाण्डु, धातुस्थ ज्वर, हलीमक, रक्तपित्त, वातपित्तकफोद्भव राग, ग्रहणी, आमदोष, मन्दाग्नि, अरोचक, इन सब रोगों को ऐसे नाश करता है जैसे बिजली वृक्ष को नाश करती है। यह वृहद्वङ्गेश्वर रस सोमरोग, बहुमूत्र, बहुत प्रकार के घोर मूत्रमेह, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र को नाश करता है। क्षीण मनुष्यों को पुष्ट करनेवाला है, ओज तथा तेजवर्धक है। तथा इसके सेवन से मनुष्य नित्य स्त्रियों में रमण कर सकता है। यह बलदायक, कान्ति बढ़ानेवाला, रुचिवर्धक तथा परम वीर्यवर्धक है। इसके साथ दोषों की गति को जानकर बकरी का वा गौका दूध अथवा घी का अनु पान करे। इस रसायन को बालक, वृद्ध, और प्रौढ़ सब खा सकते हैं ॥ २७-३४ ॥

वङ्गादियोगाः ।

वङ्गाभ्रमथ नागाभ्रं नागं वङ्गश्च केवलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ ३५ ॥

बंगभस्म और अभ्रकभस्म को, तथा नाग भस्म और अभ्रक भस्म को, अथवा केवल नागभस्म को अथवा केवल बंगभस्म को अथवा केवल शिलाजीत को, मधुसे मिलाकर खाने से प्रमेह रोग नष्ट होते हैं। (पहले चारों योगों को आंवले के रस से क्रमशः मात्रा बढ़ाकर खावें) ॥ ३५ ॥

कस्तूरीमोदकः ।

कस्तूरी वनिता क्षुद्रा त्रिफला जीरकद्वयम् ।
एलावीजं त्वचं यष्टिमधुकं मिषिवालकम् ॥ ३६ ॥
शतपुष्पोत्पलं धात्री मुस्तकं भद्रसंज्ञकम् ।
खर्जूरं कृष्णतिलकं सुपक्वं कदलीफलम् ॥ ३७ ॥

कोकिलाक्षस्य वीजश्च माषमात्रं समं समम् ।
यावन्त्येतानि चूर्णानि द्विगुणा सितशर्करा ॥ ३८ ॥
धात्रीरसेन पयसा कूष्माण्डस्वरसेन च ।
विपचेत् पाकविद् वैद्यो मन्दमन्देन वन्हिना ॥ ३९ ॥
अवतार्य सुशीते च यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
अक्षमात्रं प्रयुञ्जीत सर्वमेहप्रशान्तये ॥ ४० ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
सोमरोगं वहुविधं मूत्रातीसारमुल्वणम् ॥ ४१ ॥
मूत्रकृच्छ्रं निहन्त्याशु मूत्राघातं तथाश्मरीम् ।
ग्रहणीं पाण्डुरोगञ्च कामलां कुम्भकामलाम् ॥ ४२ ॥
वृष्यो वलकरो हृद्यः शुक्रवृद्धिकरः परः ।
कस्तूरीमोदकश्चायं चरकेण च भाषितः ॥ ४३ ॥

प्रियंगु, छोटी कटेली, हरड़, बहेड़ा, आंवला, श्वेतजीरा, काला जीरा, इलायची के बीज, दारचीनी, मुलट्ठी, सौंफ़, सुगंधबाला, सौंफ नीला कमल, आंवला, नागर मोथा, खजूर, कालेतिल, पका हुआ केला, तालमखाना, प्रत्येक द्रव्य एक २ माषा लेकर पीसे । इन सब से दुगुनी श्वेत खांड मिलादे । फिर सबको मिलाकर आंवले के रस, पेठे के रस, दूध इनमें से प्रत्येक को सारे चूर्णसे चारगुणा लेकर मन्द अग्निपर चूर्ण सहित पकाये । पक चुकनेपर उतार शीतल करके कस्तूरी एक माषा मिलादे । और एक अक्ष भरकी गोली बनाले । इसे प्रयोग करे तो सब प्रकार के प्रमेह शान्त होते हैं । वातिक, पैत्तिक श्लैष्मिक, सान्निपातिक, प्रमेह, अनेक प्रकार के सोमरोग, भयंकर मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, अश्मरी, ग्रहणी, पाण्डु रोग, कामला कुम्भकामला रोगों को नाश करताहै । तथा यह वृष्य, वलदायक, हृदय के लिये हितकारी, परम वीर्यवर्धक है । यह कस्तूरी मोदक चरक ने बताया था ॥ ३६—४३ ॥

मेहवज्रः।

भस्मसूतं मृतं कान्त-लौहभस्म शिलाजतु।
शुद्धताप्यं शिलाव्योषं त्रिफलाबिल्वजीरकम् ॥ ४४ ॥
कपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत्।
त्रिंशद्वारं विशोष्याथ लिह्याच्च मधुना सह ॥
निष्कमात्रं हरेन्मेहान् मूत्रकृच्छ्रं सुदारुणम् ॥ ४५ ॥
महानिम्बस्य वीजश्च षड्निष्कं पेषितश्च येत्।
पलतण्डुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हन्ति मेहं चिरोत्थितम् ॥ ४६ ॥
कुमारी केवला देया चेषल्लवणसंयुता।
प्रमेहं हन्ति सकलं सप्ताहात् परतो नृणाम् ॥ ४७ ॥

रससिन्दूर, कान्तलोहभस्म, शिलाजीत, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्धमनसिल, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, बिल, जीरा, कैथ, हल्दी का चूर्ण सब द्रव्य समभाग लेकर भांगरे के रस से तीस वार भावना देकर सुखा ले। इसे एक निष्कभर लेकर शहद से खावे तो प्रमेह और दारुण मूत्रकृच्छ्र दूर होते हैं। इसके पीछे बकायन के बीज छः निष्क भर पीस कर एक पल तण्डुलोदक से तथा दो निष्क घी से मिलाकर खावें तो पुराने प्रमेह को दूर करता है ॥ ४४—४६ ॥

केवल घीकुमार को थोड़ा सैंधानमक मिलाकर खावे तो सात रात में सब प्रमेह नाश होजाते हैं ॥ ४७ ॥

मेहकेशरी।

मृतं वङ्गं सुवर्णञ्च कान्तलौहञ्च पारदम्।
मुक्तां गुडत्वचञ्चैव सूक्ष्मैलानागकेशरम् ॥ ४८ ॥
समभागं विचूर्ण्याथ कन्यानीरेण भावयेत्।
द्विमाषां वटिकां खादेद् दुग्धान्नं प्रपिबेत् ततः ॥ ४९ ॥

प्रमेहं नाशयत्याशु केशरी करिणं यथा ॥ ५० ॥
शुक्रप्रवाहं शमयेत् त्रिरात्रान्नात्र संशयः।
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ ५१ ॥

वंगभस्म स्वर्णभस्म, कान्तलौहभस्म, शुद्धपारदभस्म, मुक्ताभस्म, दारचीनी, छोटी इलायची, नागकेशर, प्रत्येकद्रव्य समभाग लेकर चूर्ण करे और घीकुमारी के रस से भावित करे। दो माषा भर इसे खाकर ऊपर से दूध और अन्न का भोजन करे। इस से प्रमेह वैसे ही शीघ्र दूर होता है जैसे शेर को देख कर हाथी। यह तीन रात में वीर्य के प्रवाह अर्थात् शुक्रमेह को दूर करता है इसमें कोई संशय नहीं। पुराने प्रमेह तथा मधुमेह को भी नाश करता है ॥ ४८–५१ ॥

योगेश्वरो रसः।

सूतकं गन्धको लौहः नागश्चापि वराटिका।
ताम्रकं वङ्गभस्मापि व्योमकञ्च समांशिकम् ॥ ५२ ॥
सूक्ष्मैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेशरम्।
रेणुकाऽऽमलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ ५३ ॥
एषाञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः।
भावना तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ ५४ ॥
मात्रा चणकतुल्या च गुड़िकेयं प्रकीर्त्तिता।
प्रमेहं वहुमूत्रञ्च अश्मरीं मूत्रकृच्छ्रकम् ॥ ५५ ॥
व्रणं हन्ति महाकुष्ठं ह्यर्शांसि च भगन्दरम्।
योगेश्वरो रसोनाम महादेवेन भाषितः ॥ ५६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, लौह भस्म, नागभस्म, कौडीभस्म, ताम्रभस्म, वंगभस्म, अभ्रकभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलाये। फिर छोटी इलायची, तेजपत्र, नागरमोथा, विडंग, नागकेशर, रेणुका, आंवला पिप्पलीमूल इनका चूर्ण प्रत्येक दो २ तोला लेकर मिला दे।

अब सब को मर्दन कर आंवले के रस की भावना देवे। फिर चने के समान गोली बनाले। इसके सेवन से प्रमेह, बहुमूत्र, अश्मरी मूत्रकृच्छ्र, व्रण, महाकुष्ठ, बवासीर, भगन्दर, रोग नष्ट होते हैं। इस योगेश्वर रस को महादेव जी ने कहा है ॥ ५२-५६ ॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे प्रमेहचिकित्सा ॥

अथ सोमरोगचिकित्सा।

तालकेश्वरो रसः।

तालं सूतं समं गन्धं मृतलौहाभ्रवङ्गकम्।
मर्दयेन्मधुना चैव रसोऽयं तालकेश्वरः ॥ १ ॥
माषमात्रं भजेत् चौद्रैर्बहुमूत्रप्रशान्तये।
उडुम्बरफलं पक्वं चूर्णितं कर्षमानतः।
संलेह्य मधुना सार्द्धमनुपानं सुखावहम् ॥ २ ॥

शुद्ध हड़ताल, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, बंगभस्म, प्रत्येक समभाग ले। पहले पारागंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलावे। और शहद से मिला कर गोली बनाले। इसे एक माषा लेकर शहद से चाटकर पके हुए गूलर के चूर्ण को एक कर्ष ले उसमें शहद मिला कर अनुपान करे तो बहुमूत्र दूर होता है। (मात्रा एक रत्ति दें) ॥ १ ॥ २ ॥

गगनादिलौहम्।

गगनं त्रिफला लौहं कुटजं कटुकत्रयम्।
पारदः गन्धकश्चैव विषटङ्कणसर्जिकाः ॥ ३ ॥
त्वगेला तेजपत्रञ्च वङ्गं जीरकयुग्मकम्।
एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ४ ॥
तदर्द्धं चैत्रकं चूर्णं कर्षैकं मधुना लिहेत्।
अवश्यं विनिहन्त्याशु मूत्रातीसारसोमकम् ॥ ५ ॥

अभ्रकभस्म, हरड़, बहेड़ा, आंवला, लौहभस्म कुटजछाल, सोंठ, मिरच, पीपल, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्धविष, शुद्धसुहागा, सज्जी, दारचीनी, इलायची, तेजपत्र, बंगभस्म, श्वेतजीरा, कालाजीरा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। पहले पारागंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाये । फिर सारे चूर्ण का आधा चीते का चूर्ण मिलाये। इसे गगनादि लौह की मात्रा एक कर्ष लेकर शहद से खावे तो मूत्रातिसार और सोमरोग नष्ट होता है । (मात्रा दो रत्ति दें)॥ ३—५ ॥

सोमनाथ रसः ।

कर्षं जारितलौहञ्च तदर्द्धं रसगन्धकम् ।
एलापत्रं निशायुग्मं जम्बुवीरणगोक्षुरम् ॥ ६ ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाड़िमटङ्कणम् ।
चन्दनं गुगुलुः लोध्र-शालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ ७ ॥
छागीदुग्धेन वटिकां कारयेद् दशरक्तिकाम् ।
निर्मितो नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥ ८ ॥
सोमरोगं बहुविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।
योनिशूलं मेढ्रशूलं सर्वजं चिरकालजम् ।
बहुमूत्रं विशेषेण दुर्जयं हन्त्यसंशयम् ॥ ९ ॥

लौहभस्म दो तोला, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, इलायची, तेजपात, हल्दी, दारुहल्दी, जामुन की गुठली, खस, गोखरु, विडंग, जीरा, पाठा, आंवला, अनार, सुहागा, चंदन लाल, गुगुलु, लोध, शाल, अर्जुन, रसौंत, प्रत्येक एक २ तोला लेकर घोट कर बकरी के दूध से पीस दस रत्ति के समान गोली बनावें। यह सोमनाथ रस नित्य नाथ ने बनाया था । यह अनेक प्रकार के सोमरोग, घोट प्रदर, योनिशूल, लिङ्गशूल, त्रिदोषज तथा पुराना दुर्जय बहुमूत्ररोग विशेष करके नष्ट करता है ॥ ६—९ ॥

बृहत् सोमनाथ रसः ।

हिङ्गुलसम्भवं सूतं पालिधारसमर्दितम् ।

रण्डाशोधितगन्धश्च तेनैव कज्जलीकृतम् ॥ १० ॥
तद्द्वयोर्द्विगुणं लौहं कन्यारसविमर्दितम् ।
अभ्रकं वङ्गकं रौप्यं खर्परं माक्षिकं तथा ॥ ११ ॥
सुवर्णञ्च समं सर्वं प्रत्येकञ्च रसार्द्धकम् ।
तत्सर्वं कन्यकाद्रावैर्मर्दयेद् भावयेत् ततः ॥ १२ ॥
भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवटीं ततः ।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ १३ ॥
प्रमेहान् विंशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम् ।
मूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च मूत्राघातं सुदारुणम् ॥ १४ ॥
बहुदोषं बहुविधं प्रमेहं बहुसंज्ञकम् ।
हस्तिमेहमिक्षुमेहं लालामेहं विनाशयेत् ॥१५॥
वातिकं पैत्तिकश्चैव श्लैष्मिकं सोमसंज्ञकम् ।
नाशयेद् बहुमूत्रञ्च प्रमेहमविकल्पतः ॥ १६ ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा ले उसे नीमके रससे घोटले। मूषाकर्णी के रससे शुद्ध किया हुआ गंधक ले। ऐसे शुद्ध हुए पारा और गंधक दोनोंको एक २ तोला लेकर कज्जली करे। फिर घीकुमार के रसमें घुटा हुआ लौहभस्म, चार तोला ले। और अभ्रक भस्म, बंगभस्म, चांदीभस्म, खर्परभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, तथा स्वर्ण भस्म, प्रत्येक आधा २ तोला लें। इन सबको मिलाकर घीकुमारी के रससे घोटें तथा भावना दें फिर मण्डूकपर्णी के रससे घोटकर दो रत्ति की गोली बनालें। इसे शहद से खावें तो सोमरोग नष्ट होता है। बीस प्रमेह, बहुमूत्र, सामरोग, मूत्रातिसार, मूत्रकृच्छ्र, भयंकर मूत्राघात, बहुत दोषों वाले तथा अनेक प्रकार के मधुमेह को, हस्तिमेह इक्षुमेह, लालामेह, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, प्रमेह, सोमरोग, तथा बहुमूत्र, इनसबको निश्चय से नाश करता है ॥ १०-१६ ॥

सोमेश्वरो रसः ।

शालार्जुनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम् ।

अग्निमन्थो निशायुग्मं धात्रीदाड़िम गोक्षुरम् ॥ १७ ॥
जम्बुवीरणमूलञ्च भागमेषां पलार्द्धकम् ।
रसगन्धकधान्याब्दमेलापत्रं तथाऽभ्रकम् ॥ १८ ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा विडङ्गं टङ्कजीरकम् ।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलार्द्धं गुग्गुलोरपि ॥ १९ ॥
घृतेन वटिकां कृत्वा खादेत् षोडशरक्तिकाम् ।
गहनानन्दनाथेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २० ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
एकजं द्वन्द्वजश्चैव सन्निपातसमुद्भवम् ।
मूत्राघातं मूत्रकृच्छ्रं कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २१ ॥
भगन्दरोपदंशौ च विविधान् पीड़कान् व्रणान् ।
विस्फोटार्बुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २२ ॥

शालसार, अर्जुन की छाल, लोध, कदम्बकी छाल, अगर, लाल चन्दन, गणियारी की छाल, हल्दी, दारु हल्दी, आंवला, अनार, गोखरु, जामुन, खस, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण आधा २ पल लें और शुद्ध पारा, और शुद्ध गंधक, धनियां, नागरमोथा, इलायची, तेजपात अभ्रकभस्म, लौह भस्म, रसौंत, पाठा, वायविडंग, सुहागा, जीरा, प्रत्येक का चूर्ण एक २ पल ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें । फिर गुगुल शुद्ध आधापल मिलाकर खरल करें । फिर घी से मिलाकर सोलह रत्ति की गोली बनावें । इसे सोलहरत्ति खावें तो यह सोमरोग को दूर करता है । यह गहनानन्द का बनाया हुआ सोमेश्वर रस अति तेजस्वी है । एक दोषज, द्वन्द्वज, त्रिदोषज, सब प्रकार का सोमरोग, और प्रमेह, मूत्राघात, मूत्रकृच्छ्र, कामला, हलीमक, भगंदर, उपदंश, विविध पीड़ादायकव्रण, विस्फोटक, अर्बुद, कण्डू, इन सबको दूर करता है १७-२२॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे सोमरोगचिकित्सा ॥

अथस्थौल्य-चिकित्सा ॥

त्र्यूषणाद्यं लौहम् ।

त्र्यूषणं विजया चव्यं चित्रकं विडमौद्भिदम् ।
वागुजी सैन्धवञ्चैव सौवर्चलसमान्वितम् ॥ १ ॥
अयश्चूर्णेन संयुक्तं भक्षयेन्मधुसर्पिषा ।
स्थौल्यापकर्षणं श्रेष्ठं बलवर्णाग्निवर्द्धनम् ॥ २ ॥
मेहघ्नं कुष्ठशमनं सर्वव्याधिहरं परम् ।
नाहारे यन्त्रणा कार्य्या न विहारे तथैव च ।
त्र्यूषणाद्यमिदं लौहं रसायनवरोत्तमम् ॥ ३ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, भांग, चव्य, चीता, विड्नमक, औद्भि-
दनमक, बावची, सेंधानमक, सोंचल नमक, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण
समभाग लें। लौहभस्म सब चूर्ण के बराबर ले पीस रखें। और
शहद और घी मिलाकर इसे उचित मात्रा में खावें तो स्थूलता का
होती है। बल वर्ण और अग्नि की वृद्धि होती है। यह प्रमेह नाशक
कुष्ठनाशक तथा सर्व व्याधि नाशक है। इसके सेवन के साथ आहार
विहार में कुछ वर्जित नहीं है। यह त्र्यूषणादि लौह उत्तम रसायन
है ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

बड़वाग्निलौहम् ।

सूतभस्म सतालञ्च लौहं ताम्रं समं समम् ।
मर्दयेत् सूर्य्यपत्रेण चास्य वल्लं प्रयोजयेत् ॥ ४ ॥
मधुना स्थूलरोगे च शोथे शूले तथैव च ।
मध्वाज्यमनुपानञ्च देयं वाऽपि कफोल्वणे ॥ ५ ॥

रससिन्दूर, शुद्ध हड़ताल, लौह भस्म, ताम्रभस्म, प्रत्येक द्रव्य
समभाग लें। सबको पीसकर आक के पत्तों के रससे मर्दन करके
डेढ़रत्ती प्रमाण की गोली बनावे। इसे शहद से खावें तो स्थूलता,
शोथ, शूलरोग, नष्ट होते हैं। कफ बढ़ा हो तो शहद और घी मिला-
कर अनुपान देवे ॥ ४ ॥ ५

बड़वाग्निरसः ।

शुद्धसूतं समो गन्धः ताम्रं तालं समं समम् ।
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं चौद्रैर्लेह्यं त्रिगुञ्जकम् ।
वडवाग्निरसो नाम्ना स्थौल्यमाशु नियच्छति ॥ ६ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, हड़ताल शुद्ध, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलायें और आक के दूधसे एकदिन पीसकर तीनरत्ति की गोली बनालें। यह बडवाग्नि रस स्थूलता को शीघ्र दूर करता है। (मात्रा आधी रत्ति दें) ॥ ६ ॥

इति रसेन्द्रसार संग्रहे स्थौल्यचिकित्सा ॥

अथ उदररोग-चिकित्सा ॥

त्रैलोक्यसुन्दरोरसः ।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं ताम्राभ्रं सैन्धवं विषम् ।
कृष्णजीरं विड़ङ्गञ्च गुडूचीसत्त्वचित्रकम् ॥ १ ॥
उग्रगन्धा यवक्षारं प्रत्येकं कर्षमात्रकम् ।
निर्गुण्डिकाद्रवैरग्नि--वीजपूरद्रवैर्दिनम् ॥ २ ॥
मर्दयेत् शोषयेत् सोऽयं रसस्त्रैलोक्यसुन्दरः ।
गुञ्जाद्वयं घृतैर्लेह्यं वातोदरकुलान्तकम् ॥ ३ ॥
वन्हिचूर्णं यवक्षारं प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।
घृतप्रस्थं विपक्तव्यं गोमूत्रैश्च चतुर्गुणैः ।
घृतावशेषं कर्त्तव्यं कर्षमात्रं पिबेदनु ॥ ४ ॥

शुद्धपारा एक कर्ष, शुद्ध गंधक दो कर्ष, दोनों की कज्जली करें। फिर ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, सैंधानमक, शुद्धविष, काला जीरा, विडंग, गिलोय का सत, चीता, अजमोदा, यवक्षार, प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष ले। सबको मिलाकर संभालु के रससे, चीते के

रससे, तथा बिजौरे के रससे एक २ दिन घोटकर सुखावे। यह त्रैलोक्यसुन्दररस कहाता है । इसे दोरत्ति लेकर घी से खावे तो वातोदर शान्त होता है । इसके साथ आगे लिखे अनुपान को पीवे। चीते का चूर्ण दोपल, यवक्षार दोपल, दोनों को पीस कल्क या चटनी बनाये इसे एक प्रस्थ घी में डाले, और चारप्रस्थ गोमूत्र में मिलाकर पकावे। घी मात्र शेष रहने पर उतार कर छानले। इस घी को एक कर्षभर पूर्वोक्त रसके पीछे अनुपान में पीवे ॥ १—४॥

वैश्वानरी वटी ।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं मृतार्कायः शिलाजतु ।
रसमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ५ ॥
त्रिकटु चित्रकं वीरा निर्गुण्डी मूषलीरजः ।
अजमोदा विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ६ ॥
निम्बपञ्चाङ्गुलक्काथैर्भावना चैकविंशतिः ।
भृङ्गराजरसैः सप्त दत्त्वा क्षौद्रैर्विलोड़येत् ॥ ७ ॥
भक्षयेद्बदरास्थ्याभां वटिकां तां दिवा निशि ।
श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ॥ ८ ॥
देवदारुवन्हिमूलकल्कं क्षीरेण पाययेत् ।
भोजनं मेषदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ९ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, ताम्रभस्म, लौह भस्म, शिलाजीत, प्रत्येक एक २ तोला ले शुद्धविष दो तोला ले, सोंठ, मिरच, पीपल, चीता, काकोली, निर्गुण्डी, मूसली, अजमोदा इनका चूर्ण प्रत्येक एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली बनायें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर नीम तथा एरण्ड की जड़के काथसे इक्कीस भावना दे। फिर भांगर के रससे सात भावना देवें फिर शहद से मिलाकर बेरकी गुठली के बराबर गोली बनाकर दिनमें और रातके समय खायें। तो श्लेष्मोदर को शीघ्र नाश करती है। इसका नाम वैश्वानरी वटी है इसके ऊपर से देवदारु

...ती की जड़ इन दोनों को समभाग लेकर दूधसे पीसकर पीयें। और भोजन भेड़का दूध या कुलथी के रससे करें [यहां "पञ्चाङ्गुल" के स्थान में "पञ्चाङ्ग निम्बक्काथेन" अर्थात् केवल नीमके पञ्चाङ्ग के काथ से एक भावना देनी। ऐसा पाठ भी है] ॥ ५—९ ॥

जलोदरारिरसः।

पिप्पली मरिचं ताम्रं रजनीचूर्णसंयुतम्।
स्नुही क्षीरैर्दिनं मर्द्य तुल्यं जैपालबीजकम् ॥ १० ॥
निष्कं खादेद्विरेकः स्यात् सद्यो हन्ति जलोदरम्।
रेचनानाञ्च सर्वेषां दध्यन्नं स्तम्भने हितम्।
दिनान्ते च प्रदातव्यमन्नं वा मुद्गयूषकम् ॥ ११ ॥

पीपल, मिरच, ताम्रभस्म, हल्दी का चूर्ण, इन सबको समभाग ले पीसकर थोहर के दूध से एकदिन भावना दें। फिर सबके समान शुद्ध जमालगोटे के बीजों का चूर्ण मिलादे। इसे घोटकर एक निष्क भर खावें तो विरेचन होने से शीघ्रही जलोदर का नाश होता है। सभी विरेचनों के बंद करने के लिये दही और अन्न हित माने हैं। दिनके अन्त में अन्न वा मूंग का रस दे। [मात्रा सोचसमझकर दे। एक या दोरत्ती पर्याप्त है] ॥ १० ॥ ११ ॥

महावन्हिरसः।

चतुः सूतस्य गन्धाष्टौ रजनीत्रिफलाशिलाः।
प्रत्येकञ्च द्विभागं स्यात् त्रिवृत् जैपालचित्रकम् ॥ १२ ॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद् दन्ती त्र्यूषणजीरकम्।
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्यविचूर्णयेत् ॥ १३ ॥
जयन्ती स्नुक् पयोभृङ्ग–वन्हिवातारितैलकैः।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाव्यं सप्तवारं पृथक् पृथक् ॥ १४ ॥
महावन्हिरसो नाम्ना निष्कमुष्णजलैः पिवेत्।
विरेचनं भवेत् तेन तक्रं भुक्तं ससैन्धवम् ॥ १५ ॥

दिनान्ते दापयेत् पथ्यं वर्जयेच्छीतलं जलम् ।
सर्वोदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मवातहरः परः ॥ १६ ॥

शुद्धपारा चार तोला, शुद्ध गन्धक आठ तोले दोनों की कज्जली करे । फिर हल्दी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, शुद्ध मनशिल, इनमें से प्रत्येक का चूर्ण दो २ तोला ले। फिर त्रिवी, शुद्ध जमालगोटा, चीता, प्रत्येक का चूर्ण तीन २ तोला ले । फिर दन्तीमूल, सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा प्रत्येक का चूर्ण आठ २ तोले ले । सबको पीसकर एकत्र करके जयन्ती के रस, थोहर के दूध, भांगरा, चीता, एरण्ड के तेलसे क्रमसे सात २ वार भावना देवे । यह महावन्हि नामक रस है। इसे एक निष्कभर लेकर गरम जलसे पियें तो विरेचन होगा । दिनके अन्तमें तक्र में सेंधा नमक डालकर पीवे । शीतल जल न पीवे । यह योग सब उदर रोगों को नाश करता है । तथा श्लेष्मवात को हरने वाला है ॥ १२—१६ ॥

त्रैलोक्योडुम्बरो रसः ।

द्वौ भागौ शिववीजस्य गन्धकस्य चतुष्टयम् ।
अभ्रवन्हिविडङ्गानां गुडूचीसत्त्वनागयोः ॥ १७ ॥
कृष्णजीरकटूनाञ्च लवणक्षारयोरपि ।
प्रत्यकं भागमादाय मर्दयेत् सुरसाद्रवैः ॥ १८ ॥
वीजपूररसैर्भूयो मर्दयित्वा विशोषयेत् ।
त्रैलोक्योडुम्बरो नाम वातोदरकुलान्तकः ॥ १६ ॥
गुञ्जाद्वयं ततश्चास्य ददीत घृतसंयुतम् ।
भोजयेत् स्निग्धमुष्णञ्च पायसञ्च विवर्जयेत् ॥ २० ॥

शुद्ध पारा दो तोला, शुद्ध गंधक चार तोला, दोनों की कज्जली करें । फिर अभ्रक भस्म, चीता, विडंग, गिलोय का सत, नागभस्म, कालाजीरा, सोंठ, मिरच, पीपल, सेंधानमक, यवक्षार, प्रत्येक का चूर्ण एक २ तोला लेकर तुलसी के रससे मर्दन करे फिर विजौरे के रससे मर्दन करके सुखा लेवे । यह त्रैलोक्योडुम्बर रस वातोदर को

नाश करता है। इसको दोरत्तिभर लेकर घीसे मिलाकर खावे तथा स्निग्ध और उष्णभोजन करावे दूध तथा खीरआदि न खावे॥१७-२०॥

इच्छाभेदीरसः।

शुण्ठीमरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम्।
जैपालो द्विगुणः प्रोक्तः सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥ २१॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत्।
पिवेत्तु चुल्लकान् यावत् तावद्वारान् विरेचयेत्।
तक्रौदनश्च दातव्यं पथ्यमत्र विजानता॥ २२॥

सोंठ, मिरच, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, सुहागा, प्रत्येक द्रव्य एकर तोला ले। सबसे दुगुना शुद्ध जमालगोटा ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर घोटकर दोरत्ति भरकी गोली बनावे। इसे मिश्री से मिलाकर खावे। जितने चुल्लु (मिश्री मिले) पानी के पियेगा उतनी वारही विरेचन होगा। खाने को छाछ और चावल पथ्य में देवे॥ २१॥ २२॥

पिप्पल्याद्यं लौहम्।

पिप्पलीमूलचित्राभ्र-त्रिकत्रयेन्दु-सैन्धवम्।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम्॥ २३॥

पिप्पलीमूल, चीता, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़ बहेड़ा, आंवला, विडंग, चीता, मोथा, कपूर, सेंधानमक प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। सबके समान लौहभस्म मिलाकर खरल करे। उचित मात्रामें इसे खावे तो सबप्रकारके उदररोग शान्तहोतेहैं॥२३॥

उदरारिरसः।

पारदं शिखितुत्थश्च जैपालं पिप्पलीसमम्।
आरग्वधफलान्मज्जा वज्रीक्षीरेण मर्दयेत्॥ २४॥
माषमात्रां वटीं खादेत् स्त्रीणां जलोदरं जयेत्।
चिञ्चाफलरसञ्चानु पथ्यं दध्योदनं हितम्।
दकोदर हरश्चैव तीव्रेण रेचनेन च॥ २५॥

रससिन्दूर, शुद्ध नीलाथोथा, शुद्ध जमालगोटा, पिप्पली, अमलतास का गूदा, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले खरल करे। फिर थोहर के दूध से मर्दन कर एक माषा भरकी गोली बनाकर खाने से स्त्रियों का जलोदर नाश होता है। इसका अनुपान इमली के फलका रस है। और पथ्य में दही चावल देवे। तीव्र विरेचन होनेसे दकोदर दूर होता है॥ [माषा सुश्रुतका पांचरत्ति ले । इसकी एक रत्तिकी मात्रा ही पहले दे] ॥ २४ ॥ २५ ॥

वङ्गेश्वरो रसः ।

सूतभस्म वङ्गभस्म भागैकं सम्प्रकल्पयेत् ।
गन्धकं मृतताम्रञ्च प्रत्येकञ्च चतुः पलम् ॥ २६ ॥
अर्कक्षीरैर्दिनं मर्द्यं सर्वं तद्गोलकीकृतम् ।
रुद्ध्वा तद् भूधरे पक्त्वा पुटकेन समुद्धरेत् ॥ २७ ॥
एष वङ्गेश्वरो नाम प्लीहगुल्मोदरान् जयेत् ।
घृतैर्गुञ्जाद्वयं लेह्यं निष्कां श्वेतपुनर्नवाम् ॥ २८ ॥
गवां मूत्रैः पिवेच्चानु रजनीं वा गवां जलैः ॥ २९ ॥

रससिन्दूर, बंगभस्म, प्रत्येक एक २ पलले। शुद्ध गंधक और ताम्रभस्म प्रत्येक चार २ पलले। सबको पीसकर आक के दूध से एक दिन मर्दन करे और गोला बना सम्पुट में रख भूधरयंत्र में पुटदे। इसे स्वांग शीतल होनेपर निकाले। इस वङ्गेश्वर रस से प्लीहा, गुल्म और उदररोग नष्ट होते हैं। इसकी मात्रा दोरत्ति लेकर घीसे खावे और ऊपर से एक निष्कभर श्वेतपुनर्नवा का चूर्ण गोमूत्र से पीवे अथवा हल्दी के चूर्ण को गोमूत्र से पीवे ॥ २६—२९ ॥

इति उदर रोग चिकित्सा ॥

अथ प्लीहरोगचिकित्सा ।

रोहितकलौहम् ।

रोहितकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ १ ॥

रोहेड़े की छालका चूर्ण, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच पीपल, विडंग, मोथा, चीता प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। सबके समभाग लौहभस्म मिलावे। इसको उचित मात्रा खावे में तो प्लीहा, उदर तथा अग्रमांस रोग अच्छा होता है॥ १॥

लोकनाथो रसः।

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत्।
मृताभ्रं रसतुल्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत्॥ २॥
रसात् द्विगुणलौहञ्च लौहतुल्यञ्च ताम्रकम्।
भस्म वराटिकायाश्च ताम्रतस्त्रिगुणं कुरु॥ ३॥
नागवल्लीरसेनैव मर्दयेद् यत्नतो भिषक्।
पुटेद् गजपुटे विद्वान् स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ४॥
यकृत् प्लीहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां सगुडां वा हरीतकीम्॥
गोमूत्रञ्च पिबेच्चानु गुडं वा जीरकान्वितम्॥ ५॥

शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगंधक एकतोला दोनोंकी कज्जली करे। फिर अभ्रकभस्म एक तोला, लौहभस्म दोतोला, ताम्रभस्म, दोतोला कौड़ीभस्म छःतोला, इन सबको एकत्रकर पानके रससे घोटकर गजपुट में फूक देवे। स्वांग शीतल होनेपर, निकाल पीसकर रखे। इसे खाने से यकृत्, प्लीहा, उदर, गुल्म, सोजा, नाश होता है। तथा इसके पीछे पिप्पली शहद से, अथवा हरड़ गुडसे, अथवा गोमूत्र पीने से, अथवा जीरा और गुड़ का अनुपान करे॥ २—५॥

बृहल्लोकनाथो रसः।

शुद्धसूतं द्विधागन्धं खल्ले कृत्वा तु कज्जलम्।
सूततुल्यं जारिताभ्रं मर्दयेत् कन्यकाम्बुना॥ ६॥
ततो द्विगुणितं दद्यात् ताम्रं लौहं प्रयत्नतः।
काकमाचीरसेनैव सर्वं तत परिमर्दयेत्॥ ७॥

सूतान्नवगुणं दद्यात् वराटीसम्भवं रजः ।
पिष्ट्वा जम्बीरनीरेण मूषायुग्मं प्रकल्पयेत् ॥ ८ ॥
तन्मध्ये गोलकं क्षिप्त्वा यत्नेन छादयेद् भिषक् ।
शरावसम्पुटं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ ९ ॥
शरावसन्धिमालिप्य चातपे शोषयेत् क्षणम् ।
ततो गजपुटं दत्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १० ॥
पिष्ट्वा तु सर्वमेकत्र स्थापयेद् भाजने शुभे ।
खादेत् वल्लद्वयञ्चास्य मूत्रञ्चानुपिबेन्नरः ॥ ११ ॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुडां वा हरीतकीम् ।
अजाजीं वा गुडेनैव भक्षयेत् तुल्ययोगतः ॥ १२ ॥
यकृत्प्लीहोदरोगञ्च श्वयथुञ्च विनाशयेत् ।
वाताष्ठीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्ठीलां तथैव च ॥ १३ ॥
कांस्यक्रोडाग्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम् ।
वन्हिमान्द्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः ॥ १४ ॥

शुद्धपारा, एक तोला, शुद्धगंधक दो तोला कज्जली करे । फिर अभ्रक भस्म एक तोला, मिलाकर सबको घीकुमारी के रससे घोटे। फिर ताम्रभस्म दो तोला, लौहभस्म दो तोला ले, उसी में मिलाकर सबको मकोय के स्वरस से घोटे । फिर कौड़ीभस्म नौ तोला डाले और सबको जम्बीरी नीबू के रससे घोटकर सम्पुट में रखे और मिट्टी, राख, नमक और पानी मिलाकर सन्धि बंद करदे। इसे धूप में कुछ देर सुखा गजपुटमें फूंक दे । फिर स्वांग शीतल होनेपर निकाल कर पीस और रखे । इसे तीनरत्ति खाकर ऊपर से गौका मूत्र पीवे। अनुपान में पीपल शहद से, या हरड़ गुड़से, अथवा जीरे के चूर्ण गुड़ से खावे। इससे यकृत् ,प्लीहा,उग्रउदर रोग,सोजा, वाताष्ठीला कमठी, प्रत्यष्ठीला, कांस्यक्रोड़, अग्रमांस, शूल, भगन्दर, अग्निमांद्य तथा खांसी,ये सब नष्ट होते हैं।इसका नाम वृहल्लोकनाथ रसहै॥८-१४॥

ताम्रेश्वरवटी।

हिङ्गुत्रिकटुकञ्चैवापामार्गस्य च पत्रकम्।
अर्कपत्रं स्नुहीपत्रं तथा च समभागिकम्॥ १५॥
सैन्धवं तत्समं ग्राह्यं लौहं ताम्रञ्च तत्समम्।
प्लीहानं यकृतं गुल्ममामवातं सुदारुणम्॥ १६॥
अर्शांसि घोरमुदरं मूर्च्छापाण्डुं हलीमकम्।
ग्रहणीमतिसारञ्च यक्ष्माणं शोथमेव च॥ १७॥

हींग, सोंठ, मिरच, पीपल, अपामार्ग के पत्ते, आक के पत्ते, थोहर के पत्ते प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। सैंधानमक, लौहभस्म, ताम्र भस्म प्रत्येक सात २ तोला ले। सबका पीस रखे। इसे उचित मात्रामें खाने से प्लीहा, यकृत्, गुल्म, भयंकर आमवात, बवासीर, घोर उदर रोग, मूर्च्छा, पाण्डुरोग, हलीमक, ग्रहणी, अतिसार, यक्ष्मारोग, शोथ रोग दूर होते हैं। (अपामार्ग थोहर आदिके पत्तों के स्थान में इनका क्षार डालने का प्रचार है)॥ १५—१७॥

अग्निकुमारलौहम्।

तुत्थरामठटङ्कानि सैन्धवं धान्यजीरकम्।
यमानी मरिचं शुण्ठी लवङ्गैला विडङ्गकम्॥ १८॥
प्रत्येकं तोलकं चूर्णं लौहचूर्णन्तु तत्समम्।
रसस्यगन्धकस्यापि पलैकं कज्जलीकृतम्॥ १९॥
घृतेन मधुना खाद्यं लौहमग्निकुमारकम्।
यकृत् प्लीहोदरहरं गुल्मञ्चापि हलीमकम्॥ २०॥
बलवर्णाग्निजननं कान्तिपुष्टिविवर्द्धनम्।
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितं विश्वसम्पदे॥ २१॥

शुद्धपारा आधापल, शुद्ध गंधक आधा पल कज्जली करे। फिर शुद्धनीलाथोथा, हींग, सुहागा, सैंधानमक, धनियां, जीरा, अजवायन, मिरच, सौंठ, लौंग, इलायची, वायविडंग प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक२

तोला मिलावे। और लौहभस्म बारह तोले मिलावे। सबको एकत्र पीसकर उचित मात्रा में घी और शहद मिलाकर खावे। तो यह अग्निकुमार लौह यकृत् प्लीहा, उदररोग, गुल्म, हलीमक रोग नाश करता है। तथा बल, वर्ण और अग्नि की वृद्धि करता है। कान्ति तथा पुष्टि देता है। यह रस श्रीमान गहनानाथ ने संसार की भलाई के लिये बनाया है ॥ १८—२१ ॥

प्राणवल्लभो रसः।

लौहं ताम्रं वराटञ्च तुत्थं हिङ्गुफलत्रिकम्।
स्नुहीमूलं यवक्षारः जैपालं टङ्कणं त्रिवृत् ॥ २२ ॥

प्रत्येकञ्च पलं ग्राह्यं छागीदुग्धेन पेषितम्।
चतुर्गुञ्जां वटीं खादेद्वारिणा मधुनाऽपि वा ॥ २३ ॥

प्राणवल्लभनामाऽयं गहनानन्दभाषितः।
दोषं रोगञ्च संवीक्ष्य युक्त्या वा त्रुटिवर्द्धनम् ॥ २४ ॥

निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदार्बुदम्।
गलगण्डं गण्डमालां व्रणानि च हलीमकम् ॥ २५ ॥

अपचीं वातरक्तञ्च कण्डूं विस्फोटकुष्ठकम्।
नातः परतरः श्रेष्ठः कामलाऽर्त्ति भयेष्वपि ॥ २६ ॥

लौहभस्म, ताम्रभस्म, कौड़ीभस्म, शुद्ध नीलाथोथा, हींग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, थोहर की जड़, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, शुद्धसुहागा, त्रिवी, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक २ पल ले। सबको बकरी के दूधसे घोटकर चाररत्ति प्रमाण की गोली बनालें। इसे शहद या जल से खावें। यह प्राणवल्लभ रस गहनानन्द ने कहा था। रोगको तथा दोषको देखकर मात्रा कम या अधिकभी कर सकते हैं इससे कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, अर्बुद, गलगण्ड, गण्डमाला, व्रण, हलीमक, अपची, वातरक्त, कण्डू, विस्फोटक, कुष्ठ, ये सभी रोग दूर होते हैं तथा कामला रोग के लिये इससे बढ़कर कोई योग नहीं है॥ २२ २६॥

यकृदारिलौहम् ।

द्विकर्षं लौहचूर्णस्य चाभ्रकस्य पलार्द्धकम् ।
कर्षं शुद्धं मृतं ताम्रं लिम्पाकाङ्घ्रित्वचं पलम् ॥ २७ ॥
मृगाजिनभस्मपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
नवगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद् भिषक् ॥ २८ ॥
यावत् प्लीहोदरञ्चैव कामलाञ्च हलीमकम् ।
कासं श्वासं ज्वरं हन्याद् बलवर्णाग्निकारकम् ॥
यकृदरित्विदं लौहं वातगुल्मविनाशनम् ॥२९॥

लौहभस्म, दो कर्ष, अभ्रकभस्म आधा पल, ताम्रभस्म एक कर्ष, पातीलमू की जड़ की छाल एकपल, मृगचर्मभस्म एक पल। सबको पीसकर एकत्र करे। फिर नौरात्ति प्रमाण की गोली बनावे। इससे प्लीहोदर, कामला, हलीमक, कास, श्वास, ज्वर नष्ट होते हैं। तथा बल, वर्ण, अग्नि की वृद्धि होती है। यह यकृदरि लौह वातगुल्म को नाश करता है ॥ २७—२९ ॥

मृत्युञ्जयलौहम् ।

शुद्धसूतं समं गन्धो जारिताभ्रं समं समम् ।
गन्धकाद्द्विगुणं लौहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥३०॥
द्विक्षारं टङ्कणविडं वराटमथ शङ्खकम् ।
चित्रकं कुनटी तालं कटुकी रामठं तथा॥३१॥
रोहितकं त्रिवृच्चिञ्चा विशालाधवलाङ्कठम् ।
अपामार्गः ताललएडमम्लिका च निशायुगम् ॥ ३२ ॥
कानकं तुत्थकञ्चैव यकृन्मर्दं रसाञ्जनम् ।
एतानि समभागानि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ ३३ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ।
मथनः कुडवैर्भाव्यं वटिकामाषमात्रतः ॥ ३४ ॥

अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्वा दोषानुसारतः ।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३५ ॥
प्लीहानं ज्वरमुग्रञ्च कासञ्च विषमज्वरम् ।
चिरजं कुलजञ्चैव श्लीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३६ ॥
रोगानीकविनाशाय धन्वन्तरिकृतं पुरा ।
मृत्युञ्जयमिदं लौहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३७ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, प्रत्येक एक २ तोला लें। पहले पारे गंधक की कज्जली करें, फिर अन्य द्रव्य मिलायें। फिर लौह भस्म दो तोला; ताम्र भस्म चार तोला ले। यवक्षार, सज्जी, सुहागा विड्लवण, कौड़ी भस्म, शंखभस्म, चीता, शुद्धमनशिल, शुद्धहड़ताल, कुटकी, हींग, रोहेड़े की छाल, त्रिवी, इमली की छालकी भस्म, इन्द्रायण की जड़, श्वेतअंकोल, अपामार्ग, तालजटा भस्म, आलेत हल्दी, दारुहल्दी, शुद्ध जमालगोटे के बीज, शुद्ध नीलाथोथा, लाल रोहेड़े की छाल, रसौंत, इनमें से प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण एक २ तोला ले सबको एकत्र पीस अदरक के स्वरस से, तथा गिलोय के स्वरस से भावित करे। फिर (एक कुडव?) शहद से भावित करके एक माशा भरकी गोली बनावे। प्रातःकाल इसे खाकर दोषानुसार अनुपान पीवे तो सब रोग नाश होते हैं। प्लीहा, उग्रज्वर, खांसी, विषमज्वर, पुराना तथा कुल क्रमागत श्लीपद रोग ये सब नष्ट होते हैं। यह धन्वन्तरी जीका बनाया हुआ मृत्युञ्जय लौह अनेक रोगों को नाश करता है तथा सिद्धि देनवाला है ॥ ३०—३७ ॥

प्लीहार्णवो रसः ।

हिङ्गुलं गन्धकः टङ्कमभ्रकं विषमेव च ।
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥ ३८ ॥
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलार्द्धकम् ।
मर्दयित्वा वटीं कुर्य्यात् वल्लमात्रां प्रयत्नतः ॥ ३९ ॥
सेव्या शेफालिदलजैर्वटी माक्षिकसंयुता ।

प्लीहानं षट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥ ४० ॥
ज्वरं मन्दानलश्चैव कासं श्वासं वमिं भ्रमिम्।
प्लीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्द भाषितः ॥ ४१ ॥

शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गंधक, शुद्ध सुहागा, अभ्रक भस्म, शुद्धविष प्रत्येक द्रव्य एक२ पल लेकर सबको मिलाकर अति चिकना चूर्ण करे। फिर पिप्पली तथा मिरच प्रत्येक का आधा२ पल चूर्ण मिलाकर मर्दन कर डेढ़रत्ति भरकी गोली बनावे। इसे हारसिंगार के पत्तों के रससे, शहद मिलाकर, सेवन करे तो निस्सन्देह छःप्रकार की तिल्ली शीघ्र दूर होती है। तथा ज्वर, मन्दाग्नि, खांसी, श्वास, वमन, भ्रम दूर होते हैं। यह गहनानन्द का कहा हुआ प्लीहार्णव रस कहाता है ॥ ३८—४१ ॥

प्लीहशार्दूलोरसः।

सूतकं गन्धकं व्योषं समभागं पृथक् पृथक्।
एभिः समं ताम्रभस्म योजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥ ४२ ॥
मनः शिला वराटश्च तुत्थं रामठलौहकम्।
जयन्ती रोहितश्चैव चारटङ्कणसैन्धवम् ॥ ४३ ॥
विडं चित्रं कानकश्च रसतुल्यं पृथक् पृथक्।
भावयेत् त्रिदिनं यावत् त्रिवृच्चित्रकणार्द्रकैः ॥ ४४ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं खादेत् सद्यः प्लीहविनाशिनीम्।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत् ॥ ४५ ॥
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृद्गुल्मं सुदुस्तरम्।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोथविद्रधौ ॥ ४६ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव प्लीन्हि सर्वज्वरेषु च।
श्रीमद्गहननाथेन प्लीहशार्दूलः भाषितः ॥ ४७ ॥

शुद्ध पारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, दोनोंकी कज्जली करे। फिर सोंठ का चूर्ण, मिरच का चूर्ण, तथा पीपल का चूर्ण प्रत्येक

द्रव्य एक २ तोला लेकर मिलावे । ताम्रभस्म पांच तोला ले फिर शुद्ध मनाशिल, कौड़ी भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, हींग, लौहभस्म, जयन्ती रोहेड़ा की छाल, यवक्षार, सुहागा, सैंधानमक, विड्नमक, चीता, शुद्ध जमालगोटा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले। सब द्रव्य एकत्र मिला दे । और त्रिवी, चीता, पिप्पली और अदरक इन चारों के क्वाथ से तीन २ दिन भावना देवे इसकी एकरत्ति भरकी गोली बनाले । इसे एक रत्ति या दोरत्ति भर लेकर शहद और पिप्पली के चूर्णसे मिलाकर दे तो शीघ्रही प्लीहा, अग्रमांस, यकृत, गुल्म, आमाशय के सब प्रकार के रोग, उदररोग, शोथरोग, विद्रधि अग्निमांद्य, ज्वर, तथा प्लीहायुक्त सब प्रकार के ज्वर नष्ट होते हैं। यह गहनानन्द का कहा हुआ प्लीहशार्दूल रस कहाता है॥४२-४७॥

प्लीहारिरसः ।

द्विकर्षं लौहभस्मापि कर्षं ताम्रं प्रदापयेत ।
शुद्धसूतं तथागन्धं कर्षमानं भिषग्वरः ॥ ४८ ॥
मृगाजिनभस्मपलं लिम्पाकाङ्घ्रित्वचः पलम् ।
एवं भागक्रमेणैव कुर्य्यात् प्लीहारिकां वटीम् ॥ ४९ ॥
नवगुञ्जामितां खादेच्चाथ नित्यं हि पूतवाक् ।
प्लीहानं यकृतं गुल्मं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ५० ॥

लौह भस्म दो कर्ष, ताम्रभस्म एक कर्ष, शुद्ध पारा एक कर्ष, शुद्ध गंधक एक कर्ष, मृगचर्म की भस्म एक पल, लिम्पाक अर्थात पाती नींबूकी जड़की छाल एकपल ले । पहले पारा गंधककी कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर नौरत्ति भरकी गोली बनायें। इसे नित्य खायें तो प्लीहा, यकृत, और गुल्मरोग अवश्यही नाश होतेहैं॥४८-५०॥

अपर प्लीहारिरसः ।

कर्षैकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम् ।
पलार्द्धं मृतताम्रश्च तत्समं शुद्धमभ्रकम् ॥ ५१ ॥
मृगाजिनस्य भस्मापि कर्षमेकं प्रदापयेत ।

लिम्पाकाङ्घ्रित्वचस्तद्वत् सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ५२ ॥
रसगुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेत् ततः ।
मधुना वन्हिचूर्णेन खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ ५३ ॥
असाध्यमपि प्लीहानं हन्त्यवश्यं न संशयः ।
यकृतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकभगन्दरान् ॥ ५४ ॥

शुद्ध हड़ताल एक कर्ष, स्वर्णभस्म चौथाई कर्ष, ताम्रभस्म आधा पल, अभ्रक भस्म आधा पल, मृगचर्म की भस्म एक कर्ष, लिम्पाक नींबू के जड़ की छाल एक कर्ष सब को एकत्र करके लुः रत्ती प्रमाण की गोली बनावे। इसे शहद और चीते के चूर्ण से नित्य यथाशक्ति खावे। तो असाध्य प्लीहा को भी अवश्य नाश करता है। यकृत्, पाण्डु, गुल्म तथा भगन्दरादि को भी यह नाश करता है ॥ ५१—५४ ॥

लौहमृत्युञ्जयोरसः।

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटी मृतताम्रकम् ।
विषमुष्टिवराटञ्च तुत्थं शङ्खं रसाञ्जनम् ॥ ५५ ॥
जातीफलञ्च कटुकी द्विक्षारं कानकं तथा ।
व्योषं हिङ्गु सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ ५६ ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वमेकत्र भावयेत् ततः ।
सूर्य्यावर्त्तरसेनैव बिल्वपत्ररसेन च ।
सूर्यावर्त्तेन मतिमान् वटिकां कारयेत् ततः ॥ ५७ ॥
प्लीहानं यकृतं गुल्ममष्ठीलाञ्च विनाशयेत् ।
अग्रमांसं तथा शोथं तथा सर्वोदराणि च ।
वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रधिमेव च ॥ ५८ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक एक तोला, दोनों की कज्जली करे। फिर लोहभस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध मनसिल, ताम्रभस्म, शुद्ध कुचला, कौड़ी भस्म, शुद्ध नीलाथोथा, शंखभस्म, रसौंत, जायफल,

कुटकी, यवक्षार, सज्जी, शुद्ध जमालगोटा, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, सेंधानमक, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लेकर एकत्र सब को मिला कर पीसे। फिर सूर्यमुखी के रस से तथा बिल के पत्तों के रसों से भावना दे। फिर सूर्यमुखी के रस से घोट कर उचित मात्रा की गोली बनाले। इसके सेवन से प्लीहा, गुल्म, अष्ठीला अग्रमांस, शोथ, सब प्रकार के उदररोग, वातरक्त, कमठ तथा अन्तर्विद्रधि नष्ट होते हैं। (मात्रा दो रत्ति दें) ॥ ५५—५८ ॥

महामृत्युञ्जयो रसः ।

रसगन्धकलौहाभ्रं कुनटीतुत्थताम्रकम् ।
सैन्धवश्च वराटश्च वागुजी विड्शङ्खकम् ॥ ५९ ॥
चित्रकं हिङ्गु कटुकी द्विक्षारं कट्फलं तथा ।
रसाञ्जनं जयन्ती च टङ्कणं समभागिकम् ॥ ६० ॥
एतत्सर्वं विचूर्ण्याथ दिनमेकं विभावयेत् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव गुडूच्याः स्वरसेन च ॥ ६१ ॥
गुञ्जामात्रां वटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुना सह ।
नानारोगप्रशमनो यकृद्गुल्मोदराणि च ॥ ६२ ॥
अग्रमांसं तथा प्लीहामाग्निमान्द्यमरोचकम् ।
एतान् सर्वान् निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
महामृत्युञ्जयो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ६३ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक प्रत्येक एक २ तोला ले दोनों की कज्जली करे। फिर लोहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्धमनसिल, शुद्ध नीलाथोथा, ताम्रभस्म, सेंधानमक, कौड़ीभस्म, बावची, विड्नमक, शंखभस्म, चीता, हींग, कुटकी, यवक्षार, सज्जी, कायफल, रसौंत, जयन्ती, सुहागा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले। सब को मिला अदरक के स्वरस से और गिलोय के स्वरस से एक २ दिन भावना देवे। फिर एक रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसे शहद से खावें। इससे नाना प्रकार के रोग दूर होते हैं। यकृत, गुल्म, उदर, अग्रमांस

प्लीहा, अग्निमांद्य, अरुचि इन सबको यह महामृत्युञ्जय रस ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य अन्धकार को। यह रस महेश ने प्रकाशित किया है ॥ ५९—६३ ॥

बृहद्गुडपिप्पली।

विडङ्गं त्र्यूषणं हिङ्गु कुष्ठं लवणपञ्चकम् ।
त्रिक्षारं फेनकं चव्यं श्रेयसी कृष्णजीरकम् ॥ ६४॥
तालपुष्पोद्भवं क्षारं नाड्याः कूष्माण्डकस्य च ।
अपामार्गोद्भवं क्षारं चिञ्चायाः चित्रकं तथा ॥ ६५ ॥
एतानि समभागानि पुराणो द्विगुणो गुडः ।
गुड़तुल्यं प्रदातव्यं चूर्णञ्चैव कणोद्भवम् ॥ ६६ ॥
मर्दयित्वा दृढ़े पात्रे मोदकानुपकल्पयेत् ।
भक्षयेद् वर्द्धयन्नित्यं प्लीहानं हन्ति दुस्तरम् ॥ ६७ ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलां वन्हिमान्द्यकम् ।
यकृतं पञ्चगुल्मञ्च तूदरं सर्वरूपकम् ॥ ६८ ॥
जीर्णज्वरं तथा शोथं कासं पञ्चविधं तथा ।
अश्विभ्यां निर्मिता ह्येषा सुबृहद्गुड़पिप्पली ॥ ६९ ॥

विडंग, सोंठ, मिरच, पीपल, हींग, कूठ, पांचों नमक, यवक्षार सुहागा, सज्जी, समुद्रफेन, चव्य, गजपीपल, काला जीरा, तालके फूलों की क्षार, पेठे की बेलका क्षार, अपामार्ग की क्षार, इमली का क्षार, चीता, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। सारे चूर्णसे दुगुना गुड ले, गुडके समान पीपल का चूर्ण ले। इन सबको घोट कर छोटे २ लड्डू वा गोली बनावें। इसे उचित मात्रा में क्रमशः नित्य बढ़ाकर खावें तो अत्यन्त बढ़ी हुई तिल्ली दूर होती है। प्रमेह, पाण्डु, कामला, अग्निमांद्य, यकृत्, पांचों गुल्म, सब प्रकार के उदर रोग, जीर्ण ज्वर, शोथ, पांच प्रकार की खांसी, दूर होती है। यह बृहद्गुड पिप्पली पहले अश्विनी कुमारों ने बनाई थी ॥ ६४—६९ ॥

ताम्रकल्पम् ।

अक्षपारदगन्धश्च कर्षद्वयमितं पृथक् ।
सर्वैः समं भवेत् ताम्रं जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ ७० ॥
सूर्यावर्त्तरसैः पश्चात् कणामोचरसेन च ।
योजयेत् तीव्रघर्मे तु यावत् सर्वन्तु जीर्यति ॥ ७१ ॥
जम्बीरस्य रसैर्भूयो रसं दण्डेन चालयेत् ।
दृढ़े शिलामये पात्रे चूर्णयेदतिशोभनम् ॥ ७२ ॥
रक्तिद्वयक्रमेणैव योज्यं माषद्वयावधि ।
ह्रासयेच्च क्रमेणैव तथा चैव विवर्द्धयेत् ॥ ७३ ॥
जीर्णे भुञ्जीत शाल्यन्नं क्षीरं घृतसमन्वितम् ।
हन्त्यम्लपित्तं विविधां ग्रहणीं विषमज्वरम् ॥ ७४ ॥
चिरज्वरं प्लीहगदं यकृद्रोगं सुदुस्तरम् ।
अग्रमांसं तथा शोथं कांस्यक्रोडं सुदुर्जयम् ॥ ७५ ॥
कमठञ्च तथा शोथमौदरञ्च सुदारुणम् ।
धातुवृद्धिकरं वृष्यं बलवर्णकरं शुभम् ॥ ७६ ॥
सद्यो वन्हिकरश्चैव सर्वरोगहरं परम् ।
मुखशुद्धिर्विधातव्या पर्णैश्चूर्णसमन्वितैः ।
ताम्रकल्पमिदं नाम्ना सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ७७ ॥

बहेड़ा का चूर्ण, पारा शुद्ध, शुद्ध गंधक प्रत्येक दो २ कर्ष लें। ताम्रभस्म छः कर्षलें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर जम्बीरी के रससे घोटकर सुखावें। फिर सूर्यमुखी के रससे घोटें, फिर पिप्पली और मोचरस के क्वाथ से मर्दन करे। इसे दोरत्ति से आरंभ कर क्रमशः दो माषा तक बढ़ाकर खावे। इसी क्रमसे घटावे और बढ़ावे। इसके पचजाने पर शाली चावल, घी, दूध मिलाकर खावे। इससे अम्लपित्त, विविध प्रकार

की ग्रहणी, विषमज्वर, चिरकाल का ज्वर, तिल्ली, भयंकर यकृद्रोग अग्रमांस, शोथ, कांस्यक्रोड़, कमठ,पेटका भयंकर शोथ, आदि नष्ट होते हैं। तथा यह धातुवर्धक, वृष्य, बल, वर्णवर्धक तथा शीघ्र अग्नि-वर्धक है और सर्वरोगहर है। मुख शुद्धिके लिये इसे खानेकेपीछे चूना लगा पानखावे। यह ताम्रकल्प सबरोगोंको शान्त करताहै ॥७०-७७॥

दारुभस्म ।

दारुसैन्धवगन्धश्च भस्मीकृत्य प्रयत्नतः ।
प्लीहानमग्रमांसञ्च यकृतञ्च विनाशयेत् ॥ ७८ ॥

शुद्ध दारुमुजविष, सेंधानमक, शुद्धगंधक तीनों समभाग ले मर्दनकर सम्पुट में रख भस्म करे। इसे सेवन करने से प्लीहा, अग्रमांस और यकृत् ये रोग नाश होते हैं ॥ ७८ ॥

वज्रक्षारम् ।

सामुद्रं सैन्धवं काचं यवक्षारं सुवर्चलम् ।
टङ्कणं सर्जिकाक्षारं तुल्यं सर्वं विचूर्णयेत् ॥ ७९ ॥
अर्कक्षीरैः स्नुहीक्षीरैरातपे भावयेत् त्र्यहम् ।
तेन लिप्त्वा ऽर्कपत्रञ्च रुद्ध्वा चान्तःपुटे पचेत् ॥ ८० ॥
तत्क्षारं चूर्णयेत् पश्चात् त्र्यूषणं त्रिफलारजः ।
जीरकं रजनीवन्हिर्नवभागं समं समम् ॥ ८१ ॥
क्षारार्द्धमेव सर्वञ्च एकीकृत्य प्रयोजयेत् ।
वज्रक्षारमिदं सिद्धं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ ८२ ॥
सर्वोदरेषु गुल्मेषु शूलदोषेषु योजयेत् ।
अग्निमान्द्येऽप्यजीर्णे ऽपि भक्ष्यं निष्कद्वयं द्वयम् ॥ ८३ ॥
वाताधिके जलं कोष्णं घृतं वा पैत्तिके हितम् ।
कफे गोमूत्रसंयुक्तमारनालं त्रिदोषजे ॥ ८४ ॥

सामुद्र लवण, सेंधानमक, काच नमक, यवक्षार,सौंचल नमक, सुहागा, सज्जीक्षार प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। इसमें आक के दूध

और थोहर के दूधकी तीन २ दिन धूपमें भावनायें दें। इससे शुद्ध ताम्र के पत्तों को लीपकर सम्पुट में बंदकर गजपुट में फूंक देवे फिर स्वांग शीतल होनेपर निकालकर ताम्र सहित चूर्ण करे। फिर यह चूर्ण जितना हो उससे आधा आगे लिखे नौ द्रव्यों का मिलित चूर्ण ले। वे नौ द्रव्य ये हैं। सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला जीरा, हल्दी, चीता, ये सब समभाग लें अब इन सबको ही परस्पर मिलाकर बारीक चूर्ण करें। यह वज्रक्षार कहाता है। इसे स्वयं शिवभगवान ने कहा है। यह सब उदर रोग, गुल्मरोग, शूलरोग, अग्निमांद्य, अजीर्ण इनको नाश करता है। इसे दो निष्कभर खावें। वातदोष में गरम जलसे, पित्तदोष में घी से, कफदोष में गोमूत्र से, त्रिदोष की अधिकता में कांजी से खावें॥ (मात्रा विचार कर एक रत्ति की दें) ॥ ७९—८४ ॥

उदरामयकुम्भिकेशरीरसः

रसगन्धकभस्मशुल्वकं कटुकक्षारयुगं सटङ्कणम्।
कणमूलक चव्यचित्रकं लवणान्येव यमानिरामठम्॥ ८५॥
समभागमिदं विभावयेत् खरतापे त्वथ जम्भवारिणा।
उदरामयकुम्भिकेशरी–रस एषप्रथितोऽस्य माषकः॥ ८६॥
सुरवार्य्यनुदापयेद् भिषक् प्रसभं हन्ति च सव्रणं गदम्।
यकृतं क्रिमिमग्रमांसकं कमठं प्लीहजलोदराह्वयम्।
जठरामयपञ्चगुल्मकं पवनं साममथाम्लपित्तकम्॥ ८७॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, कुटकी, यवक्षार, सज्जी, सुहागा, पिप्पलामूल, चव्य, चीता, पांचों नमक, अजवायन, हींग, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर जम्बीरी नीबू के रससे घोटकर धूप में सुखावें। यह उदरामय कुम्भिकेशरी रस है। इसकी एक माशा भरकी मात्रा सुरा अथवा जलसे पीने से व्रण सहित पेटके रोगों को यकृत, कृमि, अग्रमांस, कमठ, प्लीह, जलोदर, उदररोग, पांचोंगुल्म, आमवात, अम्लपित्त, आदि सबरोगों को दूर करता है॥ ८५—८७॥

वारिशोषणो रसः।

चतुर्विंशति भागाः स्युर्गन्धाद्वङ्गं तदर्द्धकम्।
वङ्गभागाद्भवेदर्द्धः पारदः कृष्णमभ्रकम्॥ ८८॥
चतुर्दशविभागं स्यान्मृतं तद्दीयते पुनः।
मृतलौहमष्टभागं मृतताम्रं नवात्र तत्॥ ८९॥
मृतहेम द्वयं तत्र मृतरूप्यञ्च सप्तकम्।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं त्रयोदश॥ ९०॥
भागा ग्राह्या माक्षिकस्य विशुद्धस्यात्र षोड़श।
अष्टादशमितं ग्राह्यं नवकाशीशकं पुनः॥ ९१॥
तुत्थकञ्च षडेवात्र नवीनं ग्राह्यमेव च।
तालकञ्च चतुर्भागं शिलायोज्यास्त्रयो बुधैः॥ ९२॥
शैलेयं पञ्च दातव्यं सर्वमेकत्र नूतनम्।
मृतमौक्तिकभागैकं सौभाग्यं द्वयमेव च॥ ९३॥
कुट्टयित्वा विचूर्ण्याथ जम्बीरस्य रसेन वै।
भावयेत् सप्तधा गाढं गुडिकां तस्य कारयेत्॥ ९४॥
पानकद्वितये कृत्वा मुद्रयेत् पानकद्वयम्।
घटमध्ये निवेश्याथ दत्त्वा पूर्वञ्च बालुकाम्॥ ९५॥
ऊर्द्ध्वञ्च तां पुनर्दत्त्वा बालुकां मुद्रयेन्मुखम्।
अहोरात्रं दहेदग्नौ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ९६॥
नकुलस्य च वीजेन कण्टकारी द्वयेन च।
गुडूचीत्रिफलावारा भावयेत् सप्तसप्ततः॥ ९७॥
वृद्धदाररसेनापि तथा देयास्तु भावनाः।
गिरिकर्ण्या रसेनापि मत्स्यरोहितपित्ततः॥ ९८॥
एवं सिद्धो भवेत् सम्यक् रसोऽसौ वारिशोषणः।

देवान् गुरून समभ्यर्च्य यतिनोब्राह्मणांस्तथा ॥ ९९ ॥
रक्तिकाद्वितयं देयं सन्निपाते समुच्छ्रये ।
मरिचेन समं देयं तेन जागर्त्ति मानवः ॥ १०० ॥
श्लैष्मिके च गदे देयं ग्रहण्यामाग्निमान्द्यके ।
शोन्हि पाण्डौ प्रयोक्तव्यं त्रिकटुत्रिफलाम्भसा ॥ १०१ ॥
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुदावर्त्ते विशेषतः ।
कुष्ठे सुदुष्टे देयो ऽयं काकोडुम्बरिका ऽम्भसा ॥ १०२ ॥
अतिवन्हिकरः श्रीदो बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्योरसः परमदुर्लभः ।
सर्वरोगेप्रयोक्तव्यो निस्सन्देहं भिषग्वरैः ॥ १०३ ॥

शुद्ध गंधक २४ भाग, वंगभस्म १२ भाग, शुद्धपारा ६ भाग अभ्रक भस्म १४ भाग, लौहभस्म ८ भाग, ताम्रभस्म ९ भाग, स्वर्ण भस्म २ भाग, चांदीभस्म ७ भाग, अतिशुद्ध और अति स्थूल हीरे भस्म १३ भाग, स्वर्णमाक्षिक भस्म १६ भाग, नया शुद्ध काशीश भाग, नयाशुद्ध नीलाथोथा ६ भाग, शुद्ध हड़ताल ४ भाग, शुद्ध मनशिल ३ भाग, शुद्ध शिलाजीत ५ भाग, मोती भस्म १ भाग सुहा गा शुद्ध दो भाग, इन सब मेंसे प्रथम पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर सूक्ष्म चूर्ण करे। फिर जम्बीरी नीबू के रससे सातवार भावना देवे। फिर इसका गोला बनाकर दो शरावे में बंद करदे। एक हांडी के नीचे ऊपर बालू भरके मध्य में इस शरावे को रखदे। और हांडी का मुंह बंद करदे। इसके नीचे एकदिन रात आग जलावे। स्वांग शीतल होनेपर इसे निकाल लेवे। फिर मौलसरी के बीज, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, गिलोय, त्रिफला, इनमें से प्रत्येक के स्वरस या काथ से सात २ वार भावना देवे। फिर विधारे के स्वरस से, तथा अपराजिता के रससे तथा रोहित मछली के पित्त से क्रमशः सात २ भावना देवे। इस प्रकार यह वारिशोषण र

सिद्ध होता है। देव, गुरू, सन्यासी और ब्राह्मणों की विधिवत् पूजा करके इसकी दोरत्ति की मात्रा मिरचों के चूर्ण के साथ दे तो घोर सन्निपात से मूर्च्छित हुआ मनुष्य भी जाग जाता है॥ इसे श्लेष्मा के रोगों में, ग्रहणी, अग्निमांद्य में, तथा ल्लिली रोगमें दें। पाण्डु रोग में त्रिकटु और त्रिफला के क्वाथ से दें। शूल रोग में दें, विशेष करके उदावर्त्त रोगों में दें। महा भयंकर दुष्टहुये कुष्ठ रोग में काकोदुम्बरिका के रससे दें॥ यह अत्यन्त अग्नि बढ़ाता है, शोभा देता है, बल, वर्ण तथा अग्नि अर्थात् भूख बढ़ाता है। यह धन्वन्तरि जीका बनाया हुआ परम दुर्लभ रस सर्व रोगों में प्रयुक्त करना चाहिये। यह रस सर्वत्र लाभही करता है इसमें वैद्यों को कुछभी संदेह न करके इसे प्रयुक्त करना चाहिये॥ ८८—१०३॥

सर्वतो भद्रः।

सूतं गन्धं तपनगगनं कान्तलौहस्य चूर्णम्।
कृत्वैकध्यं दशदि मथितं शृङ्गवेरस्य वारा।
युञ्ज्याद्रोगे यकृति गुदजे प्लीन्हि सर्वज्वरेषु।
शोथपाण्डौ क्रिमिकृतगदे सर्वतः कामलायाम्॥ १०४॥
कासे श्वासे च मेहे जलजठरगदे सर्वदोषप्रभूते।
ख्यातो योगः सुरमणिकृतः सर्वतोभद्रनामा॥ १०५॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, कान्तलौहभस्म प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर अदरक का रस डालकर पत्थर के खरल में घोटें। सुखाकर चूर्ण कर रखे। इस सर्वतोभद्र रस की उचित मात्रा अर्थात् एकरत्ति तक देने से यकृत्, बवासीर, तिल्ली, जिगर, सर्वज्वर शोथ, पाण्डु, क्रिमिजन्य रोग, कामला, कास, श्वास, प्रमेह, जलोदर, तथा सर्व उदररोग नष्ट होते हैं। यह योग सुरमणि ने बनाया है॥ १०४॥ १०५॥

इति प्लीहरोग चिकित्सा।

अथ शोथरोग-चिकित्सा ।

त्रिकट्वाद्यं लौहम् ।

त्रिकटु त्रिफला दन्ती मार्गत्रिमदशुण्ठकैः ।
पुनर्नवा समायुक्तं शोथं हन्ति सुदुस्तरम् ।
लौहं शोथोदरस्थौल्यजलोदरनिवारणम् ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, दन्तीमूल, अपामार्ग, चीता, मोथा, विडंग, सूखी मूली, पुनर्नवा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। सबके समान लौहभस्म मिला कर रखें। इसको उचित मात्रा खाने से भयंकर शोथ नष्ट होता है। उदररोग, स्थूलता तथा जलोदर भी निवृत्त होता है। (मात्रा चार रत्ति) ॥ १ ॥

कटुकाद्यं लौहम् ।

कटुकी त्र्यूषणं दन्ती विडङ्गं त्रिफला तथा ।
चित्रको देवकाष्ठश्च त्रिवृद्वारणपिप्पली ॥ २ ॥
तुल्यान्येतानि चूर्णानि द्विगुणं स्यादयोरजः ।
क्षीरेण पीतमेतत्तु श्रेष्ठं श्वयथुनाशनम् ॥ ३ ॥

कुटकी, सोंठ, मिरच, पीपल, दन्तीमूल, विडंग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, देवदारु त्रिवी, गजपीपल, इन सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग लेकर इन सब से दुगुनी लौहभस्म मिला कर रखे। इस कटुकाद्यलौह को दूध से खावे तो सूजन नाश करने में यह उत्तम योग है। (मात्रा दो रत्ति दे) ॥ २ ॥ ३ ॥

त्र्यूषणाद्यं लौहम् ।

अयोरजस्त्र्यूषण यावशूकचूर्णञ्च पीतं त्रिफलारसेन ।
शोथंनिहन्यात् सहसा नरस्य यथाऽशनिर्वृत्तमुदीर्णवेगः ॥४॥

सोंठ, मिरच, पीपल, यवक्षार, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। सब के तुल्य लोहभस्म मिला कर रखे। इस त्र्यूषणाद्य लौह को त्रिफला के रस से खावें तो शीघ्र ही सूजन को नाश करता है जैसे बिजली वृत्त को नाश करती है ॥ ४ ॥

सुवर्चलाद्यं लौहम् ।

सुवर्चला व्याघ्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चव्यश्च देवकाष्ठश्च दीप्यकं लौहमेव च ।
शोथं पाण्डुं तथा कासमुदराणि निहन्ति च ॥ ५ ॥

सूर्यमुखी, व्याघ्रनखी, चीता, कुटकी, चव्य, देवदारु, अजवायन, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें । सबके समान लौहभस्म मिला कर रखे। इसके खानेसे शोथ, पाण्डु, कासरोग तथा उदररोग नष्ट होते हैं ॥५॥

क्षार गुड़िका ।

क्षारद्वयं स्यात् लवणानि पञ्च चत्वार्य्ययो व्योषफलात्रिकश्च ।
सपिप्पलीमूलविडङ्गसारं मुस्ता ऽजमोदा ऽमरदारुबिल्वम् ॥६॥
कलिङ्गकश्चित्रकमूलपाठा यष्ट्याह्वयं सातिविषं पलाशम् ।
सहिङ्गुकर्षं त्वतिसूक्ष्मचूर्णं द्रोणं तथा मूलकशुण्ठकानाम् ॥७॥
स्याद्भस्मनस्तत् सलिलेन साध्यमालोड्य यावद् घनमप्यदग्धम् ।
स्यानं ततः कोलसमाश्च मात्रां कृत्वा तु शुष्कां विधिना प्रयुज्यात्॥८॥
प्लीहोदरं श्वित्रहलीमकार्शः-पाण्ड्वामयारोचकशोथशोषान् ।
विसूचिकागुल्मगराश्मरीश्च सश्वासकासान् प्रणुदेत् सकुष्ठान् ॥ ६ ॥
सौवर्चलं सैन्धवञ्च विड़मौद्भिदमेव च ।
सामुद्रलवणश्चात्र जलमष्टगुणं भवेत् ॥ १० ॥

यवक्षार, सज्जी, पांचों नमक तथा चारों (वज्र, पाण्ड्य, तीक्ष्ण, कांत) प्रकार के लोहों की भस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, पिप्पलीमूल; वायविडंग के तण्डुल, मोथा, अजमोदा, देवदारु, बिल, इन्द्रजौ, चीतामूल, पाठा, मुलठी, अतीस, पलाश, हींग प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष लें । तथा मूली एक द्रोण लेकर उसकी भस्म करे उस भस्म को आठ गुणा जलमें घोल दें । उसे छानकर आगपर चढ़ादें । जब पकते २ घना हो जाये तो उसमें पूर्वोक्त यवक्षारादि द्रव्य मिलाकर एक कोल भर की मात्रा बनालें इसे

विधिपूर्वक उचित मात्रा में खाने से, प्लीहोदर, श्वित्र, हलीमक, बवासीर, पाण्डुरोग, अरुचि, शोथरोग, शोष, विसूचिका, गुल्म, विष, पथरी, श्वास, कास, कुष्ठ, ये सबरोग, नष्ट होते हैं ॥ सौंचल, सैंधा, विड्, औद्भिद, सामुद्र, ये पांच नमक ले। तथा जलको भस्म से आठगुणा ले ॥ ["क्षारद्वयं स्याल्लवणानि चत्वार्ययो" ऐसा पाठ चक्रदत्त में है। वृद्ध वैद्य इससे सामुद्र लवण को छोड़कर शेष "चारों लवण" तथा "लौहभस्म" लेते हैं। यही आजकलका व्यवहार है]॥६-१०॥

इति शोथचिकित्सा ॥

अथार्बुदरोग-चिकित्सा ॥

रौद्ररसः ।

शुद्धसूतं समं गन्धं मर्द्यं यामचतुष्टयम् ।
नागवल्लीरसैर्युक्तं मेघनादपुनर्नवैः ॥ १ ॥
गोमूत्रपिप्पलीयुक्तं मर्द्यं रुद्ध्वा पुटेल्लघु ।
लिह्यात् क्षौद्रैः रसो रौद्रो गुञ्जामात्रो ऽर्बुदं जयेत् ।
रामवाणादिकान् योग-वाहिनो ऽत्र प्रयोजयेत् ॥ २ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक दोनों समभाग ले चार पहर तक घोट कज्जली करे। फिर पान का रस, चौलाई का रस, पुनर्नवा का रस, गोमूत्र तथा पिप्पली के क्वाथ से मर्दन करें। फिर सुखाकर सम्पुट कर लघुपुट दें। इसे निकाल पीस रखें। इस रौद्ररस को एकरत्ति भर दें तो अर्बुद को जीतता है ॥ अर्बुदरोग में अन्य रामबाण आदि योगवाही रसभी देने चाहियें ॥

इति अर्बुदरोग चिकित्सा ॥

अथ श्लीपदरोग-चिकित्सा ।

नित्यानन्दो रसः ।

हिङ्गुलात् सम्भवं सूतं गन्धकं मृतताम्रकम् ।

वङ्गं तालश्चतुत्थश्च शङ्खं कांस्यं वराटकम् ॥ १ ॥
त्रिकटुत्रिफलालौहं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ।
चविकापिप्पलीमूलं हवुषा च वचा तथा ॥ २ ॥
शठी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम् ।
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ॥ ३ ॥
हरीतकीरसं दत्त्वा पञ्चगुञ्जामितां शुभाम् ।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं शीतं वारि पिवेदनु ॥ ४ ॥
श्लीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसगतश्च यत् ।
मेदोगतं धातुगतं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ५ ॥
श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो विश्वसम्पदे ।
नित्यानन्दरसश्चायं यत्नतः श्लीपदे गदे ॥ ६ ॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा, शुद्धगंधक समभाग ले कज्जली करें । ताम्रभस्म, बंगभस्म, शुद्ध हड़ताल, शुद्ध नीलाथोथा, शंख भस्म, कांस्यभस्म, कौड़ीभस्म, सोंठ मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, लौहभस्म, विडंग, पांचों लवण, चव्य, पिप्पलीमूल, हवुषा (हवुषा, का अर्थ सं.टी. में सूखा हुआ आम का फूल, अभाव में धनियां ले, ऐसाभी है) वच, कचूर, पाठा, देवदार, इलायची, विधारा प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण पारे के समान लेकर सबको एकत्र मिलाये और हरड़ के क्वाथ से सबको पीसकर पांचरत्ति भरकी गोली बनावे । इसकी एक गोली नित्य खानेपर शीतल जल पीनेसे कफवात से उत्पन्न हुआ श्लीपदरोग नष्ट होता है । रक्त और मांस-गत चाहे मेदोगत चाहे धातुगत भी हो, श्लीपदरोग को यह रस अवश्य नाश कर देता है इसमें संदेह नहीं । यह नित्यानन्द रस श्री. मान् गहननाथने संसारकी रक्षाके लिये बनाया है । श्लीपदरोग में यह परमोत्तम है ॥ १—६ ॥

कणादिवटी ।

कणा-वचा-दारु-पुनर्नवानां चूर्णं सबिल्वं समवृद्धदारम् ।

सम्मर्द्य चैतस्य निहन्ति वल्लः सकाञ्जिकः श्लीपदमुग्रवेगम् ॥ ७ ॥

पीपली, बच, देवदार, पुनर्नवा, बिल, विधारा, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। इसे यत्नसे मर्दन करे और डेढ़रात्ति भर लेकर कांजीसे खायें तो उग्रवेगवाले श्लीपद को दूर करता है॥ (इसमें "चूर्ण" के स्थान में "सूतम्" पाठभी है। वहां "रसासिन्दूर" भी डालना चाहिये)॥ ७॥

इति श्लीपद-चिकित्सा ।

अथ भगन्दररोगचिकित्सा।

रवितारडवोरसः ।

शुद्धसूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम् ।
त्र्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ १ ॥
तयोः समं ताम्रपत्रं हरिडकान्तर्निवेशयेत् ।
तद्भाण्डं भस्मनाऽऽपूर्य्य चुल्ल्यां तीव्राग्निना पचेत् ॥ २ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत् स्वाङ्गशीतलम् ।
जम्बीरस्य रसैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सप्तपुटे पचेत् ॥ ३ ॥
गुञ्जैकं मधुनाऽऽज्येन लिह्याद्धन्ति भगन्दरम् ।
मूषलीलवणश्चानु ह्यारनालयुतं पिबेत् ॥ ४ ॥
भुञ्जीत मधुराहारं दिवास्वापञ्च मैथुनम् ।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन् रवितारडवे ॥ ५ ॥

शुद्धपारा एक भाग, शुद्ध गंधक दो भाग दोनों की कज्जलीकर घीकुमार के रससे तीनदिन तक घोटे। फिर गोला बनाकर इसके समभाग ताम्रके सूक्ष्म शुद्ध पत्रों को ले इसपर लपेट दे। इस गोलेको एक हांडीके अन्दर रखकर उसपर एक शराव रख संधिबंधन करदे और ऊपर से हांडी को राख से भरदे तथा नीचे से तीव्र आग देवे। दोपहर के पीछे स्वांगशीतल होनेपर निकाल ले और चूर्णकर

जम्बीरी नीबू के रससे खरल कर पुटदे। इसी प्रकार जम्बीरी के रससे खरलकर सातवार पुट दे। फिर इसे चूर्णकर शीशीमें रखे। इस रसकी एकरत्ति की मात्रा घी और शहद से मिलाकर खावे तो भगन्दर का नाश होता है। ऊपर से मूसलीलवण को कांजी में डालकर पीवे। भोजन में मधुर आहार खावे, दिनमें न सोवे, मैथुन छोड़दे। तथा शीतल आहार भी न करे। इसे रविताण्डवरस कहते हैं॥ १—५॥

भगन्दरहरोरसः।

सूतस्य द्विगुणेन शुद्धबलिना कन्यापयोभिस्त्र्यहम्।
शुद्धं ताम्रमयः समस्ततुलितं पात्रे निधायोपरि॥ ६॥
स्वेद्यं यामयुगञ्च भस्म-पिठरे निम्बूजलैः सप्तधा।
साकं तत् पुटयेत् भगन्दरहरो गुञ्जोन्मितः स्यादिति॥ ७॥

शुद्धपारा एक भाग, शुद्धगंधक दो भाग, कज्जली करे। फिर सबके बराबर ताम्रभस्म तथा लौहभस्म मिलावे। इन सबको घोट गोला बना एक शराव में रख संधिलेप करे। फिर एक हांडी को राखसे भर उसमें शराव को रख दो पहर तक स्वेदन करे। फिर नीबूके रस से सातवार घोट२कर पुटदे। इसे पीसकर शीशी में रखे। इस भगन्दरहर रस को एक रत्तिदेने से भगन्दर नष्ट होता है॥६॥७॥

इति भगन्दर चिकित्सा॥

अथोपदंशाचिकित्सा।

उपदंश साधारणविधिः।

स्निग्धस्विन्नशरीरस्य ध्वजमध्ये शिराव्यधः।
जलौकः पातनं वा स्यादूर्ध्वाधः शोधनं तथा॥ १॥
सद्यो निर्जितदोषस्य रुक् शोथावुपशाम्यतः।
पाको रक्ष्यः प्रयत्नेन शिश्नक्षयकरो हि सः॥ २॥

उपदंश रोगी को पहले स्निग्ध तथा स्विन्न करालें फिर लिङ्गके

मध्य की शिरा बींधनी चाहिये। अथवा जोंक लगाकर दुष्ट रक्त निकलवा देना चाहिये ॥ तथा वमन और विरेचन से ऊपर और नीचे की शुद्धि कर लेनी चाहिये ॥ १ ॥ जिसने वमन विरेचनादि से दोषों को शीघ्र निकलवा दिया हो ऐसे उपदंश रोगी की पीड़ा और सूजन, शीघ्र कम होजाती है ॥ लिंग में व्रणों को पकने से बचाना चाहिये। क्योंकि उससे लिंग का क्षय होजाता है ॥ २ ॥

धावनकषायः ।

त्रिफलायाः कषायेण भृङ्गराजरसेन वा ।
व्रणप्रक्षालनं कुर्य्यादुपदंशप्रशान्तये ॥ ३ ॥

उपदंश की शान्ति के लिये व्रणोंको त्रिफला के काथसे अथवा भांगरे के स्वरस से धोना चाहिये ॥ ३ ॥

लेपः ।

दहेत् कटाहे त्रिफलां समांशां मधुसंयुताम् ।
उपदंशे प्रलेपोऽयं सद्यो रोपयति व्रणम् ॥ ४ ॥

लोहे की कड़ाही में हरड़, बहेड़ा, आंवला समभाग लेकर जलावे। कोयला बन जानेपर पीस ले। इसे शहद में मिलाकर व्रणों पर लगावे तो शीघ्रही व्रण भर जाते हैं ॥ ४ ॥

भैरव रसः ।

शुद्धसूतं ग्रहीतव्यं रक्तिकाशतमात्रकम् ।
त्रिगुणां शर्करां लौहे निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ ५ ॥
याममात्रं ततो दद्यात् श्वेतं खादिर चूर्णकम् ।
सूततुल्यं ततः कुर्य्यात् मर्दनात् कज्जलोपमम् ॥ ६ ॥
विंशतिर्वटिकाः कार्य्याः स्थाप्या गोधूमचूर्णके ।
निःशेषनिःसृता ज्ञात्वा पिड़िकास्ताः कलेवरे ॥ ७ ॥
भैरवं देवमभ्यर्च्य बलिं तस्मै प्रदाय च ।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्य यत्नतः ॥ ८ ॥

वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिषजा जानता क्रियाम्।
दिवसात्रितयं दद्यात् तिस्रास्तिस्रोविजानता ॥ ९ ॥
चतुर्थाच्च समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत्।
एवं चतुर्दशादिने नीरोगो जायते नरः ॥ १० ॥
पथ्यं शर्करया सार्द्धमुष्णान्नं घृतगन्धि च।
कुर्य्यात्साकाङ्क्षमुत्थानं सकृद्भोजनमिष्यते ॥ ११ ॥
जलपानं जलस्पर्शं कदाचन न कारयेत्।
दुःसहायान्तु तृष्णायामिक्षुदाड़िमकादिकम् ॥ १२ ॥
शौचकार्य्ये ऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम्।
वातातपाग्निसम्पर्कं दूरतः परिवर्जयेत् ॥ १३ ॥
मेघागमे वा शीते वा कार्य्यमेतद्विजानता।
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ १४ ॥
श्रमाध्वभाराध्ययन स्वप्नालस्यानि वर्जयेत्।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कर्पूरादि सुवासितम् ॥ १५ ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता वातपित्ताविरोधिनी।
लवणं वर्जयेदम्लं दिवानिद्रां तथैव च ॥ १६ ॥
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोकनं तथा।
सप्ताहद्वयमुत्क्रम्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥ १७ ॥
पथ्यं कुर्य्याद्धितमितं जाङ्गलानां रसादिभिः।
व्यायामाद्यं वर्जनीयं यावन्न प्रकृतिर्भवेत् ॥ १८ ॥
एवं कृतविधानस्तु यः करोत्येतदौषधम्।
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ १९ ॥
पिडका विलयं यान्ति वलं तेजश्च वर्द्धते।
रुजा च प्रशमं याति ग्रन्थिशोथश्च शाम्यति ॥ २० ॥

अस्थ्नां भवति दार्ढ्यश्च आमवातश्च शाम्यति ।
भैरवेन समाख्यातो रसोऽयं भैरवाख्यकम् ॥ २१ ॥

विशुद्धपारा एकसौ रत्ति ले, तीनसौ रत्ति शुद्ध देसी खांड ले। दोनों को लोहे की कड़ाही में या लोहे के खरल में डालकर नीमके डण्डे से घोटे। एक पहर तक घोटने के पीछे उसमें सफेद कत्थे का चूर्ण एकसौ रत्ति मिलावे। इसे फिर घोट २ कर कज्जली के समान बनावे। अब इसकी बीस गोलियां बना लें। और इन्हें गेहूं के आटे में रख दे। जब उपदंश रोगी के सारे शरीर पर फुंसियां निकल आई हों तब इसे प्रयोग करे। भैरव की पूजा करके और बलि देकर योगिनी तथा दुर्गा की पूजा करके कुशल वैद्य इन गोलियों को प्रयुक्त करे। विद्वान वैद्य तीन गोली नित्य तीनदिन तक देवे। प्रातः, दोपहर और सायंकाल एक २ गोली प्रतिदिन पहले तीन दिन तक दे। चौथेदिन से लेकर चौदहवें दिनतक प्रातःकाल एक २ गोली ही प्रतिदिन खावे तो चौदहवें दिन मनुष्य रोगरहित होजाता है ॥ पथ्य में खांड मिला के गरम२अन्न घी मिला हुआ खावे भोजन इतना करे जो अभी खानेकी इच्छा रहजाये अर्थात् पेटभरके न करे। दिनमें २वारही भोजन करे ॥ जल पीना, जल को छूना सर्वथा त्याग देवे। जब प्यास न सही जाय तो अनार का रस या गन्ने आदि का रस पीवे॥ शौच कार्य में भी गरम जल से हाथादि धोवें और तुरन्त ही कपड़े से पोंछ लेवें ॥ वायु, धूप तथा अग्नि से दूर २ रहे अर्थात् सुरक्षित कमरे में रहे ॥ विद्वान वैद्य को चाहिये कि इसका प्रयोग तब ही करावे जब वर्षा ऋतु में मेघ छाये रहें या शरद ऋतु हो। यदि इस के सेवन से मुख आदि सूज जावें तो मुखरोग नाशक उपाय करे। परिश्रम, मार्गचलना, भार उठाना, पढना, सोना, आलस्य इन सबको छोड़ देवे। नित्य कर्पूर आदि से सुगन्धित करके पान खावे ॥ वात-पित्त के जो विरुद्ध न हो ऐसी श्लेष्मनाशक क्रिया करनी चाहिये। इसमें नमक, खटाई, दिनमें सोना, रात को जागना, स्त्री के मुख को देखना अर्थात् मैथुनादि छोड़ देवे। इसी प्रकार पथ्य से रहते हुए जब दो

सप्ताह बीत जायें तब क्रमशः गरम जल से स्नान करे ॥ हितकारी तथा जांगल जीवों के मांस के रस से पथ्य करे। व्यायामादि तब तक न करे जबतक पूर्वके समान स्वस्थ न होजाये। इस प्रकार की विधिसे जो औषध सेवन करता है, वहही जितेन्द्रिय पुरुष इस पापरोग से पार होजाता है॥ उसकी सब पिड़िकायें अर्थात् फोड़े फुंसियां नष्ट होजाती हैं। बल और तेज बढ़ता है तथा पीड़ा शान्त होजाती हैं। तथा ग्रन्थिशोथ नाश होजाता है॥ हड्डियें दृढ़ होजाती हैं तथा आमवातरोग शान्त होजाता है। यह रस भैरव ने कहा है इसी कारण इसका नाम भैरव रस है॥ [इस रसको कोई ही अनुभवी वैद्य प्रयुक्त करे नहीं तो प्राणनाश में संदेह नहीं] ॥५-२१॥

रसशेखरः।

पारदश्चाहिफेनश्च द्विर्दादशकरक्तिकम्।
अयःपात्रे निम्बकाष्ठे मर्दयेत् तुलसीद्रवैः ॥ २२ ॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद् दरदं रससम्मितम्।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत् ॥ २३ ॥
जातीकोषफले चैव पारसीययमानिकाम्।
आकारकरभश्चैव द्वात्रिंशद्रक्तिकाम्प्रति ॥ २४ ॥
मर्दयेत् तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम्।
दद्यात् खादिरसत्त्वञ्च वटिका चणकप्रमा ॥ २५ ॥
सायं द्वे द्वे प्रयोज्ये च लवणाम्लञ्च वर्जयेत्।
गलत्कुष्ठं तथा स्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि ॥ २६ ॥
ये स्युर्व्रणा नृणामन्ये उपदंशपुरःसराः।
तान् सर्वान् नाशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः ॥ २७ ॥

शुद्धपारा चौबीस रत्ति, शुद्ध अफीम चौबीस रत्ति दोनों को लोहे के खरल में डाल, तुलसी का रस डालकर नीमके डंडेसे घोटे जब घुटते २ एक प्राण होकर संमूर्छित होजाये तब शुद्ध शिंगरफ़

चौबीसरत्ति डाले और फिर तुलसी का रस डाल२कर घोटे,एक प्रहर होजानेपर जावित्री का चूर्ण बत्तीसरत्ति, जायफल का चूर्ण बत्तीस रत्ति, खुरासानी अजवायन का चूर्ण बत्तीसरत्ति, तथा अकरकरा का चूर्ण बत्तीस रत्ति मिलाकर घोटे। फिर तुलसी का रस डालकर घोटे। सूखजानेपर सब चूर्ण से दुगुना श्वेत कत्थे का चूर्ण डालें, और फिर घोट २ कर चने के समान गोली बनाले। इसे रसशेखर कहते हैं। इसकी दो गोलियां सायंकाल खाया करें। और नमक, खटाई खाना सर्वथा छोड़ देवे। इसके सेवन से गलत्कुष्ठ, दुष्फोड़े, गर्दभिका उपदंशादि अन्य दुःसाध्य व्रण, ये सब नष्ट होजाते हैं। यह रस सिद्धफल है ॥ २२—२७ ॥

प्रक्रियान्तरम् ।

योगवाहिरसान् सर्वान् सर्वरोगोदितानपि ।
उपदंशे प्रयुञ्जीत तथा शोणितशोधनम् ॥ २८ ॥

सब रोगों में कहे हुये सबही योगवाही रस उपदंश रोग में प्रयुक्त करे। तथा रक्त शोधन कराने वाले उपाय करें ॥ २८ ॥

इति उपदंश-चिकित्सा ॥

अथ कुष्ठरोगचिकित्सा ।

कन्याकोटिप्रदानेन गङ्गायां पितृतर्पणे ।
विश्वेश्वरपुरीवासे तत्फलं कुष्ठनाशने ॥ १ ॥
गवां कोटिप्रदानेन चाश्वमेधशतेन च ।
वृषोत्सर्गे च यत्पुण्यं तत्पुण्यं कुष्ठनाशने ॥ २ ॥

करोड़ों कन्यादान करने और गङ्गा में पितृतर्पण करने से, विश्वेश्वरपुरी अर्थात् काशी के निवास से जो फल होता है। वही फल कुष्ठरोग को नाश करने से वैद्य को होता है ॥ १ ॥ करोड़ों गौदान करने से, सैकड़ों अश्वमेध करने से, सांडबनाके दान करनेसे जो पुण्य होता है वही पुण्य कुष्ठरोग को नाश करने से होता है ॥ २ ॥

गलत्कुष्ठारि रसः ।

रसो बलिस्ताम्रमयः पुरोऽग्निः शिलाजतु स्याद्विषतिन्दुकश्च ।
वरा च तुल्यं गगनश्च सर्वैः करञ्जबीजं सचतुष्टयश्च ॥ ३ ॥
सम्मर्द्य सर्वं मधुना घृतेन घृतस्य पात्रे निहितं प्रयत्नात् ।
कर्षं भजेत् प्रत्यहमस्य पथ्यं शाल्योदनं दुग्धमधुत्रयश्च ॥ ४ ॥
विशीर्णकर्णाङ्गुलिनासिकोऽपि भवेदनेनस्मरतुल्यमूर्त्तिः ।
दारापरित्याग इह प्रदिष्टो जलौदनं तत्र निबद्धमूले ॥ ५ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, ताम्रभस्म, लोहभस्म, गुगुल, चीता, शिलाजीत, शुद्ध कुचला, हरड़, बहेड़ा, आंवले का चूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक२ तोला लें, अभ्रक भस्म ग्यारह तोले लें। करञ्ज के बीज चार तोले लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर घी और शहद इतना डाले जिससे गोली बंध सके। फिर एक २ कर्ष भरकी गोली बना घीसे चिकने हुये पात्र में रखें। इसे नित्य खावें और पथ्य में शाली धान्य, दूध और मधु ये तीनों खावें। इसके सेवन से जिसके कान, अंगुलियें तथा नाकभी झड़ गई हो, वहभी कामदेव के समान सुन्दर शरीर वाला होजाता है। इसके सेवन के समय स्त्रीसंबंध त्याग देवे। तथा यदि कुष्ठ बद्धमूल अर्थात् बहुत ही गहरी जड़ पकड़ चुका होतो जल-युक्त चावल खावे। दूध न पीवे ॥ ३—५ ॥

उदयभास्करः ।

गन्धकेन मृतं ताम्रं दशभागं समुद्धरेत् ।
ऊषणं पञ्चभागं स्यादमृतश्च द्विभागिकम् ॥ ६ ॥
श्लक्ष्णचूर्णीकृतं सर्वं रक्तिकैकप्रमाणतः ।
दातव्यं कुष्ठिने सम्यगनुपानस्य योगतः ॥ ७ ॥
गलिते स्फुटिते चैव विपुले मण्डले तथा ।
विचर्चिकादद्रुपामा–कुष्ठरोगप्रशान्तये ॥ ८ ॥

केवल गंधक के साथ मारा हुआ ताम्रभस्म दशभाग, काली

मिरचों का चूर्ण पांच भाग, शुद्ध विष दो भाग लें। इन सब को एक दिन पीस कर रखें। इस चूर्ण की एक रति की मात्रा उचित अनुपान से दें तो गलत्कुष्ठ, फूटे हुए अंगयुक्त कुष्ठी विपुल मण्डल, विचर्चिका, दाद, पामा, कुष्ठों को नाश करता है ॥ ६-८ ॥

तालकेश्वरो रसः ।

धात्रीटङ्कणतालानां दशभागं समुद्धरेत् ।
धात्र्या रसैर्मर्दयित्वा शिखरीमूलवारिणा ।
सर्वकुष्ठहरः सेव्यः सर्वदा भोजनप्रियः ॥ ९ ॥

आंवले का चूर्ण, सुहागे की खील, शुद्ध हड़ताल इन में से प्रत्येक द्रव्य दश २ तोले लेकर आंवले के रस वा क्वाथ से तथा अपामार्ग की जड़ के रस वा क्वाथ से घोट कर गोली बना रखे। यह रस सब प्रकार के कुष्ठों को दूर करता है तथा भूख वढ़ाता है ॥ ९ ॥

ब्रह्मरसः ।

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धकं त्वग्निवागुजी ।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥ १० ॥
त्रिंशद्भागं गुडस्यापि क्षौद्रेण गुड़िका कृता ।
अयं ब्रह्मरसो नाम्ना ब्रह्महत्याविनाशनः ॥ ११ ॥
द्विनिष्कं भक्षणाद्धन्ति प्रसुप्तिकुष्ठमण्डलम् ।
पातालगरुड़ीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिवेदनु ॥ १२ ॥

शुद्ध मूर्च्छित पारा एक तोला, शुद्ध गंधक, चीता, बावची, ढाक के बीजों का चूर्ण प्रत्येक द्रव्य बारह २ तोले ले। गुड तीस तोले ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर शहद से घोट कर गोली बना ले। यह ब्रह्महत्या अर्थात् ब्रह्महत्याजन्य कुष्ठ रोग को नाश करता है। इसे दो निष्क भर खाने से प्रसुप्ति कुष्ठ तथा मण्डल नाश होते हैं। इसे खाने के पीछे पातालगरुड़ी की जड़ को जल से पीस कर पीवे ॥ ("ब्रह्मबीज" का अर्थ सं. टी. में ब्रह्मयष्टि के बीज भी किया है। अकेले ढाक के बीज ही कुष्ठ रोग को नाश करने में अनुभूत तथा अव्यर्थ हैं) ॥ १०-१२ ॥

चन्द्राननो रसः।

सूतव्योमाग्नयस्तुल्यास्त्रिभागाः गन्धकस्य च।
काकोडुम्बरिकाक्षीरैः सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥१३॥
माषमात्रां गुटीं कृत्वा कुष्ठरोगे प्रयोजयेत्।
देहशुद्धिं पुरा कृत्वा सर्वकुष्ठानि नाशयेत्।
एष चन्द्राननो नाम साक्षात् श्रीभैरवोदितः॥ १४॥

शुद्धपारा, अभ्रकभस्म, चीताचूर्ण प्रत्येक द्रव्य एक तोला लेवें। और शुद्ध गंधक तीन तोला लेवें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिला कर काकोदुम्बरिका के रस से घोटें। इसकी एक माषा भर की गोली बना के कुष्ठ रोग में प्रयुक्त करें। पहले देह शुद्धि करके फिर इसे दें तो सब कुष्ठों को दूर करती है। यह चन्द्रानन रस साक्षात् भैरव जी ने कहा है॥१३॥१४॥

कुष्ठकालानलो रसः।

रसं बलिष्टङ्कणताम्रलौहं भस्मीकृतं मागधिकासमेतम्।
पञ्चाङ्गनिम्बेन फलत्रिकेण विभावितं राजतरोस्तथैव।
नियोजयेद्वल्लकयुग्ममानं कुष्ठेषु सर्वेषु च रोगसङ्घे॥ १५॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, शुद्ध सुहागा, ताम्रभस्म, लौहभस्म, पीपली का चूर्ण प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य दवा मिला कर नीम के पंचाङ्ग अर्थात् पत्ता, फूल, फल, छाल, और जड़ के क्वाथ से तथा त्रिफला के क्वाथ से, तथा अम्लतास के क्वाथ से भावना देकर रखे। इस तीन रत्ति दें तो सब कुष्ठ तथा अन्य रोग नष्ट होते हैं॥१५॥

वज्रवटी।

शुद्धसूताग्निमरिचं सूताद्द्विगुणगन्धकम्।
काकोडुम्बरिकाक्षीरैर्दिनं मर्द्यं प्रयत्नतः॥ १६॥
वराव्योषकषायेण वटीश्चास्य समाचरेत्।
लिह्याद् वज्रवटी ह्येषा पामारोगविनाशिनी॥ १७॥

शुद्धपारा, चीता का चूर्ण, मिरच का चूर्ण प्रत्येक एक २ तोला शुद्ध गंधक दो तोला। पहले पारा गंधक को पीस कर कज्जली बनायें फिर अन्य सब द्रव्यों को खरल कर काकोदुम्बरिका के दूध से एक दिन घोटें। फिर त्रिकुटा और त्रिफला के काढ़े से घोट कर इसकी वटी बना लें। इस वज्रवटी को खाने से पामा रोग नाश होता है ॥ १६ ॥ १७ ॥

चन्द्रकान्ति रसः ।

पलत्रयं मृतं ताम्रं सूतमेकं द्विगन्धकम् ।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥ १८ ॥
निर्गुण्ड्याश्चार्द्रकद्रावैर्वन्हिद्रावैर्विमर्दयेत् ।
दिनैकं तद्विशोष्याथ तुषाग्नौ स्वेदयेद्दिनम् ॥ १९ ॥
समुद्धृत्य विचूर्ण्याथ वागुजीतैलमर्दितम् ।
त्रिदिनं भावयेत् तेन निष्कैकं भक्षयेत् सदा ॥ २० ॥
चन्द्रकान्तिरसो नाम्ना कुष्ठं हन्ति न संशयः ।
तैलं करञ्जवीजोत्थं वन्हिगन्धकसैन्धवैः ।
अनुपानं प्रकर्त्तव्यं कल्कं वा वागुजीभवम् ॥ २१ ॥

ताम्रभस्म तीनपल, शुद्धपारा एकपल, शुद्धगंधक दोपल, त्रिकटु, त्रिफला, इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ पल ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलादे। फिर इन सबको पीसकर संभालु, अदरक का रस, चीते का क्वाथ, इनसे एक २ दिन घोटकर धूपमें सुखाकर एकदिन तुष की आगमें स्वेदन करे। फिर इसे निकाल चूर्णकर तीनदिन तक बावची के तेलसे मर्दन करे और भावना देवे। इस चन्द्रकान्ति रस को एक २ निष्क खावे तो कुष्ठ को नाश करता है इसमें संशय नहीं। करञ्ज के बीजों का तेल, चीता सेंधा नमक, और शुद्धगंधक इन सबको समभाग ले उचित मात्रामें अनुपान करना चाहिये। अथवा केवल बावची का कल्क अनुपान करे ॥ १८—२१ ॥

सङ्कोचरसः।

मृतताम्राभ्रकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम्।
शुद्धं तन्मर्दयेत् खल्ले गोलकं कारयेत् ततः॥ २२॥
त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लौहपात्रे क्षणं पचेत्।
तन्मध्ये गोलकं पाच्यं यावज्जीर्णन्तु गन्धकः॥ २३॥
एतन्मृद्वग्निना तावत् समुद्धृत्य विचूर्णयेत्।
गुग्गुलुः निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफला चामृता विषम्॥ २४॥
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम्।
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमौडुम्बरापहम्।
रसः सङ्कोचनामाऽयं कुष्ठे परमदुर्लभः॥ २५॥

ताम्रभस्म एकतोला, अभ्रकभस्म एक तोला, शुद्धपारा आठ तोला, प्रत्येक द्रव्य को घोटकर गोला बनावे। फिर एक लोह की कड़ाही में शुद्धगंधक दस तोला डाले और क्षणभर गरम करे। फिर उसमें पूर्वोक्त पारे के गोले को डालकर मन्द २ आग्नि से तब तक पकावे जबतक सारी गंधक जीर्ण होजाये। फिर उस चूर्णको निकालकर पीसे। और उसमें शुद्ध गुगुल, नीमका पञ्चाङ्ग, हरड़, बहेड़ा, आंवला, गिलोय, शुद्धविष, पटोलपत्र, कत्था, अम्लतास का गूदा इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला डाले। इन सबको एकत्र पीसकर रखें। इसमें से एक निष्कभर खाया करें तो उडुम्बर नामक कुष्ठको दूर करता है। यह सङ्कोचरस कुष्ठ के लिये परम दुर्लभ है॥ २२—२५॥

अमृताङ्कुरलौहम्।

हुताशमुखसंशुद्धं पलमेकं रसस्य वै।
पलं लौहस्य ताम्रस्य पलं भल्लातकस्य च॥ २६॥
अभ्रकस्य पलश्चैकं गन्धकस्य चतुः पलम्।
हरीतकीविभीतक्योश्चूर्णं कर्षद्वयं द्वयोः॥ २७॥

अष्टमाषाधिकं तत्र धात्र्याः पाणितलानि षट् ।
घृतश्चाष्टगुणं लौहाद्द्वात्रिंशत् त्रिफलाजलम् ॥ २८ ॥
एकीकृत्य पचेत् पात्रे लौहे च विधिपूर्वकम् ।
पाकमेवास्य जानीयात् शास्त्रज्ञो लौहपाकवित् ॥ २९ ॥
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय गुरुदेवद्विजार्चकः ।
रक्तिकादिक्रमेणैव घृतश्चामरमर्दितम् ॥ ३० ॥
लौहे च लौहदण्डेन कुर्य्यादेतद् रसायनम् ।
अनुपानञ्च कुर्वीत नारिकेलजलं पयः ॥ ३१ ॥

सर्वकुष्ठहरं श्रेष्ठं वलीपलितनाशनम् ।
अग्निदीप्तिकरं हृद्यं कान्त्यायुर्बलवर्द्धनम् ॥ ३२ ॥
सेव्यो रसो जाङ्गललावकानां वर्ज्यं हि शाकाम्लमपि स्त्रियश्च ।
शाल्योदनं षष्टिकमाज्यमुद्गं क्षौद्रं गुडं क्षीरमिह क्रियायाम् ॥ ३३ ॥

रससिन्दूर एकपल, लौहभस्म एकपल, ताम्रभस्म एकपल, शुद्ध भिलावां एकपल, अभ्रक भस्म एकपल, शुद्ध गंधक चार पल, हरड़ का चूर्ण दो कर्ष, बहेड़े का चूर्ण दो कर्ष, आंवले का चूर्ण दो कर्ष (आठ माशे) ले । फिर मिला हुआ त्रिफला सोलह पल ले उसमें सोलह शराव जल डालकर पकावे, चार शराव शेष रहने पर उतार ले । यह त्रिफला का जल चार शराव ले तथा घी आठ पल और तथा पूर्वोक्त रससिन्दूर से गंधक तक सब द्रव्यों का चूर्ण भी इसमें डालकर लोहेकी कड़ाही में पकावे । जब पककर गाढ़ा हो जाये तो पूर्वोक्त हरड़, बहेड़ा, आंवला का मिलित चूर्ण इसमें डाल देवे । इसे उतारकर अच्छी प्रकार मिलाकर रखे । इस लौह का पाक शास्त्रज्ञ पुरुष ठीक २ करे । फिर इसे गुरु, विद्वान, ब्राह्मण और देवताओं की पूजा करके प्रातःकाल खावे । इसे पहलेदिन एकरत्ति, दूसरेदिन दोरत्ति इस प्रकार से प्रतिदिन बढ़ाकर खावे । इसे लोहेके पात्र में डाल घी और शहद मिलाकर लोहे के डण्डे से खरल कर खावे तो

यह रसायन है। इसका अनुपान नारियल का जल या जल है। यह योग सब प्रकार के कुष्ठों को नाश करता है। वली तथा पलितरोग को नाश करता है। अग्नि को दीप्त करता है, हृदय को हितकारी, कान्ति, आयु तथा बलका बढ़ानेवाला है। इसके साथ पथ्य में जांगल जीवों के मांसका रस तथा बटेरों का मांसरस खाना चाहिये तथा शाली चावल, साठी के चावल, घी, मूंग, शहद गुड और दूध तथा शाक, खटाई, स्त्री इनको छोड़ देवे॥ २६—३३॥

माणिक्योरसः।

पलं तालं पलं गन्धः शिलायाश्च पलार्द्धकम्।
चपलः शुद्धसीसश्च ताम्रमभ्रमयो रजः॥ ३४॥
एतेषां कोलभागश्च वटक्षीरेण मर्दयेत्।
ततो दिनत्रयं घर्मे निम्बक्काथेन भावयेत्॥ ३५॥
गुडूचीग्रालहिन्ताल—वानरीनीलस्फिटिकाः।
शोभाञ्जनमुराऽजाजी निर्गुण्डीहयमारकम्॥ ३६॥
एषां शाणमितं चूर्णमेकीकृत्य सरित्तटे।
मृत्पात्रे कठिने कृत्वा मृदम्बरयुते दृढ़े॥ ३७॥
एकाकी पाकविद्वैद्यो नग्नः शिथिलकुन्तलः।
पचेदवहितो रात्रौ यत्नात् संयतमानसः॥ ३८॥
शनैर्मध्यमवेगेन वन्हिना प्रहरद्वयम्।
प्रातः सम्पूज्य मार्त्तण्डं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्॥ ३९॥
यदि भाग्यवशादेतत् माणिक्याभं शुभं भवेत्।
तद्धि जानीहि भैषज्यं सर्वकुष्ठविनाशनम्।
सर्पिषा मधुना लौहपात्रे तद्दण्डमर्दितम्॥ ४०॥
द्विगुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं बलवर्द्धनम्।
शीतलं सारसं तोयं दुग्धं वा पाकशीतलम्॥ ४१॥

आनीतं तत्क्षणादाजमनुपानं सुखावहम् ।

वातरक्तं शीतपित्तं हिक्काञ्च दारुणां जयेत् ॥ ४२ ॥

ज्वरान् सर्वान् वातरोगान् पाण्डुं कण्डूञ्च कामलाम् ।

श्रीमद्गहननाथेन निर्मितो बहुयत्नतः ॥ ४३ ॥

शुद्ध हड़ताल एक पल, शुद्धगंधक एक पल, शुद्ध मनसिल आधा पल, शुद्ध पारा, शुद्ध सीसा, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, प्रत्येक दो तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य सभी द्रव्य मिलाकर बड़के दूधसे घोटें। फिर तीनदिन तक नीमके काढ़े से धूपमें भावना दें। फिर इसके सूखने पर इसमें गिलोय सुगन्धबाला, हिन्ताल, कौंच, नीलझिण्टी, सुहांजना, मूर्वा, जीरा, निंगुण्डी, कनेर, इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण लेकर चूर्ण करें। इस चूर्णको पूर्वोक्त भावित द्रव्यों में मिला दे। फिर एक मिट्टी की हांडी पर कपड़मिट्टी कर उसमें इस दवाई को डालकर नीचे आग देवे। नदी किनारे, अकेला, पाक विद्या में कुशल वैद्य नग्न होकर बाल खोलकर, मनको वशमें करके, ध्यानपूर्वक, बड़े यत्नसे रातको इस औषध को पकावे। धीरे २ दो पहरों तक मध्यम आंच देवे। प्रातः काल सूर्यदेव की पूजा करके स्वांग शीतल होनेपर औषध को निकाल लेवे। यदि भाग्य वश से यह माणिक्य के समान शुभ तथा चमकदार होजाये तो समझो कि यह औषध सब प्रकार के कुष्ठरोगों को दूर करती है। इसे लौहपात्र में लोहके डण्डे से शहद और घी मिलाकर घोटकर दोरत्ति भरकी मात्रा प्रतिदिन खावें तो सब प्रकार के कुष्ठ रोगों को नाश करता है तथा बलको बढ़ाता है। शीतल सरोवर का जल, पकाकर ठण्डा किया हुआ दूध अथवा तुरन्तका दुहा हुआ बकरी का दूध पीना उत्तम है। यह वातरक्त, शीतपित्त तथा दारुण हिचकी को जीतता है। सब प्रकार के ज्वरों को वातरोगों को, पाण्डुरोग, कण्डू तथा कामलारोग को यह नाश करता है। यह श्रीमान गहनानाथ ने बहुत यत्न से बनाया था ॥ ३४—४३ ॥

कुष्ठकुठारो रसः।

भस्मसूतसमो गन्धो मृतायस्ताम्रगुग्गुलु।
त्रिफला च महानिम्बश्चित्रकश्च शिलाजतु॥ ४४॥
इत्येतच्चूर्णितं कुर्य्यात् प्रत्येकं शाणषोडशम्।
चतुः षष्टिकरञ्जस्य वीजचूर्णं प्रकल्पयेत्॥ ४५॥
चतुःषष्टि मृतश्चाभ्रं मध्वाज्याभ्यां विलोडयेत्।
स्निग्धभाण्डे स्थितं खादेद् द्विनिष्कं सर्वकुष्ठनुत्।
रसः कुष्ठकुठारोऽयं गलत्कुष्ठविनाशनः॥ ४६॥

रससिन्दूर, शुद्धगंधक, लौह भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध गुगुल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, बकायन, चीता, शुद्ध शिलाजीत, प्रत्यक द्रव्य का चूर्ण सोलह २ शाण ले। और करञ्ज के बीजों का चूर्ण चौंसठ शाण लें, अभ्रक भस्म चौंसठ शाण लें। सब द्रव्यों को एकत्र पीसें। और घी और शहद से मिलाकर दो निष्कभर खावे तो सब प्रकार के कुष्ठरोग दूर होते हैं। यह कुष्ठकुठाररस गलितकुष्ठ को नाश करता है। इसे घीसे स्निग्धपात्र में रखना चाहिये॥ ४४-४६॥

तालेश्वर रसः।

गुञ्जाशङ्खकरञ्जचूर्णरजनीभल्लातकार्चिः शिखा-
कन्यासूर्यपयः पुनर्नवरजो गन्धः तथा सूतकम्।
गोमूत्रे पचितं विडङ्गमरिचैः चौद्रश्च तत्तुल्यकम्,
हन्यादाशु विचर्चिकारुजमिदं कण्डूं तथा कैटिमम्॥४७॥

शुद्ध रत्तियों का चूर्ण, शंखभस्म, करंज के बीजों का चूर्ण, हल्दी, शुद्धभिलांवा, चीता, अपामार्ग, घीकुमारी, आक का दूध, पुनर्नवाका चूर्ण, शुद्धपारा, तथा शुद्ध गंधक। प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य मिलाले। फिर गौमूत्र सबसे आठ गुणा अर्थात् छयानवें तोला ले। उसमें सब चूर्ण डाल पकावें। पक चुकनेपर उतारकर उसमें विडंग का चूर्ण, मिरच का चूर्ण शहद उसके बराबर डालकर उचि-

तमात्रा से खावें तो शीघ्रही विचर्चिका, कण्डू, तथा किटिम कुष्ठ नाश होता है ॥ ४७ ॥

राजतालेश्वरः ।

नागस्य भस्म शाणैकं तोलकं गन्धकस्य च ।
द्विनिष्कं शुद्धतालस्य सर्वमेतद् गवां जलैः ॥ ४८ ॥
विपचेत् षोडशगुणैः पात्रे ताम्रमये शनैः ।
घर्मे द्विवस्रं जम्बीर-कुमारीवज्रकन्दजैः ॥ ४९ ॥
रसैर्भृङ्गस्य चाम्भोभिर्युतं वल्लद्वयं भजेत् ।
कुष्ठे चास्थिगते चापि शाखानासाविभुग्नके ।
स्वरभङ्गे त्ततत्तीणे मण्डलेषु महत्स्वपि ॥ ५ ॥
औडुम्बरं हन्ति शिवामधुभ्यां कृच्छ्रञ्च कुष्ठं त्रिफलाजलेन ।
गुडार्द्रकाभ्यां गजचर्मसिध्मविचर्चिकास्फोटविसर्पकण्डूम् ॥५१॥
निहन्ति पाण्डुं विविधां विपादीं सरक्तपित्तां कटुकासिताभ्याम् ।
खादेद् द्विजीरं त्वमृतायुतञ्च समुद्गयूषं सघृतञ्च दद्यात् ॥५२॥
रोहितकजटाक्काथमनुपानं प्रयच्छति ।
चतुर्दशदिनस्यान्ते कुष्ठं शुष्यति यत्नतः ॥ ५३ ॥
क्षुद्बोधो जायते ऽत्यर्थमत्यर्थं सुभगं वपुः ।
अत्यर्थं पच्यते भुक्तमत्यर्थं सुखमाप्नुयात् ॥ ५४ ॥
अरुणौडुम्बरं कुष्ठमृष्यजिह्वां कपालिकाम् ।
पुण्डरीकं काकणञ्च दद्रुकुष्ठं सुदुस्तरम् ॥ ५५ ॥
स्फुटरूपं सर्वकुष्ठं महाकुष्ठं सुदारुणम् ।
तथा चर्मदलं हन्याद् विसर्पं परिसर्पकम् ॥ ५६ ॥
सिध्म विचर्चिकां गाढां किटिमञ्च विशेषतः ।
पामाञ्चालसकञ्चैव किलासञ्च विनाशयेत् ।
वर्जयेत् सततं कुष्ठी मत्स्यमांसादि भोजनम् ॥ ५७ ॥

नागभस्म एक शाण, गंधक शुद्ध एक तोला, शुद्ध हड़ताल दो निष्कभर लें। इन सबको एकत्र पीस इनसे सोलह गुने गोमूत्र को मिला सबको एक तांबे के पात्र में धीरे २ पकावें। फिर जम्बीरी नीबू, घीकुमार, वज्रकन्द इनके रससे दो २ दिन धूपमें भावित करें। फिर इसे भांगरे के रससे तीनरत्ति खावें तो हड्डियों में पहुंचे हुए कोढ़ को तथा शाखाश्रित कोढ़ तथा नाकके टेढा होने को, स्वरभंग को, क्षतक्षीण को, बड़े मण्डल कोढ को भी यह राजतालेश्वररस नाश करता है इस राजतालेश्वर रसको हरड़ और शहद से खावें तो उदुम्बर कुष्ठ दूर होता है। त्रिफला के जलसे सेवन करें तो मूत्रकृच्छ्र कुष्ठ तथा मण्डल को नाश करता है गुड और अदरक से खावें तो गजचर्म, सिध्म, विचर्चिका, स्फोट, विसर्प और कण्डू को नाश करता है। इसे कुटकी और मिश्री से खावें तो पाण्डुरोग, विविध प्रकार की विपादी तथा रक्तपित्त को नाश करता है। श्वेत जीरा, और काला जीरा, गिलोय का रस, मूंगका यूष और घी इसमें देवें॥ इस रसके साथ रोहेड़ की जड़का क्वाथ अनुपान में पीवें तो चौदह दिनके पीछे कुष्ठ सूख जाता है॥ अत्यन्त भूख लगाता है, अत्यन्त सुन्दर शरीर कर देता है, खाया हुआ शीघ्र पचजाता है तथा अत्यन्त सुख देता है॥ अरुण उदुम्बर, ऋष्यजिह्वा, कपालिक:; पुण्डरीक, काकण, भयंकर दद्रु फूटाहुआ कुष्ठ, महाकुष्ठ, चर्मदल, विसर्प, सिध्म, गाढ़ विचार्चिका, विशेष करके किटिम, पामा, अलसक किलास, इन सब प्रकार के कुष्ठों को यह दूर करता है। कुष्ठी मनुष्य को मछली, मांस आदि कभी न खाने चाहियें॥ ४८—५७॥

कुष्ठ हरितालेश्वरः।

हरितालं भवेद्भागं द्वादशात्र विशुद्धिमत्।
गन्धकोऽपि तथा ग्राह्यो रसः सप्ताऽत्र दीयते॥५८॥
कृष्णाभ्रकमपिश्लक्ष्णं खल्ले कृत्वा विमर्दयेत्।
अङ्कोठमूलनीरेण सेहुण्डीपयसा ऽथवा॥५९॥
अर्कदुग्धेन सम्पिष्य करवीर जलेन च।

काकोडुम्बरनीरेण पेषणीयो रसो भृशम्॥६०॥
शुद्धताम्रकोठरे च क्षेपणीयो रसेश्वरः।
विधिवत् पच्यते याम-षट्कञ्चायं रसेश्वरः॥ ६१।
पञ्चगुञ्जाप्रमाणेन काकोडुम्बरवारिणा।
कुष्ठाष्टादशसंख्येषु देय एष भिषग्वरैः॥ ६२॥
अचिरेणैव कालेन विनाशं यान्ति निश्चयः।
पथ्यसेवा विधातव्या प्रणतिः सूर्यपादयोः॥ ६३॥
साधकेन तथा सेव्यो रसो रोगौघनाशनः।
पिप्पलीभिः समं दद्यात् कुष्ठरोगे रसेश्वरम्॥ ६४॥

शुद्ध हड़ताल बारह भाग, शुद्धगंधक बारह भाग, शुद्धपारा सातभाग, कृष्णाभ्रक भस्म सात भाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलावे। और अंकोल की जड़के रससे थोहर के दूधसे, आकके दूधसे, कनेर के काथसे, तथा काकोदुम्बरिका के रससे इसे निरन्तर मर्दन करे। फिर इसे शुद्ध ताम्बे के दो प्यालों में बंद करके छःपहरों तक आंच देकर पकावे। इसे पांचरत्ती भर लेकर काकोदुम्बरिका के क्वाथ से खिलावें तो अति शीघ्रही अठारह प्रकार के कुष्ठ दूर होते हैं॥ पथ्य इसमें ठीक पालन करना चाहिये। और सूर्य भगवान को नमस्कार करना चाहिये। इसे नियम से खावें। पिप्पली के चूर्ण के साथ कुष्ठरोग में इसे दें॥ ५८—६४॥

राजराजेश्वरोरसः।

आतपे मर्दयेत् सूतं गन्धकं मृतताम्रकम्।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत् तत्र विलीयते॥ ६५॥
भृङ्गराजद्रवं दत्वा दिनमात्रं विमर्दयेत्।
त्रिफला खादिरं सारममृता वाकुजीफलम्॥ ६६॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्यात् चूर्णीकृत्य विमर्दयेत्।
मध्वाज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षाभ्यां भक्षयेत् ततः॥ ६७॥

दद्रु किटिमकुष्ठानि मण्डलानि विनाशयेत्।
द्विगुञ्जन निहन्त्याशु राजराजेश्वरो रसः॥ ६८॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, ताम्रभस्म, शुद्ध हड़ताल प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पहले पारे गंधक की कज्जली धूप में करे, फिर अन्य द्रव्य मिला कर घोटे। जब एक प्राण होजाये तब भांगरे का रस डाल कर एक दिन भर घोटे। फिर इसमें त्रिफला, कत्था, गिलोय, बावची, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण पारे के समान लेकर सब के साथ मिला घोट कर रखे। इस राजराजेश्वर रस की दो रत्ति की मात्रा लेकर एक कर्ष शहद और एक कर्ष घी से मिला कर लोहे के पात्र में मर्दन करें खिलावें। तो दद्रु, किटिम, कुष्ठ, मण्डल, इन सब को शीघ्र नाश करता है॥ ६५—६८।

पारिभद्ररसः।

मूर्च्छितं सूतकं धात्री—फलं निम्बस्य चाहरेत्।
तुल्यांशं खादिरैः क्वाथैर्दिनं मर्द्यश्च भक्षयेत्।
निष्कैकं दद्रुकुष्ठघ्नः पारिभद्राह्वयो रसः॥ ६९॥

रससिन्दूर, आंवला, नीम की निम्बौली, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर मर्दन करे। और फिर खैर के क्वाथ से एक दिन मर्दन करके रखे। इसे एक निष्कभर खाने से दद्रु तथा कुष्ठ नाश होते हैं। इस का नाम पारिभद्र रस है॥ (मात्रा सर्व योगों में ही सोच समझ कर खाने को दें)॥ ६९॥

प्रलेपाः।

गन्धकं मूलकक्षारमार्द्रकस्य रसैर्दिनम्।
मर्दितं हन्ति लेपन सिध्मन्तु दिनमेकतः॥ ७०॥
कृष्णधुस्तूरजं मूलं गन्धतुल्यं विचूर्णयेत्।
मर्द्यं जम्बीरनीरेण लेपनं सिध्मनाशनम्॥ ७१॥
अपामार्गस्य पञ्चाङ्गं कदलीद्रवसंयुतम्।
पुटदग्धश्च गोमूत्रैर्लेपनं दद्रुनाशनम्॥ ७२॥

चक्रमर्दस्य वीजञ्च दुग्धे पिष्ट्वा विमर्दयेत्
गन्धर्वतैलसंयुक्तं मर्दनात् सर्वकुष्ठजित् ॥ ७३ ॥

गंधक और मूली का क्षार, दोनों समभाग लेकर एक दिन अदरक के रस से घोट कर सिध्म पर लेप करे तो एक दिन में ही सिध्म रोग नष्ट होता है ॥ ७० ॥

काले धतूर की जड़, गंधक दोनों समभाग चूर्ण करें और जम्बीरी के रस से मर्दन करके लेप करे तो सिध्म रोग नाश होता है ॥ ७१ ॥

अपामार्ग का पञ्चाङ्ग (पत्र पुष्प फल तना, जड़) लेकर चूर्ण करे और केले के रस से मर्दन करके सुखावे । फिर सम्पुट में रख दग्ध कर लेवे । इस अपामार्ग के क्षार को गोमूत्र से मिला कर लेप करे तो दाद का नाश होता है ॥ ७२ ॥

पनवाड़ के बीज, दूधमें पीसें और एरण्ड के तेलसे मिलाकर लेपकरें तो सब प्रकार के कुष्ठों को जीतता है ॥ ७३ ॥

लङ्केश्वरो रसः ।

भस्मसूताभ्र शुल्वानि गन्धं तालं शिलाजतु ।
अम्लवेतसतुल्यांशं त्र्यहं दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ ७४ ॥
मध्वाज्याभ्यां वटीं कुर्य्यात् द्विगुञ्जां भक्षयेत् सदा ।
कुष्ठं हन्ति गजं सिंहो रसो लङ्केश्वरो महान् ॥ ७५ ॥
त्रिफलानिम्बमञ्जिष्ठा–वचापाटलमूलकम् ।
कटुकारजनीक्काथं चानुपानं प्रयोजयेत् ॥ ७६ ॥

रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, गंधक शुद्ध, शुद्ध हड़ताल, शिलाजीत, अम्लवेत, नीबू का रस इन सबको एक २ भाग लेकर मिलाकर तीनदिन तक घोटे। फिर दोरत्ति भरकी गोली बनावें। इसे खाने से कुष्ठ ऐसे दूर होता है जैसे शेर को देखकर हाथी। इसको लङ्केश्वर रस कहते हैं ॥ त्रिफला, नीम, मंजीठ, बच, पाटल की जड़, कुटकी, हल्दी इन सब का क्काथ बना कर अनुपान करे॥७४-७६

भूतभैरवो रसः।

शुद्धाः पञ्चदशात्र तालकमिताः शुद्धाश्च षड्गन्धकाः।
सप्ताष्टौ नव तिन्तिडीयकफलात् काठिल्लकानां दश।
सेहुण्ड्यर्कपयोभिरेव सततं सञ्चूर्ण्य तद् भाव्यते।
रोहीतस्य जटारसेन मृदितं श्लक्ष्णं ततः खल्लितम् ॥ ७७ ॥
एकीकृत्य समस्तमेतदपि तत् टङ्कैकमेतज्जयेत्
पश्चाद्द्राक्षविशुद्धवारिसहितं किञ्चिच्च तत् पीयते।
ताम्बूलं शशिखण्डमण्डितवटी--मिश्रं ततः स्वापयेत्।
शय्यायां मृगलोचनापरिभृतौ कर्माणि सम्पादयेत् ॥७८॥
देहं वीक्ष्य सुखं मुखं न विरसं विज्ञाय सम्यक् सुधीः।
छागीदुग्धमिहापि तं ननु दिनं तक्रञ्च तत् पाययेत्।
नित्यं शान्तमिदं करोति नियतं सर्वौषधैर्वर्जितम्।
सामग्रामसमग्रमग्रिमतरं नीलञ्च पीतारुणम् ॥ ७९ ॥
श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशमति प्रायः क्रिमिव्याकुलं।
गन्धालिप्रतिमं खटीकसदृशं कुष्ठञ्च चोत्सादयेत्।
कुष्ठाष्टादश भूतभैरव इति ख्यातः क्षितौ हन्ति च।
वातव्याधि निकृन्तनः कफकृतान् कुष्ठान् विशेषानयम् ॥८०॥
हन्तीति ज्वरमुग्ररूपमधिकं दाहादिकञ्चामयम्।
कुर्य्याद्रूपमनङ्गरङ्गगुणभृद्भृङ्गास्पदं विग्रहम् ॥८१॥
एवं स मासात् कुरुते समासात् पथ्यञ्च तथ्यं सकलं करोति।
भुञ्जीत भक्तं सततं प्रयुक्तं घृतं शृतं वा विकृतं तदेव ॥ ८२ ॥
स्वच्छन्ददुग्धेन सुखेन जग्धं पथ्यान्नमेतत् प्रवदन्ति सन्तः।
कुष्ठस्य दुष्टस्य निराकरोति गात्रञ्च कुर्य्यात् शुभगन्धयुक्तम् ८३

शुद्ध हड़ताल पंद्रह तोले, शुद्ध गंधक छः तोला, इमली का फल

पंद्रह तोला, करेला दस तोला, सबको पीसकर थोहर तथा आक के दूध से सबको मर्दन करे। फिर रोहेड़े की जड़के रससे मर्दन करे, फिर सबको एकत्र पीसकर रखे। इसको एक टङ्क लेकर कपड़े से छनेहुए कुछ पानी के साथ पीवे और कर्पूर सहित वटी पानके साथ खावें। फिर बढ़िया शय्या पर सुलावें। अपने शरीर को सुखी जान और मुखको जब विरस न देखे तब कर्म्म करे। बकरीकादूध पिलावे तक्र पिलावें। यह शान्ति देनेवाला है, इसके सेवन से सब औषधों के सेवन से अच्छे न हुए २ कुष्ठ, खामकुष्ठ, नील, पीत, लाल, श्वेत, सूजनवाले, कीड़ों से व्याप्त, गंध प्रसारणी के सदृश दुर्गन्धयुक्त और खड़िया मिट्टी के समान कुष्ठरोग नष्ट होते हैं। अठारह प्रकार के कुष्ठों को, वातव्याधि को, विशेष करके कफजन्य कुष्ठों को यह भूतभैरव रस अच्छा करता है। तथा उग्ररूप वाला तीव्रज्वर,दाहादि रोग,नष्ट करके कामदेव केसे सुन्दररूप और कमलसमान कोमल शरीर को करता है॥ इस प्रकार से एक मासमें दुष्ट कुष्ठ को नाश करके शुभ गंध युक्त शरीर को करता ह इसमें पथ्य, चावल, घी, दूध शीघ्र पचने वाला अन्न खाने को देवें॥ ७७—८३॥

अर्केश्वरो रसः।

पलानीशस्य चत्वारि बलेर्द्वादश तावती।
ताम्रस्य चक्रिका देया रसस्योर्द्ध्वं शरावकम्॥ ८४॥
दत्त्वा विनद्धभाण्डस्थं पूरयेद् भस्मना दृढम्।
अग्निं प्रज्वालयेद् यामद्वयं शीतं विचूर्णयेत्॥ ८५॥
पुटेद् द्वादशधा सूर्य-दुग्धेनालोडितं पुनः।
वरापावकभृङ्गाणां त्रिभिर्द्रावैर्विभावयेत्।
अयमर्केश्वरो नाम्ना रक्तमण्डलकुष्ठजित्॥ ८६॥

शुद्धपारा चारपल, शुद्धगंधक बारह पल, दोनों की कज्जली करे। इसे एक हांडी में रखे और कज्जली को एक तांबे के शरावसे ढकदे। अब इस हांडी में राख भरदे। और नीचे दो पहर तक आग जलावे। स्वांग शीतल होनेपर निकालकर चूर्ण करे और आकके

दूधसे इसे घोट २ कर बारह वार पुटदे। फिर त्रिफला, चीता, और भांगरा इन तीनों के रसोंसे भावना देवें यह अर्केश्वर रस रक्तमण्डल कुष्ठ को जीतता है ॥ ८४ ॥ ८६ ॥

महातालेश्वरोरसः।

तालताप्यशिलासूतं शुद्धं टङ्कणसैन्धवम्।
समं सञ्चूर्णयेत् खल्ले सूतात् द्विगुणगन्धकम्।
गन्धाद्द्विगुणलौहञ्च जम्बीराम्लेन मर्दयेत् ॥ ८७ ॥
ततो लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत्।
त्रिंशदंशं विषञ्चात्र क्षिप्त्वा सर्वं विचूर्णयेत्।
माहिषाज्येन संमिश्रं निष्कार्द्धं भक्षयेत् सदा ॥ ८८ ॥
मध्वाज्यैर्वागुजीचूर्ण-कर्षं लिह्यात् ततः परम्।
सर्वान् कुष्टान् निहन्त्याशु महातालेश्वरो रसः ॥८९॥

शुद्ध हड़ताल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्धमनसिल, शुद्धपारा, शुद्ध सुहागा, सेंधा लवण, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। और शुद्ध गंधक दो तोला डालें। लौहभस्म चार तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें और जम्बीरी के रससे मर्दन करें। फिर लघुपुट में पकावें। स्वांगशीतल होनेपर निकाल पीसलें। जितना यह चूर्णहो उसका तीसवां भाग शुद्धविष मिलाकर फिर चूर्ण करें। इस चूर्णको भैंसके घीसे मिलाकर आधा निष्क खावें। इसके पीछे घी और शहद मिलाकर बावची का चूर्ण एक कर्ष खावें तो यह महातालेश्वर रस सब कुष्ठ रोगों को जीतता है ॥ ८७—८९ ॥

विजयभैरवोरसः।

सप्तकञ्चुकनिर्मुक्तमूर्द्ध्वशुद्धरसेन्द्रकम्।
मृतकटाहान्तरे तत्तु स्थापयेच्च समत्रकम् ॥ ९० ॥
सूताद्द्विगुणितं तालं कूष्माण्डद्रवशोधितम्।
दोलायंत्रेण तैलादौ सप्तधा परिशोधितम् ॥ ९१ ॥

दत्त्वाऽऽप्लाव्य द्रवैर्झिण्ट्याः किञ्चिदाप्लाव्य युक्तितः।
तयोर्द्विगुणितं भस्म पलाशस्य परिक्षिपेत् ॥ ९२ ॥
पुनर्झिण्टीद्रवेणैव सर्वमाप्लाव्य यत्नतः।
खाखसार्करसैर्भूयः परिप्लाव्य च पाकवित् ॥ ९३ ॥
पचेदवहितो वैद्यः शालाङ्गारेण यत्नतः।
चतुर्विंशतियामन्तु पक्का शीतलतां नयेत् ॥ ९४ ॥
अवतार्य्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम्।
प्रयत्नेन कृतप्रायाश्चित्तः शोधितदेहकः ॥ ९५ ॥
सिताहरीतकीयुक्तं खादेद् रक्तिचतुष्टयम्।
रक्तिकैकक्रमेणैव वर्द्धयेद् दिनसप्तकम् ॥ ९६ ॥
मधूदकं पिबेच्चानु नारिकेलजलञ्च वा।
जिङ्गिनीसम्भवं क्वाथमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ ९७ ॥
अभ्यङ्गं सुरभितैलैः कुर्य्यात् ताम्बूलचर्वणम्।
पवनानलसूर्यांशु–मत्स्यमांसदधीनि च ॥ ९८ ॥
शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेत् मतिमान् नरः।
वातरक्तमाममिश्रमामञ्चापि सुदारुणम् ॥ ९९ ॥
सर्वकुष्ठञ्चाम्लपित्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम्।
विजयाख्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसृग्दरान् ॥ १०० ॥

सप्तकञ्चुकी वर्जित और ऊर्ध्वपातन से ऊपर लगा हुआ शुद्ध पारा एक तोला लें, इसे मंत्र ध्यान पूर्वक विचार से एक मिट्टीकी हांडी में डालें। उसमें पेठके रससे शुद्ध हुई २ तथा तैल आदिमें सातवार दोलायंत्र से शुद्ध की हुई हड़ताल दो तोला डालें। उसमें फिर नील झिण्टी का रस डालकर डुबा दे। फिर पोस्त के रस और आकके रस से खूब भरके नीचे कोयलों की आग देकर चौबीस पहर तक विधि-पूर्वक पकावे। फिर शीतल होनेपर उतारे और नीचे के पदार्थ को

शीशी में डालले। इसको खाने से पूर्व प्रायश्चित्त और देहशुद्धि करले। फिर मिश्री और हरड़ के चूर्ण के साथ चाररत्ति भर इस रसको खावे। सातदिन तक एक २ रत्ति मात्रा क्रमशः बढ़ाकर खिलावें। और ऊपर से शहद में जल मिलाकर पीवे या नारियल का जल पीवे। अथवा काले सीमल के क्काथ को पीवे। अथवा सोंठको शहद मिलाकर चाटे॥ सुगंधि युक्त तैल शरीर पर मले। तथा पान चबावे। इसके सेवन करनेवाला वायु, अग्नि, सूर्यकी धूप, मछली, मांस, दही, पत्तों के साग, तथा ककाराष्टक करेला, कूष्माण्ड आदि द्रव्य अपथ्य हैं, इन्हें छोड़ देवे। इससे वातरक्त, आमयुक्त, सुदारुण आम, सब प्रकार के कुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका, रक्तप्रदर इनसब रोगों को यह विजय रस दूर करता है॥ ९०—१००॥

कुष्ठारिरसः।

काकोडुम्बरिकाचूर्णं ब्रह्मदण्डी बलात्रयम्।
प्रत्यहं मधुना लीढं वातरक्तापहं नृणाम्॥ १०१॥
चरद्रक्तं चलन्मांसं मासमात्रेण सर्वथा।
गलत्पूयं पतत् कीटं त्रिटङ्कं सेव्यमीरितम्॥ १०२॥

काकोदुम्बरिका (जंगली अंजीर) का चूर्ण, ब्रह्मदण्डी, बला, अतिबला, नागबला, इनसब द्रव्यों का चूर्ण समभाग लें। इस चूर्ण को शहद से खावें। इस चूर्णको तीन टङ्क भर खावें तो जिसमें से खून बहता हो, मांस गिरता हो, पीप बहती हो, कीड़ों से भराहुआ हो ऐसे कुष्ठ रोग कोभी एक मास में आराम करता है॥१०१॥१०२॥

षडाननगुडिका।

त्रिषोषणं टङ्कणपारदश्च सगन्धचूर्णश्च समांशयुक्तम्।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुडाक्तं संमर्द्य सर्वं गुडिका विधेया॥१०३॥
विरेचनी सर्वविकारहन्त्री लघ्वी हिता दीपनपाचनीयम्।
कुष्ठे हिता तीव्रतरे हि शूले चामाशये चाश्मगते विकारे।
संशोधनी शीतजलेन सम्यक् संग्राहिणी चोष्णजलेन युक्ता॥१०४॥

शुद्धविष, मिरचों का चूर्ण, शुद्ध सुहागा, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध जमालगोटा प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारागंधक की कज्जली करें फिर सब से दुगुना गुड मिला कर पीस गोली दो रत्ति भर की बनावे। यह गोली विरेचनी है, सब विकारों को नाश करती, लघु, दीपन, पाचन, कुष्ठ में हित है तथा तीव्रशूल को शीघ्र दूर करने वाली है। यह आमाशय के विकार तथा पथरी में भी हितकर है। इसे शीतल जल से खावें तो संशोधन करती है। और गरम जल से खावें तो मल को संग्रह करदेती है ॥१०३॥१०४॥

कुष्ठनाशनः ।

चिरबिल्वपत्रं पथ्या शिरीषश्च विभीतकम् ।
काकोडुम्बरिकामूलं मूत्रैरालोड्य फेनितम् ॥ १०५ ॥
कर्षमात्रं पिबेद्रोगी गोस्तन्या सह टङ्कणम् ।
सप्तसप्तकपर्यन्तं सर्वकुष्ठविनाशनम् ॥ १०६ ॥

करञ्ज के पत्ते, हरड़ का चूर्ण, शिरीष की छाल का चूर्ण, बहेड़ा का चूर्ण, काकोदुम्बरिका की जड़ का चूर्ण, इन सब को पीसे। इस के एक कर्ष चूर्ण को गोमूत्र में घोल झागयुक्त होने पर पीजावे। और इसके साथ सुहागा भुना हुआ और मुनक्का भी खावे। इस प्रकार सात सप्ताह तक करने से सभी कुष्ठ नाश होजाते हैं। १०५ ॥ १०६ ॥

अथ श्वित्रचिकित्सा ।

अथ श्वित्रस्य वक्ष्यामि नाशनोपायमुत्तमम् ॥ १०७ ॥

आगे श्वित्र अर्थात् श्वेत कोढ़ को नाश करने के उत्तम२ उपाय लिखते हैं ॥ १०७ ॥

विजयानन्दो रसः ।

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धतालकम् ।
मृत् कटाहान्तरे पूर्वं स्थापयेच्च समन्त्रकम् ॥ १०८ ॥
द्वयोः समं पलाशस्य भस्म तस्योपरि क्षिपेत् ।
वक्त्रं मृत्कर्पटैर्लिप्त्वा शोषयेच्च खरातपे ॥ १०९ ॥

चतुर्विंशतियामन्तु पक्त्वा शीतलतां नयेत् ।
अवतार्य्य काचपात्रे स्थापयेदतियत्नतः ॥ ११० ॥
विधिवत्सेवितश्चासौ हन्ति श्वित्रं चिरन्तनम्।
सर्वकुष्ठं निहन्त्याशु भास्करास्तिमिरं यथा ॥ १११ ॥
रसोऽयं श्वित्रनाशाय ब्रह्मणा निर्मितः पुरा।
विजयानन्दनामाऽयं प्रसिद्धः क्षितिमण्डले ॥ ११२ ॥

शुद्धपारा, एक भाग, शुद्ध हड़ताल दो भाग दोनों मंत्रपूर्वक पीस कर एक मिट्टी की हांडी में डाले और इसके ऊपर तीन भाग पलाश की भस्म डाले और उसका मुख बंद कर दृढ़ता से कपड-मिट्टी कर तेज़ धूप में सुखा लेवे। फिर आग पर चौबीस पहर तक पकावे। स्वांग शीतल होने पर उतार कर अन्दर के द्रव्य को निकाल पीस कर शीशी में सुरक्षित रखे। इसे विधिपूर्वक सेवन करने से पुराना श्वित्र भी दूर होता है। यह सब प्रकार के कुष्ठों को ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य अन्धकार को। इस रस को श्वित्र नाश करने के लिये पहले ब्रह्माजी ने बनाया था। इसका नाम विजयानन्द जगत में प्रसिद्ध है। (मात्रा आधा चावल दें) ॥१०८—११२॥

श्वित्रदद्रुपाटलालेप।

अश्वहा रजनी हेम प्रत्यक्पुष्पी प्रदाह्य च।
चूर्णञ्च स्वर्जिकाक्षारं नीरं दत्त्वा प्रपेषयेत् ॥ ११३ ॥
प्रच्छयित्वा ततः स्थानं मण्डलाग्रेण लिम्पति।
पाटलानि पतन्त्यङ्गे विस्फोटाश्चातिदारुणाः ॥११४॥
सम्भवन्ति तिला रक्ताः कृष्णवर्णा भवन्ति ते।
मीलन्ति स्वशरीरे च दिव्यरूपो भवेन्नरः ॥११५॥

कनेर, हल्दी, धतूरा, अपामार्ग, इन सबका क्षार और सज्जी, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। और जल डाल कर पीसें। फिर व्रणस्थान को रगड़ कर इसका लेप कर दें तो पाटल अंगों से गिरते हैं और

अतिदारुण स्फोट नष्ट होजाते हैं । लालातिल उत्पन्न होकर काले तिल बन जाते हैं और शरीर में फिर मिल जाते हैं । और मनुष्य दिव्य रूप के होजाते हैं ॥११३—११५॥

श्वित्रहरो लेपः ।

सैन्धवं रविदुग्धेन पेषयित्वा ऽथ मण्डलम् ।
प्रच्छयित्वा प्रलेपोऽयं श्वित्रकुष्ठविनाशनः ॥११६॥

सैंधानमक और आक का दूध दोनों को पीस कर मण्डल को घिस कर इस का लेप करे तो श्वेत कुष्ठ नष्ट होता है ॥११६॥

मुखश्वित्रहरो लेपः ।

मुखे श्वेते च सञ्जाते कुर्याच्चेमां प्रतिक्रियाम् ।
गन्धकं चित्रकाशीशं हरितालं फलत्रयम् ।
मुखे लिम्पेद्दिनैकेन वर्णनाशो भविष्यति ॥११७॥
गुञ्जाफलाग्निचूर्णस्य लेपनं श्वेतकुष्ठजित् ।
शिला ऽपामार्गभस्मापि लिप्त्वा श्वित्रं विनाशयेत् ॥११८॥

मुख सफेद होगया हो तो इस प्रतिक्रिया को करे । शुद्ध गंधक, चीता काशीश, शुद्ध हड़ताल, त्रिफला, इन सबको समभाग पीसकर पानी में मिलाकर पीसे और मुखपर लेप करे तो श्वेत रंगका एकदिन में नाश होजाता है (इसे नित्य लगावें ।) ॥ ११७ ॥ रत्तियें और चीता दोनों समभाग पीसकर लेप करें तो श्वित्र का नाश होता है। अथवा शुद्ध मनसिल और अपामार्ग की भस्म दोनों को पीसकर लेप करें तो श्वेतकुष्ठ नष्ट होता है ॥ ११८ ॥

रसमाणिक्यम् ।

तालकं वंशपत्राख्यं कूष्माण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा च त्रिधा वापि दध्नाम्लेन तथैव च ॥११९॥
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत् तण्डुलाकृति ।
ततः शरावके पात्रे स्थापयेत् कुशलोऽभिषक् ॥१२०॥

बदरीपत्रकल्केन सन्धिलेपञ्च कारयेत्।
अरुणाभं ह्यधः पात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥१२१॥
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य माणिक्याभं हरेद्रसम्।
तद्रक्तिद्वितयं खादेत् घृतभ्रामरमर्दितम् ॥१२२॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगाद्विमुच्यते।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥१२३॥
नाड़ीव्रणं व्रणं दुष्टमुपदंशं विचार्चिकाम्।
नासाऽस्यसम्भवान् रोगान् क्षतान् हन्ति सुदारुणान्।
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फोटं मण्डलं तथा ॥ १२४ ॥

वंशपत्र हड़ताल को पेठे के रसमें सातवार वा तीनवार शोधन करे। फिर खट्टे दही के पानी में शुद्ध करे। सुखाकर चावलों के समान मोटा २ चूर्ण करे। फिर इस चूर्ण को चौड़े २ अभ्रक के पत्रों के बीचमें भरकर उन पत्तों को चारों ओर से पिन आदिसे बंद करके दो शरावों में तह लगा के रखें। फिर उन शरावों का बेरके पत्तों को पीसकर इनसे संधिलेप करदे। फिर इसे ज्वाला पर रख तब तक ज्वाला देवे जबतक शराव के नीचे का भाग लाल न हो जाये। लाल होजाने पर और आग देना बंद करदे। जब स्वाग शीतल होजाये तब शराव तथा अभ्रक के पत्तों को खोल कर माणिक्य के समान चमकदार रसको निकालें। इस रसकी दोरत्ति भरकी मात्रा लेकर घी और शहद से मिलाकर सेवन करावें। परमात्मा की प्रार्थना करके इसे खावें तो कुष्ठरोग छूट जाता है। फूटाहुआ, गलता हुआ कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर नासूर, व्रण, दुष्ट उपदंश, विचर्चिका, नाक मुख के होनेवाले रोग, सुदारुण क्षत, पुण्डरीक, चर्मदल विस्फोट, मण्डल इन सब रोगों को दूर करता है ॥ ११९—१२४ ॥

॥ इति कुष्ठचिकित्सा ॥

अथ शीतपित्तोदर्दकोठरोग-चिकित्सा ।

क्षुद्रयोगाः ।

यमीनागुडसंमिश्रः सूतभस्माद्विवल्लकः ।
शीतपित्तं निहन्त्याशु कटुतैलाविलेपनम् ॥ १ ॥
सिद्धार्थरजनीकल्कं प्रपुन्नाडतिलैः सह ।
कटुतैलेन सम्मिश्रमेतदुद्वर्त्तनं हितम् ॥ २ ॥
दूर्वानिशायुतो लेपः कण्डूपामाविनाशनः ।
क्रिमिदद्रुहरश्चैव शीतपित्तहरः परः ॥ ३ ॥
कुष्ठोक्ताश्च क्रियां कुर्य्यात् सर्वां युक्त्या चिकित्सकः ।
शीतपित्ते तथोदर्दे कोठे चैव समासतः ॥ ४ ॥

रससिन्दूर तीनरत्तिको अजवायन और गुड़से मिलाकर खावे और शरीरपर सरसोंके तेलकी मालिश करे तो शीतपित्त नष्ट होता है ॥ १ ॥ सरसों, हल्दी, पनवाड़ और तिल इन सबका कल्क सरसोंके तेलमें मिलाकर उबटना करे तो शीतपित्त दूर होता है ॥ २ ॥ दूब घास, और हल्दी को पीसकर लेप करें तो कण्डू, पामा, क्रिमि, दाद और शीतपित्त नष्ट होते हैं ॥ ३ ॥ कुष्ठरोगमें कही हुई क्रिया शीतपित्त, उदर्द तथा कोठ रोगों मे चिकित्सक करें ॥ ४ ॥

इति शीतपित्तोदर्दकोठरोग चिकित्सा ॥

अथाम्लपित्तचिकित्सा ॥

अम्लपित्तान्तकोरसः ।

मृतसूताभ्रलौहानां तुल्यां पथ्यां विमर्दयेत् ।
माषमात्रं लिहेत् क्षौद्रैरम्लपित्तप्रशान्तये ॥ १ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला, हरड़ का चूर्ण तीन तोला। सबको मिला लें और पीसकर रखे। इसे एक

माषाभर (सुश्रुत का माषा) ले शहद से खावैं तो अम्लपित्त नष्ट होता है। (मात्रा दोरत्ति दें) ॥ १ ॥

लीलाविलासो रसः।

रसो बलिर्व्योम रविश्च लौहं धात्र्यक्षनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य।
तदल्पघृष्टं मृदुमार्कवेण सम्मर्दयेदस्य च वल्लयुग्मम् ॥ २ ॥
हन्त्यम्लपित्तं मधुनावलीढं लीलाविलासो रसराज एषः।
छर्दिं सशूलं हृदयस्य दाहं निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ ३ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, लौह भस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर आंवले और बहेड़े के काथ से तीनदिन तक घोटैं फिर कोमल भांगरेके पत्तों के रससे थोड़ा घोटकर रखें इसकी दोरत्ति की मात्रा शहद से खावें। तो अम्लपित्त, वमन, शूल, हृदय का दाह इन सबको यह लीला विलास रस दूर करता है इसमें संशय नहीं ॥ २ ॥ ३ ॥

पानीयभक्तवटिका।

त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफला त्र्यूषणं तथा।
प्रत्येकन्तु पलं भागं तदर्द्धौ रसगन्धकौ ॥ ४ ॥
लौहाभ्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम्।
एतत् सकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षणः ॥ ५ ॥
त्रिफलायाः कषायेण वटिकां कारयेद् भिषक्।
एकैकां भक्षयेत् प्रातस्तक्रञ्चापि पिबेदनु ॥ ६ ॥
हन्ति शूलं पार्श्वशूलं कुक्षिवस्तिगुदे रुजम्।
श्वासं कासं तथा कुष्ठं ग्रहणीदोषनाशिनी ॥ ७ ॥

त्रिवी, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लें। शुद्धपारा चौथाई पल तथा शुद्ध गंधक चौथाई पल लेकर कज्जली करें। फिर लौहभस्म, अभ्रकभस्म, वायविडंग का चूर्ण प्रत्येक द्रव्य दो २ पललें। इन सब द्रव्यों को मर्दन

कर चूर्ण करें । फिर त्रिफला के क्वाथ से घोटकर गोलियां एक २ रत्ति भरकी बनावें । प्रातःकाल एक गोली खाकर ऊपर से तक्र पीवें तो शूल, पार्श्वशूल, पेटका शूल, वस्तिशूल तथा गुदा की शूलको तथा श्वास, कास कुष्ठ, और ग्रहणी दोषको नाश करता है ॥४—७॥

अथ क्षुधावतीगुडिका ।

तत्र अभ्रशुद्धिः ।

आशुभक्तोदकैः पिष्टमभ्रकं तत्र संस्थितम् ।
कन्दमाणास्थिसंहार-खण्डकर्णरसैरथ ॥८॥
तण्डुलीयकशालिञ्च—कालमारिषजेन च ।
वृश्चीरवृहती भृङ्ग—लक्ष्मणाकेशराजकैः ॥ ९ ॥
पेषणं भावनं कुर्यात् पुटश्चानेकशो भिषक् ।
यावन्निश्चन्द्रकं तत् स्याच्छुद्धिरेवं विहायसः ॥ १० ॥

काले वज्राभ्रक को नये धान्यों से बनाई हुई कांजी में एकदिन रात रखे । फिर उसी से पीस लेवे । फिर माणकंद, हडजोड़ी, खाल्कोन, चौलाई, शालिञ्चशाक, बड़े पत्तों की चौलाई, श्वेत पुनर्नवा, बड़ी कटेली, भांगरा, लक्ष्मणा, केशराज इनके पृथक्२अथवा मिलित रससे अनेकवार पीस, भावना देवे और पुट देवे। यह क्रिया तबतक करता जाये जबतक अभ्रक की निश्चन्द्र भस्म न होजाये। इस प्रकार से अभ्रक की शुद्धि तथा भस्म होती है ॥ ८—१० ॥

तत्र लौहशुद्धिः ।

स्वर्णमाक्षिकशालिञ्च—ध्मातं निर्वापितं जले ।
त्रैफलेऽथ विचूर्ण्यैवं लौहं कान्तादिकं पुनः ॥ ११ ॥
वृहत्पत्र—करीकर्ण—त्रिफलावृद्धदारजैः ।
माणकन्दास्थिसंहार—शृङ्गवेर भवै रसैः ॥ १२ ॥
दशमूलीमुण्डातिका—तालमूलीसमुद्भवैः ।
पुटितं साधु यत्नेन शुद्धिमेवमयो व्रजेत् ॥ १३ ॥

कान्त लौहादि लौहके चूर्णको स्वर्णमाक्षिक तथा शालिञ्च शाक से पीसकर आगपर लाल करे फिर त्रिफला के क्वाथमें बुझावे। फिर उस लौह चूर्णको, लोधविशेष, गजकर्ण पलाश, त्रिफला, विधारा, माणकन्द, हड़जोड़ो, अदरक का रस, दशमूल, मुण्डी, मूसली, इनके पृथक् २ वा मिलित स्वरस से अथवा क्वाथसे घोट २ कर पुट देता जाये। इस प्रकार से लौहशुद्धि तथा लौहभस्म होती है॥ ११-१३ ॥

तत्र मण्डूरशुद्धिः।

वशिरं श्वेतवाट्यालं मधुपर्णीं मयूरकम्।
तण्डुलीयश्च वर्षाह्वं दत्त्वाधश्चोर्द्ध्वमेव च ॥ १४ ॥
पाक्यं सुजीर्णमण्डूरं गोमूत्रेण दिनत्रयम्।
यथान्तर्बाष्पदग्धं स्यात् तथा स्थाप्यं दिनत्रयम्।
एवं विशोधितं लौहाकिट्टं ग्राह्यं विचूर्णितम् ॥ १५ ॥

एक हांडीमें हुलहुल, श्वेतबला, गिलोय, अपामार्ग, चौलाई, पुनर्नवा इनकी जड़ पत्ते और छाल आदि नीचे ऊपर रख बीचमें पुराना मण्डूर रखें और ऊपर से गोमूत्र भरकर हांडी का मुंह बंद करदें। इसे तीनदिन तक पकावें जिससे अन्तर्धूम पकते २ मण्डूरकी भस्म होजावे। इस प्रकार से मण्डूर शुद्ध होजाता है ॥ १४ ॥ १५ ॥

तत्र रसशुद्धिः।

जयन्त्या वर्द्धमानस्य आर्द्रकस्य रसेन तु।
वायस्याश्चानुपूर्व्यैवं मर्दनं रसशोधनम् ॥ १६ ॥

जयन्ती, एरण्ड, अदरक, और मकोय के स्वरससे क्रमशः घोटने से पारा शुद्ध होजाता है ॥ १६ ॥

तत्र गन्धकशुद्धिः।

गन्धकं नवनीताख्यं चुद्रितं लौहभाजने।
त्रिधा चण्डातपे शुष्कं भृङ्गराजरसाप्लुतम् ॥ १७ ॥
ततो वन्हौ द्रवीभूतं त्वरितं वस्त्रगालितम्।
यत्नाद् भृङ्गरसे क्षिप्तं पुनः शुष्कं विशुद्धयति ॥ १८ ॥

आंवलासार गंधक को लोहे के पात्र में कूटे और भांगरे का रस उसमें भरकर तीव्र धूपमें सुखावें। इस प्रकार तीनवार रस भरकर सुखावे। फिर इस गंधक को आगपर रख पिघलावे और शीघ्रही कपड़े मेंसे छानकर (नीचे रखे पात्र में स्थित) भांगरे के रसमें डालदें। फिर सुखा लें। इस प्रकार गंधक शुद्ध हो जाती है ॥१७॥ १८॥

अथ क्षुधावती प्रस्तुतीकरणम् ।

गगनाद् द्विपलं चूर्णं लौहस्यपलमात्रकम् ।
लौहकिट्टपलार्द्धश्च सर्वमेकत्र संस्थितम् ॥ १९ ॥
मण्डूकपर्णीवशिर-तालमूली रसैः पुनः ।
वरीभृङ्गकेशराजकालमारिषजैरथ ॥ २० ॥
त्रिफलाभद्रमुस्ताभिः स्थालीपाकाद्विचूर्णितम् ।
रसगन्धकयोः कर्षं प्रत्येकं ग्राह्यमेकतः ।
तन्मसृणे शिलाखल्ले यत्नतः कज्जलीकृतम् ॥ २१ ॥
वचा चव्यं यमानी च जीरके शतपुष्पिका ।
व्योषं मुस्तं विडङ्गश्च ग्रन्थिकं खरमञ्जरी ॥ २२ ॥
त्रिवृताचित्रको दन्ती सूर्य्यावर्त्तः सितस्तथा ।
भृङ्गमाणककन्दाश्च खण्डकर्णक एव च ॥ २३ ॥
दण्डोत्पला केशराज-काला कर्कटकोऽपि च ।
एषामर्द्धपलं ग्राह्यं पटघृष्टं सुचूर्णितम् ॥ २४ ॥
प्रत्येकं त्रिफलायाश्च पलार्द्धं पलमेव च ।
एतत्सर्वं समालोड्य लौहपात्रे तु भावयेत् ॥ २५ ॥
आतपे दण्डसङ्घृष्टमार्द्रकस्यरसैस्त्रिधा ।
तद्रसेन शिलापिष्टं गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥ २६ ॥
वदरास्थिनिभां शुष्कां सुगुप्ताश्च निधापयेत् ।
तत्प्रातर्भोजनादौ तु सेवितं गुडिकात्रयम् ॥ २७ ॥

अम्लोदकानुपानञ्च हितं मधुरवर्जितम् ।
दुग्धञ्च नारिकेलञ्च वर्जनीयं विशेषतः ॥ २८ ॥
भोज्यं यथेष्टमिष्टञ्च वारिभक्ताम्लकाञ्जिकम् ।
हन्त्यम्लपित्तं विविधं शूलञ्च परिणामजम् ॥ २९ ॥
पाण्डुरोगञ्च गुल्मञ्च शोथोदरगुदामयान् ।
यक्ष्माणं पञ्चकासांश्च मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ३० ॥
प्लीहानं श्वासमानाहमामवातं सुदारुणम् ।
गुडी क्षुधावती सेयं विख्याता रोगनाशिनी ॥ ३१ ॥

पूर्व लिखित प्रकार से शुद्ध किया हुआ अभ्रकभस्म दो पल, पूर्वोक्त विधिसे शुद्ध लौहभस्म एक पल, शुद्ध मण्डूर आधा पल इन सबको पीसकर इनमें मण्डूकपर्णी, श्वेतहुलहुल, तथा मूसली इनके स्वरस को डालकर स्थालीपाक करे । फिर शतावर, भांगरा, केशराज, बड़ी चौलाई इनका स्वरस डालकर दूसरी वार स्थालीपाक करे। फिर त्रिफला तथा मोथा के मिलित क्वाथ को डालकर तीसरी वार स्थाली पाक करे । इसके पीछे उसका चूर्ण करे । फिर पूर्वोक्त शुद्धपारा आधा कर्ष, तथा पूर्वोक्त शुद्ध गंधक आधा कर्ष मिलाकर कज्जली करे । और फिर बच, चव्य, अजवायन, काला जीरा, श्वेत जीरा, सौंफ़, सोंठ मिरच, पीपल, मोथा, वायविडंग, पिप्पलामूल, अपामार्ग, त्रिवी, चीता, दन्ती, श्वेतहुलहुल, भांगरा, मानकंद, खण्ड कर्ण, पीलफूल का दण्डोत्पल, केशराज, कालियाकड़ा, काकड़ासिंघी इनमें से प्रत्यक द्रव्य का चूर्ण आधा २ पल लेवे । तथा हरड़, बहेड़ा आंवला इनमें से प्रत्येक द्रव्य का छना हुआ चूर्ण डेढ़ २ पल लेवे । अब इन सब द्रव्यों को एकत्र मिलाकर लोहे के पात्र में डालें और धूपमें रखकर अदरकके रससे तीनवार घोटकर भावनादेवे फिर पत्थर के खरल में इस औषध को डालकर अदरक के रससे घोटकर बेर की गुठली के बराबर गोली बनालें और सुरक्षित रखें ॥ प्रातःकाल भोजन के आदि में तीनगोली खावे और ऊपरसे कांजी आदि पीवें।

इसमें मधुर रस, दूध, नारियल, विशेष करके न खावें। अन्य यथेष्ट भोजन करें। चावल, खटाई, कांजी खावें। इससे अम्लपित्त, विविध शूल, परिणामशूल, पाण्डुरोग, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदारोग, राजयक्ष्मा, पांच प्रकार की खांसी, मन्दाग्नि, अरुचि, प्लीहा, श्वास, आनाह, दारुण आमवात, इन रोगों की नाशनी यह प्रसिद्ध गुणवती गुडिका है ॥ १९—३१ ॥

अविपत्तिकरं चूर्णम् ।

त्रिकटु त्रिफलामुस्तं विडञ्चैव विडङ्गकम् ।
एला पत्रञ्च सर्वञ्च समभागं विचूर्णयेत् ॥ ३२ ॥
यावन्त्येतानि चूर्णानि लवङ्गं तत्समं भवेत् ।
सर्वचूर्णाद्द्विगुणितं त्रिवृच्चूर्णं प्रदापयेत् ॥ ३३ ॥

सर्वमेकीकृतं यावत् तावच्छर्करया ऽन्वितं ।
सर्वमेकीकृतं तत्तु स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥ ३४ ॥
भोजनादौ ततो ऽन्ते च मध्वाज्याभ्यामिदं शुभम् ।
शीततोयानुपानञ्च नारिकेलोदकं तथा ॥ ३५ ॥
ततो यथेष्टमाहारं कुर्य्यात् क्षीररसाशनः ।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु विबद्धमलमूत्रकम् ॥ ३६ ॥
अग्निमान्द्यभवान् रोगान् नाशयेच्चाविकल्पतः ।
बलपुष्टिकरञ्चैव शूलदुर्नामनाशनम् ॥ ३७ ॥
प्रमेहान् विंशतिञ्चैव मूत्राघातान् तथाऽश्मरीम् ।
अविपत्तिकरं चूर्णमगस्त्यमुनिभाषितम् ॥ ३८ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, मोथा, विडंग, इलायची, तेजपात, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला। लौंग का चूर्ण ग्यारह तोला। त्रिवी का चूर्ण चवालीस तोला। खांड छियासठ तोला। सब को मिला पीस कर घी से चिकने पात्र में रखे। इसे भोजन के आदि तथा अन्त में घी और शहद मिला कर खावे।

ऊपर से ठण्डा पानी या नारियल का जल पीवे । इसमें यथेष्ट आहार मांसरस, दूधादि का करे । इससे अम्लपित्त शीघ्र नष्ट होता है। मलमूत्र की रुकावट दूर होती है । अग्निमांद्य से होने वाले रोगों को निश्चित नाश करता है । बल और पुष्टि देता है । शूल तथा बवासीर का नाश करता है । बीस प्रकार के प्रमेह, मूत्राघात तथा पथरी इन सब को यह अगस्त्यमुनि का कहा हुआ अविपत्तिकर चूर्ण नाश करता है ॥ ३२—३८ ॥

इति अम्लपित्त चिकित्सा ॥

अथ विसर्प-विस्फोट-तन्तुकरोग-चिकित्सा ।

कालाग्निरुद्रो रसः ।

सूताभ्रकान्तलौहानां भस्म गन्धकमाक्षिकम् ।
वन्यकर्कोटकद्रावैस्तुल्यं मर्द्यं दिनावधि ॥ १ ॥
वन्यकर्कोटिकाकन्दे क्षिप्त्वा लिप्त्वा मृदा वहिः ।
भूधराख्ये पुटे पश्चाद्दिनैकं तद्विपाचयेत् ॥ २ ॥
दशमांशं विषं योज्यं माषमात्रन्तु भक्षयेत् ।
रसः कालाग्निरुद्रोऽयं दशाहेन विसर्पनुत् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३ ॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, कान्तलोहभस्म, शुद्धगंधक, स्वर्णमाक्षिकभस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर जंगली ककोड़े के रस से एक दिन मर्दन करे । फिर जंगली ककोड़े की जड़ के कंद में इस चूर्ण को भर कर बाहर से मिट्टी लीपकर सुखा कर भूधरयंत्र में एक दिन पकावे । फिर निकाल कर पीस कर इसमें दसवां भाग शुद्ध विष मिला कर रखे । इसे एक माषा भर लेकर पीपल के चूर्ण और शहद से खावें तो दस दिन में विसर्परोग नाश होजाता है । इसका नाम कालाग्निरुद्र रस है ॥१—३॥

प्रक्रियान्तरम् ।

पित्तनाशकभैषज्यं योगवाहिरसं सुधीः ।
कुष्ठोद्दिष्टाक्रियां सर्वामपि कुर्य्याद्भिषग्वरः ॥ ४ ॥

पित्तनाशक औषध तथा योगवाही रस और कुष्ठ रोग में कही हुई सभी क्रियायें विद्वान वैद्य करे तो विसर्प रोग नाश होता है॥४॥

विस्फोटकारिरसः ।

गुडूचीनिम्बजैः क्काथैः खदिरेन्द्रयवाम्बुना ।
कर्पूरत्रिसुगन्धिभ्यां युक्तं सूतं द्विवल्लकम् ।
विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥ ५ ॥

रससिन्दूर दो रत्ति ले उसमें कर्पूर, इलायची, दारचीनी, तेजपात का चूर्ण मिला कर गिलोय, नीम के क्काथ तथा खैर और इन्द्रजौ के क्काथ से सेवन करें तो विस्फोट को इतना शीघ्र दूर करता है जितना शीघ्र वायु बादलों को दूर करता है ॥५॥

स्नायुकारियोगः ।

गव्यं सर्पिस्त्र्यहं पीत्वा निर्गुण्डीस्वरसं त्र्यहम् ।
विविधं स्नायुकश्चोग्रं हन्त्यवश्यं न संशयः ॥ ६ ॥

गौका घी तीन दिन पीकर संभालु का स्वरस तीन दिन पीवें तो विविध प्रकार का नहरुवा रोग अवश्य नष्ट होता है ॥६॥

तन्तुकारियोगः ।

सप्तपर्णीशिफाकल्क–पानाद्वा लेपनात् तथा ।
मुषली मूलपानात्तु तन्तुकाख्यो विनश्यति ॥ ७ ॥

अथवा सतौना की जड़ का कल्क खाने से और लेपन करने से । अथवा मूसली की जड का रस वा क्काथ पीने से नहरुवा रोग नष्ट होता है ॥७॥

इति विसर्प-विस्फोट-तन्तुकरोग-चिकित्सा ॥

अथ मसूरिकारोगचिकित्सा।

दुर्लभो रसः।

अथ शुद्धस्य सूतस्य मूर्च्छितस्य मृतस्य च।
द्विबला पिप्पली धात्री रुद्राक्षघृतमाक्षिकैः।
पापरोगान्तको योगः पृथिव्यामेव दुर्लभः॥ १॥

शुद्ध पारे की भस्म अर्थात् रससिन्दूर, बला, श्वेत पुष्प की बला, पिप्पली आंवला, रुद्राक्ष इन सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग ले एकत्र करे। फिर उचित मात्रा में ले घी और शहद मिला कर चाटे तो यह पापरोगान्तक योग मसूरिका नाश करने में पृथिवी भर में दुर्लभ है॥ १॥

इति मसूरिका रोग चिकित्सा॥

अथ क्षुद्ररोगचिकित्सा।

क्षुद्ररोगेषु मतिमांस्तत्तदौषधयोगतः।
भस्मसूतं प्रयुञ्जीत तथाऽत्र योगवाहिकम्॥ १॥

क्षुद्र रोगों में विद्वान वैद्य रससिन्दूर को उस २ रोग के नाश करने वाले औषधों से मिला कर दें। अथवा योगवाही रसों को प्रयुक्त करे॥ १॥

इति क्षुद्ररोग चिकित्सा॥

अथ मुखरोगचिकित्सा।

चतुर्मुखोरसः।

मृतं सूतं मृतं स्वर्णं द्वाभ्यां तुल्यां मनः शिलाम्।
विमर्दयेच्च तैलेन चातसीसम्भवेन च॥ १॥
तद्गोलं वस्त्रतो बद्ध्वा लेपयेच्च समन्ततः।
अतसीफलकल्केन दोलायंत्रे त्र्यहं पचेत्।
उद्धृत्य धारयेद्वक्त्रे जिह्वा दन्तास्यरोगनुत्॥ २॥

रससिन्दूर, स्वर्णभस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला, शुद्ध मनसिल दो तोला, सब को एकत्र पीस कर अलसी के तेल से मर्दन करें। फिर इस गोले को वस्त्र में बांध कर चारों ओर से अलसीके बीजों के कल्कसे लेपन करें। फिर इसे दोलायन्त्रमें तीनदिन पकावें। फिर निकालकर मुंहमें रखें तो जीभ, दांत और मुखके रोग नाशहोतेहैं ॥१॥२॥

पार्व्वतीरसः।

पार्वती काशिसम्भूतौ दरदो मधुपुष्पकम्।
गुडूची शाल्मली द्राक्षा धान्यभूनिम्बमार्कवम् ॥ ३ ॥
तिलमुद्गपटोलश्च कूष्माण्डं लवणद्वयम्।
यष्टिका धान्यकं भस्म चान्तर्दग्धं समं समम् ॥ ४ ॥
मुख रोगं निहन्त्याशु पार्वतीरस उत्तमः।
पित्तज्वरं चिरं हन्ति तिमिरञ्च तृषामपि ॥ ५ ॥

शुद्धगंधक, शुद्ध पारा, शुद्धहिंगुल, महुए का फूल, गिलोय, सीम्बल, दाख, धान, चिरायता, भांगरा, तिल, मूंग, पटोलपत्र, पेठा, सेंधा नमक, धानियें की अन्तर्धूम की हुई भस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला कर खरल करे। इस पार्वती रससे शीघ्रही मुखरोग दूर होता है। पुराने पित्तज्वर को, तिमिररोग को तथा तृष्णा को शान्त करता है ॥ ३—५ ॥

मुखरोगहरी।

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणश्च शिलाजतु।
गोमूत्रेण विमर्द्याथ सप्तधाऽऽर्द्रद्रवेण च ॥ ६ ॥
जातीनिम्बमहाराष्ट्री रसैः सिध्यति पाकहा।
कणामधुयुता हन्ति मुखरोगं सुदारुणम् ॥ ७ ॥
गुञ्जाष्टकामिता तालु-गलौष्ठदन्त रोगनुत्।
महाराष्ट्रचश्वगन्धाभ्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥ ८ ॥
धारणात् सेवनाच्चैव हन्ति सर्वान् मुखामयान्।

सर्वास्यामयजित् सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ ६ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्धगधक एक तोला, कज्जली करे। शुद्ध शिलाजीत दो तोला मिलावे। फिर अदरक के रससे सातवार विमर्दन करे। फिर चमेली, नीम, गजपीपल इनके रससे भावना देकर रखे। इसे पीपली के चूर्ण और शहद से खावे तो दारुण मुख रोग दूर होता है ॥ इसकी मात्रा आठरत्ति लेकर खावे तो तालु,गल ओष्ठ तथा दन्त रोगों को नाश करता है ॥ और जलपीपली और असगंध इन दोनोंसे मुखको प्रतिसारण करे अर्थात् जीभको घिसे। इस औषध को मुखमें धारण करने से तथा सेवन करने से सब मुख के रोग दूर होते हैं ॥ सब मुखके रोगों को दूर करने के लिए रसपर्पटी को शहद से खाना चाहिये ॥ ६—६ ॥

पथ्यावटी।

पथ्या बालककुष्ठश्च गोमूत्रेण प्रसाधयेत् ।
एषा च वटिका हन्ति मुखदौर्गन्ध्यसन्ततिम् ॥

हरड़ का चूर्ण, सुगंधबाला का चूर्ण, कुष्ठ का चूर्ण सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग लें। सारे चूर्ण से आठगुणा गोमूत्र लेकर एकत्र करके पकावे। पकते २ जब गाढ़ा हो जावे तब गोली बांधे। इस गोली को खाने से मुखकी अनेक प्रकार की दुर्गन्ध नाश हो जाती है ॥ ६ ॥

इति मुखरोग चिकित्सा ॥

अथ कर्णरोगचिकित्सा ।

कफकेतुरसः ।

व्योषमिञ्जलवीजश्च शङ्खभस्म विषान्वितम् ।
मरीचसदृशं खादेत् कफकेतुं महारसम् ॥ १ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल, शुद्ध समुद्रफल, शंखभस्म, शुद्धविष प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर पीसकर पानी से गोल मिरच के समान गोली बनाले। इस कफ केतु महारस के खाने से कर्ण रोग शान्त होते हैं ॥ १ ॥

भैरवो रसः।

सूतं गन्धो विषश्चैव टङ्कणं सकपर्दकम्।
मरिचेन समायुक्तश्चार्द्रतोयेन भावितम् ॥ २ ॥
वन्हिमान्द्यं चामरोगं श्लेष्माणं ग्रहणीगदम्।
सन्निपातं तथा शोथं हन्ति श्रोत्रोद्भवं गदम् ॥ ३ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, शुद्धविष, शुद्ध सुहागा, कौड़ीभस्म, मिरच चूर्ण प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर अदरक के रससे भावित करें। इसे एकरत्ति प्रमाण खावें तो अग्निमांद्य, आम, श्लेष्मा, ग्रहणीरोग, सन्निपात तथा शोथ और कान के सब प्रकार के रोग शान्त होतेहैं॥२।३॥

विधानान्तरम्।

योगवाहिरसाः सर्वे प्रयोक्तव्या भिषग्वरैः।
कर्णरोगेषु सर्वेषु पीनसादिषु नित्यशः ॥ ४ ॥

योग्य वैद्यों को उचित है कि सभी योगवाही रसों को कर्ण रोगों में और पीनस आदि नाक के रोगों में दे॥ ४॥

इति कर्णरोग चिकित्सा ॥

अथ नासारोगचिकित्सा।

पञ्चामृतोरसः।

शुद्धसूतं समादाय गन्धभागद्वयं ततः।
त्रिभागं टङ्कणश्चापि विषं भागचतुष्टयम् ॥ १ ॥
पञ्चभागं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः।
शृङ्गवेररसैः पिष्ट्वा गुड़िका पञ्चरक्तिका ॥ २ ॥
अनुपानं हितं योज्यं सर्वरोगप्रशान्तये।
जलदोषोद्भवे रोगे महत्युग्रे जलोदरे ॥ ३ ॥
सन्निपातेषु रोगेषु नासा व्याधौ सपीनसे।
व्रणशोथे व्रणे चैव उपदंशे भगन्दरे ॥ ४ ॥

नाड़ीव्रणे ज्वरे चैव न खदन्तविषातुरे ।
पञ्चामृतरसो योज्यः सर्वरोगप्रशान्तये ॥ ५ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, दोनों की कज्जली करं। शुद्ध सुहागा तीन तोला, शुद्धविष चार तोला, मिरच चूर्ण पांच तोला, इन सबको पीस अदरक के रससे घोटकर पांचरत्ति प्रमाण की गोली बनालें। इसे रोगानुसार अनुपानों से दें तो सब रोग शान्त होते हैं। जलदोष से होनेवाले रोग, महान उग्र जलोदर सान्निपातज रोग, नासारोग, पीनस, व्रणशोथ, व्रण, उपदंश, भगन्दर नाडीव्रण, ज्वर, नख और दांतके विषसे रोगी हुए २ को पञ्चामृत रस दें तो इनसब रोगों की शान्ति होती है ॥ १—५ ॥

इति नासारोगचिकित्सा ॥

अथ नेत्ररोगचिकित्सा ।

नेत्राशनिरसः ।

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं माक्षिकञ्च रसाञ्जनम् ।
पातनायन्त्रसंशुद्धं गन्धकं नवनीतकम् ॥ १ ॥
पलप्रमाणं प्रत्येकं गृह्णीयाच्च विधानवित् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं वैद्यैः कुशलकर्मभिः ॥ २ ॥
ततस्तु भावना कार्या त्रिफलाभृङ्गराजकैः ।
ततः प्रक्षिप्य चूर्णञ्च पिप्पलीमूलयष्टिका ॥ ३ ॥
एला पुनर्नवा दारु पाठा भृङ्गं शठी वचा ।
उत्पलं चन्दनञ्चैषां श्लक्ष्णचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ४ ॥
माषमेकं प्रदातव्यं घृतश्रीमधुमार्दितम् ।
मर्दनं लौहदण्डेन पात्रे लौहमये दृढे ॥ ५ ॥
उष्णोदकञ्चानुपानं प्रयोक्तव्यं सुखावहम् ।
यावतो नेत्ररोगांश्च पानादेव विनाशयेत् ॥ ६ ॥

सरक्ते रक्तपित्ते च रक्ते चक्षुःस्रुतेऽपि च।
नक्तान्ध्ये तिमिरे काचे नीलिकापटलार्बुदे ॥ ७ ॥
अभिष्यन्देऽधिमन्थे च पिष्टे चैव चिरन्तने।
नेत्ररोगेषु सर्वेषु वातपित्तकफेषु च।
युञ्जीत तान् निहन्त्येव वृत्तमिन्द्राशनिर्यथा ॥ ८ ॥

अभ्रकभस्म, ताम्र भस्म, लौहभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, रसौत, शुद्ध आंवलासार गंधक, इनमें से प्रत्येक द्रव्य एक २ पलले। सबको एकत्र पीसकर त्रिफला के क्वाथ और भांगरे के स्वरस की भावना देवे। फिर सुखाकर पिप्पलामूल, मुलट्ठी, इलायची, पुनर्नवा, दारु हल्दी, पाठा, दारचीनी, कचूर, बच, नीलोत्पल, लालचन्दन प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ माषा डाले। फिर लौहेके खरल में, लोहदण्ड से सब द्रव्यों को एकत्रकर घी और कमलों का शहद मिलाकर मर्दन करे और गोली बना रखे। इसे खाकर गर्म पानी पीवे तो इसे खाने से ही सब प्रकार के नेत्ररोग दूर होजाते हैं॥ लाल आंख होने पर, रक्तपित्त में,आंख के बहने पर, अन्धराता,तिमिर,काच, नीलिका पटल, अर्बुद, अभिष्यन्द, अधिमन्थ, पुराने पिष्टरोगमें, सब प्रकारके नेत्र रोग में, जो वात, पित्त कफ से उत्पन्न होते हैं। इन सबको ऐसे नाश करता है जैसे बिजली वृत्तको ॥ १—८ ॥

नयनामृत लौहम्।

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गी शठी रास्ना महौषधम्।
द्राक्षा नीलोत्पलं चैव काकोलीमधुयष्टिकम् ॥ ९ ॥
वाट्यालं केशराजश्च कण्टकारीद्वयं पलम्।
लौहाभ्रयोः पलं दत्वा वक्ष्यमाणेन भावयेत् ॥ १० ॥
त्रिफलायाश्च तोयेन भृङ्गराजरसेन वा।
भावयित्वा वटी कार्य्या बदरास्थिनिभा शुभा।
यावतो नेत्ररोगांश्च निहन्यान्नात्र संशयः ॥ ११ ॥

सोंठ, मिरच पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, काकड़ासिंगी, कचूर रास्ना, सोंठ, मुनक्का, नीलोफर काकोलो, मुलट्ठी, श्वेतबला, केशराज, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लें। लौहभस्म एक पल, अभ्रकभस्म एक पल लें। सबको मिला मर्दनकर त्रिफला के क्वाथ से तथा भांगरे के रस से भावना देकर बेर की गुठली के समान गोली बनावे इसे खाने से सबप्रकार के नेत्ररोग दूर होते हैं॥ ६-११॥

क्षतशुक्लहरो गुग्गुलुः।

अयः सयष्टी त्रिफलाकणानां चूर्णानि तुल्यानि पुरेण नित्यम्।
सर्पिर्मधुभ्यां सह भक्षितानि शुक्लानि काचानि निहन्ति शीघ्रम्॥१२॥

लौहभस्म, मुलट्ठी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, पीपल, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला, शुद्धगुग्गुल छः तोला ले। सबको एकत्र पीस घी और शहद मिलाकर खावें तो शुक्लरोग तथा काचरोग शीघ्र दूर होता है॥ १२॥

तिमिरहर लौहम्।

त्रिफलापद्मयष्ट्याह्व–युक्तं सायं निषेवितम्।
लौहं तिमिरकं हन्ति सुधांशुस्तिमिरं यथा॥ १३॥

हरड़, बहेड़ा, आंवला, कमल, मुलट्ठी, इनका चूर्ण प्रत्येक एक २ तोला, लौहभस्म पांच तोला। सबको एकत्र पीसकर सायंकाल इसे सेवन करे तो तिमिर रोग को इस प्रकार नाश करता है जैसे चांद अन्धकार को॥ १३॥

इति नेत्ररोग चिकित्सा॥

अथ शिरोरोगचिकित्सा।

रसचन्द्रिकावटी।

त्रैलोक्यविजयावीजं वीजमुन्मत्तकस्य च।
कण्टकारीवीजकञ्च इङ्गलं वीजमेव च॥ १॥
वीजञ्च वृद्धदारस्य समौ गन्धकपारदौ।
आर्द्रकैर्वटिका कार्य्या कलायपरिमाणतः॥ २॥

एषा तोयानुपानेन प्रातः खाद्या हिताशिना ।
चिरजं सर्वजश्चैव शिरोरोगं सुदारुणम् ॥३॥
आमवातं श्लेष्मरोगं मन्यास्तम्भं गलग्रहम् ।
ग्रहणीं श्लीपदं हन्ति ह्यन्त्रवृद्धिं भगन्दरम्॥४॥
कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसार्शोगुदामयान् ।
वासुदेवेन कथिता वटिका रसचन्द्रिका ॥५॥

शुद्धभांग के बीज, शोधित धतूरे के बीज, कण्टकारी के बीज, समुद्र फल शुद्ध, शुद्धविधारे के बीज, शुद्धपारा, शुद्धगंधक, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। फिर अदरक के रससे घोटकर मटर के समान गोली बनाले। इसे पथ्य सेवी पुरुष प्रातःकाल जल से खावे तो पुराना, त्रिदोषज भयंकर शिरोरोग नष्ट होता है। आमवात, श्लेष्मरोग, मन्यास्तम्भ, गलग्रह, ग्रहणी, श्लीपद, अन्त्रवृद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पाण्डु, पीनस, बवासीर, गुदाके रोग, इन सब रोगों को दूर करती है। यह रसचन्द्रिकावटी वासुदेव ने कही थी ॥ १—५ ॥

शिरोवज्र रसः ।

पलं सूतं पलं गन्धःपलं लौहं पलं रवेः ।
गुग्गुलोः पलचत्वारि तदर्द्धं त्रिफलारजः ॥६॥
यष्टीमधु कणाशुण्ठी गोक्षुरं क्रिमिनाशनम् ।
तालकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥७॥
क्वाथेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभावयेत् ।
घृतयोगेन कर्त्तव्या माषैकप्रमिता वटी ॥ ८ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा ।
वातिकीं पैत्तिकीञ्चैव श्लैष्मिकीं सान्निपातिकीम् ॥९॥
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रमुक्तमिवासुरम् ।

शिरोवज्ररसोनाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥१०॥

शुद्ध पारा एक पल, शुद्धगंधक एक पल दोनों की कज्जली करे। फिर लौहभस्म एकपल, ताम्रभस्म एक पल, शुद्ध गुगुल, चार पल, त्रिफला का चूर्ण मिलित दोपल, मुलहठी, पीपली, सोंठ, गोखरु विडंग, दशमूल के द्रव्य, इन सब में से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक२ तोला लेकर सबको इकट्ठा कर पीसे। और फिर दशमूल के क्वाथसे सबको भावना देवे। फिर घृत से मिलाकर एक २ माषा भरकी गोली बनाले। इन गोलो को बकरी के दूधसे, या शहद से या गौके दूध से खावें तो वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक तथा सान्निपातिक,शिर की पीड़ा को शीघ्र दूर करता है। जैसे असुरों को वज्र नाश करता है॥ यह शिरोवज्रनामक रस चन्द्रनाथ ने कहा है ॥ ९—१० ॥

चन्द्रकान्तरसः

मृतसूताभ्रकं तीक्ष्णं ताम्रंगन्धं समं समम् ।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं ततस्तु माषमात्रकम्॥ ११ ॥
मधुना मर्दितं सेव्यं लौहपात्रे दिनेदिने ।
सूर्य्यावर्त्तादिकान् तूर्णं शिरोरोगान् विनाशयेत् ॥१२॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म,ताम्रभस्म, शुद्ध गंधक प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर पीसें। फिर सबको थोहर के दूध से एकदिन मर्दन करलें। एक माषाभर लेकर शहद से लोहपात्र में मर्दन करके नित्य खावें तो सूर्यावर्त्त आदि शिरोरोग शीघ्र नाश होते हैं। (मात्रा एकरत्ति दें) ॥ ११ ॥ १२ ॥

महालक्ष्मी विलासः ।

लौहमभ्रं विषं मुस्तं फलत्रयकटुत्रयम् ।
धुस्तूरं वृद्धदारञ्च वीजमिन्द्राशनस्य च ॥१३॥
द्वयं गोक्षुरकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
एतत् सर्वं समंग्राह्यं रसे धुस्तूरकस्य च ॥१४॥
भावयित्वा वटी कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।
महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनिवारकः ॥१५॥

लौहभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्धविष, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच, पीपल, शुद्धधतूरा, शुद्ध विधारे के बीज, शुद्ध भांगके बीज, गोखरु, बड़ा गोखरु, पिप्पलीमूल, इन सब मेंसे प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लेकर धतूरे के रसमें भावना देकर दोरत्ति प्रमाण की गोली बनालें। यह महालक्ष्मीविलास सन्निपात को तथा सन्निपातज, शिररोग को दूर करता है ॥ १३—१५ ॥

इति शिरोरोग चिकित्सा ॥

अथ प्रदररोगचिकित्सा ।

प्रदरान्तकलौहम् ।

हरितालं लौहताम्रे वङ्गमभ्रं वराटिका ।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥ १ ॥
चविका पिप्पली शङ्खं वचा हवुषपाकलम् ।
शठी पाठा देवदारु एला च वृद्धदारकम् ॥ २ ॥
एतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तां घृतेन भक्षयेत् पुनः ॥ ३ ॥
रक्तं श्वेतं हन्ति पीतं नीलं प्रदरदुस्तरम् ।
कुक्षिशूलं कटीशूलं योनिशूलञ्च सर्वजम् ॥ ४ ॥
मन्दाग्निमरुचिं पाण्डुं कृच्छ्रश्वासञ्च कासनुत् ।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं रजोवर्णप्रसादनम् ॥ ५ ॥

शुद्ध हड़ताल, लौहभस्म, ताम्रभस्म, बंगभस्म, अभ्रक भस्म, कौडीभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चीता, वायविडंग, पांचों नमक, चव्य, पीपल, शंखभस्म, बच, हवुषा, कूठ कचूर, पाठा, देवदार, इलायची, विधारा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें। सबको मिला पीसकर गोली बनालें। इसे खांड, शहद और घी मिलाकर खावें तो भयंकर रक्तप्रदर, श्वेतप्रदर, पीतप्रदर, तथा नीलप्रदर को दूर करता है। तथा कुक्षिशूल, कटीशूल, सब

प्रकार का योनिशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, पाण्डु, कृच्छ्रश्वास, तथा कास को नष्ट करता है। तथा आयुको बढ़ाता है, पुष्टि देता है, बल बढ़ाता है। तथा रजके रंगको शुद्ध करता है॥ १—५॥

प्रदरान्तको रसः।

शुद्धसूतं तथा गन्धः गन्धतुल्यश्च रूप्यकम्।
खर्परञ्च वराटञ्च शाणमानं पृथक् पृथक्॥ ६॥
तोलकत्रितयञ्चैव लौहचूर्णं क्षिपेत् सुधीः।
दिनैकं कन्यकानीरैः मर्दयेच्च भिषग्वरः।
असाध्यं प्रदरं हन्ति भक्षणात् नात्र संशयः॥ ७॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, चांदीभस्म, खपरिया भस्म, कौड़ीभस्म प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण ले। पारा गंधक की कज्जली करे। फिर अन्य द्रव्य इसमें मिलादे और लौहभस्म तीन तोला इसमें मिलादे। सबको खरल कर एकदिन घीकुमार के रससे घोटे। इसके सेवनसे असाध्य प्रदर भी दूर होता है इसमें संशय नहीं॥ ६॥ ७॥

मधुकादि चूर्णम्।

यष्टीमधुनिशाचूर्णतोलकेन समन्वितम्।
वङ्गभस्मार्कपत्रस्य रसेनाप्लाव्य पीयते।
प्रातः प्रातः प्रतिदिनं प्रदरं हन्ति दुस्तरम्॥ ८॥

मुलहठी, हल्दी दोनों को समभाग लेकर, मिश्रित एक तोला चूर्ण लें उसमें बंगभस्म एकरत्ति मिलाकर आकके पत्तों के रसके अनुपान से नित्य प्रातःकाल पीवे तो भयंकर प्रदर भी नाश होता है॥ ८॥

पुष्कर लेहः।

रसाञ्जनं शुभा भृङ्गी चित्रकं मधुयष्टिकम्।
धान्य तालीशगायत्री-द्विजीरं त्रिवृता बला॥ ९॥
दन्ती त्र्यूषणकश्चापि पलार्द्धश्च शिलाजतु।
चतुः पलं माक्षिकस्यामलस्य च क्षिपेत् ततः॥ १०॥

जातीकोषलवङ्गश्च कक्कोलं मृद्वीका ऽपि च ।
चातुर्जातकखर्जूरं कर्षमेकं पृथक् पृथक् ॥ ११ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयित्वा च स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ।
एष लेहवरः श्रीदः सर्वरोगकुलान्तकः ।
यत्र यत्र प्रयोज्यः स्यात् तत्तदामयनाशनः ॥ १२ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं देशकालानुसारतः ।
सर्वोपद्रवसंयुक्तं प्रदरं सर्वसम्भवम् ॥ १३ ॥
द्वन्द्वजं चिरजञ्चैव रक्तपित्तं विनाशयेत् ।
कासश्वासाम्लपित्तञ्च क्षयरोगमथापि वा ॥ १४ ॥
सर्वरोगप्रशमनो बलवर्णाग्निवर्द्धनः ।
पुष्कराख्यो लेहवरः सर्वत्रैवोपयुज्यते ॥ १५ ॥

शुद्ध रसौंत, बंशलोचन, काकड़ासिंगी, चीता, मुलट्ठी, धनिया तालीशपत्र, कत्था, श्वेतजीरा, काला जीरा, त्रिवी, बला, दन्तीमूल, सोंठ, मिरच, पीपल, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण आधा २ पल ले। और शहद तथा आंवले का चूर्ण चार २ पल डाले। तथा जावित्री, लौंग, अङ्कोल, मुनक्का, इलायची, दारचीनी, तेजपात, नागकेशर, खजूर, इनमें से प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष ले सब कूट पीस मिला पूर्वोक्त शहद मिलाकर चिकने पात्र में रखे। यह पुष्कर लेह कान्ति-दायक तथा सर्वरोग नाशक है। जहां २ देंगे उस २ रोग को नाश करता है। देशकालानुसार इसके साथ अनुपान देना चाहिये। सर्व उपद्रवों से संयुक्त त्रिदोषज प्रदर, द्वन्द्वजप्रदर, पुरानेप्रदर तथा पुराने रक्तपित्त, रोगको यह नाश करता है। तथा कास, श्वास, अम्लपित्त और क्षयरोग को यह नाश करता है। अन्य सभी रोगों को नाश करता है। तथा बल वर्ण और अग्नि को बढ़ाने वाला है। यह उत्तम पुष्करलेह सर्वत्रही उपयुक्त किया जाता है ॥ ६—१५ ॥

धात्र्यादि चूर्णम् ।

धात्री च पथ्या च रसाञ्जनश्च विचूर्ण्य सर्वं सजलं निपीतम् ।

अनन्तरक्तस्रवमुग्रवेगं निवारयेत् सेतुरिवाम्बुवेगम् ॥ १६ ॥
रक्तपित्तहरं सर्वं प्रदरे नूतने तथा ।
रक्तातीसारकथितं सर्वमत्र प्रयोजयेत् ॥ १७ ॥

आंवला, हरड़, रसौंत तीनों का चूर्ण, समभाग ले जलसे पीवे तो अनन्तरक्त भी जाता हो तो रक्त को रोककर यह रक्तप्रदर को शान्त करता है। जैसे पानी के वेग को पुल रोक देता है ॥ १६ ॥ नये प्रदर को शान्त करने के लिये सबकार्य रक्तपित्त को नाश करने वाले करने चाहियें। तथा रक्तातीसार को नाश करने वाले अन्य सब उपाय भी रक्तप्रदर में करने चाहियें ॥ १७ ॥

॥ इति प्रदररोगचिकित्सा ॥

अथ योनिव्यापच्चिकित्सा ॥

समस्तं वाताजित् कर्म योनिव्यापत्सु शस्यते ।
क्षालनस्वेदलेपांश्च वरानीरेण कारयेत् ॥ १ ॥
प्रक्षालयेद्भगं नित्यं पथ्यामलकवल्कलैः ।
वृद्धाऽपि कामिनी नित्यं बालावत् कुरुते रतिम् ॥ २

योनिव्यापत् रोगमें समस्त कर्म वातको जीतनेवाले करने चाहियें त्रिफला के जलसे योनि को धोना तथा स्वेदन और लेपन करना चाहिये ॥ १ ॥ हरड़ तथा आंवले के फलके क्वाथ से नित्य भगको धोने से बूढ़ी स्त्री भी बाला के समान रति कर सकती है ॥ २

इति योनिव्यापच्चिकित्सा ॥

अथ सूतिकारोगचिकित्सा ।

सूतिकारिरसः ।

रसगन्धककृष्णाभ्रं तदर्द्धं मृतताम्रकम् ।
चूर्णितं मर्दयेद् यत्नाद्धेकपर्णीरसेन च ॥ १ ॥
छायाशुष्का वटी कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः ।

क्षीरत्रिकटुना युक्ता सूतिकाऽऽतङ्कनाशिनी ॥
ज्वरं तृष्णारुचिश्वासं शोथं हन्ति न संशयः ॥ २ ॥

शुद्ध पारा, तथा शुद्धगंधक, कृष्णाभ्रक की भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला लें। ताम्रभस्म आधा तोला लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। फिर मण्डूकपर्णी के रससे घोटकर छाया में सुखाकर दोरत्ति भरकी गोली बनावें। इस गोली को त्रिकटु के चूर्ण से मिलाकर खावें और ऊपर से दूध पीवें तो ज्वर, तृष्णा, अरुचि, श्वास, शोथ, इन सबको नाश करती है ॥ १ ॥ २ ॥

सूतिकाविनोदरसः ।

रसगन्धकतुत्थञ्च त्र्यहं जम्बीरमर्दितम् ।
त्रिभावितं त्रिकटुना देयं गुञ्जाचतुष्टयम् ।
गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वराजीर्णेषु योजयेत् ॥ ३ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध नीलाथोथा, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। पहले पारागंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिला जम्बीरी नींबू के रससे तीनदिन घोटे। तथा त्रिकुटे के क्वाथसे तीनवार भावना देकर चाररत्ति प्रमाण की गोली बनावे। तो गर्भिणी के शूल, कब्ज़, ज्वर, तथा अजीर्णरोग नष्ट होते है ॥ (मात्रा आधीरत्तिदे)॥ ३॥

गर्भचिन्तामणि रसः ।

चिन्तामणिरसे देयं तुत्थस्थाने सुवर्णकम् ॥ ४ ॥

चिन्तामणि रसमें नीलथोथे के स्थान में स्वर्णमाक्षिकभस्म डाले तो गर्भचिन्तामणि रस कहाता है ॥ ४ ॥

बृहत्सूतिकाविनोदरसः ।

शुण्ठ्याः भागो भवेदेको द्वौ भागौ मरिचस्य च ।
पिप्पल्याश्च त्रिभागं स्यादर्द्धभागश्च व्योमकम् ॥ ५ ॥
जातीकोषस्य भागौ द्वौ द्वौ भागौ तुत्थकस्य च ।
सिन्धुवारजलेनैव मर्दयेदेकयामतः ।
मधुना सह भोक्तव्यः सूतिकाऽऽतङ्कनाशनः ॥ ६ ॥

सोंठ का चूर्ण एक भाग, मिरचचूर्ण दोभाग, पिप्पली चूर्ण तीनभाग, अभ्रकभस्म आधाभाग, जावित्रीचूर्ण दोभाग, शुद्धनीलाथोथा दो भाग। सबको पीस संभालु के पत्तों के रससे एक पहर खरल करे। और मधुके साथ खावे तो सूतिका रोग नाश होता है ॥५॥६॥

अपरसूतिकारिरसः।

टङ्कणं मूर्च्छितं सूतं गन्धकः हेम तारकम्।
जातीफलं तथा कोषं लवङ्गैले च धातकी ॥ ७ ॥
वत्सकेन्द्रयवं पाठा शृङ्गीविश्वाऽजमोदिकाः।
गुडी प्रसारणीनीरैश्चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ॥ ८ ॥
भक्षयेत्तद्रसैः प्रातः सूतिका ऽऽतङ्कशान्तये।
जीर्णज्वरं हन्ति शोथं ग्रहणीप्लीहकासनुत् ॥ ९ ॥

शुद्ध सुहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, स्वर्णभस्म, चांदीभस्म, जायफल, जावित्री, लौंग, इलायची, धायके फूल, कुटज, इन्द्रजौ, पाठा, काकड़ासिंगी, सोंठ, अजवायन, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करे। फिर प्रसारणी के रससे खरल करके चाररत्ति भरकी गोली बनाले। और प्रसारणी के रससे खावे तो सूतिका रोग नाश होता है। जीर्णज्वर, शोथ, ग्रहणी, प्लीहा, तथा खांसी भी इससे दूर होती है ॥ ७—९ ॥

सूतिकाघ्नोरसः।

रसगन्धकलौहाभ्रं जातीकोषं सुवर्णकम्।
समांशं मर्दयेत् खल्ले छागीदुग्धेन पेषयेत् ॥ १० ॥
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः।
ज्वरातीसाररोगघ्नः सूतिकाऽऽतङ्कनाशनः।
सूतिकाघ्नो रसो नाम ब्रह्मणा परिकीर्त्तितः ॥ ११ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, लौहभस्म, अभ्रकभस्म, जावित्री, चूर्ण सुवर्णभस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। फिर पारा गंधक की कज्जली

करके अन्य द्रव्य उसमें मिला देवे। और बकरी के दूधसे पीसकर दोरत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसके सेवन से ज्वरातिसार और सूतिका रोग नाश होते हैं। यह सूतिकाघ्नरस ब्रह्माजीने प्रकाश किया था ॥ १० ॥ ११ ॥

सूतिकान्तको रसः।

रसाभ्रगन्धकव्योषं सुवर्णमाक्षिकं विषम्।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रक्तिचतुष्टयम् ॥ १२ ॥
सूतिकाग्रहणीरोगं वन्हिमान्द्यञ्च नाशयेत्।
अतिसारञ्च शमये दपि वैद्यविवर्जितम्।
कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ १३ ॥

शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिरच, पीपल, स्वर्णमाक्षिक भस्म, शुद्धविष, सब द्रव्यों के चूर्ण को समभाग ले। पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल कर चाररत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इसे सेवन करने से सूतिकारोग ग्रहणीरोग, अग्निमांद्य नाश होता है। सब वैद्योंसे छोड़ेहुए अतिसार रोग को ठीक करता है। तथा कास, श्वास अतिसारको ठीक करता है। तथा उत्तम बाजीकरण है ॥ १२—१३ ॥

गर्भचिन्तामणि रसः।

जातीफलं टङ्कणञ्च व्योषं दैत्येन्द्ररक्तकम्।
तच्चूर्णं समभागेन मर्दितं प्रहरद्वयम् ॥ १४ ॥
जम्बीररसयोगेन वटीं कुर्य्याद्विचक्षणः।
गुञ्जाद्वयप्रमाणान्तु खलु वैद्यः प्रयत्नतः ॥ १५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव भक्षयेदुष्णवारिणा।
निहन्ति सर्वरोगञ्च भास्करास्तिमिरं यथा ॥ १६ ॥

जायफल, सुहागा, सोंठ, मिरच, पीपल, शुद्धहिंगुल, प्रत्येक द्रव्य समभाग लेकर दो पहरों तक मर्दन करके जम्बीर रससे घोटकर दो

ति भरकी गोली बनावे। इसे अदरक के रससे खावे और गरम पानी पीवे तो सब रोगों को ऐसे नाश करती है जैसे सूर्यदेव अन्धकार को नाश करते हैं ॥ १४-१६ ॥

अपरगर्भचिन्तामणिरसः।

रसं तारं तथा लौहं प्रत्येकं कर्षमानतः।
कर्षत्रयं तथा चाभ्रं कर्पूरं वङ्गताम्रकम् ॥ १७ ॥
जातीफलं तथा कोषं गोक्षुरश्च शतावरी।
बलाऽतिबलयोर्मूलं प्रत्येकं तोलकं शुभम् ॥ १८ ॥
वारिणा वटिका कार्य्या द्विगुञ्जाफलमानतः।
सन्निपातं निहन्त्याशु स्त्रीणाञ्चैव विशेषतः।
गर्भिण्या ज्वरदाहञ्च प्रदरं सूतिकाऽऽमयम् ॥ १९ ॥

शुद्धपाराभस्म, चांदिभस्म, लौहभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष ले। अभ्रक भस्म तीनकर्ष ले। कपूर, बंगभस्म, ताम्रभस्म, जायफल जावित्री, गोखरू, शतावर, बलाकी जड़, अतिबला की जड़, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला लें। सबको एकत्र पीसकर जलसे घोट कर दोरत्ति भरकी गोली बनावें। तो यह सन्निपात को, विशेष करके स्त्रियों के सन्निपात को दूर करता है। तथा गर्भिणी स्त्री के ज्वर, दाह, प्रदर रोग तथा सूतिका रोगको दूर करता है ॥ १७-१९ ॥

बृहद्गर्भचिन्तामणिरसः।

सूतं गन्धः तथा स्वर्णं लौहं रजतमाक्षिके।
हरितालं वङ्गभस्माप्यभ्रकं समभागिकम् ॥ २० ॥
भावना खलु दातव्या रसैरेषां पृथक् पृथक्।
ब्राह्मी वासाभृङ्गराज-पर्पटीदशमूलकैः ॥ २१ ॥
सप्तधा भावयेद्वैद्यो गुञ्जामानां वटीं चरेत्।
गर्भचिन्तामणिरयं पूर्ववद्गुणकारकः ॥ २२ ॥

शुद्धपारा, शुद्धगंधक, स्वर्णभस्म, लौह भस्म, चांदी भस्म,

स्वर्णमाक्षिकभस्म, शुद्ध हड़ताल, बंगभस्म, अभ्रक भस्म, प्रत्येक द्रव्य समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर पीसलें। फिर ब्राह्मी, बासा, भांगरा, पित्तपापड़ा, दशमूल, इनके रससे पृथक् २ सात२ भावना देकर एकरत्ति प्रमाण की गोली बनावे। यह गर्भ चिन्तामणि रस पूर्वोक्त गुण करता है ॥ २०—२२ ॥

गर्भविनोदरसः।

देयं त्रिभागं त्रिकटु चतुर्भागञ्च हिङ्गुलम्।
जातीकोषं लवङ्गञ्च प्रत्येकञ्च त्रिकार्षिकम् ॥ २३ ॥
सुवर्णमाक्षिकस्यापि पलार्द्धं प्रक्षिपेद् बुधः।
जलेन मर्दयित्वाऽथ चणमात्रा वटी कृता।
निहन्ति गर्भिणी रोगं भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४ ॥

सोंठ, मिरच, पीपल तीन २ कर्ष, हिंगुल शुद्ध चारकर्ष, जावित्री तीनकर्ष, लौंग तीन कर्ष, स्वर्णमाक्षिक भस्म आधा पल सबको पीस जलसे चने के समान गोली बनावे। यह गर्भिणीरोग को ऐसे दूर करता है जैसे सूर्य अन्धकार को ॥ २३ ॥ २४ ॥

सूतिकाहररसः।

लवङ्गं रसगन्धौ च यवक्षारं तथाऽभ्रकम्।
लौहं ताम्रं सीसकञ्च पलमानं समाहरेत् ॥ २५ ॥
जातीफलं केशराजं भृङ्गैलामुस्तकं वरा।
धातकीन्द्रयवं पाठा शृङ्गी विल्वञ्च बालकम् ॥ २६ ॥
कर्षमानञ्च सञ्चूर्ण्य सर्वमेकत्र कारयेत्।
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ २७ ॥
गन्धालिकापत्ररसैरनुपानं प्रदापयेत्।
सर्वातीसारशमनः सर्वशूलनिवारणः ॥ २८ ॥
सूतिका शोथपाण्डुत्व-सर्वज्वरविनाशनः।
सूतिकाहरनामाऽयंरसः परमदुर्लभः ॥ २९ ॥

लौंग शुद्धपारा शुद्ध गंधक, यवक्षार, अभ्रक भस्म, लौहभस्म, ताम्रभस्म, सीसक भस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ पल लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर जायफल केशराज, भांगरा, इलायची, मोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, धायके फूल इन्द्रजौं, पाठा, काकड़ासिंगी, बिल, सुगंधबाला, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष लेकर सबको एकत्रकर पीसकर जलसे बेरकी गुठली बराबर गोली बनावें। इसे गंधप्रसारणी के रसके अनुपान से खावें तो सब प्रकार का अतिसार नाश होता है। तथा सब प्रकार का शूल नाश होता है। सूतिका, शोथ, पाण्डु, तथा सर्वज्वर इससे नाश होते हैं। यह सूतिकाहर नामक रस परम दुर्लभ है॥ २५-२९॥

महाऽभ्रवटी।

अभ्रकं पुटितं ताम्रं लौहं गन्धक पारदम्।
कुनटी टङ्कणं क्षारं त्रिफला च पलं पलम्॥ ३०॥
गरलञ्च तथा माष-चतुष्कञ्चैव चूर्णितम्।
तत् सर्वं भावयेदेषां रसैः प्रत्येकशः पलैः॥ ३१॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याटरूषकस्य क्रमेण तु।
रसैस्ताम्बूलवल्ल्याश्च दलोत्थैर्भावितं पृथक्॥ ३२॥
द्रवे किञ्चित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत्।
सर्वातीसारशमनं सर्वशूलनिवारणम्॥ ३३॥
सूतिका शोथपाण्डुत्व-सर्वज्वरविनाशनम्।
नाशयेत् सूतिकाऽऽतङ्कं वृत्तमिन्द्राशनिर्यथा॥ ३४॥

अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, लौहभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध मनासिल, शुद्ध सुहागा, यवक्षार, हरड़, बहेड़ा, आंवला, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ पल लें। तथा शुद्धविष चार माशे लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें फिर उसमें ग्रीष्मसुन्दरक, बांसा, इनके एक २ पल रससे क्रमशः भावना देवे। फिर पानके रससे भावना देवे। जब कुछ जलीयांश

रह जाये तब इसमें मरिच का चूर्ण एक पल डाले । और घोटकर सुखाकर रखे । इसके सेवन से सब प्रकार के अतीसार, सर्वशूल, सूतिका, शोथ, पाण्डुरोग, तथा सर्व ज्वर नाश होते हैं । यह सूतिका रोग को ऐसे नाश करता है जैसे वृक्ष को बिजली ॥ ३०—३४॥

अपरमहाऽभ्रवटी ।

मृतमभ्रञ्च लौहञ्च कुनटी ताम्रकं तथा ।
रसगन्धकटङ्गञ्च यवक्षारफलत्रिकम् ॥ ३५ ॥
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यमूषणं पञ्चतोलकम् ।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं प्रत्येकेन विभावयेत् ॥ ३६ ॥
ग्रीष्मसुन्दरसिंहास्य—नागवल्ल्या रसेन च ।
चतुर्गुञ्जाप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक् ।
योजयेत् सर्वथा वैद्यः सूतिकारोगशान्तये ॥ ३७ ॥

अभ्रकभस्म, लौहभस्म, शुद्धमनासिल, ताम्रभस्म, शुद्धपारा, शुद्ध गंधक, सुहागा, यवक्षार, हरड़, बहेड़ा, आंवला, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ तोला ले । मिरच चूर्ण पांच तोला ले । पहले पारा गंधक की कज्जली करे फिर अन्यद्रव्य मिलाकर ग्रीष्मसुन्दरक, बांसा, पान इन सबके रससे पृथक् २ भावना दें और चार रत्ति प्रमाण की गोली बनावे । इसे सेवन करने से सूतिकारोग नाश होताहै॥ ३५-३७॥

रसशार्दूलः ।

अभ्रं ताम्रं तथा लौहं राजपट्टं रसं तथा ।
गन्धटङ्गमरीचञ्च यवक्षारं समांशकम् ॥ ३८ ॥
तथाऽत्र तालकञ्चैव त्रिफलायाश्च तोलकम् ।
तोलकञ्चामृतञ्चैव षड्गुञ्जाप्रमिता वटी ॥ ३९ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्यापि नागवल्लीरसेन च ।
भावयेत् सप्तधा हन्ति ज्वरं कासाङ्गसंग्रहम् ।
सूतिकाऽऽतङ्कशोथादि—स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ ४० ॥

अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, लौह भस्म, कान्तपाषाण भस्म, शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, सुहागा, मिरच, यवक्षार, शुद्ध हड़ताल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, शुद्धविष, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। पहले पारा गंधक की कज्जली कर फिर सभी द्रव्य मिलाकर चूर्ण करे। फिर ग्रीष्मसुन्दरक और पानके रससे सातवार भावित करके छः रत्ति प्रमाण की गोली बनावे। इससे ज्वर, खांसी, अंगग्रह, सूतिकारोग, शोथ, स्त्रीरोग ये सब नष्ट होते हैं ॥ ३८—४० ॥

महारसशार्दूलः ।

अभ्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धश्च पारदः ।
शिला टङ्कं यवक्षारः त्रिफलायाः पलं पलम् ॥४१॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धतोलकसम्मितम् ।
त्वगेला पत्रकश्चैव जातीकोषलवङ्गकम् ॥ ४२ ॥
मांसी तालीशपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाञ्जनम् ।
एषां द्विकार्षिकं भागं देयश्चापि विचक्षणैः ॥ ४३ ॥
द्रवे किंचित् स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
भावना च प्रदातव्या पूर्वोक्तेन रसेन च ॥ ४४ ॥
निहन्ति विविधान् रोगान् ज्वरान् दाहान् वमिं भ्रमिम् ।
तथाऽतिसारकश्चैव वान्हिमांद्यमरोचकम् ।
विशेषाद्गर्भिणीरोगं नाशयेदाचिरेण च ॥ ४५ ॥

अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, स्वर्णभस्म, शुद्ध गंधक, शुद्धपारा, शुद्ध मनसिल, शुद्ध सुहागा, यवक्षार, हरड़, बहेड़ा, आंवला, प्रत्येक द्रव्य एक २ पल ले। शुद्धविष आधा तोला, इलायची, दारचीनी, तेजपात, जावित्री, लौंग, जटामांसी, तालीशपत्र, स्वर्णमाक्षिक भस्म रसौत, प्रत्येक द्रव्यका चूर्ण दो २ कर्ष लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्यद्रव्य मिलाकर पीसलें। फिर पूर्वोक्त ग्रीष्मसुन्दरक तथा पान के रसके साथ सात २ वार भावना देवे। जब

द्रवकुछ शेष रह जावे तब मिरच का चूर्ण एकपल डालदेवे। फिर घोटकर गोली बनाकर रखे। यह विविधरोग, ज्वर, दाह, वमन, भ्रम, अतिसार, अग्निमांद्य, अरुचि,नाश करता है और विशेषकरके गर्भिणी के रोगों को शीघ्र नाश करता है ॥ ४१—४५ ॥

बृहद्रसशार्दूलः ।

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद् दिनम् ।
प्रतिलौहं सूततुल्यमष्टलौहं मृतं क्षिपेत् ॥ ४६ ॥
ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यष्टीमधु पुनर्नवा ।
नलिका गिरिकर्ण्यर्क-कृष्णधूर्त्तदुरालभाः ॥ ४७ ॥
अटरूषः काकमाची द्रवैरेषां विमर्दयेत् ।
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत् ।
रोगोक्तमनुपानं वा कवोष्णं वा जलं पिवेत् ॥ ४८ ॥

शुद्धपारा एक तोला, शुद्ध गंधक दो तोला, एकदिन मर्दन करके दोनों की कज्जली बनावे। फिर आठों लौह अर्थात् स्वर्णभस्म चांदी भस्म, ताम्रभस्म, कांस्यभस्म, पित्तलभस्म नागभस्म, बंगभस्म लौह भस्म, प्रत्येक एक २ तोला लेकर मिलावें। सबको घोटकर ब्राह्मी, जयन्ती, निर्गुण्डी, मुलट्ठी, पुनर्नवा, नारीशाक, अद्रिकर्णी, आक, काला धतूरा,दुरालभा, वांसा,मकोय, इन सबके रससे क्रमशः मर्दन करके तीनरत्ति या चार रत्ति की गोली बनाके सब रोगों में प्रयुक्त करें। इसके साथ अनुपान रोगानुसार करें। या गरम जलही पीवें ॥ ४६—४८ ॥

तत्र अष्टौ लौहानि ।

सुवर्णं रजतं ताम्रं कांस्यं पित्तलमेव च ।
नागं वङ्गं तथा लौहं धातवो ऽष्टौ प्रकीर्त्तिताः ॥ ४९ ॥

स्वर्ण, चांदी, तांबा, कांस्य, पित्तल, नाग, वंग, लौह ये आठ धातुएं अष्ट लौह कहाती हैं ॥ ४९ ॥

॥ इति सूतिकारोगचिकित्सा ॥

अथ बालरोगचिकित्सा ॥

बालरसः ।

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य पलं तथा ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि भागार्द्धं संप्रकल्पयेत् ॥ १ ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः स्वरसेन च ॥ २ ॥
शुभे शिलामये पात्रे लौहदण्डेन मर्दयेत् ।
राजिकासदृशीश्चैव वटिकां कारयेद्भिषक् ॥ ३ ॥
एकैकां वटिकां खादेन्नागवल्लीदलद्रवैः ।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ ४ ॥
चिरज्वरञ्च कासञ्च शूलं सर्वभवं तथा ।
शिशूनां रोगनाशाय शिवेन परिकीर्त्तितः ॥ ५ ॥

शुद्ध पारा एकपल, शुद्धगंधक एक पल, स्वर्णमाक्षिक भस्म आधा पल लें। इन सबको लोहे के खरल में घोट यथाविधि कज्जली बनावें। इस कज्जली को फिर पत्थर के खरल में डालकर केशराज भांगरा और संभालु इनमें से प्रत्येक के रससे पृथक्२ लोहे के डण्डे से मर्दन करके राई के समान गोली बनाले। फिर एक गोली को पानके रससे देवें तो त्रिदोषज भयंकर ज्वर दूर होता है। तथा पुरानाज्वर, खांसी, त्रिदोषजशूल, इन रोगोंको दूर करती है बालकों के रोग नाश करने को यह रस शिवजी ने बनाया था ॥ १—५ ॥

बालरोगान्तकरसः ।

पलं शुद्धस्य सूतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्यापि चार्द्धभागं नियोजयेत् ॥ ६ ॥
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लौहमये दृढे ।
केशराजस्य भृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् ॥ ७ ॥

स्वरसं काकमाच्याश्च ग्रीष्मसुन्दरकस्य च।
सूर्यावर्त्तकवर्षाभू-भेकपर्णीरसैस्तथा ॥ ८ ॥
श्वेतापराजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः।
देयं रसार्द्धभागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ ९ ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत्।
शुष्कमातपसंयोगाद् गुडिकां कारयेद्भिषक् ॥ १० ॥
प्रमाणं सर्षपाकारं बालानाञ्च प्रयोजयेत्।
हन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारुणम् ॥ ११ ॥
कासं पञ्चविधञ्चापि सर्वरोगं निहन्ति च।
शिशूनां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥ १२ ॥

शुद्धपारा एकपल, शुद्ध गंधक एकपल, स्वर्णमाक्षिकभस्म आधा पल। लोहेके खरल में पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिला खरल करें। फिर इसे पत्थर के खरल में निकाल लें और केशराज, भांगरा, निर्गुण्डी, मकोय, ग्रीष्मसुन्दरक, हुलहुल, पुनर्नवा, मण्डूकपर्णी, श्वेत अपराजिता इनमें से प्रत्येक का स्वरस डालकर घोटें। सूखने पर मिरच का चूर्ण आधापल डालें। फिर एकपहर घोटकर सरसों के समान गोली बनाकर धूपमें सुखा कर रखले। यह बच्चों के त्रिदोषजन्य भयंकर ज्वर, पांच प्रकार की खांसी तथा सभी रोगों को दूर करता है। बच्चों के रोग नाश करने के लिये यह महारस उत्तम है ॥ ७—१२ ॥

॥ इति बालरोग चिकित्सा ॥

अथ विषचिकित्सा ॥

विषवज्रपातोरसः।

निशां सटङ्गञ्च सजातिकोषं तुत्थं समांशं कुरु देवदाल्याः।
रसेन पिष्ट्वा विषवज्रपातो रसो भवेत् सर्वविषापहन्ता ॥ १ ॥

निष्को ऽस्य संजीवयाति प्रयुक्तो नृमूत्रयोगेण च कालदष्टम् ।
जटाविषेणाकुलितं तथाऽन्यैर्विषैर्नरश्चाशु तथाऽऽतुरश्च ॥ २ ॥

हल्दी, सुहागा, जावित्री, शुद्ध नीलाथोथा सब द्रव्यों का चूर्ण समभाग लेकर एकत्रकर सबको पीसले । फिर देवदाली के रससे घोटकर सुखाकर शीशी में रखें । यह विषवज्रपात रस सब विषों को नाश करनेवाला है इस रसको एक निष्कभर लेकर मनुष्यके मूत्र के साथ दें तो स्वयं मृत्युने तथा काले नागभी काटाहो तोभी प्राणी जी जाता है।मूलविष जिसने खायाहो तथा अन्य विषोंसे व्याप्त प्राणी को भी यह रस दिया जाये तो उसकी प्राणरक्षा होजाती है और विष शीघ्र नष्ट होजाता है ॥१—३॥

भीमरुद्रो रसः ।

सूतराजस्य तोलैकं गन्धकस्य तथैव च ।
अभ्रात् कर्षं ततो देयं तोलैकं कान्तलौहकम् ॥ ३ ॥
परोक्तनौषधैनैव भावयेच्च पृथक् पृथक् ।
विशालावृहतीब्रह्मी—सौगन्धिकसुदाड़िमैः ॥ ४ ॥
मर्कट्याश्चात्मगुप्तायाः स्वरसेन पृथक् पृथक् ।
एकरक्तिकमानेन वटिकां कारयेद् भिषक् ॥ ५ ॥
वटीमेकां भक्षयित्वा पिवेच्छीतजलं ततः ।
भीमरुद्रो रसो नाम चासाध्यमपि साधयेत् ।
कुक्करस्य शृगालस्य विषं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ६ ॥

शुद्धपारा एकतोला, शुद्धगंधक एकतोला,अभ्रकभस्म एकतोला कान्तलौहभस्म१तो०।सबसे पूर्व पारागंधक कज्जली करो।फिर अन्य द्रव्य मिलावे । फिर आगे लिखी औषधों के रस से भावना देवे इन्द्रायण, बड़ी कटेली, ब्राह्मी, नीलोत्पल, अनार, अपामार्ग, कौंच,इनके स्वरस पृथक् २ भावना देकर एक रत्ति की गोली बनावे। गोली ठण्डे पानी से खावे । यह भीमरुद्र रस असाध्य विष रोगी को भी अच्छा कर देता है । कुत्ते और गीदड़ के भयंकर विष को भी दूर कर देता है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

इति विषचिकित्सा ॥

अथ रसायन-वाजीकरणाधिकारः॥

अथ रसायनलक्षणम्।

स्वस्थस्यौजस्करं किञ्चित् किञ्चिदार्त्तस्य रोगनुत्।
यज्जराव्याधिविध्वंसि भेषजं तद्रसायनम् ॥ १ ॥

अच्छे नीरोग मनुष्य के ओज को कुछ बढ़ाने वाली, तथा रोगी के रोग को कुछ दूर करने वाली, तथा बुढ़ापे और अकालमृत्यु से बचाने वाली औषध को रसायन कहते हैं ॥ १ ॥

श्रीमन्मथोरसः।

रसगन्धकयोर्ग्राह्यं कर्षमेकं सुशोधितम्।
अभ्रं निश्चन्द्रकं दद्यात् पलार्द्धं सुविचक्षणः ॥ २ ॥
कर्पूरं शाणकं दद्याद्वङ्गञ्च कोलसम्मितम्।
ताम्रं कोलार्द्धकं तत्र निःशेषमारितं क्षिपेत् ॥ ३ ॥
लौहं कर्षं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकवीजकम्।
विदारी शतमूली च क्षुरवीजं बला तथा ॥ ४ ॥
मर्कट्यतिवला चैव जातीकोषफले तथा।
लवङ्गं विजयावीजं श्वेतसर्जं यमानिका ॥ ५ ॥
एतेषां चूर्णमादाय प्रक्षिपेत् शाणसम्मितम्।
गुञ्जाद्वयञ्च भोक्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिवेदनु ॥ ६ ॥
गृहे यस्य शतं स्त्रीणां विद्यतेऽतिव्यवायिनः।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्यास्य सेवनात् ॥ ७ ॥
न च शुक्रं क्षयं याति न बलं ह्रासतां व्रजेत्।
कामरूपी भवेद्दिव्यो वृद्धः षोडशवर्षवत् ॥ ८ ॥
रसायनवरो बल्यो वाजीकरण उत्तमः।
रसः श्रीमन्मथो नाम महेशेन प्रकाशितः ॥ ९ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक प्रत्येक द्रव्य एक २ कर्ष ले कज्जली करे। इसमें आधा पल निश्चन्द्र अभ्रकभस्म डाले। फिर कपूर एक शाण वंगभस्म एक कोल, ताम्रभस्म आधा कोल, लौहभस्म एक कर्ष, विधारे के बीज, विदारीकंद, शतावर, तालमखाना, बला, कौंच अतिबला, जावित्री, जायफल, लौंग, भांग के बीज, श्वेतराल, अजवायन, इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ शाण डाले। फिर सब द्रव्यों को एकत्र पीस कर दो रत्ति भर की गोली बनावे। एक गोली खाके ऊपर से गरम दूध पीवे। तो अति मैथुनशील मनुष्य जिस के घर में सौ स्त्रियां हों, इसका सेवन करे तो उसकी इन्द्रिय शिथिल नहीं होती। न वीर्य का क्षय होता है। न बल कम होता है। बूढ़ा मनुष्य भी इसके सेवन से दिव्यदेह होकर कामदेव के समान रूपवान तथा सोलह वर्ष के बालक के समान होजाता है। यह रसायन बलदायक है तथा उत्तम वाजीकरण है। यह श्रीमन्मथरस महेशने प्रकाशित किया था ॥२—९॥

माहेश्वररसः।

रसं भस्मीकृतं कोलं गन्धकं शोधितं समम्।
लौहं कर्षद्वयं ताम्रमर्द्धकोलकसम्मितम् ॥ १० ॥
सुवर्णं जारितं दद्यात् शाणार्द्धं सुविचक्षणः।
अभ्रं कर्षद्वयं दद्यात् शाणार्द्धं चन्द्रचूर्णकम् ॥ ११ ॥
श्यामावीजं वरीश्चैव बलामतिबलां तथा।
एलाश्च शङ्खपुष्पश्च शाणमानं विनिक्षपेत् ॥ १२ ॥
जलेन वटिकां कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत्।
सेवनादस्य कन्दर्परूपो भवति मानवः ॥ १३ ॥
सहस्रं याति नारीणामुत्साहो जायतेऽधिकः।
नित्यं स्त्रीसेवनाद् यस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ १४ ॥
महाशुक्रो भवेत् सोऽपि सेवनादस्य नान्यथा।
महाबलो महाबुद्धिर्जायते नात्र संशयः ॥ १५ ॥

स्थूलानां कर्षकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
रसो विनाशयेद्रोगान् सप्त सप्ताहभक्षणात् ॥ १६ ॥

रससिन्दूर एक कोल, शुद्ध गंधक एक कोल, लोहभस्म दो कर्ष, ताम्रभस्म आधा कोल, स्वर्ण भस्म आधा शाण, अभ्रकभस्म दो कर्ष, कर्पूर आधा शाण, विधारे के बीज शतावर, बला, अतिबला, इलायची शंखपुष्पी, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ शाण ले सबको घोटकर जलसे एकरत्ति भरकी गोली बनावे इसके सेवन से मनुष्य कामदेव के समान रूपवान होजाता है तथा सहस्र नारियों को भोग सकता है, अधिक उत्साह उत्पन्न होता है । नित्य स्त्री सेवन से जो मनुष्य क्षीण वीर्य होजावे वहभी इसके सेवन से महावीर्यवान होजाता है । इससे महानबल और महानबुद्धि उत्पन्न हो जाती है । यह स्थूलों को कृश करता तथा कृशों को स्थूल करता है यह माहेश्वर रस सात सप्ताह सेवन करने से रोगों को नाश करता है ॥ १०—१६ ॥

पूर्णचन्द्रो रसः ।

सूताभ्रलौहं सशिलाजतु स्याद्विडङ्गताप्ये मधुना घृतेन ।
सम्मर्द्य सर्वं खलु पूर्णचन्द्रो माषोऽस्य वृष्यो भवति प्रयुक्तः ॥१७॥

रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लौहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, वायविडंग का चूर्ण स्वर्णमाक्षिक भस्म प्रत्येक द्रव्य समभाग ले और पीसकर मिलादे । इसकी एक माषा भरकी मात्रा घी और शहद से खावे तो वृष्य करती है । यह पूर्णचन्द्ररस कहाता है । (मात्रा दो रत्ति दें । यहां "ताप्य" का अर्थ संस्कृत टीकाकार ने "मनासिल" कर दिया है जो व्यवहार सेभी विरुद्ध है) ॥ १७ ॥

कार्श्यहर लौहम् ।

श्वेता-पुनर्नवा-दन्ती-वाजिगन्धात्रिकत्रयैः ।
शतमूली बलायुक्तैरेभिर्लौहं प्रसाधितम् ॥ १८ ॥
हिनस्ति नियतं कार्श्यमपि भृङ्गरसैः सह ।
नास्त्यनेन समं लौहं सर्वरोगान्तकं मतम् ।
दीपनं बलवर्णाग्नेर्वृष्यदश्चोत्तमोत्तमम् ॥ १६ ॥

वंशलोचन, पुनर्नवा, दन्तीमूल, असगंध, हरड़, बहेड़ा, आंवला सौंठ, मिर्च, पीपल, विडंग, मोथा, चीता, शतावर, बला, इन सबका चूर्ण समभाग ले। सबके समान लौह भस्म ले। इन सबको एकत्र पीसे और भांगरे के रससे घोटकर रखे। इसे खाने से निश्चय से कृशता दूर होती है। इसके समान सब रोगों को दूर करने वाला और लौह नहीं। यह बल बर्धक, वर्ण उत्तम करने वाला तथा अग्नि-दीपक और वृष्य है॥ १८ ॥ १९ ॥

नारदीय-लक्ष्मीविलासो रसः।

पलं कृष्णाभ्रचूर्णस्य तदर्द्धौ रसगन्धकौ।
कर्पूरस्य तदर्द्धञ्च जातीकोषफले तथा॥ २०॥
वृद्धदारकवीजञ्च वीजमुन्मत्तकस्य च।
त्रैलोक्यविजयावीजं विदारीमूलमेव च॥ २१॥
नारायणी तथा नाग-बला चातिबला तथा।
वीजं गोक्षुरकस्यापि नैचुलं वीजमेव च॥ २२॥
एतेषां कार्षिकं चूर्णं पर्णपत्ररसेन च।
निष्पष्य वटिका कार्य्या त्रिगुञ्जाफलमानतः॥ २३॥
निहन्ति सन्निपातोत्थान् गदान् घोरान् सुदारुणान्।
वातोत्थानपि पित्तोत्थान् नास्त्यत्र नियमः क्वचित्॥२४॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान् विंशतिं तथा।
नाड़ीव्रणं व्रणं घोरं गुदामयभगन्दरम्॥ २५॥
श्लीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलसम्भवम्।
गलशोथमन्त्रवृद्धिमतीसारं सुदारुणम्॥ २६॥
कासपीनसयक्ष्मार्शः स्थौल्यं दौर्गन्ध्यमेव च।
आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम्॥ २७॥
अर्दितं गलगण्डञ्च वातशोणितमेव च।
उदरं कर्णनासाक्षि-मुखवैरस्यमेव च॥ २८॥

सर्वशूलं शिरः शूल स्त्रीणां गदानिसूदनम् ।
वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाबलम् ॥ २९ ॥
अनुपानमिह प्रोक्तं मांसं पिष्टं पयोदधि ।
वारिभक्तसुरासीधु-सेवनात् कामरूपधृक् ॥ ३० ॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः ।
न च लिङ्गस्य शैथिल्यं न केशा यान्ति पक्कताम् ॥ ३१ ॥
नित्यं स्त्रीणां शतं गच्छेत् मत्तवारणविक्रमः ।
द्विलक्षयोजनीदृष्टिर्जायते पौष्टिकः परः ॥ ३२ ॥
प्रोक्तः प्रयोगराजोऽयं नारदेन महात्मना ।
रसो लक्ष्मीविलासोऽयं वासुदेवो जगत्पतिः ।
अभ्यासादस्य भगवान् लक्षनारीषुवल्लभः ॥ ३३ ॥

कृष्णाभ्रक की भस्म एक पल, शुद्ध पारा चौथाई पल, शुद्धगंधक चौथाई पल, कपूर चौथाई पल, जावित्री, जायफल, विधारे के बीज भांगके बीज, विदारीकंद, शतावर, नागबला, अतिबला, गोखरु, शुद्ध समुद्र फल इनमें से प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एक २ कर्ष मिलाकर, पान के रससे घोटकर तीनरत्ति प्रमाण की गोली बनावे। तो सन्निपातज भयंकर रोगों को दूर करता है तथा वातज, और पित्तज रोगों को दूर करता है। अठारह प्रकार के कुष्ठ, बीस प्रकार के प्रमेह, नासूर घोर व्रण, गुदारोग, भगन्दर, चिरोत्पन्न, कुलक्रमागत, कफवातोत्पन्न श्लीपद रोग, गले की सूजन, अन्त्रवृद्धि, भयंकर अतिसार, खांसी पीनस, राजयक्ष्मा, बवासीर, स्थूलता, दुर्गन्ध, सब प्रकार का आमवात जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, अर्दित, गलगण्ड, वातरक्त, उदररोग, कर्णरोग, नाक के रोग, आंखके रोग, मुखकी विरसता, सब प्रकार के शूल सिरके दर्द, स्त्रीरोग इन सबको नष्ट करता है। एक २ गोली प्रातःकाल नित्य बलानुसार खावे। इस पर अनुपान मांस, पीठी, दूध दही, चावल, जल, सुरा, सीधु के सेवन से कामदेव के समान रूप

होजाता है। बूढ़ाभी जवान के समान होजाता है। वीर्य का क्षय नहीं होता तथा लिङ्गेन्द्रिय शिथिल नहीं होती। न केश पकते हैं। नित्य सौ स्त्रियों को भोग सकता है। मत्त हाथी के समान विक्रम होजाता है। दो लाख योजन की दृष्टि होजाती है. परम पौष्टिक है। यह प्रयोगराज महात्मा नारद ने कहा है। इस लक्ष्मीविलास रसके अभ्यास से भगवान जगत्पति वासुदेव जी लाख स्त्रियों के प्यारे हुए २ थे ॥ २०—३३ ॥

श्रीकामदेवरसः ।

पारदं पलमेकं स्यात् द्विपलं शुद्धगन्धकम् ।
रक्तकार्पासतोयेन घृष्ट्वा काचस्य कूप्यतः ॥ ३४ ॥
निक्षिप्य टङ्कणेनैव मुखं तस्य निरोधयेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं कूप्यञ्च कुरु तत् दृढम् ॥ ३५ ॥
अहोरात्रं पचेदग्नौ शास्त्रवित् कुशलो भिषक् ।
शीते चादाय पात्रस्थं कूपिकान्तरलम्बितम् ॥ ३६ ॥
दरदेन समं रक्तं सोज्ज्वलं भस्म यद्भवेत् ।
भक्षयेन्माषमेकञ्च घृतेन मधुना सह ॥ ३७ ॥
पश्चात् दुग्धं गुडञ्चाज्यं कृष्णेक्षुमपि शर्कराम् ।
द्राक्षाखर्जूरमधुक–प्रभृतीनथ भक्षयेत् ॥ ३८ ॥
त्रिफलामधुना शान्तिं याति पित्तं चिरोत्थितम् ।
निर्गुण्डिकारसेनात्र दुर्वारा वातवेदना ।
प्रशमं याति वेगेन नूतनश्च वपुर्भवेत् ॥ ३९ ॥
अर्द्धाऽऽवर्त्तितदुग्धेन गृह्यते यद्ययं रसः ।
वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीवद्वत्सा सपुत्रिका ॥ ४० ॥
कामदेवमथो सूतः कामिनां कामदः सदा ।
यस्य प्रभावतो वल्यो रम्यश्च रमते स्त्रियम् ॥ ४१ ॥

शुद्धपारा एकपल, शुद्ध गंधक दोपल, इन दोनों की कज्जली

करके लाल कपास के रससे घोटकर काचकी कुपी में भरे। उसके मुंह को सुहागे से बंद करके बालुकायंत्र के बीच में कूपी को धरकर एक दिनरात कुशल वैद्य पकावे स्वांग शीतल होनेपर कूपिका के अंदर लटकते हुए शिंगरफके समान लालरंग का उज्ज्वल भस्म निकाले। इसे एक माषा भर ले घी और शहद से मिलाकर खावे पीछे से दूध, गुड, घी, काला गन्ना, खांड, द्राक्षा, खजूर, मुलहठी आदि खावे। इसे त्रिफला और शहद से खावे तो चिरकाल का पित्त शान्त होता है। निंगुण्डी के रससे भयंकर वातवेदना शीघ्र नष्ट होती है और नया शरीर होजाता है। आधे औटाये हुए दूध से यदि इस रसको खावें तो बन्ध्या स्त्री भी चिरायुपुत्र उत्पन्न करती है। यह श्री कामदेव रस कामी पुरुषों के काम को बढ़ाने वाला है। इस के प्रभाव से मनुष्य बलवान होता है, सुन्दर होता है तथा स्त्रियों से रमण करने में समर्थ होजाता है ॥ ३४—४१ ॥

अनङ्ग सुन्दरो रसः ।

शुद्धसूतं समं गन्धं त्र्यहं कल्हारजैर्द्रवैः ।
मर्दितं वालुकायंत्रे यामं सम्पुटके पचेत् ॥ ४२ ॥
रक्तागस्त्यद्रवैर्भाव्यं दिनमेकं सिताऽम्बुजैः ।
यथेष्टं भक्षयेच्चानु कामयेत् कामिनीशतम् ॥ ४३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, दोनों समभाग ले कज्जली करे। फिर लालकमल के रस से मर्दन करके सम्पुट में रख बालुकायंत्र में एक पहर पकावे। फिर निकाल कर अगस्त्य के फूलों के रस से एक दिन भावित करे। फिर श्वेत कमल के फूलों के रस से भावित करे। फिर उचित मात्रा से खावे तो यह रस मनुष्य को सौ स्त्रियों की कामना वाला बना देता है ॥ ४२ ॥ ४३ ॥

हेमसुन्दरो रसः ।

मृतसूतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत् ।
क्षीराज्यदधि संमिश्रं माषैकं कांस्यपात्रके ॥ ४४ ॥
लेहयेत् मासषट्कन्तु जरामरणनाशनम् ।

वागुजी चूर्णकर्षैकं धात्रीफलरसाप्लुतम् ।
अनुपानं पिबेन्नित्यं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ ४५ ॥

रससिन्दूर एक तोला, स्वर्णभस्म तीन माशे दोनों को पीस कर रखे। इसकी एक रत्ति लेकर दही, दूध और घी इनसे कांसी के पात्र में मिला कर एक माषा भर खावे। इस प्रकार छः मास खाने से बुढ़ापा और अकालमृत्यु दूर होती है। इसे खाने के पीछे बावची का चूर्ण एक कर्ष लेकर आंवले का रस मिला कर नित्य अनुपान पीवे। इसे हेम सुन्दर रस कहते हैं ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

अमृतार्णवो रसः ।

सूतभस्म चतुर्भागं लौहभस्म तथाऽष्टकम् ।
अभ्रभस्म च षड् भागं गन्धकस्य च पञ्चमम् ॥ ४६ ॥
भावयेत् त्रिफलाक्काथैस्तत्सर्वं भृङ्गजैर्द्रवैः ।
शिग्रुवन्हिकटुक्काथै भावयेत् सप्तधा पृथक् ॥ ४७ ॥
सर्वतुल्या कणा योज्या गुडैर्मिश्रा पुरातनैः ।
निष्कमात्रं सदा खादेत् ज्वरामृत्युनिवारणम् ॥ ४८ ॥
ब्रह्मायुः स्यात् चतुर्मासे रसोऽयममृतार्णवः ।
कौरण्टकस्य पत्राणि गुड़ेन भक्षयेदनु ॥ ४९ ॥

रससिन्दूर चार तोला, लौहभस्म आठ तोला, अभ्रकभस्म छः तोला, शुद्धगंधक पांच तोला। सब को घोटकर त्रिफला, भांगरा सुहांजना, चीता, कुटकी इनके रस या क्वाथ से पृथक् २ सात २ भावना देवे। फिर सूखने पर सब के तुल्य पिप्पली का चूर्ण देवे। सब को मिला कर रखे। इस अमृतार्णव रस को पुराने गुड से मिला कर एक निष्क भर खावे तो वृद्धावस्था और अकालमृत्यु का नाश होता है। चार मास के सेवन करने से ब्रह्मा के समान आयु होजाता है। इसके खाने के बाद नीलझिण्टी के पत्ते गुड से मिला कर खावे ॥ ४६–४९ ॥

बृहत्पूर्णचन्द्रोरसः।

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम् ।
लौहभस्म पलञ्चाभ्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥ ५० ॥
द्वितोलं रजतञ्चैव वङ्गभस्म द्विकार्षिकम् ।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ५१ ॥
जातीफलञ्चेन्द्रपुष्पमेला भृङ्गञ्च जीरकम् ।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥ ५२ ॥
सर्वं खल्लतले क्षिप्त्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
भावयित्वा वरातोयैः केबुकानां रसेन च ॥ ५३ ॥
एरण्डपत्रैरावेष्ट्य धान्ये रात्रिदिनोषितम् ।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्मिताम् ॥ ५४ ॥
खादेच्च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ५५ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
बल्यो रसायनो वृष्यो वाजीकरण उत्तमः ॥ ५६ ॥
अयमष्ठीलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमशूलं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ५७ ॥
अग्निमांद्यमजीर्णञ्च ग्रहणीं चिरजामपि ।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ५८ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठो विद्यते वाजिकर्मणि ॥ ५९ ॥
रसस्यास्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः ।
मेधाञ्च लभते वाग्मी तुष्टि पुष्टि समन्वितः ॥ ६० ॥
मदनस्य समां कान्तिं मदनस्य समं बलम् ।

गीयते मदनेनैव मदनस्य समं वपुः ॥ ६१ ॥
प्रियाश्च मदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाकुलाम्।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्बलानाञ्च देहिनाम् ॥ ६२ ॥
क्षीणानामल्पशुक्राणां वृद्धानां वातरेतसाम्।
ओजस्तेजस्करश्चायं स्त्रीषु कामविवर्द्धनः ॥ ६३ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वामयध्वंसकः।
वृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गमे।
नित्यानन्दकरः सुखातिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते।
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ॥ ६४ ॥

शुद्ध पारा दो कर्ष, शुद्ध गंधक दो कर्ष, कज्जली करे। फिर लौहभस्म एकपल, अभ्रक भस्म एकपल, चांदी भस्म दो तोला, वंग भस्म दो कर्ष, स्वर्णभस्म एक तोला, ताम्रभस्म एक तोला, कांस्य भस्म एक तोला, जायफल, लौंग, इलायची, दारचीनी, जीरा, कपूर प्रियंगु, मोथा, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण एकरकर्ष डालकर, सबको मिलाकर घीकुमारी के रससे मर्दन करे। सूखने पर त्रिफला के क्वाथसे, तथा केमुआ के रससे भावना देकर सुखाकर गोली बना एरण्ड के पत्तों में लपेटकर धान्यों के ढेर में तीन दिनरात रखे। फिर निकाल कर मर्दन करके चने के समान गोली बनावे। इसे पानमें खावें तो सब व्याधि नाश करता है। यह सर्वरोगनाशक रस काशीनाथ ने कहा है। इसका नाम पूर्णचन्द्ररस है। इसे सभी रोगोंमें प्रयुक्त करें। यह बलदायक, रसायन, वृष्य, तथा उत्तम बाजीकरण है। यह अष्ठीला, कास, श्वास, अरुचि, आमशूल, कटीशूल, हृदय का शूल, पित्तका शूल, अग्निमांद्य, अजीर्ण, पुरानी ग्रहणी, आमवात, अम्लपित्त और भगन्दर को शीघ्रही नाश करता है। तथा कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह वातरक्त इन्हें नाश करता है॥ वाजीकरण औषधों में इससे बढ़कर और कोई नहीं। इसके सेवन से मनुष्य रोगरहित होजाता है, मेधावी होता है, वाग्मी होता है तथा तुष्टि और पुष्टि से युक्त

होता है। कामदेव के समान सौंदर्य, कामके समान बल, कामदेवके समान गानशक्ति और कामदेव के समान शरीर होजाता है स्त्री पुरुष दोनों को यह कामान्ध कर देता है॥ बन्ध्या स्त्री तथा दुर्बल देह वाले, क्षीण, अल्पवीर्य, बूढ वायुप्रकृति वाले मनुष्यों को यह अच्छा करता है। ओज तथा तेज को देता है। तथा स्त्रियों में काम देव को बढ़ाता है। अभ्यास करने से यह अकालमृत्यु, पलितरोग तथा सभी रोगों को दूर कर देता है। वृद्ध पुरुषभी प्रौढ़ा स्त्रियों के साथ संभोगके समय इसके सेवन से कामातुर होजाता है यह नित्य आनन्द देनेवाला, अत्यन्त सुखदाता, सदा राजाओं द्वारा सेवन किया जाता है। इसका फल अवश्य होता है इस श्रेष्ठ रसायन का नाम श्रीपूर्णचन्द्र रस है॥ ५०—६४॥

चन्द्रोदय रसः।

पलं मृदुस्वर्णदलं रसेन्द्रात् पलाष्टकं षोडश गन्धकस्य।
शोणैः सुकार्पासभवप्रसूनैः सर्वं विमर्द्याथ कुमारिकाद्भिः॥६५॥
तत्काचकुम्भे निहितं सुगाढं मृत्कर्पटैस्तद्दिवसत्रयञ्च।
पचेत् क्रमाग्नौ सिकताख्ययन्त्रे ततो रसः पल्लवरागरम्यः॥६६॥
संगृह्य चैतस्य पलं पलानि चत्वारि कर्पूररजस्तथैव।
जातीफलं सोषणमिन्द्रपुष्पं कस्तूरिकाया इह शाण एकः॥६७॥
चन्द्रोदयोऽयं कथितोऽस्य वल्लो भुक्तो ऽहिवल्लीदलमध्यवर्त्ती।
मदोद्धतानां प्रमदाशतानां गर्वाधिकत्वं श्लथयत्यवश्यम्॥ ६८॥
शृतं घनीभूतमतीव दुग्धं गुरूणि मांसानि समण्डकानि।
माषान्नपिष्टानि भवन्ति पथ्यान्यानन्ददायीन्यपराणि चात्र॥६९॥
रतिकाले रतान्ते वा सेवितोऽयं रसेश्वरः।
मानहानिं करोत्येष प्रमदानां सुनिश्चितः॥ ७०॥
कृत्रिमं स्थावरञ्चैवजङ्गमञ्चैव याद्विषम्।
न विकाराय भवति साधकेन्द्रस्य॥ ७१॥

यथा मृत्युञ्जयोऽभ्यासात् मृत्युं जयति देहिनाम् ।
तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशनः ॥ ७२ ॥
वलीपलितनाशनस्तनुभृतां वयः स्तम्भनः ।
समस्तगदखण्डनः प्रचुररोगपञ्चाननः ।
गृहे च रसराडयं भवति यस्य चन्द्रोदयः ।
स पञ्चशरदर्पितो मृगदृशां भवेद्वल्लभः ॥ ७३ ॥
इन्द्रपुष्पं लवङ्गं स्यात् कार्पासकुसुमद्रवैः ।
तन्त्रान्तरे प्रसिद्धोऽयं मकरध्वजनामतः ॥ ७४ ॥

शुद्ध मृदुस्वर्ण के पत्र एकपल, शुद्धपारा आठ पल, शुद्धगंधक सोलह पल ले । पहले सोना और पारा घोटे । फिर गंधकमिलाकर कज्जली करे । फिर लाल कपास के फूलों के रससे घोटे । सूखनेपर घी कुमार के रससे घोटे । फिर सुखाकर कांचकी पक्की कुप्पी में भरकर और कूपी पर सात कपड़मिट्टी करके सुखा के बालुकायंत्र में रख तीन दिनरात क्रमशः मन्द मध्यम तीव्र अग्नि दे पकावे। फिर स्वांग शीतल होनेपर इसे उतारकर कूपी के गले में लगे हुए लालरंग के सुन्दर स्वर्णसिन्दूर को निकाल ले । इस स्वर्णसिन्दूर को एकपल ले, कर्पूर, जायफल, का चूर्ण, काली मिरच का चूर्ण, लौंग का चूर्ण, कस्तूरी प्रत्येक द्रव्य एक २ शाण ले । इसे पीसकर डेढ़ रत्ति प्रमाण की गोली बनावे इसे पान में रखकर खाने से कामोद्दीपन होकर सौ स्त्रियों के गर्वको तोड़ सकता है । इसके खाने के साथ २ पका हुआ गाढ़ा दूध, रबड़ी, खोया, गुरुपदार्थ, मांस, अण्डे उड़द आदि की पीठी के बने पदार्थ पथ्य समझ कर सेवन करे । इस रसेश्वर को रतिके आदि में या संभोग के अन्त में सेवन करे तो स्त्रियों की मानहानि अवश्य करता है । इसे एक वर्ष तक खाले तो कृत्रिम, स्थावर तथा जंगमविष, उसपर कोई प्रभाव नहीं करेंगे। जिस प्रकार से मृत्युंजय मंत्र के निरंतर अभ्यास से मनुष्य मृत्यु को जीत लेता है वैसेही इसके अभ्यास से बुढ़ापा और अकाल

मृत्यु नहीं होती। यह रस मनुष्यों के बालि तथा पलितरोग को नष्ट करता है। आयु स्थिर करता; समस्तरोग नाश करता, बड़े २ रोगों को नष्ट करता है। जिस घरमें यह रसों का राजा चन्द्रोदयरस निवास करता है वहां पुरुष सदा कामदेव से मत्त हुआ २ रमणियों का प्यारा बनता है॥ यहां इन्द्रपुष्प का अर्थ लौंग लेना, लाल कपास के फूल न मिलें तो साधारण कपास के फूलों का रस लें। इसी रसका नाम अन्य ग्रन्थों में मकरध्वज है। (कूपी के नीचे प्रायः स्वर्ण भस्म शेष रहजाता है उसे पृथक् निकाल कर रखलें।)॥ ६५-७४॥

मकरध्वजः।

स्वर्णभागौ च वङ्गश्च मौक्तिकं कान्तलौहकम्।
जातीकोषफले रूप्यं कांस्यकं रससिन्दुरम्॥ ७५॥
प्रवालं कस्तूरी चन्द्रमभ्रकश्चैकभागिकम्।
स्वर्णसिन्दूरतो भागाश्चत्वारः कल्पयेद्बुधः॥ ७६॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिसूदनः।
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्त्तितः॥ ७७॥

स्वर्णभस्म दो भाग, वंगभस्म, मोतीभस्म, कान्तलौह भस्म, जावित्री, जायफल, चांदीभस्म, कांस्यभस्म, रससिन्दूर, मूंगाभस्म, कस्तूरी, कपूर, अभ्रकभस्म, प्रत्येक द्रव्य एक २ भागलें। स्वर्णसिन्दूर चार भाग लें। सबको एकत्र पीसकर रखे। इसकी एकरत्ति की मात्रा खावें। इससे बढ़कर सब रोगों का नाश करने वाला कोई श्रेष्ठ रस नहीं है। यह लोकोपकार के लिये शिवजीने कहाहै ७५-७७।

वसन्ततिलको रसः।

हेम्नो भस्मकतोलकं घनयुगं लौहात् त्रयः पारदात्।
चत्वारो नियतन्तु वङ्गयुगलं चैकीकृतं मर्दयेत्।
मुक्ताविद्रुमयो रसेन समता गोक्षूरवासेक्षुणा।
सर्वं वन्यकरीषकेण सुदृढं तत्तत् पचेत् सप्तधा॥ ७८॥
कस्तूरी घनसारमर्दितरसः पश्चात् सुसिद्धो भवेत्।

कास श्वाससपित्तवातकफजित् पाण्डुक्षयादीन् हरेत् ।
शूलादिग्रहणीं विषादिहरणो मेहांस्तथा विंशतिम् ।
हृद्रोगादिहरो ज्वरादिशमनो वृष्यो वयोवर्द्धनः ।
श्रेष्ठः पुष्टिकरो वसन्ततिलको मृत्युञ्जयेनोदितः ॥ ७६ ॥

स्वर्णभस्म एक तोला, अभ्रक भस्म दो तोला, लौहभस्म तीन तोला, शुद्ध पारद भस्म चार तोला, वंगभस्म दो तोला, मोतीभस्म दो तोला, मूंगाभस्म दो तोला। सबको एकत्र पीसे। फिर गोखरु, वांसा, ईख, इनके रसको डालकर जंगली उपलों की आंचमें सात२ बार पकावे। फिर इसमें कस्तूरी एक तोला, काफूर एक तोला मिला कर पीसकर रखे। यह कास, श्वास, वात, पित्त, कफरोग, पाण्डु, क्षय तथा शूलादिरोग, ग्रहणी तथा विष आदि बीस प्रमेह, हृद्रोगादि तथा ज्वरादिरोगों को नष्ट करता है। यह वृष्य, आयुवर्धक, श्रेष्ठ तथा पुष्टि करता है। यह वसन्ततिलकरस मृत्युंजय ने कहा है ॥ [यहां पर "नियतन्तु" पाठसे "गंधक" अर्थ संस्कृतटीकाकार ने किया है। परन्तु प्रमाण कुछ नहीं लिखा। नांही गन्धक के नाम में "नियत" शब्दका पाठ है। वृद्ध लोग पारा गंधक के स्थान में स्वर्ण-सिन्दूर चार तोला डालते हैं। "नियताः" पाठ हो तो विशेषण हो जाता है ॥] ॥ ७८ ॥ ७६ ॥

वसन्तकुसुमाकरो रसः ।

द्विभागं हाटकं चन्द्रं त्रयो वङ्गाहिकान्तकाः ।
चतुर्भागं शुद्धमभ्रं प्रवालं मौक्तिकं तथा ॥ ८० ॥
भावयेद् गव्यदुग्धेन भावनेक्षुरसेन च ।
वासालाक्षारसोदीच्य–रम्भाकन्दप्रसूनकैः ॥ ८१ ॥
शतपत्ररसेनैव मालत्याः कुङ्कुमोदकैः ।
पश्चान्मृगमदैर्भाव्यं सुगन्धिरससम्भवैः ॥ ८२ ॥
कुसुमाकरविख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ।
गुञ्जाद्वयेन संसेव्यः सितामध्वाज्यसंयुतः ॥ ८३ ॥

मेहघ्नः कान्तिदश्चैव कामदः पुष्टिदस्तथा।
बलीपलितहश्चैव स्मृतिभ्रंशं विनाशयेत् ॥ ८४ ॥
पुष्टिदो बल्यमायुष्यः पुत्रप्रसवकारणः।
प्रमेहान् विंशतिश्चैव क्षयमेकादशं तथा।
तथा सोमरुजं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ ८५ ॥

स्वर्ण भस्म, चांदीभस्म प्रत्येक दो २ तोला। बंगभस्म, नागभस्म कान्तलौह भस्म प्रत्येक तीन २ तोला। अभ्रक भस्म, प्रवाल भस्म, मोती भस्म प्रत्येक चार २ तोला। इन सबको एकत्र पीसकर गौके दूध, ईखके रस, बांसे के रस, लाख के क्वाथ, सुगंध बाला के क्वाथ केले की जड़का रस, केले के फूल का रस, गुलाबके फूल का रस, चमेली के फूल का रस, तथा काश्मीरी केशर के फूलों के क्वाथ से पृथक् २ सात २ वार भावना दे। अन्त में कस्तूरी की भावना देकर दोरत्ति भरकी गोली बनाले। यह बसन्त कुसुमाकर रस दोरत्ति भर लेकर मिश्री, शहद और घीसे मिलाकर सेवन करना चाहिये। इससे प्रमेह नष्ट होते,कान्ति बढ़ती,कामदेव जगता है हृद्य पुष्टि देता है बली पलित दूर करता, स्मृति नाश को ठीक करता, बल,पुष्टि,आयु बढ़ाता पुत्र देनेवाला, बीस प्रमेह,ग्यारह रूप का उग्रक्षय, तथा साध्य या असाध्य सोमरोग को नाश करने वाला है ॥ ८०—८५ ॥

नीलकण्ठो रसः।

सूतकं गन्धकं लौहं विषं चित्रकपद्मकम्।
वराङ्गरेणुकामुस्तं ग्रन्थ्येलानागकेशरम् ॥ ८६ ॥
त्रिकटुत्रिफला चैव शुल्वभस्म तथैव च।
एतानि समभागानि द्विगुणोगुड उच्यते ॥ ८७ ॥
सम्मर्द्य वटकं कृत्वा भक्षयेत् चणकोन्मितम्।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ ८८ ॥
हिक्कायां ग्रहणीदोषे शोथे पाण्ड्वामये तथा।

मूत्रकृच्छ्रे मूढ़गर्भे वातरोगे च दारुणे ॥ ८९ ॥
नीलकण्ठो रसो नाम ब्रह्मणा निर्मितः पुरा ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगहरो भवेत् ॥ ९० ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौह भस्म, शुद्धविष, चीता चूर्ण, पद्माख का चूर्ण, दारचीनी, रेणुका, माथा, ग्रन्थिपर्ण इलायची, नागकेशर, सौंठ, मिरच, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, ताम्रभस्म, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें। फिर अन्य द्रव्य मिलाकर खरल करें। फिर सबसे दुगुना गुड़ मिलाकर चने के समान गोली बनावे। इसे खाने से खांसी, दमा, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, हिचकी, ग्रहणीदोष, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र मूढगर्भ भयंकर वातरोग, तथा विशेष २ अनुपानों से सब रोगों को दूर करता है। यह नीलकण्ठ रस पहले ब्रह्माने बनाया था॥ ८६—९० ॥

महानीलकण्ठो रसः ।

पलैकं नागभस्माथ भावयेत् तिमिपित्ततः ।
तन्नागं सुमृतं स्वर्णं तोलैकं चापि मिश्रयेत् ॥ ९१ ॥
द्विपलं भस्मसूतस्य त्रिपलं मृतमभ्रकम् ।
त्रिपलं लौहभस्माथ सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ९२ ॥
भावयेच्च पृथक् कन्या ब्राह्मी निर्गुण्डिका शमी ।
मुण्डी शतावरी छिन्ना कोकिलाक्षस्य वीजकैः ॥ ९३ ॥
मूषली वृद्धदारो ऽग्निद्रवैरेभिर्भिषग्वरः ।
ततः सञ्चूर्णयेत् सर्वं तुल्यमेकादशाभिधम् ॥ ९४ ॥
वराव्योषाब्दवन्ह्येला जातीफललवङ्गकम् ।
पूजयेद् विल्वपत्राद्यैर्नीलकण्ठं महेश्वरम् ॥ ९५ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेदस्य मृत्युञ्जयमनुस्मरन् ।
क्षयमेकादशाविधं ग्रहणीं रक्तपित्तकम् ॥ ९६ ॥
विविधान् वातजान् रोगान् चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ।

हन्ति सर्वामयानेव कामिनीनां शतं व्रजेत् ॥ ९७ ॥
एकविंशतिरात्रार्द्धं परिहार्य्यं त्यजेदिह ।
यथेष्टाहारचेष्टो हि कन्दर्पसदृशो नरः ॥ ९८ ॥
मेधावी बलवान् प्राज्ञो बह्वाशी भीमविक्रमः ।
पुत्रार्थिनी तथा नारी रम्यं पुत्रं प्रसूयते ।
अस्य सूतस्य माहात्म्यं वेत्ति शम्भुर्न चापरः ॥ ९९ ॥

नाग भस्म एक पल लेकर तिमि (बड़ी मछली । काड़ मछली के समान बड़ी मछली संभवत; इसका नामही Cod हो । डाक्टर इसी के Cod Liver oil को व्यवहार करते हैं इसे संस्कृतमें राघवमत्स्य भी कहते हैं) मछली के पित्तसे भावित करे । उस नाग-भस्म में स्वर्णभस्म एक तोला मिलावे । फिर रससिन्दुर दो पल, अभ्रकभस्म तीनपल, लौहभस्म तीनपल, सब को पीसकर रख । फिर पृथक २ घीकुमार, ब्राह्मी, संभालु, शमी अर्थात् जंडी, मुण्डी, शतावरी गिलोय, तालमखाना, मूसली, बिधारा, चीता, इनके स्वरस वा क्राथ से पृथक् २ भावना देवे । फिर सब चूर्ण के समान इन ग्यारह द्रव्यों का चूर्ण उसमें मिलावे । हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिरच पीपल, मोथा, चीता, इलायची, जायफल, लौंग, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण समभाग लें । फिर इन सबको पीसकर दोरत्ति प्रमाण की गोली बनावे । फिर नीलकण्ठ महेश्वर को बिल्वादि के पत्तों से पूज कर मृत्युंजयमंत्र का जपकर इसे खावें तो ग्यारह रूपका क्षयरोग, ग्रहणी, रक्तपित्त, विविध वातरोग, चालीस पित्त के रोग, तथा सभी रोग नाश करता है । इसके सेवन से सौ स्त्रियों को भोग सकता है । ग्यारह दिन इसको खाते समय पथ्य करे फिर बारहवें दिनसे यथेष्ट खानपान करे इससे कामदेव के समान सुन्दर मनुष्य होजाता है । इससे मेधावी, बलवान, प्राज्ञ, बहुत खानेवाला, तथा भीमके सदृश विक्रमवाला होजाता है पुत्रकी इच्छावाली स्त्री सुन्दर पुत्र उत्पन्न करती है इस रसका माहात्म्य स्वयं शम्भुही जानते हैं अन्य नहीं ॥ ९१—९९ ॥

बृहच्छृङ्गाराभ्रम्।

पारदं गन्धकञ्चैव टङ्कणं नागकेशरम्।
कर्पूरं जातिकोषञ्च लवङ्गं तेजपत्रकम् ॥ १०० ॥
एतेषां कर्षभागानि सुवर्णं तत्समं भवेत्।
शुद्धकृष्णाभ्रचूर्णञ्च चतुष्कपिचुभागिकम् ॥ १०१ ॥
तालीशं घनकुष्ठञ्च मांसी पुष्पवराङ्गकम्।
एलाबीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ १०२ ॥
एषां कर्षद्वयञ्चैव पिप्पलीक्वाथभावितम्।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं क्षौद्रसमायुतम् ॥ १०३ ॥
नानारोगप्रशमनं विशेषात् कासरोगनुत्।
वातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥ १०४ ॥
हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च शिरःशूलं विशेषतः।
स्वरामयं क्षयं कुष्ठं श्लेष्माणं वातशोणितम् ॥ १०५ ॥
बृहच्छृङ्गाराभ्रनाम विष्णुना परिकीर्त्तितम्।
रक्तपित्तञ्च श्वासञ्च नाशयेन्नात्र संशयः ॥ १०६ ॥

शुद्ध पारा, शुद्धगंधक, शुद्धसुहागा, नागकेशर, कपूर, जावित्री लौंग, तेजपात, इनमें से प्रत्येक का चूर्ण एक २ कर्ष लें। पहले पारा गंधक की कज्जली करें फिर अन्य द्रव्य मिलावे। फिर स्वर्णभस्म एक कर्ष, कृष्णाभ्रक भस्म आठ तोला, तालीशपत्र, मोथा, कूठ, जटामांसी, लौंग, दारचीनी, इलायची के बीज, सोंठ, मिरच, पीपल हरड़ बहेड़ा आंवला, गज पीपल, प्रत्येक द्रव्य का चूर्ण दो २ कर्षले। सबको एकत्र पीसले ॥ (फिर सबके समान पिप्पली ले उसे चार गुणे पानी में डाल पकावे, जब आठवां भाग शेष रह जाये तब

उतार छान ले।) इस पिप्पलीके काथ की उस पूर्वोक्त चूर्णमें भावना देवे। फिर सुखाकर पीसकर शीशीमें रखले। इसे खाकर दारचीनी का चूर्ण शहद में मिलाकर अनुपान करें तो नानारोग नष्ट होते हैं॥ विशेष करके खांसी, वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिकरोग नष्ट होते हैं॥ तथा हृदय का शूल, पार्श्वशूल, विशेष करके शिर का शूल, स्वरभंग, क्षय, कुष्ठ, कफरोग, वातरक्त, नष्ट होते हैं यह बृहच्छृङ्गाराभ्र रस विष्णुने कहा है। यह रक्तपित्त और श्वास को दूर करता है। इसमें कोई संशय नहीं है॥ १००—१०६॥

इति रसेन्द्रसारसंग्रहे रसायन-वाजीकरणाधिकारः॥

इति श्री विद्याधर विद्यालङ्कारेण वैद्यकविराजेन आयुर्वेद शास्त्रिणा यक्ष्मचिकित्सकेन कृता रसेन्द्रसार संग्रहस्थ भाषाटीका समाप्ता॥

समाप्तोऽयं ग्रन्थः॥

अथ रसेन्द्रसारसंग्रहस्य

परिशिष्टम्

मान-परिभाषा

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित् ।
अतः प्रयोगकार्य्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ १ ॥
षट्सर्षपैर्यवस्त्वेको गुञ्जैका तु यवैस्त्रिभिः ।
माषस्तु पञ्चभिः षड्भिस्तथा सप्तभिरष्टभिः ॥ २ ॥
दशभिर्द्वादशभिश्च रक्तिभिः षड्विधो मतः ।
चरकस्य तु माषस्तु दशगुञ्जाभिरेव च ॥ ३ ॥
चरकस्य तु चार्द्धेन सुश्रुतस्य तु माषकः ।
माषैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्धरणं तन्निगद्यते ॥ ४ ॥
टङ्कः स एव कथितस्तद्द्वयं कोल उच्यते ।
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रङ्क्षणः स निगद्यते ॥ ५ ॥
कोलद्वयञ्च कर्षः स्यात् प्रोक्तः पाणिश्च माणिका ।
अक्षं पिचुः पाणितलं किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥६॥
विडालपदकश्चैव तथा षोडशिका मता ।
करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥ ७ ॥
उडुम्बरश्च पर्य्यायैः कर्ष एव निगद्यते ।
स्यात् कर्षाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥ ८ ॥
शुक्तिभ्याञ्च पलं ज्ञेयं मुष्टिराम्रश्चतुर्थिका ।
प्रकुञ्चः षोडशी बिल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥ ९ ॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेयो प्रसृतश्च निगद्यते ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात् कुड़वोऽर्द्धशरावकः ॥ १० ॥

अष्टमानश्च स ज्ञेयः कुड़वाभ्यांश्च माणिका ।
शरावोऽष्टपलं तद्वज् ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥ ११ ॥
भाजनं कंसं पात्रश्च चतुःषष्टिपलश्च तत् ॥ १२ ॥
चतुर्भिराढ़कैर्द्रोणः कलसो नल्वणोऽर्म्मणः ।
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्य्याय संज्ञितः ॥ १३ ॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुः षष्टिशरावकः ।
शूर्पाभ्याश्च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥ १४ ॥
गोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ।
चतुःसहस्रपलिका षण्णवत्यधिका च सा ॥ १५ ॥
पलानां द्विसहस्रश्च भार एक प्रकीर्त्तितः ।
तुला पलशतं ज्ञेयं सर्वत्रैवैष निश्चयः ॥ १६ ॥

परिमाण ॥

६ सर्षप	का	१ यव
३ यव (४ धान्य)	का	१ गुञ्जा वा रत्ति
१२ रत्ति	का	१ माषा
४ माषा	का	१ शाण वा आधा तोला
२ शाण	का	१ कोल वा १ तोला
२ कोल	का	१ कर्ष
२ कर्ष	का	१ शुक्ति वा ४ तोला
२ शुक्ति	का	१ पल वा ८ तोला
२ पल	का	१ प्रसृति वा १६ तोला
२ प्रसृति	का	१ कुडव वा ३२तोला वा आधासेर
२ कुडव	का	१ शराव वा ६४तोला वा एकसेर
२ शराव	का	१ प्रस्थ वा दो सेर
४ प्रस्थ	का	१ आढक वा ८ सेर
४ आढक	का	१ द्रोण वा ३२ सेर
२ द्रोण	का	१ कुम्भ वा ६४ सेर

२ कुम्भ	का	१ गोणी वा ३ मन ८ सेर
४ गोणी	का	१ खारी वा १२ मन ३२ सेर
१०० पल	का	१ तुला वा ८०० तोला
२००० पल	का	१ भार

नोट—५रत्ति से १२रत्ति तक का एक माषा माना जाता है। हमने वर्त्तमान देशी तोलसे मिलाने के लिये भैषज्यरत्नावली के मतानुसार १२ रत्ति का माषा माना है। इस प्रकार एक कोल अर्थात् एक तोले में पूरी ९६ रत्ति आजकल के अनुसार निकल आती हैं।

नोट—सुश्रुत ५रत्ति का माषा मानता है। चरक १०रत्ति का मानता है। इस प्रकार चरक का मान सुश्रुत से दुगुना समझें।

अथ भावना विधिः।

दिवा दिवातपे शुष्कं रात्रौ रात्रौ निवासयेत्।
शुष्कं चूर्णीकृतं द्रव्यं सप्ताहं भावनाविधिः ॥ १ ॥
द्रवेण यावता द्रव्यमेकीभूयार्द्रतां व्रजेत्।
द्रवप्रमाणं निर्दिष्टं भिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ २ ॥
भाव्यद्रव्यसमं क्वाथ्यं क्वाथ्यादष्टगुणं जलम्।
अष्टांशशोषितः क्वाथो भाव्यानां तेन भावना ॥ ३ ॥

सूखे हुए चूर्ण आदि द्रव्यों में गीला स्वरस या क्वाथ डालकर दिनमें धूपमें और रातको खुली छतपर रखकर उस रसको सुखा देना ही भावना कहाती है। यदि समय का निर्देश न किया हो तो उसे सात दिनरात भावना देवे ॥ १ ॥ जितने गीले स्वरस से चूर्णद्रव्य गीला होजावे। उतना द्रव भावना में डाले ॥ २ ॥ भावित करने योग्य चूर्ण द्रव के समान क्वाथ्य द्रव्य (जिस द्रव्यका क्वाथ बनाना है वह द्रव्य) लेवे। उसमें आठगुणा जल डालकर पकावे। जब आठवां भाग जल शेष रह जाये तो उतार छानकर, भावित करने योग्य चूर्णद्रव्य में डाल दे ॥ ३ ॥

इति भावनाविधिः ॥

अथ पुटप्रकरणम् ॥

रसादि द्रव्यपाकानां प्रमाणज्ञापनं पुटम्।

नेष्टो न्यूनाधिकः पाकः सुपाकं हितमौषधम् ॥ १ ॥
लौहादेरपुनर्भावो गुणाधिक्यं ततोग्रता ।
अनप्सु मज्जनं रेखापूर्णता पुटतो भवेत् ॥ २ ॥
पुटाद् ग्राव्णो लघुत्वं च शीघ्रव्याप्तिश्च दीपनम् ।
जारितादपि सूतेन्द्राल्लोहानामधिको गुणः ॥ ३ ॥
यथाश्मनि विशेद्वन्हिर्बहिस्थपुटयोगतः ।
चूर्णत्वाद्द्विगुणाऽऽव्याप्तिस्तथा लोहेषु निश्चितम् ॥ ४ ॥

पारदादि द्रव्यों के पाक के प्रमाण को बताने वाला पुट है। अधिक वा न्यून पाक से रसादि के गुण नष्ट होजाते हैं अतः ठीक २ आंच की मात्रा और अवधि पुट से जान कर यथाविधि रसों का पाक करे ॥ १ ॥ पुट देने से लौहादि धातु फिर जीवित नहीं होते, अधिक गुण दायक होते तथा शीघ्र लाभ करते हैं, तथा जल पर तैर जाते हैं, हाथ की रेखाओं तक में सूक्ष्म होने से प्रविष्ट होजात हैं ॥ २ ॥ पुट देने से पत्थर भी हलका तथा महीन होजाता है, पुट देने से ही शरीर में शीघ्र फैल जाना, शरीर में उत्तेजना देना आदि गुण होते हैं। पुट देते २ लोहे में पारे की भस्म से भी अधिक गुण आजाते हैं ॥ ३ ॥ जैसे पत्थर को पुट देने अर्थात् आग में रखने से पत्थर के अन्दर तक आग पहुंच जाती है। इसी प्रकार चूर्ण हुए २ लोहे को पुट में देने से दुगुने गुण होजाते हैं ॥४॥

महापुटम् ।

निम्ने विस्तरतः कुण्डे द्विहस्ते चतुरस्रके ।
वनोत्पलसहस्रेण पूरिते पुटनौषधम् ॥ १ ॥
क्रौञ्च्यां रुद्धं प्रयत्नेन पिष्टिकोपरि निक्षिपेत् ।
वनोत्पलसहस्रार्द्धं क्रौंचिकोपरि विन्यसेत् ॥ २ ॥
वन्हिं प्रज्वालयेत्तत्र महापुटमिदं स्मृतम् ॥ ३ ॥

दो हाथ लंबा, दो हाथ चौड़ा, दो हाथ गहरा चौकोन गढा खोद कर रखे। उसमें एक हजार जंगली उपले भर कर पुट देने को

महापुट कहते हैं ॥ १ ॥ आधे अर्थात् पांच सौ उपले नीचे चुन कर ऊपर दो प्यालों में संधिबंद किये हुए लौहादि धातु को रखे उस पर पांच सौ उपले ऊपर से चुन कर आग लगा दे ॥२॥३॥

गजपुटम्।

राजहस्तप्रमाणेन चतुरस्रं च निम्नकम्।
पूर्णं चोपलसाठीभिः कंठविध्यथ विन्यसेत् ॥ १ ॥
विन्यसेत्कुमुदीं तत्र पुटनद्रव्यपूरिताम्।
पूर्वाच्छगणतोऽर्धानि गिरिण्डानि विनिःक्षिपेत् ॥ २ ॥
एतद्गजपुटं प्रोक्तं महागुणविधायकम् ॥ ३ ॥

सवा हाथ गहरा, सवा हाथ चौड़ा, सवा हाथ लंबा गढा खोद कर जंगली उपलों से भर दे ॥ १ ॥ उपलों के ठीक मध्य में शराव सम्पुट को रख दे। ऊपर नीचे आधे २ उपले रखे हों ॥२॥ इस अति गुणकारक पुटका नाम गजपुट है ॥ ३ ॥

वाराहपुटम्।

इत्थं चारत्निके कुण्डे पुटं वाराहमुच्यते ॥ १ ॥

एक हाथ लंबा, एक हाथ चौड़ा, एक हाथ गहरा गढा खोदे उसमें जंगली उपले भर कर मध्य में शराव सम्पुट रख दे। इसे वाराह पुट कहते हैं ॥ १ ॥

कुक्कुटंपुटम्॥

पुटं भूमितले यत्तद्वितस्तिद्वितयोच्छ्रयम्।
तावच्च तलविस्तीर्णं तत्स्यात्कुक्कुटकं पुटम् ॥ १ ॥

दो बालिश्त गहरा, दो बालिश्त लंबा, दो बालिश्त चौड़ा गढा खोद कर जंगली उपलों से भर कर पुट दे इसे कुक्कुटपुट कहते हैं ॥ १ ॥

कपोतपुटम्।

यत्पुटं दीयते भूमावष्टसंख्यैर्वनोपलैः।
बद्ध्वा सूतकभस्मार्थं कपोतपुटमुच्यते ॥ १ ॥

केवल धरती पर ढेरी लगा आठ जंगली उपलों में जो पारदादि की पुट दी जाती है उसे कपोतपुट कहते हैं ॥ चाहे इसमें उपलों के टुकड़े करके आग दे ॥ १ ॥

गोवरपुटम् ॥

गोष्ठान्तर्गोखुरक्षुण्णं शुष्कं चूर्णितगोमयम् ।
गोवरं तत्समाख्यातं वरिष्टं रससाधने ॥ १ ॥
गोवरैर्वा तुषैर्वापि पुटं यत्र प्रदीयते ।
तद्गोवरपुटं प्रोक्तं सिद्धयेरसभस्मनः ॥ १४ ॥

गौशाला में गौओं के पैर से जो गोबर का चूर्ण होजाता है। उसे एक मिट्टी के पात्र में बिछा कर उसमें शराव संपुट को रख के ऊपर से एक दो अंगुल गोबर का चूर्ण बिछा कर आग लगादे। इसे गोबर पुट कहते हैं। इसे "पुटपाक विषम ज्वरान्तकलौह" तथा पारे की भस्म आदि के बनाने में प्रयुक्त करते हैं ॥ १ ॥

भाण्डपुटम ॥

स्थूलभाण्डे तुषापूर्णे मध्ये मूषा समन्विते ।
वन्हिना विहिते पाके तद्भाण्डपुटमुच्यते ॥ १ ॥

एक चौड़े पात्र में आधा भाग तक तुष भर दे उस पर शरावसंपुट रख दे। ऊपर फिर तुष भर दे इसे आग लगादे। इसे भाण्डपुट कहते हैं ॥ १ ॥

बालुकापुटम् ॥

अधस्तादुपरिष्टाच्च क्रौंचिकाऽऽच्छाद्यते खलु ।
बालुकाभिः प्रतप्ताभिर्यत्र तद्बालुकापुटम् ॥ १ ॥

एक पात्र में आधा रेता भर के उस पर शरावसंपुट रख के ऊपर रेता भर दे। नीचे आग दे इसे बालुकापुट कहते हैं ॥१॥

भूधरपुटम् ॥

वन्हिमित्रां क्षितौ सम्यङ् निखन्याद् द्वयंगुलादधः ।
उपरिष्टात्पुटं यत्र पुटं तद्भूधराह्वयम् ॥ १ ॥

पृथिवी से दो अंगुल नीचे खोद कर धरती साफ करे। उसके नीचे एक गढ़ा खोदे उसमें शराव संपुट रख के ऊपर से उपले भर के आग देवे। इसे भूधरपुट कहते हैं ॥ १ ॥

लावकपुटम् ॥

ऊर्ध्वं षोडशिकामात्रैस्तुषैर्वा गोवरैः पुटम्।
यत्र तल्लावकाख्यं स्यात् सुमृदुद्रव्यसाधने ॥ १ ॥
अनुक्तपुटमाने तु साध्यद्रव्य बलाबलम्।
पुटं विज्ञाय दातव्यमूहापोहविचक्षणैः ॥ २ ॥

एक पात्र में धान के तुष वा गोबर का चूर्ण ८ तोला डाल कर अग्नि दे तो इसे लावकपुट कहते हैं। जिसे अति थोड़ी आंच देनी हो उसे लावकपुट में आग देते हैं ॥ १ ॥

जहां पुट का नाम न लिखा हो वहां द्रव्य को देख कर पुट का विचार स्वयं ही कर लेना चाहिये। अर्थात् लौह आदि को सदा गजपुट देना होता है। तथा पारद, हड़ताल आदि को लघुपुट, कुक्कुटपुट आदि देना चाहिये ॥ २ ॥

उपलपर्य्यायाः।

पिष्टकं छगणं छाणिमुत्पलं चोपलं तथा।
गिरिण्डोपलसाठी च वराटी छगणाह्वयम् ॥ १ ॥

पिष्टक, छगण, छाण, उत्पल, उपल, गिरिण्ड, उपलसाठी, वराटी, ये नाम उपले के हैं ॥ १ ॥

इति पुटादि प्रकरणं समाप्तम् ॥

अथ रसाः।

जीर्णज्वरे वसन्तमालती रसः।

स्वर्णं मुक्ता दरदमरिचं भागवृद्ध्या प्रदिष्टम्।
खर्पराष्टौ प्रथममखिलं मर्दयेन् म्रक्षणेन ॥ १ ॥
यावत् स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण तावत्।
गुञ्जाद्वन्द्वं मधुचपलया मालतीपूर्ववसन्तः ॥ २ ॥

सेवितोऽयं हरेत्तूर्णं जीर्णञ्च विषमज्वरम्।
व्याधीनन्यांश्च कासादीन् प्रदीप्तं कुरुतेऽनलम् ॥ ३ ॥

स्वर्णभस्म एकतोला, मोतीभस्म दो तोले, शुद्ध हिंगुल तीन तोला, मिरच का चूर्ण ४ तोला, शुद्ध खपरियाभस्म ८ तोला ले। सब को पीस कर मक्खन से खरल करे। फिर जम्बीरी नीबू के रस से तब तक खरल करे जब तक मक्खन की चिकनाई दूर न हो जाये। फिर इसे दो रत्ति भर लेकर शहद और पीपली के चूर्ण से मिलाकर खावे। इस से शीघ्र ही विषमज्वर, जीर्ण, खांसी आदि व्याधि नष्ट होती हैं। प्रमेह, सूजाक, शुक्रदोष दूर होते हैं। अग्नि तथा बल बढ़ता है। क्षय रोगमें इसे प्रायः व्यवहार करते हैं। कोई २ इसमें चांदी की भस्म दो तोला भी मिलाते हैं ॥ १—३ ॥

श्री जयमङ्गलरसः।

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकं टङ्कणं तथा।
ताम्रं वङ्गं माक्षिकञ्च सैन्धवं मरिचं तथा ॥ १ ॥
समंसर्वं समाहृत्य द्विगुणं स्वर्णभस्मकम्।
तदर्द्धं कान्तलौहञ्च रूप्यभस्मापि तत्समम् ॥ २ ॥
एतत्सर्वं विचूर्णयाथ भावयेत् कनकद्रवैः।
शेफालिदलजैश्चापि दशमूलरसेन च ॥ ३ ॥
किराततिक्तकक्काथैस्त्रिवारं साधयेत् सुधीः।
भावयित्वा ततः कार्य्या गुञ्जाद्वयमिता वटी ॥ ४ ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं जीरकं मधुसंयुतम्।
जीर्णज्वरं महाघोरं चिरकाल समुद्भवम् ॥ ५ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा।
पृथग्दोषांश्च विविधान् समस्तान् विषमज्वरान् ॥ ६ ॥
मेदोगतं मांसगतमस्थिमज्जगतं तथा।
अन्तर्गतं महाघोरं वहिस्थञ्च विशेषतः ॥ ७ ॥

नानादोषोद्भवश्चैव ज्वरं शुक्रगतं तथा।
निखिलं ज्वरनामानं हन्ति श्रीशिवनिर्म्मितः।
बलपुष्टिकरश्चैव सर्वरोगनिबर्हणः॥ ८॥

हिंगुल से निकाला हुआ पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सुहागा, ताम्र भस्म, वंगभस्म, स्वर्णमाक्षिक भस्म, सेंधानमक, मिरच का चूर्ण, प्रत्येक द्रव्य एक २ तोला ले। स्वर्णभस्म दो तोला, कान्तलोहभस्म, एक तोला, चांदी भस्म एक तोला ले। पहले पारागंधक की कज्जली करे। फिर अन्यद्रव्य मिलाकर खरल करे। फिर धतूरे के पत्तों के स्वरससे, शेफालि के पत्तों के रससे, दशमूल के क्काथसे, चिरायते केक्काथ से तीन २ वार भावनादेकर दोरत्ति भरकी (-आधीरत्तिकी) गोली बनाले। इसे जीरा तथा शहद के अनुपान से खावे तो महाघोर तथा चिरकालिक जीर्णज्वर भी दूर होता है। आठों प्रकार का साध्य तथा असाध्य ज्वर नष्ट होता है। एक दोषज द्वन्द्वज, सान्निपातिक, विषमज्वर, मेदोगतज्वर, मांसगत, अस्थिगत, मज्जागत, घोर ज्वर, अन्दर पहुंचे हुए महाघोर ज्वर, तथा बाहिर त्वचा के ज्वर, नानादोषोद्भव ज्वर, शुक्रगतज्वर तथा सभी नामों वाले ज्वर इस से दूर होते हैं। यह बलपुष्टि कारक, सर्व रोगनाशक श्रीजयमंगलरस श्री शिव जी ने पहले बनाया था॥ १—८॥

विषमज्वरे–अञ्जनम्।

निम्बबीजं शिलाजाजीधूम्रसारं समांशकम्।
कारवेल्लरसैर्भाव्यमेकविंशतिवारकम्॥ १॥
यत्पार्श्वतोऽञ्जिते नेत्रे तत्पार्श्वं च ज्वरं जयेत्।
अर्द्धनारीश्वरो नाम रसकौतुककारकम्॥ २॥

नीम के बीज, मनसिल शुद्ध, जीरा, रसोई घर का धुंआ प्रत्येक द्रव्य समभाग ले। सबको चूर्णकर करेले के रसमें २१ वार भावना देवे। सूखने पर शीशी में रखे। जिस आंख में इसे लगावेगा उसी ओर के आधे शरीर का ज्वर उतर जायेगा। दोनों ओर क्रमशः लगायें तो दोनों ओर का ज्वर दूर होजाता है। (यह ज्वर दूर करने

की रीति केवल विषमज्वरों के लिये है) इसे अर्धनारीश्वर कहते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

कौतुकम् अञ्जनम्।

रसगन्धं शिलातुत्थं तालकं मृराटङ्कणम्।
नवसादरकर्षैकमर्कदुग्धेन मर्दयेत् ॥ १ ॥
चुल्लिकायामथारोप्य पचेद्यामचतुर्दश।
स्वांगशीतलमादाय खल्ले तं कज्जलीकृतम् ॥ २ ॥
अञ्जनं वामनेत्रस्य दक्षिणे कौतुकं भवेत्।
दक्षिणे चाञ्जनंचैव आरोग्यं भवति क्षणात् ॥ ३ ॥

शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध मनासिल शुद्ध नी०, शुद्ध सुहागा, नवसादर इनको समभाग ले। प्रथम पारे गंधक की कज्जली करें फिर सब द्रव्य मिलायें और आकके दूध में घोटे। फिर शराव सम्पुट में रख बालुकायंत्र से १४ पहर तक पाक करें। स्वांग शीतल होनेपर पीस शीशी में रखे। इसे बांई आंख में लगावें तो दहने भाग का ज्वर छूट जाता है। दाहिनी आंख में इसका अंजन लगायें तो बांये भाग का ज्वर शरीर से छूट जाता है ॥ १—३ ॥

स्वर्णघटितमकरध्वजः।

षड्गुणवलिजारित मकरध्वजश्च ॥

पलमेकं सुवर्णस्य रसेन्द्रस्य पलाष्टकम्।
रसस्य द्विगुणं गन्धं कज्जलीकृत्य यत्नतः ॥ १ ॥
कुमारिका रसैर्भाव्यं काचपात्रे निधापयेत्।
बालुयन्त्रे च संस्थाप्य क्रमशस्त्रिदिनं पचेत् ॥ २ ॥
स्वाङ्गशीतं समादाय पुष्पारुणरजः समम्।
यवमात्रं प्रदातव्यमाहिवल्लीदलैः सह ॥ ३ ॥
रसस्य षड्गुणैर्गन्धैः पूर्ववत् कज्जलीकृते।
भाविते पाचिते सम्यक् षड्गुणो वलिजारितः ॥ ४ ॥

विधिवत् सेवितो ह्येष मुमूर्षुमपि जीवयेत् ।
एतदभ्यासतश्चैव जरामरणनाशनम् ॥ ५ ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान् गुणान् ।
ज्वरं त्रिदोषजं घोरं मन्दाग्नित्वमरोचकम् ॥ ६ ॥
अन्यांश्च विविधान् रोगान् नाशयेन्नात्र संशयः ।
करोत्यग्निं बलं पुंसां वलीपलितनाशनः ॥ ७ ॥
मेधायुः कान्तिजननः कामोद्दीपनकृन्महान् ॥ ८ ॥
भास्वज्ज्योतिर्यथा भाति काचे नीलादिके शुभे ।
तथानुपानभेदेन क्रियावान् मकरध्वजः ॥ ९ ॥

शुद्ध सूक्ष्म सोने के पत्र एक पल, शुद्धपारा ८ पल ले, शुद्ध गन्धक १६ पल ले । पहले सोने पारे को एकत्र अत्यन्त पीसे फिर गंधक मिला पीस सबकी कज्जली करे । फिर घीकुमारी के रस से कज्जली को भावित करले । फिर सात कपड़मिट्टी की हुई एक काच-कूपी में इस कज्जली को डाल बालुकायन्त्र में तीनदिन तक क्रमशः मन्द मध्यम तीव्र आंच देकर पकावे । स्वांग शीतल होने पर शीशी तोड़कर इसे संभालकर निकाल ले । (शीशी के गलेपर लगा हुआ मकरध्वज होगा, शीशी के नीचे पड़ी स्वर्णभस्म होगी । जितने दिन सोने और पारे को खरल करेंगे उतनाही कम स्वर्ण शीशीमें बचेगा) यह लालरंग का होगा । इस मकरध्वज को एक यव लेकर पान खाना चाहिये ॥

इस बनेहुए मकरध्वज में (शीशी में बचा स्वर्णभस्म भी मिला कर) फिर १६ पल शुद्ध गन्धक मिला कज्जली करे और उसी प्रकार बालुकायंत्र से तीनदिन पाक करे तो यह चतुर्गुण गंधक जारित मकरध्वज हुआ ।

इस प्रकार बने मकरध्वज में फिर १६ पल शुद्धगंधक मिलाकर कज्जली करे और पूर्ववत् बालुकायंत्रसे तीनदिन पकावेतो यह षड्गुण-गन्धक जारित-मकरध्वज कहाता है ॥

इस षड्गुण बलि जारित मकरध्वज को विधिपूर्वक सेवन करायें

तो मरने वाले रोगी को भी जीवित कर देता है ॥ इसे अ
नित्यखावें तो बुढ़ापा तथा मृत्यु को दूर करता है । अनुपान
से विविध गुण करता है । त्रिदोषज घोर ज्वर, मन्दाग्नि,
अन्य विविध रोगों को निस्सन्देह नाश करता है ॥ अग्नि, बल
तथा झुर्रियें पड़ना, श्वेतबाल होना इन रोगों को नाश क
मेधा, आयु, कान्ति बढ़ाता है । अत्यन्त कामोद्दीपनकारक है
श्वेत नील लाल रंग के शीशों में सूर्य की ज्योति भी श्वेत नी
लाल हो जाती है । ऐसे ही प्रत्येक रोग पर अनुपान से यह
अपना अवश्य प्रभाव दिखाता है ॥ १— १ ॥

प्रमेहे स्वर्णवङ्गम् ॥

प्रक्षिपेद्भाजने वङ्गमायसे वापि मृण्मये ।
विद्रुते वन्हितापेन तस्मिन् तन्मानकं रसम् ॥ १ ॥
क्षिप्त्वा सञ्चूर्णयेत्तत्र नरसारञ्च गन्धकम् ।
तनुत्रासो मृदालिप्त काचकूप्यां निधाय च ॥ २ ॥
तत्सर्वं सिकतायन्त्रे पचेद् यामचतुष्टयम् ।
पाकात् सञ्जायते चित्रं कीर्णं हेमकणैरिव ॥ ३ ॥
रमणीयतरं स्वर्णवङ्गं नाम रसायनम् ।
वल्यं मेहहरं कान्तिमेधावीर्याग्निवर्द्धनम् ॥ ४ ॥

एक लोहे या मिट्टी के कटोरे में शुद्ध बंगको डाल आ
लावें । पिघलते ही उस में समभाग शुद्ध पारा डालकर
फिर नवशादर और शुद्ध गंधक भी पारेके समभाग प्रत्ये
घोटलें । फिर कपड़ मिट्टी की हुई एक काच कूपी में इस
डाल बालुकायंत्र में बारह घण्टे पकावे । यह पक कर स
के समान सुन्दर रंगकी चमकदार हो जाती है । इसे स्व
हैं । इसे अनुपानों से सेवन करें तो बलवर्धक, प्रमेह, सु
तथा कान्ति, मेधा, वीर्य्य और अग्निवर्धक है (
रक्तितक) ॥ १—४ ॥